

विदेह साहित्य अध्ययन

गजेन्द्र ठाकुर समग्रक सम्पादकीय

खण्ड २५

स्वप्नमे मिज्झर होइत

पद्य, लोकगीत आ अनुवादित गीत-प्रबन्धक
साहित्यिक आलोचना

सम्पादक आ समीक्षक
आशीष अनचिन्हार

प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका
ISSN 2229-547X

गजेन्द्र ठाकुर समग्रक सम्पादकीय

खण्ड २५

स्वप्नमे मिज्झर होइत

समग्र पद्य, लोकगीत आ अनुवादित गीत-प्रबन्धक साहित्यिक आलोचना

सम्पादक एवं समीक्षक

आशीष अनचिन्हार

मूल पद्यकार

गजेन्द्र ठाकुर

विदेह • प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका

ISSN 2229-547X

© प्रीति ठाकुर आ गजेन्द्र ठाकुर, २०२६

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल ग्रन्थ : स्वप्न मे मिज्झर होइत

मूल पुस्तकक ISBN : 978-93-340-3976-4

सम्पादक एवं समीक्षक : आशीष अनचिन्हार

विदेह

<https://www.videha.co.in/>

<https://videha-ejournal.github.io/videha/>

अनुक्रमणिका

१. अनचिन्हार आखर.....	१८
२. मृत्यु गीत (लोकगीत).....	१९
३. कालक धार पार अनन्तक उजास.....	२२
४. प्रश्नक देहरीसँ मुक्तिक आकाश.....	२५
५. हथेली भरि धरती, आँखि भरि सत्य.....	२७
६. एक पात पर सात दिशाक ओस.....	२९
७. दुःखक गाँठ खोलैत भोर.....	३१
८. लौ बदलैत रहैत, उजास चलैत.....	३३
९. चार खिड़की आ एक खुलल आकाश.....	३५
१०. मुट्ठीक भीतर जे घर नहि.....	३७
११. दर्पणक पार जे देखैत अछि.....	३९
१२. श्वासक भीतर एक स्थिर आकाश.....	४१
१३. एक-एक कणक अपन चेहरा.....	४३
१४. धुँआक पार जे आगि अछि.....	४५
१५. अनेक नामक पाछाँ एक अनाम उजास.....	४७
१६. भीतरक आकाश, बाहरक आकाश.....	४९
१७. तीन दुआर, एके अनन्तक दिस.....	५१
१८. दू हवाक बीच जागैत नव भोर.....	५३
१९. नजरि लागि जाइ छै.....	५५
२०. भाग्यशाली.....	५६
२१. जाइत जाइत.....	५७
२२. बिलाइत आसक चेन्हासी.....	५८
२३. शामिल बाजाक दुन्दभी वादक.....	५९
२४. मन्दाकिनी जे आकाश मध्य.....	६०
२५. नव व्यवस्थाक मनुक्ख.....	६१
२६. नव व्यवस्थाक दलित.....	६२
२७. नव व्यवस्थाक पुरहित.....	६३

२८. नव आ पुरान व्यवस्थाक हाट.....	६४
२९. जखन मशीन आ बिलाड़ि दुनू बुझैए हमरा मृत.....	६५
३०. हाइ रे कुमारिल!!.....	६७
३१. आकांक्षाक अग्नि.....	६८
३२. अनुक्रमणिका आ विषय सूचीसँ आगाँ.....	६९
३३. व्यावहारिक आ सैद्धांतिक.....	७०
३४. हमर शरीरक भाथीमे पैसैत अछि वायु.....	७१
३५. कबिराहाक कनसीपर उठैत धुन.....	७२
३६. भुजनाठीसँ लाड़ैत आकांक्षाक अग्नि.....	७३
३७. अतिखाइन.....	७४
३८. भैसाठ.....	७५
३९. धेनुआर घानी.....	७६
४०. मन्तुर पढ़ि छत्ता लग जायब.....	७७
४१. बकछुछरु खेलाइत भीखू संग.....	७८
४२. उजाहिमे उपलाइत हम आ माँछ.....	७९
४३. ठाढ़ लत्तीकेँ पढ़ैत छी.....	८०
४४. श्राद्ध ने मरा जाय.....	८१
४५. शलातुर गाम.....	८२
४६. बड़का सड़क छह लेन बला.....	८३
४७. पक्काक जाइठ.....	८४
४८. पता नै घुरि कऽ जायब आकि.....	८५
४९. गजल.....	८६
५०. प्रकृति, पुरुष.....	८७
५१. हाइकू/ शेनर्यू/ टनका.....	८८
५२. कुण्डलिया.....	८९
५३. मिथिलाक ध्वज गीत.....	९०
५४. जोति बड़द सोचमे पड़लौ.....	९१
५५. बिसरलौं फेर- कर्णक मृत्युक छोट-छीन रूप.....	९२
५६. कटिहारी.....	९३

५७. डैनियाही दुपहरिया.....	९४
५८. खाम्ह अदृढताक ठाढ़.....	९५
५९. निन्नक ओहि पार.....	९६
६०. सड गामक पोखरि कात.....	९७
६१. सड सागर तटपर.....	९८
६२. सर्वज्ञाता.....	९९
६३. घृणाक तरहरिमे.....	१००
६४. जावत रहब.....	१०१
६५. चतुरहस्त.....	१०२
६६. बुढ़िया डाही.....	१०३
६७. आ तखन, फैसला हेतै आब.....	१०४
६८. जँ विश्वास कऽ ली अहाँपर, ऐ प्रकृतिपर.....	१०५
६९. घड़ी पूजा.....	१०६
७०. नाराशंसी.....	१०७
७१. निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम्.....	१०८
७२. सपना.....	१०९
७३. चुप्पीक अपन बोली.....	११०
७४. स्मृति-भय.....	१११
७५. वादक सम्बल अर्थहीन.....	११३
७६. क्षणक अच्छोर.....	११४
७७. चमत्कारक पोथी.....	११५
७८. विचारक विराम.....	११६
७९. भयक पकड़ ढील होइत.....	११७
८०. कलहक अभ्यास.....	११८
८१. अपन परिचयक खाली ठाम.....	११९
८२. घड़ीक बाहरी किनार.....	१२०
८३. एतहि खोज.....	१२१
८४. प्राणक गवाही.....	१२२
८५. शब्दशास्त्रम्.....	१२३

८६. अपन दाबीक सोझाँ.....	१२४
८७. माया-अविद्या.....	१२५
८८. चिन्तक.....	१२६
८९. बीतैत दिनक संग.....	१२७
९०. देहक देहरी.....	१२८
९१. चिन्हब आ बुझब.....	१२९
९२. डीह.....	१३०
९३. मनुक्ख.....	१३१
९४. अन्तक प्रश्न, आइक दिन.....	१३२
९५. स्वप्नमे मिज्झर होइत.....	१३३
९६. स्थितप्रज्ञतामे लिबैत सत्य!.....	१३५
९७. ई जिनगी कोनो बेजाय नै अछि.....	१३६
९८. महत्वाकांक्षा.....	१३७
९९. ओकरा हँसैत देखि जे आबि जाइ छौ तोरा नोर.....	१३८
१००. देहरीक ओहि पार.....	१३९
१०१. अनचिन्ह घाटक नेह.....	१४०
१०२. बोलीक चिरै.....	१४१
१०३. मेघक पएरक चिन्ह.....	१४२
१०४. अँगुरीमे बसल गीत.....	१४३
१०५. पलकक ओहि पार.....	१४४
१०६. अँजुरीसँ आगाँ.....	१४५
१०७. पएरक अपन बाट.....	१४६
१०८. बोलक भीतर बसात.....	१४७
१०९. सभक लेल पाँति.....	१४८
११०. कुहेसाक बनल घर.....	१४९
१११. एक नामक कतेक पात.....	१५०
११२. फेर चिन्हल देहरी.....	१५१
११३. आधखुलल किवाड़.....	१५२
११४. आँगनक खुलल दिशा.....	१५३

११५. नेनाक बोलीमे भोर.....	१५४
११६. खाली खूँटीक छाँह.....	१५५
११७. दोसर आँखिक ठाम.....	१५६
११८. माटिक भीतर पाँखि.....	१५७
११९. रंगक अनकहल स्वर.....	१५८
१२०. भीतरक अचल ठाम.....	१५९
१२१. निन्नक पाछाँ सेहो जागल.....	१६०
१२२. टेढ़ बाटक हरियरी.....	१६१
१२३. कंठसँ उड़ल चिड़ै.....	१६२
१२४. जड़िक नव पात.....	१६३
१२५. काल्हिक बीआ.....	१६४
१२६. दू बाटक बीच.....	१६५
१२७. एक जल, अनेक लहरि.....	१६६
१२८. खाली पीढ़ी.....	१६७
१२९. पयरसँ आगाँ प्रश्न.....	१६८
१३०. मोनक दूर किनार.....	१६९
१३१. रोटीक पाछाँक भूख.....	१७०
१३२. करघाक नव फूल.....	१७१
१३३. फेर अँकुरायब.....	१७२
१३४. भोरक खुलल आँखि.....	१७३
१३५. बोलैत आँगन.....	१७४
१३६. छुबैत धरती.....	१७५
१३७. नक्शाक बाहर.....	१७६
१३८. चाहक आकार.....	१७७
१३९. आवाजक पुल.....	१७८
१४०. सुखक सीढ़ी.....	१७९
१४१. अलपनाक दुआर.....	१८०
१४२. बराबरक थारी.....	१८१
१४३. जियबाक कारीगरी.....	१८२

१४४. आँखि आ हथेली.....	१८३
१४५. देखि रहल छी.....	१८४
१४६. हमरा नीक लगैत अछि.....	१८५
१४७. अवश्य होयत?.....	१८६
१४८. अनमोलक छाँह.....	१८७
१४९. मेहनतिक रंग.....	१८८
१५०. नामक ओहि पार.....	१८९
१५१. बजबाक पहिल दिन.....	१९०
१५२. फेरसँ ताकू.....	१९१
१५३. हरेक पातक अपन हरियरी.....	१९२
१५४. रंगक सङ्ग रूप.....	१९३
१५५. गाँठिक भीतर बाट.....	१९४
१५६. किएकक अनेक रंग.....	१९५
१५७. अञ्जुरीक उजास.....	१९६
१५८. प्रश्नक पाछाँक शान्ति.....	१९७
१५९. कहलासँ बचल.....	१९८
१६०. खेलक बोली.....	१९९
१६१. भीतरक नीरव घर.....	२००
१६२. कारणक सीढ़ी.....	२०१
१६३. ओझरायल उजास.....	२०२
१६४. नजरिक मिलन.....	२०३
१६५. सपनो जखन सुतल.....	२०४
१६६. निन्नक तीन किनार.....	२०५
१६७. डगमग धरतीपर.....	२०६
१६८. काल्हिक भोर.....	२०७
१६९. सम्भवक खिड़की.....	२०८
१७०. एहि क्षणक ताप.....	२०९
१७१. जागल की सपना?.....	२१०
१७२. पहिने ककर पहिचान.....	२११

१७३. चाहीक स्वर.....	२१२
१७४. अहाँक पीड़ा.....	२१३
१७५. बोलक बसात.....	२१४
१७६. शब्दक घरमे.....	२१५
१७७. सीखल स्वर.....	२१६
१७८. सभक चौक.....	२१७
१७९. फूल आ फीता.....	२१८
१८०. अपन पयरक भार.....	२१९
१८१. साँचासँ बाहर.....	२२०
१८२. खुलल आकाशक नीचाँ.....	२२१
१८३. देहक घेरसँ.....	२२२
१८४. जगतक सङ्ग जागब.....	२२३
१८५. हथेलीक पाथर.....	२२४
१८६. एकलसँ सङ्ग.....	२२५
१८७. समयक पायल.....	२२६
१८८. अनगिन ढङ्गक फूल.....	२२७
१८९. कसौटीक उजास.....	२२८
१९०. माप आ मापल.....	२२९
१९१. भेटक अनेक बाट.....	२३०
१९२. सभ चाबी एक नहि.....	२३१
१९३. अपनहि प्रकाश.....	२३२
१९४. खुलल बैसार.....	२३३
१९५. प्रश्नकेँ खोलू.....	२३४
१९६. धीरे सुलझल डोर.....	२३५
१९७. नाव आ किनार.....	२३६
१९८. अर्थक खुलल वन.....	२३७
१९९. बातक भरोस.....	२३८
२००. जाँचक दुआर.....	२३९
२०१. अर्थक बाँचल ठाम.....	२४०

२०२. सभ उजासक अपन दिशा.....	२४१
२०३. भाषा जे भीतर घर करैत अछि.....	२४२
२०४. मैथिलीक नव खेत.....	२४४
२०५. विचार जखन अपन बोली पबैत अछि.....	२४६
२०६. पुरान अक्षरमे नव प्रश्न.....	२४७
२०७. जड़िसँ क्षितिज धरि.....	२४८
२०८. स्वराजक भीतर विचारक स्वराज.....	२४९
२०९. अपन धरती, खुलल आकाश.....	२५१
२१०. प्रश्नक परिसर.....	२५३
२११. जे प्रश्न अखनो उत्तर माँगैत अछि.....	२५५
२१२. अनुभवक कसौटी.....	२५६
२१३. पाँच दशकक देहरी.....	२५७
२१४. दृश्यक पाछाँ जे प्रश्न अछि.....	२५८
२१५. सृजनक भीतर मनुष्य.....	२५९
२१६. मूल्यक भीतर संस्कृति.....	२६०
२१७. व्यक्ति आ समाजक बीच खुलल प्रश्न.....	२६१
२१८. ज्ञानक तलघरमे दीप.....	२६२
२१९. देहक भीतर “हम”.....	२६३
२२०. सुन्दरक सीमा सँ पार कला.....	२६४
२२१. अखंड आकाशक बाट.....	२६५
२२२. ध्वनिक पार अर्थक उजास.....	२६६
२२३. भीतरक दरबज्जा पर उजास.....	२६८
२२४. मनुखताक आँगनमे नव भोर.....	२७१
२२५. जतय मनुख मनुखक उजास.....	२७४
२२६. अदृश्य तराजूक उजास.....	२७७
२२७. टूटल आइना मे अनेक आकाश.....	२८०
२२८. निर्णयक धधकैत देहरी.....	२८१
२२९. माटिक नाड़ीमे हमर श्वास.....	२८२
२३०. अपन आँखिसँ भोर.....	२८३

२३१. पुरान नदीमे नव धार.....	२८४
२३२. दीपक पाछाँक अनाम उजास.....	२८५
२३३. दिशा-दिशासँ आबैत दीप.....	२८६
२३४. जड़ चित्रक पाछाँ बहैत प्रश्न.....	२८७
२३५. मुक्तिक धुरीसँ बाहर विचारक आकाश.....	२८८
२३६. मुक्ति एक प्रश्न, चिन्तन अनेक बाट.....	२८९
२३७. श्रुतिक वनमे ककर स्वर मूल.....	२९०
२३८. सीमाहीन कथनक भीतर मौन प्रश्न.....	२९१
२३९. सूत्रक देह पर समयक अनेक लेख.....	२९२
२४०. साक्षी आ प्रकृतिक बीच अन्तिम दूरी.....	२९३
२४१. भ्रमक गाँठिसँ अभेदक निस्तब्धता.....	२९४
२४२. एक नामक भीतर अनेक विपरीत दिशा.....	२९५
२४३. अग्निक अर्घ्य आ कर्मक एकल लेखा.....	२९६
२४४. चारि लक्ष्यक चौखटिसँ बाहर जीवन.....	२९७
२४५. सूचीक भीत नहि, प्रश्नक जीवित नदी.....	२९८
२४६. यज्ञक धुँआसँ तर्कक पहिल उजास.....	२९९
२४७. वस्तुक सात दुआर, साक्षीक एक नेत्र.....	३००
२४८. इन्द्रियक पवन थमलापर अन्तर आकाश.....	३०१
२४९. शब्दक बीजसँ कल्पनाक वन.....	३०२
२५०. राजदण्ड, श्रम आ साझा घर.....	३०३
२५१. क्षणक धार आ अनेक दृष्टिक किनार.....	३०४
२५२. मतक भीत पारि प्रश्नक भूगोल.....	३०५
२५३. शब्द, शून्य आ अभेदक पूर्वाग.....	३०६
२५४. सम्बन्धक सूक्ष्म जालमे ज्ञानक दीप.....	३०७
२५५. एक आ अनेकक अनन्त बहस.....	३०८
२५६. प्रेमक पाँचम दिशा.....	३०९
२५७. सूक्ष्म भेदक नोक पर अर्थ.....	३१०
२५८. पुरान श्रुति आ नव आगमक संगम.....	३११
२५९. परम्पराक भीतमे विद्रोही खिड़की.....	३१२

२६०. लोकक कण्ठमे उतरैत चिन्तन.....	३१३
२६१. दू भाषाक बीच टूटल सेतु.....	३१४
२६२. टूटल परम्परासँ नव संश्लेषक पथ.....	३१५
२६३. अजन्म मौनसँ जगक आवागमन.....	३१६
२६४. दुःखक प्रश्न पर नैतिक आकाश.....	३१७
२६५. श्रम, शक्ति आ सीमाक नगर.....	३१८
२६६. रसक क्षणमे जगत आनन्द बनल.....	३१९
२६७. समयक धूलिमे पदचिह्न खोजैत मन.....	३२०
२६८. अनेक दिशाक एक सत्य.....	३२१
२६९. कारणक सीढ़ी, सत्ताक ज्योति.....	३२२
२७०. अपनहि उजासक प्रत्यभिज्ञा.....	३२३
२७१. माटिसँ अतिमानस धरि.....	३२४
२७२. रूप, कारण आ मध्यम मार्ग.....	३२५
२७३. सन्देहक रातिसँ विश्वासक भोर.....	३२६
२७४. भीतरक प्रकाश आ दू नगर.....	३२७
२७५. शब्दक पार जे स्वर जागय.....	३२८
२७६. कहबो एकटा काज अछि.....	३२९
२७७. एकहि उजासक अनेक दुआर.....	३३०
२७८. प्रकृति नाचय, पुरुष देखय.....	३३१
२७९. तर्कक फूलसँ सत्यक अर्घ्य.....	३३२
२८०. हेतुक दीप, आत्माक साक्षी.....	३३३
२८१. पदार्थक गति, मनुष्यक मुक्ति.....	३३४
२८२. अर्थक कसौटी.....	३३५
२८३. कण-कणमे भेदक व्याकरण.....	३३६
२८४. अपन आचरणसँ राज्य सँवारु.....	३३७
२८५. अनुभवक साँचा, कर्तव्यक दीप.....	३३८
२८६. अर्थक नक्शा, भाषाक अनुशासन.....	३३९
२८७. प्रतीकक जग, मनुष्यक अर्थ.....	३४०
२८८. चुनावक क्षण, आस्थाक छलाँग.....	३४१

२८९. प्रमाणक छह दीप.....	३४२
२९०. अनुभवक धरती पर समाजक विज्ञान.....	३४३
२९१. राज्यक मूल प्रजाक हित.....	३४४
२९२. अनुभूतिक रूप, इतिहासक स्वतन्त्रता.....	३४५
२९३. अनुभवक किनार पर विश्वासक जाल.....	३४६
२९४. ज्ञानक चारि दुआर.....	३४७
२९५. सत्यक धागा, करुणाक करघा.....	३४८
२९६. निद्राक चारि घाट पारि अजन्म उजास.....	३४९
२९७. संशयसँ निर्णय धरि.....	३५०
२९८. प्रेमक नाममे खुलैत अनन्त.....	३५१
२९९. कर्मक पाछाँ अनदेखल सेतु.....	३५२
३००. समस्या सँ अनुभवक नव बिहान.....	३५३
३०१. क्षणक रूप, निषेधक भाषा.....	३५४
३०२. संशयक राखिमे निश्चित स्वर.....	३५५
३०३. क्षणक उजास, हेतुक पाँखि.....	३५६
३०४. शून्यक बीच सम्बन्धक ज्योति.....	३५७
३०५. भेदक भीतर अभेदक राग.....	३५८
३०६. पुरान मूल्यक राखसँ नव अगिनि.....	३५९
३०७. शब्दक देहमे अर्थक धड़कन.....	३६०
३०८. चित्तक तरंग थमल तखन.....	३६१
३०९. संशयक चुभन, कर्मक अर्थ.....	३६२
३१०. सूत्रक दाना, भाषाक अनन्त वन.....	३६३
३११. एक प्रतिवादक दीप.....	३६४
३१२. कणसँ ध्वनि धरि जगक जाल.....	३६५
३१३. वाक्यक संगति, ज्ञानक अपन उजास.....	३६६
३१४. छायाक गुफासँ रूपक सूर्य.....	३६७
३१५. देखल जगक मौन उजास.....	३६८
३१६. सूत्रक गाँठिमे अनन्तक स्वर.....	३६९
३१७. सुखक तराजू, समाजक प्रश्न.....	३७०

३१८. घड़ीक पारि बहैत जीवन.....	३७१
३१९. टुकड़ाक पारि अखण्ड उजास.....	३७२
३२०. नकारक सीढ़ी सँ स्वतन्त्र आत्मबोध.....	३७३
३२१. शब्दक भीतर अखण्ड ज्योति.....	३७४
३२२. पाँच भेदक बीच समर्पणक दीप.....	३७५
३२३. देहक आँखिसँ खुलैत संसार.....	३७६
३२४. ज्ञानक दर्पण, हेतुक डोरी.....	३७७
३२५. श्रमक हाथ, बदलैत जग.....	३७८
३२६. रहस्यक दुआर पर खुलल हाथ.....	३७९
३२७. स्वतन्त्र स्वर, सुखक गहिर माप.....	३८०
३२८. 'नीक' केर अनिर्वचनीय उजास.....	३८१
३२९. करुणाक अंकुर, जनक राज.....	३८२
३३०. नेति-नेतिक पारि अन्तरतम साक्षी.....	३८३
३३१. सीमारेखाक आगिमे आत्मक उजास.....	३८४
३३२. तर्कक कण, भाषाक पारदर्शी आकाश.....	३८५
३३३. भाषाक गाँठि, मनक अदृश्य चाल.....	३८६
३३४. पूब-पश्चिमक बीच एकहि उजास.....	३८७
३३५. अनेक रूपमे एकहि आश्रय.....	३८८
३३६. मनुष्यक हाथमे स्वतन्त्र भोर.....	३८९
३३७. वनक स्वतन्त्र साँससँ जन-इच्छाक नगर.....	३९०
३३८. निःशब्द धाराक सहज बाट.....	३९१
३३९. अदृश्य केन्द्रसभक एक सुर.....	३९२
३४०. अनुभवक कोरा पात पर स्वतन्त्र हस्ताक्षर.....	३९३
३४१. विश्वासक आगि, अन्तरात्माक मुक्त स्वर.....	३९४
३४२. श्रमक मुक्ति, बदलैत धरतीक गीत.....	३९५
३४३. सत्य जगत पर कृपाक मधुर धारा.....	३९६
३४४. चेतनाक धारामे रूपक स्वप्न.....	३९७
३४५. अनेक बाटक बीच विवेकक सेतु.....	३९८
३४६. प्रमाणक चारि दुआर, मुक्तिक एक बाट.....	३९९

३४७. शब्दक खेलमे जगक सीमा.....	४००
३४८. नियमक जालमे अर्थ खोजैत मनुष्य.....	४०१
३४९. क्षणक गर्भमे सृष्टिक अनन्त बहाव.....	४०२
३५०. तीन परत पारि एकहि उजास.....	४०३
३५१. वचनक विधिमे कर्तव्यक अदृश्य बीज.....	४०४
३५२. भेदक सूक्ष्म रेखा, सम्बन्धक मौन सूत्र.....	४०५
३५३. सन्देहक पारि विश्वासक चारि आकाश.....	४०६
३५४. अपनेक निर्माणक खुलल आकाश.....	४०७
३५५. इन्द्रियक शोर आ अन्तरक दीप.....	४०८
३५६. पहिचानक धरती, वाक्यक मौन पूर्वशर्त.....	४०९
३५७. एकहि अनन्त धारा, अनिवार्य जग.....	४१०
३५८. सरल बीजसँ बहुरंगी जग.....	४११
३५९. फेंकल क्षणसँ मृत्यु-दिशि खुलल समय.....	४१२
३६०. भयक मैदान सँ अनुबन्धक नगर.....	४१३
३६१. छापक आगिसँ आदतक कारण.....	४१४
३६२. चेतनाक दुआर पर वस्तुक उजास.....	४१५
३६३. सात भंगीक खिड़की सँ अहिंसक सत्य.....	४१६
३६४. विरोधक गर्भसँ पूर्णताक यात्रा.....	४१७
३६५. सन्देहक दीप सँ निश्चयक आकाश धरि.....	४१८
३६६. अनुभवक धार पर कारणक प्रश्न.....	४१९
३६७. रूपक परदा सँ अखण्ड यथार्थ धरि.....	४२०
३६८. शब्दक गाँठ सँ तथ्यक उजास धरि.....	४२१
३६९. हाथक प्रमाण सँ विश्लेषणक सीमा धरि.....	४२२
३७०. प्रयोगक बाट पर अर्थक नगर.....	४२३
३७१. एकाकी संकेत सँ साझा कसौटी धरि.....	४२४
३७२. अनुभवक धरती सँ नियमक कसौटी धरि.....	४२५
३७३. वस्तुक आभास सँ चेतनाक अन्तराल धरि.....	४२६
३७४. अभिमुख चेतना सँ स्वतन्त्र अस्तित्व धरि.....	४२७
३७५. वाक्यक अर्थ सँ तार्किक सत्य धरि.....	४२८

३७६. विश्वासक प्रश्न सँ अशुभक अन्हार धरि.....	४२९
३७७. कालक धार सँ धर्मक सत्य धरि.....	४३०
३७८. पवित्रताक आकाश सँ लौकिक जीवन धरि.....	४३१
३७९. अनेक पथक संगममे एक सत्यक खोज.....	४३२
३८०. 'शुभ'क अर्थ सँ कर्तव्यक कसौटी धरि.....	४३३
३८१. घटनाक क्रम सँ ऐतिहासिक बोध धरि.....	४३४
३८२. कानूनक अक्षर सँ न्यायबोधक अन्तःस्वर धरि.....	४३५
३८३. अक्षरक पार जे उजास.....	४३६
समीक्षाक पाठ-सीमा आ लेखकीय श्रेय.....	१७
अनुलग्नक १ : त्वच्चाहञ्च — महाभारतक अतिसंक्षिप्त मैथिली गीत-प्रबन्धक समीक्षा.....	४३७
अनुलग्नक २ : असञ्जाति मन — बुद्धचरितक अठ्ठाइस-सर्गीय संक्षिप्त मैथिली गीत-प्रबन्ध.....	४४२
अनुलग्नक ३ : “Second Person Singular”क अंग्रेजी आमुखक मैथिली अनुवाद — आलोचनात्मक अध्ययन.....	४४९
समेकित साहित्यिक मूल्याङ्कन — स्वप्नमे मिज्झर होइत : मूल पद्य आ अनुवाद-संरचना.....	४५१
ग्रन्थाधार.....	४५२

संग्रहक आरम्भमे ‘अनचिन्हार आखर’ शीर्षकक मौलिक पद्य अछि। तकर पाछाँ ‘स्वप्न मे मिज्झर होइत.....’ शीर्षक-चिह्न देखाइत अछि, मुदा ओहि स्थानपर अलग पद्य-पाँति नहि अछि। एकरा अनुपस्थित रचनाक नामपर मनगढ़न्त विवेचन नहि बनाओल गेल अछि।

‘मृत्यु गीत (लोकगीत)’ सम्पूर्ण पाठसहित अलग अछि। मूल पुस्तक एहि गीतकें ‘लोकगीत’ कहैत अछि; अतः समीक्षामे मूल लोककाव्य आ संग्रहमे ओकर चयन/स्थापनाक भेद राखल गेल अछि। लोकगीतक अज्ञात मूल रचनाकारकें संग्रहकर्ता वा पुस्तककारक नामसँ प्रतिस्थापित नहि कएल गेल अछि।

संग्रहक पहिल मुख्य खण्ड ‘स्वप्नमे मिज्झर होइत’ पृष्ठ १७ सँ आरम्भ होइत अछि; ओकर पहिल दीर्घ पद्य ‘कालक धार पार अनन्तक उजास’ पृष्ठ १८ सँ शुरू होइत अछि। पृष्ठसंख्या मूल पुस्तकक छपल अनुक्रम पर आधारित अछि, एहि समीक्षाक नव पृष्ठक्रम पर नहि।

१. अनचिन्हार आखर — जोत, स्मृति आ स्वप्नक मिश्रित चेतना

‘अनचिन्हार आखर’ संग्रहक प्रारम्भिक चेतनाकेँ खेतक श्रम, दिशाभ्रम आ बिसरैत स्मृतिक छोट शब्द-समूहमे स्थिर करैत अछि। “मोन गेल भोथियाय” सँ आरम्भक अर्थ ई नहि जे वाचक मात्र थाकल अछि; मोनक अपन देखबाक आ चिन्हबाक सामर्थ्य अस्थिर भऽ गेल अछि। अगिला पाँतिमे “जोति बड़द सोचमे पड़लौ” श्रमक ठोस दृश्यकेँ आत्मचिन्तनसँ जोड़ैत अछि। जोतैत देह आ सोचैत मोन अलग नहि रहि पबैत।

“एतऽ—ओतऽ केर बात” आ “हरायल बड़द ताकी चारू कात”क माध्यमसँ दिशाक अस्थिरता दू स्तरपर काज करैत अछि। पहिल स्तर पर श्रममे संलग्न व्यक्तिक व्यवहारिक संकट अछि—बड़द कहाँ गेल? दोसर स्तर पर स्वप्न आ जगबाक अनुभवक सीमा धुँधला रहल अछि। ‘चारू कात’क खोज काव्यक गोलाकार गति बनबैत अछि: खोज होइत रहलापर समाधान नहि, बल्कि स्मृतिक प्रश्न घनघोर होइत जाइत अछि।

एहि लघु पद्यक काव्य-क्रिया ओकर आरम्भ आ अन्तक दूरीमे देखबाक चाही। आरम्भमे मोन भोथियाएल अछि, मध्यभागमे परिचित श्रम-दृश्य हेराइत अछि, अन्तमे “दुनू मिज्झर भऽ गेल अछि” कहि पृथक् अवस्थाक सीमाचिह्न समाप्त भऽ जाइत अछि। ‘दुनू’ शब्द सन्दर्भसँ स्वप्न आ अनुभवक ओर इशारा करैत देखाइत अछि; मुदा पाठमे ओकरा निश्चयपूर्वक दू निश्चित दार्शनिक सत्ताक नाम नहि देल गेल अछि। ई अस्पष्टता कविताक अनुभवगत यथार्थक हिस्सा अछि।

मौलिक प्रभावक एक कारण अछि पद्यक बोलचालीक सहज अव्यवस्था। प्रश्न सुघड़ तर्कक्रममे नहि, स्मृतिक टूटल छलाँग जकाँ आबैत अछि। बिन्दु-पाँति आ अन्तक ‘...’ कथनमे छोड़ल रिक्त स्थान अछि; पाठककेँ एतय अर्थ भरबाक स्वतंत्रता मिलैत अछि। एकरा मात्र असम्पूर्ण रचना कहब उचित नहि, कारण पाठक चिन्तन-स्थिति स्वयं अधूरी स्मृतिक अछि।

एहि कविताक सीमा सेहो ओहि बिन्दुपर अछि: संदर्भित बड़दक अनुभव आ “ओतुक्का गप”क सामाजिक प्रसंग सम्पूर्ण रूपेँ उघड़ैत नहि। मुदा ई अभाव जखन कविताक स्वप्नवत् कथन-गठनसँ मेल खाइत अछि, तखन ओकरा दोषक स्थिर निर्णय बनाउब उचित नहि। मुख्य उपलब्धि ई जे पद्य स्वप्न-विषयक पुस्तककेँ अमूर्त परिभाषासँ नहि, बल्कि जोत, हेरायल पशु आ स्मृतिक काँपैत बोलीसँ खोलैत अछि।

२. मृत्यु गीत (लोकगीत) — सुग्गा, हंसा आ कायागढ़क लोक-मृत्युदर्शन

ई पद्य मूल ग्रन्थमे स्पष्ट रूपसँ “मृत्यु गीत (लोकगीत)” कहल गेल अछि। ओकरा संग्रहक आरम्भमे स्थान देब एकटा महत्त्वपूर्ण काव्य-सम्पादकीय निर्णय अछि। गीतक मूल लोक-संरचना आ गजेन्द्र ठाकुरक पुस्तकमे ओकर उपस्थितिक भूमिका अलग-अलग विश्लेषणीय अछि। मूल लोक-रचनाकार, पहिल गायन-स्थल, लोक-क्षेत्र वा संकलन-वर्ष पाठमे नहि देल अछि; ताहि लेल ओहि विवरणक कल्पना नहि कएल जा सकैत अछि।

गीतक आरम्भ “हो रे बड़ रे जतन से सुग्गा एक पोसल” आ “दुधवा मिसरी खिआय” सँ होइत अछि। ‘जतन’ आ ‘मिसरी’क जोड़ पोषण आ आसक्तिक संसार बनबैत अछि। ई पोषण स्नेह मात्र नहि: घेरल, बचाएल आ अपन बनाओल जीवकेँ सदा बाँधि रखबाक मानवीय चाह सेहो एहिमे निहित अछि। जखन “सेहो सुग्गा विरिछिया चढ़ बड़सल / पिंजरा जे धरती लेटाय” होइत अछि, तखन पालनक क्रिया आ अन्तिम वियोगक बीचक विरोध खुलैत अछि। पिंजराक धरतीपर रहि जाएब देहक नश्वरता वा परित्यक्त देह-आवासक उपमानरूपेँ पढ़ल जा सकैत अछि; ई गीतक एक सुसंगत अर्थसम्भावना अछि, एकमात्र घोषित अर्थ नहि।

पहिल चारि पाँतिक सुग्गा-प्रतीकक बाद गीत ‘हंसा’क प्रश्नोत्तरक दिस मुड़ैत अछि: “कहमा से हंसा आइल / कहमा समाएल हो।” एहि परिवर्तनसँ गीत केवल निजी पालन-पोषणक वियोग नहि रहैत; जीवनक आगमन आ विलयक मूल प्रश्न बनि उठैत अछि। सुग्गा जँ दृश्य, रंगीन, पालल जीवक रूप अछि, तँ हंसा गीतक भीतर आगमनक दिशा आ अस्तित्वक मूल चिन्हबाक प्रतीक बनैत अछि। दुनू प्रतीकक सम्बन्ध स्थापित होइत अछि, मुदा पाठमे ‘सुग्गा = हंसा’ केर सर्वथा निश्चित समीकरण लिखल नहि अछि।

“सुरपुर से हंसा आएल / नरपुर समाएल हो” केर धरातल पर लोक-कल्पनाक दू लोक अछि—एकटा मनुष्यक अनुभवसँ परे संसार, दोसर नरलोक। एहि विपरीत दिशाक उपस्थिति गीतमे आगमनक रहस्य उत्पन्न करैत अछि। मृत्युक गीत कहल गेल पाठ वस्तुतः जन्म, देहधारण आ मोहक विषय सेहो उठबैत अछि। अन्तिम पाँति “माया ही लपटायल हो” आरम्भक पोषणसँ एक नव अर्थ-सूत्र जोड़ैत अछि: जतनसँ पोसल जीव, देहक नगर, आ अपनाइत मोह—सभ बीच अस्तित्वक बन्धनक प्रश्न उभरैत अछि।

“आ हो रामा, कोन गढ़ कएल मोकाम” तथा “आ हो रामा, कायागढ़ कएले मोकाम” गीतक मुखर मौखिक गठनक खास प्रमाण अछि। आवृत्ति मात्र शब्द-भराइ नहि; ‘कोन गढ़’क प्रश्नक उत्तर ‘कायागढ़’ रूपमे आबैत अछि। ‘गढ़’ शरीरकें किला वा निवास जकाँ अनुभव करबैत अछि। देह आब स्थायी घर नहि, अस्थायी मोकाम अछि—एहि विडम्बनासँ गीतक करुण आवेग उपजैत अछि। ‘राम’ सम्बोधन लोकगायनक भाव-उद्गार सेहो अछि; ओकर आधारपर गीतकें एक निश्चित धार्मिक सम्प्रदायक लिखित काव्य प्रमाणित करब उचित नहि।

गीतक लय आख्यानक सोझ क्रमसँ बेसी उच्चारण आ प्रत्युत्तरक सम्भावना पर बनल अछि। “हो रे”, “आ हो रामा”क आवर्तन एकटा पुकार उत्पन्न करैत अछि, जकर उत्तर प्रश्नक दोहराइत संरचनामे भेटैत अछि। छोट-छोट पाँति, लोकभाषाक रूप “दुधवा”, “कहमा”, “सुगना”, “कायागढ़” आ पाँतिक अन्तक “हो” गानक लयगत भंगिमा स्पष्ट करैत अछि। उपलब्ध पाठसँ वास्तविक गायन-धुन, ताल, राग वा प्रस्तुति-समय निर्धारित नहि कएल जा सकैत अछि; पाठमे सुनाइत लय आ ऐतिहासिक गायन-प्रमाण भिन्न वस्तु अछि।

रसगत स्तरपर करुण स्थायी अनुभूति अछि, मुदा ताहि पर शान्तिमुखी स्वीकारक छाया पड़ैत अछि। गीत मृत्युक भयावह दृश्य नहि देखबैत; पिंजराक धरती पर रहि जाएब, हंसाक गमन, आ देहमे मायाक लिपटानसँ अनुपस्थिति बनबैत अछि। बिम्ब-गठनक ई संयम गीतकें व्यापक मानवीय पाठ दैत अछि। ककरो नाम, उमेर, जाति वा वर्ग नहि देल गेल अछि—एकर व्यक्तिगत अनिर्दिष्टता लोकगीतक सामूहिक ग्रहणशीलता बढ़बैत अछि।

गीतक भीतरक विशेष तनाव पर ध्यान देब आवश्यक अछि। सुग्गा वृक्ष पर बैसैत अछि, हंसा नरपुरमे समाएल अछि, आ कायागढ़ माया सँ लपटायल अछि। ई तीनू सन्दर्भ एकहि भौतिक घटनाक साधारण विवरण नहि; अनेक लोक-कल्पना एकटा गायन-संरचनामे एकत्र भेल अछि। ओहि कारणेँ ओकरा कठोर तत्त्वमीमांसी सूत्रमे बाँधब गीतक बहुअर्थी लोकस्वभावकें छोट करब होयत।

संग्रहक आरम्भमे एहि लोकगीतक उपस्थिति अगिला काव्य-रचनाक मृत्यु, काल आ आत्मबोधक प्रश्नक लेल अर्थपूर्ण लोक-भूमि तैयार करैत अछि। ‘कालक धार पार अनन्तक उजास’ जे मृत्युक दार्शनिक विवेचन करैत अछि, ओकर पहिने ‘मृत्यु गीत’ देह छोड़बाक

अनुभूतिसँ प्रश्न उठबैत अछि। ई पाठक्रमक तुलनात्मक निरीक्षण अछि, लोकगीतक मूल रचनाकाल वा लेखकक आशयक ऐतिहासिक प्रमाण नहि। कुल मिला कऽ गीत संग्रहमे केवल सजावट नहि; एतय लोक-अनुभव दार्शनिक भाषासँ पहिने अपन स्वरमे बाजैत अछि।

३. कालक धार पार अनन्तक उजास — इतिहास, क्षणिकता आ करुणाक दार्शनिक काव्य

एहि दीर्घ रचनाक आरम्भ घड़ीक टिक-टिक आ समयक निवास सम्बन्धी प्रश्नसँ होइत अछि। “घड़ी दीवार पर टिक-टिक करैत अछि, मुदा समय घड़ीक भीतर कतय रहैत?”—ई प्रश्न दृश्य यन्त्र आ अनुभव-समयकें अलग करैत अछि। सुइ, पीयर पात, उजरा कपाल, नगरक उभार आ साम्राज्यक नष्ट होयब एकहि क्रममे आबैत अछि। ई क्रम क्षुद्र आ विराटक दूरी पाटैत अछि: देहक परिवर्तन आ राजनीतिक इतिहास दुनू क्षणभंगुरताक अलग आकार अछि।

रचनाक पहिल महत्त्वपूर्ण तर्क “अन्तिम नहि” आ “असत्य”क भेद अछि। कवि भूख, पीड़ा, प्रेम, बरखा आ इतिहासक घावकें वास्तविक अनुभव मानैत अछि; मुदा एहि सत्यकें अपरिवर्तनीय अन्तिम सत्ता नहि मानैत। जलमे चन्द्रमाक प्रतिबिम्ब एहि भेदक काव्यात्मक उदाहरण अछि। प्रतिबिम्ब दृश्य अछि, मुदा चन्द्रमाक निवास जलमे नहि। बिम्बक काज संसारकें निष्प्रयोजन ठहराएब नहि, अनुभवक सत्य आ अन्तिमताक दावा बीच तारतम्य स्थापित करब अछि।

एहि प्रश्नक ऐतिहासिक विस्तार विशेष ध्यान योग्य अछि। रचना ओहि दृष्टिक प्रतिवाद करैत अछि जे एकरेखीय राज्य-इतिहासकें इतिहास-बोधक एकमात्र रूप मानैत अछि। कथा, वंशावली, नगरक अवशेष, ऋतुगणना, चक्रीय स्मृति आ धर्म-परिवर्तन जेना उदाहरणसँ बहुविध स्मृति-व्यवस्था सामने आबैत अछि। किन्तु ई समस्त तथ्यक स्वतन्त्र ऐतिहासिक प्रमाण एहि कवितामे प्रस्तुत नहि अछि; कविताक उपलब्धि तर्कक संरचना आ इतिहास-विषयक प्रश्नक विस्तारमे अछि। इतिहास-लेखनक अनुभवजन्य दावाक बाह्य जाँच अलग अध्ययनक विषय होयत।

“इतिहास कहैत— ‘देख, मनुष्य की करलक।’ / अन्तरदृष्टि कहैत— ‘देख, मनुष्य की हो सकैत।’” एहि समानान्तर वाक्य-विन्याससँ रचना इतिहास आ आत्मबोधक टकरावकें संवाद बनबैत अछि। घटना आ संभावना एक दोसरक विरोधी नहि। घटना सँ ओहि संरचना देखल जा सकैत अछि जाहि बीच मनुष्य रहैत अछि; अन्तरदृष्टि पूछैत अछि जे ओ संरचनाकें नैतिक रूपमे कोना बदलि सकैत अछि। यहीं कविताक दार्शनिकता अकर्मण्य समाधिमे नहि समा जाइत, बल्कि जिम्मेवारीक दिशामे आगाँ बढ़ैत अछि।

कालक नदी, प्रवाहक किनार, घड़ी, रेल-यात्रा आ स्टेशन—एहि बिम्बसभक क्रम रोचक अछि। नदी एकटा जैविक निरन्तरता अछि, घड़ी यान्त्रिक माप, रेल आ स्टेशन सामाजिक समयक परिचित रूप। कवि एकटा प्रतिमानसँ सम्पूर्ण दीर्घ पाठ नहि चलबैत; बदलैत बिम्बसँ समय-बोधक अलग स्तर खोलैत अछि। मुदा बिम्बक क्रममे बारम्बार घोषित निष्कर्ष रचनाकें कथनोन्मुख बनबैत अछि। एतय प्रश्न उठैत अछि जे लम्बा विवेचन काव्यक संक्षिप्त व्यञ्जनाकें कतेक ठाम दबबैत अछि। एहि जोखिमसँ रचनाक शिल्पगत सीमा स्पष्ट होइत अछि।

एहि काव्यक नैतिक केन्द्र स्मृतिक उपयोग सम्बन्धी पाँतिसभमे अछि: अतीतक पीड़ाकें नव प्रतिशोधक औचित्य नहि बनाओल जाए; स्मृति चेतावनी बनय, विष नहि। ई विचार एक ओर ऐतिहासिक विस्मरणक विरोध करैत अछि आ दोसर ओर पीड़ाक राजनीतिक पुनरुत्पादनक प्रतिरोध। प्रत्यक्ष पाठमे युद्ध, महामारी, दासता, भेदभाव आ अन्याय अपन उपस्थितिसँ ‘कालातीत’ शब्दक सम्भावित पलायनवादी अर्थकें चुनौती दैत अछि। एहिठाम ‘विदेह समानान्तर ऐतिहासिक पद्धति’क प्रासंगिकता वस्तुगत रूपसँ देखल जा सकैत अछि: औपचारिक राजकीय घटनाक संग पीड़ा-स्मृतिक स्वतन्त्र मूल्य।

कविता बारम्बार ई प्रश्न लौटबैत अछि जे आत्ममुक्तिक दावाक संग समाजक अन्यायपर मौन किएक रहल जाए। “काल दार्शनिक अछि, मुदा भूखल बच्चा तुरन्त रोटी माँगैत” कथन एकर सबसँ सघन नैतिक प्रतिरोध अछि। बच्चाक भूख समयातीत चिन्तनकें तात्कालिक कर्तव्यक धरातल पर लऽ अबैत अछि। एहि पाँतिक बल ई जे सामाजिक दायित्वकें बाहरी उदाहरण नहि, बल्कि दार्शनिक तर्कक अनिवार्य जाँच बनबैत अछि। ‘भीतर’ आ ‘बाहर’क मुक्ति अलग रहितो एक-दोसरकें परखैत अछि।

कवितामे नव्य-न्यायक सन्दर्भ प्रयोग करैत समय सावधानी आवश्यक अछि। घड़ीक गति सँ समयक अन्तिम स्वरूप निश्चय नहि भऽ सकैत—एहि भेदमे प्रत्यक्ष आ तदाधारित अनुमानक सीमा सम्बन्धी एक समालोचनात्मक प्रश्न अछि। मुदा कविताक समस्त दार्शनिक प्रतिपादन नव्य-न्यायक औपचारिक अवयवमे लिखल नहि अछि। कवि व्याप्ति, पक्ष आ हेतुक पूर्ण तर्क-सूत्र प्रस्तुत करैत छथि एहन दावा पाठसँ सिद्ध नहि होइत। सत्यापनक कसौटी रूपमे प्रमाण-विवेक लागू करब उचित अछि; दार्शनिक पदावलीक कृत्रिम आरोप उचित नहि।

रचनाक भाषा अनेक ठाम सूत्रवत् अछि: “इतिहास जानू, मुदा ओकर दास नहि”, “काल जीऊ, मुदा कालक भय मात्र नहि।” आदेशात्मक वाक्य पाठकसँ सीधा संवाद करैत अछि, मुदा उच्च आवृत्तिपर कविता उपदेशात्मक गद्यक निकट पहुँचैत अछि। कविता अपन एहि सीमाकेँ दृश्य-बिम्बसँ संतुलित करबाक प्रयत्न करैत अछि—घड़ीक टिक-टिक पुनः लौटैत अछि, आ आरम्भक यन्त्र अन्तमे मानवीय स्मृति आ मुक्ति बीचक सह-अस्तित्व देखबैत अछि।

“जे क्षण केँ क्षण कहैत, मुदा क्षण तिरस्कार नहि” रचनाक अन्तिम विचारक सार थिक। क्षणिकताक स्वीकार जीवनसँ विरक्ति नहि, बल्कि क्षणिक जीव प्रति करुणाक आधार बनैत अछि। मृत्युक उपस्थिति अमर नाम लेल हिंसाक लालसा कम करबाक सम्भावना रूपमे प्रस्तुत भेल अछि; ई नैतिक कल्पना अछि, अनिवार्य सामाजिक नियम नहि। कवि स्वयं सम्भावनाक भाषा उपयोग करैत छथि, ताहि लेल सम्भावनाकेँ निर्णायक इतिहास-सिद्धान्त बनाउब गलत होयत।

‘मृत्यु गीत (लोकगीत)’ सँ एहि कविताक सम्बन्ध देखला पर दुईटा भिन्न भाषा-व्यवस्था स्पष्ट होइत अछि। लोकगीतमे सुग्गा, हंसा आ कायागढ़ देह-मायाक सम्बन्धकेँ सूक्ष्म पाँतिमे उठबैत अछि। एहि दीर्घ रचनामे ओहि मृत्युबोधक विस्तार समय, राज्य, स्मृति आ आधुनिक प्रगतिक प्रश्न धरि होइत अछि। लोकगीतक संगीतात्मक संक्षेप आ आधुनिक दार्शनिक पद्यक विस्तार दुनू अपन-अपन शक्ति आ सीमा लऽ कऽ सामने अछि।

एहि रचनाक विशेष उपलब्धि इतिहासक विरुद्ध आध्यात्मिकता ठाढ़ करब नहि, बल्कि इतिहासकेँ मानवीय नैतिकता सँ पुनः जोड़बाक आग्रह अछि। ओकर शिल्पगत चुनौती विचारक बारम्बार उद्घोषण आ बिम्बक सघनता बीच सन्तुलन बनौने रहब अछि। पाठक अन्तमे घड़ी सुनैत अछि, मुदा घड़ीक ध्वनि आब मात्र समय बीतबाक संकेत नहि; ओ मनुष्यक आगामी निर्णायक नैतिक कसौटी बनि गेल अछि।

४. प्रश्नक देहरीसँ मुक्तिक आकाश — ज्ञानक एकाधिकारसँ जीवन-सापेक्ष दर्शन धरि

एहि रचनाक पहिल नाटकीय स्थिति एकटा बौद्धिक वर्चस्वक आलोचना अछि। “एक दिन कियो दुनिया केँ अपनहि आईना सँ नापए चाहलक” कथनमे आईना एकटा सीमित बोध-पद्धतिक रूपक बनैत अछि। देखनिहार अपन ढाँचा केँ सत्यक एकमात्र माप घोषित करैत अछि आ दोसर देशक प्रश्नकेँ गीत, मिथक, विश्वासक गौण कोठामे पठा दैत अछि। कविता एहि श्रेणीकरणपर आपत्ति करैत अछि, मुदा केवल सभ्यतागत गौरवक उत्तर नहि दैत; ओ पूछैत अछि जे ‘ई जगत की’, ‘हम के’ सन प्रश्न कतहु जन्मि सकैत अछि। प्रश्न पूछबाक सार्वभौमिक क्षमता काव्यक मूल प्रतिज्ञा बनैत अछि।

एहि दृष्टिसँ “प्रश्नक देहरी” असलमे भीतर प्रवेशक दुआर अछि, अन्तिम सिद्धान्त नहि। रचना दर्शनकेँ खेतक अनुभव, जन्म-मृत्युक आश्चर्य, न्यायक चाह, सौन्दर्य आ प्रेमक बीच चिन्हैत अछि। एहि ठोस जीवन-सन्दर्भसँ दर्शनक भाषा ग्रन्थालयक बन्द कक्षसँ बाहर आबैत अछि। कवि जेना मानैत अछि जे ज्ञानक अर्थ केवल अवधारणाक संगति नहि, जीवनक परिवर्तन सेहो अछि। “यदि हम सत्य जानी, मुदा जीवन ओकर विरुद्ध, तँ ज्ञान अधूर” सन वाक्य ज्ञान आ आचरणक बीच आवश्यक परीक्षा बनैत अछि।

रचनाक बीचमे धर्म, अर्थ, काम आ मोक्षक चारि दिशाक विवेचन मानवीय उद्देश्यक बहुलता चिन्हबैत अछि। कर्तव्य, उपार्जन, आनन्द आ मुक्ति चारि स्वतंत्र टापू नहि; जीवनक अपन खींचातानीमे एक-दोसरक सीमा बनबैत अछि। कविताक तर्क ई नहि जे दैनिक जीवन महत्वहीन अछि, बल्कि प्राप्तिक पाछाँ बचल अशान्ति मनुष्यकेँ नव प्रश्न देइत अछि। मुक्ति एहि दृष्टिसँ सम्पत्तिक विरुद्ध घोषणा नहि, आसक्तिक सीमा आ मृत्यु-बोधक सामने चेतनाक पुनर्मूल्यांकन अछि।

दुःखक प्रसंगमे रोग, कारण, उपचार आ स्वास्थ्यक उपमान रचनाक समालोचनात्मक ढाँचा तैयार करैत अछि। अनुभवजन्य रोग आ दार्शनिक अज्ञानक बीच ई एक उपमा अछि, चिकित्साशास्त्रक शाब्दिक सूत्र नहि। कवि अज्ञानकेँ रोग, ज्ञानकेँ औषधि आ अनुशासनकेँ उपचार कहैत अछि, मुदा एतय रूपकक उपयुक्तता जीवनमे ओकर फलसँ परखल जाएत। जँ ज्ञान व्यवहारमे क्रोध आ हिंसा घटाबैत नहि, तँ ओकर मुक्तिप्रद दावा प्रश्नाधीन होइत अछि।

रचनामे तर्क आ मौनक संगति विशेष उल्लेखनीय अछि। कवि स्वीकारैत अछि जे प्रेम, शोक, अनुभव आ मौनक सम्पूर्ण अर्थ परिभाषामे नहि समाइत, मुदा ताहि कारण तर्क त्यागबाक आग्रह नहि करैत अछि। तर्ककेँ ओकर सीमाधरि ईमानदारीसँ चलबाक निर्देश अछि। एहिसँ अनिर्वचनीयक चर्चा तर्क-विरोधी सुविधा नहि बनि पबैत। आलोचनाक कसौटीसँ देखला पर ई गद्यात्मक दार्शनिक पद्य अछि; अवधारणाक क्रम स्पष्ट अछि, मुदा छन्दात्मक सघनता बहुत ठाम वाक्य-व्याख्याक सामने पाछाँ हटैत अछि।

“वर्गीकरण मानचित्र। धरती नहि” कथन ग्रन्थक एकटा महत्त्वपूर्ण आत्मालोचनात्मक सूत्र अछि। परम्पराकेँ निर्धारित खाँचा देनाइ उपयोगी भए सकैत अछि, मुदा ओ वर्गीकरण स्वयं जटिल वास्तविकता नहि। ई बिन्दु नव्य-न्यायक संशय-विवेकसँ संवादक ठाम दैत अछि: कोनो वर्ग-नाम प्रचलित भेलासँ ओकर सर्वव्यापक व्याप्ति स्वतः प्रमाणित नहि होइत। संग्रहक पहिल दीर्घ पद्यमे समय आ इतिहासक सीमा पूछल गेल छल; एतय ज्ञान-पद्धतिक अधिकार आ दर्शनक जीवनगत सार्थकता प्रश्नमे अछि। दुइएक रचनाक संयोजन इतिहास, ज्ञान आ नैतिक आचरणक बीच त्रिकोण रचैत अछि।

५. हथेली भरि धरती, आँखि भरि सत्य — प्रत्यक्ष, देह आ नैतिक सुखक परीक्षा

“भोरक ओस हथेली पर ठंढा अछि” एहि सहज शारीरिक अनुभूतिसँ कविता शुरू होइत अछि। आँखि, कान, नाक, जिह्वा आ त्वचाक क्रमबद्ध स्मरण देखबैत अछि जे ज्ञानक प्रवेश-दुआर इन्द्रियसभ अछि। देहकेँ निम्न दर्जाक बाधा मानबाक बदला, कवि एकरा प्रश्नक पहिल भूमि बनबैत अछि। हथेलीक भीतर ओसक ठंढक अति ठोस अछि; एहि कारण शीर्षकक “धरती” केवल तत्त्वमीमांसाक पद नहि रहि जाइत।

कविता भौतिकवादी/प्रत्यक्षप्रधान दृष्टिक पक्षमे उठैत प्रश्नकेँ गम्भीरतासँ सुनैत अछि: जे अनुभूति आ साक्ष्यमे आबि सकैत अछि, पहिने ओहि सँ आरम्भ करू। मुदा रचना सन्देहक आत्म-विरोधो देखबैत अछि—जे सभ अप्रत्यक्ष दावा पर सन्देह करैत अछि, ओकर अपन सार्वभौमिक सन्देह कथनक प्रमाण की? एहि आत्म-परीक्षणसँ कविता प्रत्यक्षवादक मात्र स्तुति नहि करैत, ओकर ज्ञानमीमांसात्मक सीमा सेहो उघारैत अछि। वैज्ञानिक विधिक चर्चा मे अदृश्य कण, गणना, प्रयोग आ पुनरावृत्त सार्वजनिक साक्ष्यक उल्लेख देखबैत अछि जे आधुनिक जाँच केवल आँखिसँ देखबाक बराबर नहि।

काव्यक केन्द्र नैतिक प्रश्न होइत अछि: सुख जँ मूल्यवान अछि, तँ दोसरक सुख किएक कम? एक क्षणिक उन्माद जे आगाँ दुःखक पर्वत बनय, ओकरा स्थायी कल्याणक समकक्ष मानब कठिन। एहि स्थाने उपभोग आ विवेकक बीच अन्तर उघड़ैत अछि। भोजन, धन, सुख आ भयक उदाहरण दार्शनिक अमूर्तताकेँ रोजमर्रा जीवनमे उतारैत अछि। सुखक चर्चा एतय नैतिक परिणामसँ स्वतंत्र नहि; अपन पीड़ा घटाबयक इच्छा दोसरक पीड़ा घटाबयक कर्तव्यपर पहुँचैत अछि।

रचना चेतनाक उद्भवसम्बन्धी सम्भावना उठबैत अछि: देह तत्त्वसभक मेल भए, तकर भीतर गीत, स्मृति, प्रेम आ साहसक उदय हुनकर मूल्यकेँ स्वयमेव असत्य नहि बनबैत। कवि पदार्थ आ अर्थकेँ विरोधी मानबाक विवशता नहि स्वीकारैत अछि। एहि बिन्दुपर एक सीमाक उल्लेख आवश्यक: देहसँ चेतनाक उद्भव कवितामे दार्शनिक विवेचन अछि, प्रयोगशालामे प्रमाणित शोधफल रूपमे प्रस्तुत नहि; ताहि लेल समीक्षो ओकरा अन्तिम वैज्ञानिक निष्कर्ष नहि मानि सकैत।

कविताक शिल्पमे माटि, ओस, हथेली, आँखि आ पयर आवर्तित बिम्ब बनैत अछि। अन्तमे “हथेली धीरे खुलैत। माटि झरैत। आँखि आकाश दिस उठैत। मुदा पयर धरती पर रहैत” एहि पुनरागमनसँ आरम्भक बिम्ब बदलल अर्थ धारण करैत अछि। प्रश्न आकाश धरि जाइत अछि, मुदा परीक्षणक पयर वास्तविक देहधारी जीवनमे टिकैत अछि। ई संरचनागत सफलता कविता केँ बौद्धिक निबन्ध बनि रहि जाएब सँ बचबैत अछि।

‘प्रश्नक देहरीसँ मुक्तिक आकाश’मे दर्शनक सार्वभौमिक प्रवेश-अधिकार रेखांकित छल; एहि कवितामे एकटा विशिष्ट प्रत्यक्षप्रधान दृष्टि भीतरसँ परखल जा रहल अछि। कवि ओकर शक्ति—साक्ष्यक आग्रह, अन्धविश्वासपर प्रश्न—आ सीमा—प्रत्यक्षक संकीर्ण परिभाषा—दुनू देखबैत अछि। एहन सन्तुलन संग्रहक बहुदर्शनात्मक परियोजनामे मूल्यवान अछि, यद्यपि अन्तर्गत विवेचनक विस्तार कतहु गीतात्मक संक्षेपकेँ बाधित करैत अछि।

६. एक पात पर सात दिशाक ओस — अनेकान्त, अहिंसा आ दृष्टिक विनम्रता

एक पातपर ओसक सात बूँद, एक सूर्य आ प्रत्येक बूँदमे अलग रंग—ई उद्घाटन रचनाक तर्ककेँ बिम्बमे रूपान्तरित करैत अछि। एकटा बूँदकेँ सम्पूर्ण सूर्य मानबो भूल आ सभ बूँद जोड़ि सूर्यकेँ अपन मुट्ठीमे बन्द मानबो भूल। दुनू प्रतिवादक बीच कविता आंशिक बोधक सम्मान आ सर्वज्ञताक दावाक सीमा एक संग स्थापित करैत अछि। ‘सात’ शीर्षकमे मात्र गणना नहि; दृष्टिक बहुविध दिशा आ सत्यक प्रति मानवीय पहुँचक सीमितताक रूपक अछि।

रचनाक दार्शनिक आधार जैन परम्पराक अनेकान्तवादी संवेदनाक निकट अछि, जाहिमे एक वस्तुपर अनेक प्रसंगसापेक्ष कथन सम्भव होइत अछि। मुदा अनेक दृष्टिक स्वीकार स्वतः ई नहि कहल अछि जे सभ दाबी हर परिस्थिति मे समान रूपसँ सत्य होयत। कविताक ओस-बिम्बक सूक्ष्मता एहि भेदक सम्भावना खोलैत अछि: प्रकाश साझा भए सकैत अछि, स्थिति आ माध्यम भिन्न। एतय तर्कक विषय कथनक प्रयोजन, प्रसंग आ सीमाक विवेक अछि; निरंकुश मत-सापेक्षता नहि।

काव्यक मध्यभाग जगत, जीव आ कर्ताक प्रश्न उठबैत अछि। पाठमे सर्वशक्तिमान निर्माता-विनु अनादि जगत आ असंख्य जीवक कल्पनाक उल्लेख अछि। एकर आलोकमे मुक्ति बाहरी दान नहि, जीवनक अपन अनुशासनसँ अर्जित अवस्था रूपमे उभरैत अछि। एहि दार्शनिक प्रतिपादनक ऐतिहासिक स्रोत जैन विचार-संसार अछि; मुदा गीत स्वयं तत्त्वसूत्रक प्रमाण-पाठ नहि। एहि कारण विशिष्ट मतक पदावली ओतहि प्रयोगयोग्य अछि जतय कविता ओकर संकेत देइत अछि।

एहि रचनाक सबसँ महत्त्वपूर्ण नैतिक मोड़ ओतय अछि जतय अहिंसा आ बहु-दृष्टिक सिद्धान्त अपने सामाजिक व्यवहारक परीक्षा बनैत अछि। जँ अहिंसा मूल मूल्य अछि, तँ ओ भेदभावपर सेहो लागू होयत; जँ अलोभ मूल्य अछि, तँ सत्ता-लालसापर सेहो; जँ बहु-दृष्टि मूल्य अछि, तँ किनारक स्वर सुनबाक दायित्व सेहो बनेत। एहि प्रकार कविता दर्शनक आत्म-पुष्टिकरण नहि, आत्म-परीक्षण माँगैत अछि। ओ परम्पराकेँ पत्थर नहि, पुनर्विचार करनिहार जीवित परम्परा मानैत अछि।

कर्म-सिद्धान्त सम्बन्धी एक कठोर नैतिक जोखिम कवि स्पष्ट करैत अछि। जँ कियो दोसरक दुःखकें ओकर अपन कर्मक दण्ड कहि करुणासँ मुक्त भऽ जाए, तँ कर्मक व्याख्या स्वयं अहिंसाक विरोधी होयत। एहि आपत्ति मे प्रमाण-संयमो अछि—दोसरक सम्पूर्ण अतीतक प्रत्यक्ष ज्ञान केकरा अछि? बिना प्रमाण पीड़ितपर नैतिक दोष थोपब न न्याय अछि, न बहुदृष्टिक विनम्रता। कविताक भीतर ई प्रश्न सामाजिक करुणाक दृढ़ आधार बनैत अछि।

अन्तमे ओस सूखि जाइत अछि, मुदा पात पर सात उजासक स्मृति रहैत अछि। बिम्बक ई अन्तिम रूप दर्शबैत अछि जे दृष्टि क्षणिक होइतो ओकर नैतिक शिक्षा टिकि सकैत अछि। छन्दक पारम्परिक आवृत्तिक बदला रचना विचार-लयमे आगाँ बढैत अछि। लम्बा अवधारणात्मक खण्ड कतहु शुरुआती सजीव ओस-बिम्ब सँ दूर गेल अनुभव देबैत अछि, मुदा उपसंहार ओकरे निकट लौटैत अछि। पूर्ववर्ती प्रत्यक्षप्रधान कवितासँ तुलना कएल जाए, तँ एतय 'देखल'क सीमा दृष्टिकोणक बहुलतामे खुलैत अछि।

७. दुःखक गाँठ खोलैत भोर — कारणबद्ध पीड़ा आ करुणामुखी अभ्यास

महल आ झोपड़ीक समानान्तर उद्धाटन रोग, वृद्धावस्था आ मृत्युक असमान सामाजिक स्थानपर समान मानवीय सम्भावना देखबैत अछि। ऐना पर उजर केस, देहक धीमा पयर आ मृत्युक नजदीक आबि जाएब काव्यक दुःखबोधकें ठोस दृश्य देइत अछि। मुदा दुख मात्र जखम नहि; लाभक पाछाँ छिनि जाएबाक भय आ अलभ्य वस्तुक चाह सेहो मनकें बाँधैत अछि। एहि कारण कविता पीड़ाकें मनोविज्ञान, सम्बन्ध आ परिवर्तनशीलता तीनू स्तरपर परखैत अछि।

रचनामे अज्ञानसँ आदत, आदतसँ चेतनागत गठन, इन्द्रिय-स्पर्श, अनुभूति, तृष्णा आ पकड़ धरि जे कारणक्रम अछि, से बौद्ध प्रतीत्यसमुत्पादक काव्यात्मक रूपान्तरण जकाँ पढ़ल जा सकैत अछि। कवि एकरा लोहेक अपरिवर्तनीय नियति नहि मानैत। जँ कारण-शर्तसभ बुझल जाए, तँ सजग हस्तक्षेप सम्भव अछि। ‘गाँठ’ बिम्ब एहि तर्ककें स्पष्ट करैत अछि—एक गाँठ ढील भेलापर पूरा रस्सीकें नव ढङ्गसँ सम्हारल जा सकैत अछि।

स्मृतिक यान्त्रिक आवृत्ति आ वर्तमान अनुभवक सजगताक बीच कविता एक सुन्दर भेद बनबैत अछि। श्वास, कदम, क्रोधक पहिल ताप आ लोभक पहिल चमक देखबाक आग्रह अभ्यासक प्रत्यक्ष आयाम अछि। हवा सँ काँपैत जलमे चन्द्रमाक टूटल प्रतिबिम्ब आ शान्त जलमे स्पष्ट छवि मानसिक एकाग्रताक साधारण मुदा प्रभावी उपमा अछि। एकर उद्देश्य असुविधाजनक विचार मेटेनाइ नहि, हुनकर उत्पत्तिक समय चेतन रहब अछि।

निजी मनोविज्ञानसँ समाज दिस रचनाक विस्तार विशेष विचारणीय अछि: पकड़ केवल वस्तुपर नहि, “हमर मत”, “हमर अपमान” आ “हमर विजय” पर सेहो होइत अछि। ई शब्द जातीय, राजनीतिक वा समूहगत हिंसाक मनोभूमि बनि सकैत अछि। कवि कहैत अछि जे भीतरक लोभ बाजारमे, घृणा राजनीतिमे आ अज्ञान अफवाहमे आकार पबैत अछि। ई सामाजिक परिणामक काव्यात्मक आलोचना अछि, सभ सामाजिक संस्थाक एककारणीय व्याख्या नहि।

आठाङ्गिक नैतिक अभ्यासक आशयसँ मेल खाइत वाणी, कर्म, आजीविका, प्रयास, सजगता, ध्यान, दृष्टि आ संकल्पक उल्लेख मुक्ति कें दैनिक श्रम बनबैत अछि। ‘कोनो दूर सिंहासन सँ उद्धार उतरबाक प्रतीक्षा नहि’ सन आशय बाहरी चमत्कारक विपरीत स्वयं

जिम्मेवारीक नीति अछि। तथापि कविता एक महत्त्वपूर्ण शर्तो रखैत अछि: अपन मुक्ति साधैत काल दोसरक पीड़ा नहि बढ़ाओल जाय। सामाजिक दायित्वकेँ निजी आत्म-शान्तिक अधीन उपेक्षित नहि कएल गेल अछि।

रचनाक अन्तमे रातिक स्मृति मेटाओल नहि जाइत—भोर ओकरा नकारैत नहि, अवधि सीमित करैत अछि। ई शिल्पगत वृत्त दुःखक अनिवार्यतालाई निराशाक स्थायी सिद्धान्त बनबाकसँ रोकैत अछि। ‘एक पात पर सात दिशाक ओस’ बहुल सत्य आ अहिंसाक दृष्टिक चर्चा करैत छल; एहिठाम अहिंसा अभ्यासक कारणगत रूप पबैत अछि। कविताक सीमा ई जे दीर्घ उपदेशात्मक निर्देश किछु ठाम लोक-छविक स्वाभाविक प्रवाहकेँ कम करैत अछि। तैयो भोर, गाँठि आ जलक बिम्ब विचारक अपन रूप देइत अछि।

८. लौ बदलैत रहैत, उजास चलैत — परिवर्तनमे कारण-सन्तति आ नैतिक उत्तरदायित्व

कवि एक पुरान मेजक उदाहरणसँ पहचानक दार्शनिक समस्या उठबैत अछि। मेजक रंग, कोन, पालिश बदलि सकैत अछि; नाम रहि सकैत अछि। भाषा “ई ओही मेज अछि” कहिकऽ वस्तुक निरन्तरताकेँ सहज बना दैत अछि, मुदा कालक भीतर ओकर पदार्थ आ रूप बदलैत रहैत अछि। घर, नदी, मनुष्य आ “हम” सन नामक स्थिरता वास्तव वस्तुक स्थिरताक स्वतः प्रमाण नहि—कविताक आरम्भ एहि अन्तरपर टिकल अछि।

बीआसँ वृक्ष, शिशुसँ वृद्ध आ पृथ्वीसँ ताराधरिक परिवर्तनक उदाहरणक बीच कवि कर्मक कारणसन्ततिक प्रश्न आनैत अछि। काल्हिक विचार आ निर्णय आइक प्रवृत्तिमे छाप छोड़ैत अछि; वर्तमानक निर्णय आगामी सम्भावना तैयार करैत अछि। एहि कारण भाग्य आ स्वतन्त्रता सरल विरोधी नहि रहैत—पहिनुक कारण स्थिति बनबैत अछि, मुदा वर्तमानमे ओकर उत्तर चुनबाक सीमित अवसर बचि सकैत अछि। ई नैतिक कल्पना उत्तरदायित्वक मार्ग उघारैत अछि, यान्त्रिक नियतिवादक नहि।

जखन “हमर” प्रतिष्ठा, विचार वा सम्पत्तिपर अत्यधिक पकड़ होइत अछि, तखन भय आ हिंसाक सम्भावना बढ़ैत अछि। स्थायी अहंकारक विचार शिथिल होएबाक संग करुणाक लेल ठाम बनैत अछि—रचनाक एक मुख्य आग्रह ई अछि। कियो क्रोधी, लोभी वा घायल अछि, मुदा ओकर वर्तमान अवस्था ओकर अपरिवर्तनीय सार नहि। एहि बोधसँ शिक्षा आ न्यायमे सुधारक सम्भावना देखल जा सकैत अछि: जिम्मेदारी रहय, मुदा व्यक्ति जीवनभरि एके लेबलमे बन्द नहि हो।

बौद्ध अनात्म आ क्षणिकताक समीप पहुँचल ई रचना आत्माक कोनो अमर कण एक पात्रसँ दोसरमे गेल जकाँ सरल मॉडल नहि रखैत अछि। अन्तक दू दीपक चित्र निर्णायक अछि: पहिल लौ बुझैत अछि, दोसर जरैत अछि; एक लौ केँ हाथसँ स्थानान्तरित नहि कएल गेल, तैयो उजासक सम्बन्ध बुझाइत अछि। एहि रूपकमे निरन्तरता आ भिन्नता दुनू बाँचल रहैत अछि। एकरा किसी विशिष्ट पुनर्जन्म-सिद्धान्तक पूर्ण औपचारिक प्रमाण बना देब पाठक सीमा लाँघब होयत।

कविताक अन्तिम नैतिक सूत्र “किछुओ अकेला नहि, किछुओ स्थायी नहि, किछुओ प्रभावहीन नहि” कारण आ करुणाक संक्षेप अछि। ई घोषणाक शक्ति लयात्मक त्रिपदीक समतामे अछि। मुदा ध्यान रहय: जे किछु बदलैत अछि, ओकरा देखिकऽ स्वतः सभ आध्यात्मिक निष्कर्ष सिद्ध नहि होइत; कविता उपमान आ नैतिक तर्कक सहायता सँ अपन दृष्टि प्रस्तावित करैत अछि। ‘दुःखक गाँठ खोलैत भोर’मे कारणक्रम मानसिक मुक्ति समझबैत छल; एहि रचनामे ओहि कारणक्रमक सामाजिक अर्थ आ पहचानक समयगत बनावट अधिक स्पष्ट अछि।

९. चार खिड़की आ एक खुलल आकाश — शून्यता, करुणा आ विचारक विविध मार्ग

कविताक आरम्भ एक पुरान सभाक विघटन आ परम्पराक भीतर अलग-अलग दिशामे बढ़ैत प्रश्नसँ होइत अछि। एकटा स्वर अनुशासन सँ परम्परा सम्हालय चाहैत अछि, दोसर प्रश्न करैत अछि जे मात्र निजी मुक्ति पर्याप्त किएक होयत। “किनार पर पहुँचि गेलहुँ तऽ फेर नाव घुमाउ” एहि भावमे करुणाक दायित्व दृश्य बनैत अछि। नाव आ किनारक उपमान निजी साधना आ लोकहितक बीचको विरोध स्थिर नहि, बल्कि फेरा मारबाक अवसर बनबैत अछि।

कीचड़मे खिलल कमल रचनाक दोसर प्रमुख प्रतीक अछि। कमल संसारसँ बाहर नहि, संसारक भीतर रहि अपन दूषित पर्यावरणसँ अन्तिम अर्थ नहि लेइत अछि। एहि बिम्बक नैतिक आग्रह संसार त्यागिकऽ निर्लिप्त रहब नहि; लोकक दुःखक भीतर उतरि लोभ आ अहंकारक नियन्त्रण घटाएब अछि। एतय बोधिसत्त्व-सदृश करुणामुखी आदर्शक संकेत भेटैत अछि, मुदा कविता कोनो एक ऐतिहासिक सम्प्रदायक बाहरी इतिहासक दस्तावेज नहि।

क्षण, कारण आ प्रभावसम्बन्धी विचार कविता केँ स्थिर वस्तु-सिद्धान्तक विरोधमे लऽ जाइत अछि। जे क्रियाशील अछि, ओ किछु प्रभाव उत्पन्न करैत अछि; कारणक एक क्षण अगिला क्षणकेँ सम्भव बनबैत अछि। एहि क्रममे निरन्तरता अपरिवर्तनीय पदार्थक सहारे नहि, निर्भर घटनाक सम्बन्धसँ बुझल जा सकैत अछि। मुदा ‘प्रभावी’ आ ‘वास्तविक’क एकता कतेक व्यापक अछि, ई अलग दार्शनिक विवाद अछि; कविता एक सम्भावित दृष्टि सामने रखैत अछि, सर्वसम्प्रदायिक निष्कर्ष नहि।

भाषाक स्तरपर “मेज”क अर्थ गैर-मेजक संसारसँ भिन्नता द्वारा बुझबाक संकेत महत्त्वपूर्ण अछि। शब्द एकाकी खड़ा नहि, पारस्परिक सम्बन्धमे अर्थ प्राप्त करैत अछि। एही तर्कसँ वस्तुसभक स्वतन्त्र सार सम्बन्धी प्रश्न उठैत अछि। शून्यता एहि पाठमे ‘किछु नहि’क निराशाजनक निर्णय नहि; निस्स्वभावताक कारण परिवर्तन आ सम्बन्धक सम्भावना अछि। जँ क्रोध अपरिवर्तनीय सार भए, सुधारक प्रयत्न व्यर्थ होइत; जँ ओ स्थितिजन्य अछि, तखन शिक्षा सम्भव।

‘चार खिड़की’क संयोजक रूपक एकाधिक दार्शनिक दृष्टिकोणको भिन्नताको बाँचने रखैत अछि। कवि सभ खिड़कीकेँ एकहिटा शीशामे बदलि नहि दैत अछि: प्रकाशक ओर खुलबाक साम्य छैक,

मुदा देखबाक कोण भिन्न अछि। आरम्भक सभाक फूट अन्तमे परस्पर समझक सम्भावनामे परिवर्तित होइत अछि। रचनाक शिल्पगत सीमा कतिपय दार्शनिक अवधारणाक संक्षिप्त परिचय रूपमे लम्बा गद्यात्मक अनुक्रम अछि; मुदा नाव, कमल, मुट्ठी आ खिड़कीक चित्र अनेक स्तरकें एक सूत्रमे बाँधैत अछि।

‘लौ बदलैत रहैत’मे क्षणिकताक अर्थ नैतिक उत्तरदायित्व छल; एतय निर्भरता आ रिक्तताको करुणाक वैश्विक सम्बन्धमे विचारल गेल अछि। दुनू रचनामे ‘स्थायी सार’क सन्देह साझा अछि, मुदा पहिल व्यक्तिक मनोवैज्ञानिक सन्ततिक ओर, दोसर दर्शनक आन्तरिक मतभेद आ लोक-सेवाक ओर अधिक उन्मुख अछि। एहि अन्तरकें मेटिकऽ दुनूकें एके सिद्धान्तक पुनरावृत्ति कहब समीक्षागत अन्याय होयत।

१०. मुट्टीक भीतर जे घर नहि — अस्मिताक आग्रह आ अनासक्तिक साहस

एहि पद्यक आरम्भ ऐना समक्ष अपनहि चेहराकें चिन्हबाक दिनचर्यासँ होइत अछि। स्मृति आ शरीर बदलैत अछि, तथापि व्यक्ति कहैत अछि—“ई हम छी”। ई व्यवहारिक कथन जीवनक लेल आवश्यक अछि; मुदा ‘हम’ शब्दक भीतर कतेक स्थिरता वास्तवमे अछि, कविता ओकर परीक्षा लेइत अछि। ऐना बाहरी रूप देखाबैत अछि, जबकि बिसरल स्मृति आ हेरायल आकांक्षा पहचानक भीतरी अस्थिरता उधारैत अछि।

कविता नौकरी, ज्ञान, प्रतिष्ठा, मित्रता आ सम्बन्धक उदाहरणसँ मनुष्यक अपन केन्द्र बनयबाक प्रवृत्तिक समीक्षा करैत अछि। “हम एहि काज कें प्रेम करैत छी” सँ “ई काज बिनु हम के?” धरि सरकबाक प्रक्रिया विशेष सूक्ष्म निरीक्षण अछि। समस्या काज नहि, ओकरा अस्तित्वक एकमात्र प्रमाण बना देब अछि। अपन प्राप्ति प्रति असाधारण आसक्ति धीरे-धीरे स्वतन्त्रताकें बाध्यतामे बदलि दैत अछि।

अनासक्ति सम्बन्ध-विरोधी भाव नहि—एहि पर कविता आग्रहपूर्वक लौटैत अछि। प्रेम करू, मुदा प्रियकें अपन रूपमे कैद नहि; मित्रता सहेजू, मुदा दोसरक बदलबाक अधिकार बनल रहय। मुट्टी आ घरक विरोधी बिम्ब एहि बातकें नाटकीय रूप देइत अछि: जतेक कसि पकड़ब, ततेक हावा लेल ठाम घटत। “घर” कदाचित् स्थिर दीवारमे नहि, खुलल सम्बन्धमे रहैत अछि। शीर्षकक नकार ‘जे घर नहि’ वस्तुक अभाव मात्र नहि, अधिकारबोधक सीमाक सूचना अछि।

कविता अनात्मकें ‘हम नहि छी’ सन सरल निहिलतामे परिवर्तित नहि करैत। व्यवहारिक व्यक्तिक नाम, उत्तरदायित्व आ सम्बन्ध जारी रहैत अछि; प्रश्न केवल स्थायी, अचल मालिकक कल्पनाक अछि। एहि भेदक दार्शनिक बल अछि—आत्माभावक प्रचार आ स्वकेन्द्रित आसक्तिक आलोचना एक बात नहि। पाठमे व्यक्ति कोनो अपराधमे चिन्हित नहि; ओकर डर आ चाहक कारणपर विचार कएल गेल अछि।

“हम तऽ अहंकाररहित छी” सन आत्म-प्रशंसात्मक कथन स्वयं नव अहंकारक रूप भऽ सकैत—एहि आत्मालोचनात्मक मोड़सँ कविता नैतिक उपदेशकें अपन ऊपर लागू करैत अछि। केवल ग्रन्थ पढ़ि अनासक्तिक घोषणा करब पर्याप्त नहि; अभ्यासक कसौटी सम्बन्धक भीतर

देखल जायत। एतय कथन आ जीवनक दूरी आलोचनाक मुख्य केन्द्र अछि, जाहि पर ‘प्रश्नक देहरी’ सेहो पहिने बल देने छल।

अन्तक दृश्य—तेज हवा, काँपैत कागजी दीवार आ खुलैत केवाड़ी—आरम्भक ऐनाकें उत्तर देइत अछि। व्यक्ति आब अपन प्रतिमा बचाबय मुट्ठी नहि कसैत, घर खोलैत अछि। दृश्यात्मक शक्ति एहि अन्तमे अधिक अछि। मध्यक तर्क-श्रृंखला कतिपय ठाम दोहरावधर्मी अछि, मुदा आरम्भ आ अन्तक बिम्बक विरोध कविता केँ संगति दैत अछि। ‘चार खिड़की’क सामूहिक करुणा एतय आत्म-पहिचानक सूक्ष्म अभ्यास बनि गेल अछि।

११. दर्पणक पार जे देखैत अछि — दृश्य, द्रष्टा आ विवेकक दोसर धरातल

भोरमे खुलल खिड़की दू संसार सामने अनैत अछि—बाहरी वस्तु आ भीतरक अनुभव। माटि, धूप, पात, ध्वनि, गन्ध आ देहक विपरीत ओ अनुभवकर्ता अछि जे एहि सभकेँ जानैत अछि। दृष्टि आ दृश्य एक नहिक प्रश्न कविता केँ सांख्य-सम्बन्धी द्वैतक ओर उन्मुख करैत अछि। दर्पणक रूपक बाहरी रूपमे उपलब्ध अछि, मुदा कविक दार्शनिक प्रश्न ई जे छवि बनयबाक आधारकेँ छविसँ अलग कोना चिन्हल जाए।

रचनामे प्रकृतिक परिवर्तनक्रम, विवेकात्मक बुद्धि, अहंकार, मन, इन्द्रिय आ स्थूल तत्त्वसभक क्रमिक उद्भावनाक चर्चा अछि। एहि शब्दसभक सामंजस्य सांख्य परम्पराक तत्त्व-विवेचनसँ जुड़ैत अछि। मुदा कविता एहि परम्पराकेँ यान्त्रिक गणनाक सूची नहि बनबैत; बदलैत प्रकृति आ अनुभवक साक्षीक बीच एक दार्शनिक तनाव रचैत अछि। इन्द्रिय साक्ष्य, अनुमान आ विश्वसनीय वचनक भूमिकासभ सेहो उठैत अछि।

साक्षी आ दृश्यक भेद कवितामे बन्धनक व्याख्या करैत अछि। जखन चेतन अनुभवकर्ता अपनहि केँ बदलैत देह, मन वा अहंकारक गुण मानि लैत अछि, तखन अपमान, उपलब्धि आ असफलताक छवि ओकर सम्पूर्ण परिचय भऽ जाइत अछि। एहिसँ अस्मिताक दुःख तीव्र होइत अछि। मुक्ति संसारक प्रत्येक दृश्य मेटेनाइ नहि; दृश्य आ द्रष्टाक बेठीक पहिचानक भेद स्पष्ट करब अछि—ई पद्यक एक केन्द्र-बिन्दु अछि।

दर्पण, फूल आ उजासक त्रिकोण एहि जटिल विचारकेँ भावग्राह्य करैत अछि। मलिन दर्पणमे रूप विकृत देखाइत अछि, शान्त दर्पणमे स्पष्ट; मुदा प्रकाश न फूल अछि, न ओकर प्रतिबिम्ब। उपमाक शक्ति स्पष्ट अछि, तथापि देहसँ सर्वथा अलग, क्रियारहित चेतनाक स्वतन्त्र अस्तित्व उपमासँ स्वतः प्रमाणित नहि होइत। आलोचकक कर्तव्य बिम्बक काव्यशक्ति आ तत्त्वमीमांसक प्रतिज्ञाक प्रमाणभेद साफ राखब अछि।

पद्यक अन्त पाठकेँ जाँचक अनुशासन दिशि फेरैत अछि—इन्द्रिय संयम, तर्क, साक्ष्यक परीक्षा, कठिन प्रश्नसँ नहि भागब। एहि कारण चेतनाक चर्चा पूर्ण निजी रहस्य बनि नहि रहि जाइत। “हम” शब्दक भीतर देह, भावना, पद, स्मृति आ सम्भावित साक्षीक विकल्प देखल जाएत अछि। उत्तर निश्चयपूर्वक बन्द नहि; जिज्ञासाक रूपमे खुलल रहैत अछि।

‘मुट्टीक भीतर जे घर नहि’मे ‘हम’क जकड़न मनोवैज्ञानिक आसक्ति छल; एहिठाम ‘हम’क विचार ज्ञाता आ ज्ञेयक दार्शनिक विश्लेषणमे बदलल अछि। दुनू रचनाक निकटता केवल विषयगत दोहराव नहि—एक मनोवैज्ञानिक परिवर्तनक भाषा, दोसर तत्त्व-विवेकक। यद्यपि रचनाक लम्बा स्पष्टीकरण कभी-कभी लयकेँ गद्यक निकट अनैत अछि, दर्पणक बिम्ब सुस्थिर केन्द्र प्रदान करैत अछि।

१२. श्वासक भीतर एक स्थिर आकाश — ध्यानक अनुशासन आ अभ्यासक सामाजिक परीक्षा

श्वास, मेरुदण्ड आ धरती पर टिकैत पयरसँ शुरू होइत ई कविता चिन्तनकेँ शरीरक भीतर उतारैत अछि। ‘स्थिर आकाश’ अनुभवक वास्तविक नील गगन नहि; बिखरल मनक भीतर एकाग्र चेतनाक सम्भावित क्षेत्रक बिम्ब अछि। शरीर साधनाक प्रथम दुआर अछि, अन्तिम लक्ष्य नहि। ई भेद रचनाकेँ केवल शारीरिक व्यायामक विवरण बनबाकसँ रोकैत अछि।

दिनभरि मन स्मृति, इच्छा, भय, अपमान आ योजनाक पाछाँ दौड़ैत अछि। “कखनो विचारसभ स्वयं हमरा सोचैत रहैत” कथनमे कर्ताक स्थान उलटि जाइत अछि; जे मन अपन बुद्धिपर अधिकार मानैत अछि से अपनहि विचारक अनुचर बनि गेल अछि। अनुशासन एहि अवस्थापर हिंसात्मक नियन्त्रण नहि, कारण देखबाक सूक्ष्म अभ्यास अछि। मन कतय भागल, किएक भागल, फेर कोना लौटल—एहि प्रश्नमे सजगताक लय बनैत अछि।

कविता साधनाक अंगसभक परस्पर निर्भरता पर बल देइत अछि। सत्यवान वाणी ध्यानमे सहायता करैत अछि; नियन्त्रित श्वास क्रोध घटा सकैत; लोभ कम भेलासँ मन हलुक होइत अछि। ई आठ सीढ़ी अलग बन्द कोठली नहि; अभ्यासक विभिन्न आयाम एक-दोसरकेँ पोसैत अछि। योगदर्शनक अष्टाङ्ग-विचारसँ संवाद स्पष्ट अछि, मुदा रचना ओकरा स्थिर नियमपुस्तिका रूपमे नहि रखैत। ओ जीवित मानव-अभ्यासक प्रक्रिया देखबैत अछि।

एक महत्त्वपूर्ण विश्लेषणात्मक सावधानी ध्यान आ विज्ञानक तुलनामे अछि। कविता कहैत अछि जे सार्वजनिक पुनरावृत्त माप आ आन्तरिक साधना-अनुभवक प्रमाणरूप भिन्न अछि। एहि भिन्नतासँ न ध्यान स्वतः विज्ञानसँ श्रेष्ठ सिद्ध होइत अछि, न विज्ञान आन्तरिक अनुभवकेँ निष्प्रयोजन ठहरा सकैत अछि। ज्ञानक अपन विषय आ परीक्षणक विधि अछि। एहि स्थानपर प्रमाण-विवेक रचनाक श्रेष्ठ गुण बनैत अछि, कारण ओ अध्यात्मकेँ अप्रतिवाद्य दावा बनबाकसँ रोकैत अछि।

रचनामे ‘हम ध्यान करैत छी’ सन आत्म-चेतना स्वयं एक सूक्ष्म परदा बनि सकैत—एहि सूचनामे अभ्यासक आत्म-संशय उपस्थित अछि। जँ साधना नवा उपलब्धि-अहंकार बनि गेल, तँ अनासक्तिक उद्देश्य विफल। श्रेष्ठतम आन्तरिक अनुभूति सेहो दैनिक वाणी, कर्म आ सम्बन्धमे परखल जायत। अन्तक चार प्रश्न—अहंकार घटल की, करुणा बढ़ल की, भय कम भेल की,

स्वतन्त्रता बढ़ल की—आत्मपरखक माप प्रस्तावित करैत अछि; ई बहिरंग वैज्ञानिक मापनक समानार्थी नहि।

‘दर्पणक पार’क द्रष्टा-दृश्य भेद एहिठाम ध्यानक अभ्यासमे नव सम्बन्ध पबैत अछि। पहिल कविता तत्त्वमीमांसक प्रश्न उठबैत छल; ई कविता अभ्यासक अनुशासन आ ओकर नैतिक फलपर केन्द्रित अछि। श्वास आ आकाशक बिम्ब कविता सँ अन्त धरि एकाग्रताक प्रतीक रहैत अछि। तथापि अवधारणाक विस्तृत चर्चा रचनाकेँ गीत सँ अधिक दार्शनिक मुक्तछन्दीय प्रवचनक रूप देइत अछि; एहि रूपक गुण-दोष मूल्याङ्कन स्वतंत्र रूपसँ आवश्यक अछि।

१३. एक-एक कणक अपन चेहरा — पदार्थ, भेद आ यथार्थक बहुवचन

दूरसँ एक रंगक कपड़ा जकाँ लागैत जगत नजदीक जखन धागा-धागा भिन्न देखबैत अछि, तखन रचनाक आरम्भिक बिम्ब पूर्ण होइत अछि। एकटा घड़ा, पाथर, गन्ध, गति आ मनुष्यकेँ एके शब्द-थैलीमे राखब सोहावन सरलीकरण भए सकैत अछि, मुदा वास्तविकता गुण, क्रिया, सम्बन्ध आ भिन्न अस्तित्वसँ बनल अछि। एहि बिन्दुपर कविता न्याय-वैशेषिक पदार्थ-विचारक उपमानात्मक परिचय दैत अछि।

रचना किछु वस्तुकेँ गुण आ क्रियाक आश्रय मानैत अछि—लालिमा ककरो रंग अछि, गमन ककरो गति। एहि भेदक लक्ष्य दुनूकेँ परस्पर असम्बद्ध करब नहि, बल्कि गुण, गुणवान् आ क्रियाक अलग अर्थव्यवस्था चिन्हब अछि। सम्बन्धक चर्चा एहि प्रश्नकेँ आरो सूक्ष्म बनबैत अछि: ईटक ढेर घर नहि, शब्दक ढेर वाक्य नहि। सम्पूर्णताक भीतरक जुड़ाव सहज हिस्सासभक योगसँ अधिक कुछ पूछैत अछि।

कवितामे प्रत्यक्ष आ अनुमानक दू ज्ञान-दुआर विशेष स्थान पबैत अछि। जगतक स्वतन्त्रता कवि फूलक रंग आ पाथरक कठोरतासँ उद्घाटित करैत अछि—वस्तु अपन उत्तर देइत अछि, व्यक्तिक इच्छा ओकरा प्रत्येक बार नव रूप नहि दैत। अप्रत्यक्ष वस्तुकेँ प्रभाव आ सम्बन्धसँ बुझबाक विचार यथार्थक प्रति जवाबदेही सिखबैत अछि। मुदा कारण-अनुमानक वैधता प्रत्येक उदाहरणमे अलग परीक्षण माँगैत अछि; कविता एक साधारण विधि सूचित करैत अछि, तकनीकी अनुमानशास्त्रक सम्पूर्ण सूत्र नहि।

जतय ज्ञान-वर्गीकरण सम्पन्न लगैत अछि, कविता मुक्तिक प्रश्न उठबैत अछि। इच्छा, कर्म, परिणाम आ पुनः बन्धनक श्रृंखला काव्यकेँ मात्र वस्तुसूची बनि रहब सँ रोकैत अछि। नीक फलओ फल-आसक्तिक आधार बनि सकैत—एहि चिन्तासँ ज्ञानक अन्तिम प्रयोजनक प्रश्न आवैत अछि। तथापि पदार्थक भेदसँ स्वयं मुक्ति-सिद्धान्त स्वतः सिद्ध नहि होइत; कवि दू परस्पर सम्बन्धित, मुदा तार्किक रूपसँ अलग स्तर एकत्र करैत अछि।

कविताक नैतिक विस्तार उल्लेखनीय अछि। जँ प्रत्येक वस्तुक अलग चेहरा अछि, तँ सामान्य नामक आड़िमे व्यक्तिक अनूठापन मेटाओल नहि जाए। एहि कथनमे अस्तित्वक बहुवचन आ मनुष्यता बीच एक सम्भावित संवाद अछि। परन्तु वस्तुक दार्शनिक व्यक्तित्व आ

सामाजिक समानताक बीच सम्बन्धक तर्क अपेक्षाकृत प्रतीकात्मक अछि; दुनूकें शाब्दिक समानता मानब सन्दिग्ध होयत।

‘हथेली भरि धरती’क प्रत्यक्ष-आधारित दृष्टि एहि रचनाक प्रमुख पूर्वसंवाद अछि। ओतय देह आ सार्वजनिक साक्ष्य सँ जाँचक प्रवेश छल; एतय वस्तुक भेद आ वर्गीकरणक तार्किक प्रश्न अधिक संगठित अछि। अन्तक “एक-एक कणक अपन चेहरा” शीर्षकक पुनरागमन वस्तुवादी विश्लेषणकें विनम्रताक व्यवहारिक शिक्षा बनबैत अछि। दार्शनिक विवरण अनेक ठाम काव्यात्मक संक्षेपपर भारी अछि, मुदा धागा, कपड़ा आ चेहराक रूपक रचनाकें अपन काव्य-रूप दैत अछि।

१४. धुँआक पार जे आगि अछि — अनुमानक विश्वसनीयता आ तर्कक आत्म-परीक्षण

पहाड़क माथपर उठैत धुँआ आ आँखिसँ अदृश्य आगि कविताक पहिल दार्शनिक पहेली अछि। प्रत्यक्षक अनुपस्थिति भीतर अनुमानक आवश्यकता जन्मबैत अछि, मुदा दूरसँ देखल चिह्नक आधारपर विश्वास योग्य निष्कर्ष कोना बनेत? एहि साधारण दृश्यसँ रचना न्याय-परम्पराक प्रमाण-विचार दिस बढैत अछि। धुँआ एतय केवल वस्तु नहि, अदृष्ट कारणक चिह्न अछि; ओकर पाठ करब ज्ञानक कार्य।

रचनाक मुख्य आग्रह निष्कर्ष सँ पूर्व विधिक परीक्षा अछि। मनुष्य बहुत बेर अपन उत्तर पहिने तय करैत अछि, तर्क बादमे खोजैत अछि। कविता एहि क्रमकेँ उलटि प्रमाण, कारण, विरोधी कथन आ अपवादक जाँच करबाक परामर्श दैत अछि। “हम किएक मानैत छी” प्रश्न बाहरी सत्यकेँ नहि, ज्ञाताक अपन मानसिक ढीलापनकेँ सेहो परखैत अछि। एही कारण अनुमान-विवेचन आत्मालोचनाक नैतिक क्रिया बनैत अछि।

प्रत्यक्षक सूक्ष्म चर्चा पाठमे विशेष महत्त्व रखैत अछि। आँखि रंग देखैत अछि आ कान ध्वनि सुनैत अछि, मुदा मनक चयन आ बुद्धिक वर्गीकरण अलग चरण अछि। कच्चा संवेदन आ नामसहित निर्णयक बीचक अन्तर संकेत करैत अछि जे “हम देखलहुँ” वाक्य स्वतः पूर्ण ज्ञानक गारंटी नहि। एकर बाद विशेष अनुभवसँ सामान्य सम्बन्ध आ सामान्यसँ विशिष्ट निष्कर्षक तर्क-पथ खुलैत अछि। कविता तर्कक तकनीकी क्षेत्रकेँ सामान्य पाठकक अनुभवसँ जोड़ैत अछि, मुदा प्रत्येक प्रसंगमे औपचारिक नव्य-न्यायावच्छेदक पदावली नहि देइत अछि।

एहि पद्यक एक विचारोत्तेजक मोड़ आत्मा, देह, मन आ चेतनाक सम्बन्धक चर्चा अछि। न्यायसम्बन्धी एक दृष्टिमे आत्माकेँ देह वा मनक साधारण समतुल्य नहि मानल जाएत अछि, आ मुक्त अवस्थामे चेतनाक स्वरूप पर सेहो भिन्न प्रतिज्ञा उपस्थित अछि। कवि एहि कठिन विचारसँ पाछाँ नहि हटैत। आलोचनाक दृष्टिसँ एकरा विभिन्न भारतीय परम्पराक सर्वमान्य धारणा बनाउब अनुचित, कारण ई विशिष्ट तत्त्वमीमांसक प्रतिपादन अछि।

जखन कविता कहैत अछि जे आगि नहि भेटला पर निष्कर्ष सुधारू, अनुभव बढ़ाउ, नियम पुनः जाँचू, तखन तर्कक कठोरता आ आत्म-संशोधन एक संग अबैत अछि। ई पाँति दर्शनक प्रतिषेध नहि, दार्शनिक विनम्रता अछि। सत्यक खोज जँ अपन गलती स्वीकारि नहि सकय, तँ

पहाड़क धुँआ आगिक प्रमाण बनि रहबाकसँ पहिने भ्रमक प्रमाण बनि सकैत अछि। एहि प्रकार पहिल बिम्बक अर्थ अन्तमे भीतरक अज्ञानक धुँआ धरि फैलैत अछि।

‘एक-एक कणक अपन चेहरा’मे पदार्थ आ अनुमानक सामान्य परिचय छल; एहि रचनामे अनुमानक युक्ति स्वयं प्रमुख पात्र अछि। दार्शनिक विषयक गहराई रचनाक उपलब्धि अछि, मुदा विस्तारक कारण लोक-लयक अपेक्षा प्रमाणमीमांसक व्याख्या अधिक स्थान लेइत अछि। आरम्भ आ अन्तक धुँआ-आगि रूपक एहन विस्तारकें एक दृश्यात्मक केन्द्रमे बाँधि रखैत अछि।

१५. अनेक नामक पाछाँ एक अनाम उजास — स्तुति, ऋत आ नामक अतिक्रमण

एहि कविता आरम्भमे मनुष्य आकाश, बादल, धूप, नदी, अन्न, रोग आ बरखाक शक्तिसँ गप करबाक लेल गीत रचैत अछि। आरम्भिक प्रार्थना केवल बाह्य सत्ता प्रति अन्ध आज्ञाकारिता नहि; एतय भय, कृतज्ञता, आकांक्षा आ जीवन-सुरक्षाक सम्मिश्र स्वर अछि। गीत आ अनुष्ठानक जन्म एहि रूपमे सामाजिक स्मृति आ प्रकृतिक संग सम्बन्ध स्थापित करबाक अभ्यास बनैत अछि।

अनुष्ठानक विधि आ समुदायक साझा लयक चर्चा महत्त्वपूर्ण अछि। कखन कहब, की अर्पित करब, केना स्मरण करब—एहि पुनरावर्तनसँ समय, परिवार आ सामाजिक दायित्वक एक गठन विकसित होइत अछि। मुदा कविता केवल विधिक इतिहास नहि लिखैत; ओ पूछैत अछि जे बाहरी कर्मक भाव-केन्द्र कतय अछि। जखन शब्द रीतिक अनुचर भऽ जाइत अछि, तखन भीतरक प्रश्न समाप्त भऽ सकैत अछि; कवि एहिसँ आगाँ बढ़बाक प्रयत्न करैत अछि।

ऋतु-चक्र, बीज-अङ्कुर, दिन-रातिक क्रमक उदाहरणसँ जगतक एक लयक कल्पना होइत अछि। ई नैतिक ऋतुबोध दिस एक दार्शनिक प्रवेशक रूपमे पढ़ल जा सकैत अछि। तथापि प्राकृतिक क्रमसँ मनुष्यक नैतिक नियम स्वतः तर्कानुसार सिद्ध नहि होइत—एहि ‘अछि’ सँ ‘हेबाक चाही’ धरि छलाँगकेँ कविताक काव्यात्मक प्रस्ताव रूपमे चिन्हब आवश्यक अछि। ई भेद आलोचना केँ मिथकीय रूपक आ अनुभवजन्य प्रमाणक अलग स्थिति स्पष्ट करबैत अछि।

एक सूत्रमे कविता अनेक नाम आ रूपक पाछाँ अनाम रहस्यक खोज करैत अछि। ई न केवल एक देवताकेँ दोसरसँ प्रतिस्थापित करबाक कथा अछि, न नामसभकेँ अर्थहीन घोषित करब। बाहरी प्रतीक, भीतरक प्रश्न आ अनुभवक गहराई एकटा विकसित सम्बन्ध बनबैत अछि। प्रेम जकाँ—ओ एक चेहरामे उपस्थित भऽ सकैत अछि, मुदा ओकर व्यापक अर्थ ओहि एक चेहरामे समाप्त नहि—एहि उपमानसँ कविता निकटता आ अतिक्रमण दुनूकेँ स्थान देइत अछि।

कविताक एक चुनौती ऐतिहासिक विविधताकेँ अत्यधिक सुगम ‘एक दिस यात्रा’क आख्यानमे समेटि देबाक सम्भावना अछि। वैदिक गीत, अनुष्ठान, उपासना आ दार्शनिक अनामत आ एके कालक्रमक अनिवार्य सीढ़ी नहि; कविता एहि सभकेँ वैचारिक संवादमे रखैत अछि, स्वतंत्र

स्रोत-आधारित कालइतिहास नहि दैत। एहि सावधानीसँ रचनाक अन्तिम उजास-बिम्बक सौन्दर्य कम नहि होइत, उलटे ओकर काव्यात्मक दर्जा स्पष्ट होइत अछि।

‘धुँआक पार जे आगि अछि’मे चिन्हसँ सत्य धरि अनुमानक यात्रा छल; एहिठाम नाम आ अनुष्ठानसँ भाषा-पार रहस्यक प्रश्न अछि। दुनू रचनामे ‘जे देखाइत नहि’क खोज अछि, मुदा पहिल प्रमेय-परीक्षणक कसौटीसँ, दोसर स्तुति आ अनुभवक बहुविध रूपसँ बढ़ैत अछि। एहि अन्तरक कारण संग्रह दार्शनिक बहुलताकेँ एके वाक्यमे मेटि नहि दैत अछि।

१६. भीतरक आकाश, बाहरक आकाश — परिवर्तनशील अनुभव आ अनिर्वचनीय आधार

चन्द्रमाक कलासँ ऋतुक परिवर्तन, बच्चासँ युवा होयब, पातक झरब आ नदीक बदलैत किनार—एहि दृश्यसभक क्रम कविता केँ परिवर्तनक समान धरातलपर शुरू करैत अछि। ई आरम्भ पाठककेँ जीवनक अनेक स्थिर मानल वस्तुसभक अस्थिरता अनुभव करबैत अछि। तकर बाद रचना विचार उठबैत अछि जे जखन बदलाव देखाइत अछि, तखन स्थिर आधारक प्रश्न कोना जन्मैत अछि। ई प्रश्न अन्तिम उत्तर नहि, खोजक प्रवेश-द्वार अछि।

रचनामे नकारात्मक अभिव्यक्तिक एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अछि। भाषा जे विशेषण दैत अछि से सीमित करैत अछि; जेयक अन्तिम आधारपर सामान्य गुण लगबैत काल शब्दक सीमा स्पष्ट होइत अछि। कवि एहि नकारकेँ निषेधात्मक शून्यता मानबाक बदला मूर्तिकारक पत्थर काटबाक उपमा दैत अछि—अनावश्यक सीमित विशेषण हटैत अछि, ताकि नव अनुभवक ठाम बने। एहि बिम्बसँ ‘नेति-नेति’ सन नकारात्मक चिन्तनक काव्यात्मक तत्त्व स्पष्ट होइत अछि।

मुदा कविता संसारक अनुभवकेँ शाब्दिक रूपसँ झूठ नहि कहैत अछि। भूख, रोग, शोक आ प्रेमक आँसू वास्तविक रूपसँ घटैत अछि, भले ओकर व्याख्या अन्तिम नहो। सपना जागलाक बाद मेटि जाइत अछि, मुदा सपना देखैत समय ओ प्रभाव रखैत अछि। रस्सीकेँ गलत चिन्हबाक सम्भावना प्रयोग करैत कवि अनुभव आ अनुभवक सत्य-व्याख्या अलग करैत अछि। ई अन्तर पहिल दीर्घ रचना ‘कालक धार पार अनन्तक उजास’क “अन्तिम नहि” बनाम “असत्य” भेदसँ स्पष्ट वैचारिक सम्बन्ध राखैत अछि।

अमरता सम्बन्धी चर्चा एहि भेदकेँ कालपर लागू करैत अछि। अनन्त वर्ष धरि एके शरीर रहब अमरताक एक बालसुलभ कल्पना हो सकैत अछि; कविता प्रश्न करैत अछि जे अमरता समयक अधिक मात्रा नहि, सत्यक दोसर स्तरक बोध सेहो हो सकैत अछि। ई दार्शनिक सम्भावना अछि; उपलब्ध काव्य-पाठसँ आत्माक अपरिवर्तनशील सत्ताक स्वतंत्र अनुभवजन्य प्रमाण नहि भेटैत। समीक्षामे एहि भेदकेँ अतिक्रमित नहि कएल जा सकैत अछि।

तीर आ लक्ष्य, भीतरक कमल आ बाहरी तारा सन बिम्ब रचनाकेँ ध्यानोन्मुख आयाम दैत अछि। “दू आकाश वास्तवमे कतय अलग अछि?” एहि प्रश्नक अन्तिम खुलापन कविता केँ कठोर समाधानसूची बनबाकसँ रोकैत अछि। उत्तर भाषा नहि बनि सकैत, मुदा जीवनक चाल

बदलि सकैत—कम भय, कम विभाजन, अधिक करुणा। एहि व्यावहारिक परिणतिक कारण अमूर्त चिन्तन लोकजीवनसँ कटल नहि रहैत अछि।

रचनाक शिल्पगत जोखिम एक आत्मिक आधारक सम्भावनाकेँ क्रमशः पूर्व-स्वीकृत निष्कर्ष जकाँ प्रस्तुत करबाक स्थानसभमे अछि। तथापि प्रश्नवाचक भाषा एहि जोखिमकेँ किछु घटबैत अछि। ‘अनेक नामक पाछाँ एक अनाम उजास’मे नामसभक बहुलताक पाछाँ अर्थक खोज छल; एहि कवितामे भीतर-बाहरक सापेक्ष दूरी आ अन्तिम अनुभूतिक अनिर्वचनीयता प्रधान अछि।

१७. तीन दुआर, एके अनन्तक दिस — अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आ द्वैतक बहस

एहि कविताक पहिल दृश्य तीन दुआरक अछि। पहिल कहैत अछि जे भेद अन्तिम सत्य नहि; दोसर भेदकें वास्तविक मानैत अछि मुदा व्यापक एकताक अन्तर्गत; तेसर भेदकें ज्ञान आ अनुभवक मूल व्याकरण मानैत अछि। एहि ढाँचासँ अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आ द्वैत दार्शनिक दृष्टिक भिन्न प्रश्न उठैत अछि। शीर्षकक ‘एके अनन्तक दिस’ ई नहि सिद्ध करैत जे तीनू दार्शनिक मत अन्तमे एकहि निष्कर्ष देइत अछि—कविता समान आकांक्षाक भीतर मतभेद सुरक्षित रखबाक काव्य-यत्न करैत अछि।

पहिल दुआर पर ज्ञानक साधना प्रमुख अछि। नाम, रूप, गुण आ व्यवहारक भेदक पाछाँ वास्तविकताक आधार चिन्हबाक आग्रह अछि। सुनब, विचारब आ आत्मबोधक अभ्यास शब्दक निष्कर्षसँ बढ़ि जीवनक रूपान्तरण बनबाक चाही। मुदा एकहि बिन्दुपर दोसर दुआर प्रश्न करैत अछि: यदि सभ भेद अन्ततः मेटि गेल, तँ प्रेमक “तूँ” कतय रहत? ई आपत्ति कविताक बौद्धिक ईमानदारीक परिचायक अछि, कारण ओ विरोधी मतकें यन्त्रवत् मूर्खता बनि नहि देखबैत।

दोसर दृष्टिमे गुण, सम्बन्ध आ प्रेम वास्तविक रहि एक व्यापक सत्यक भीतर अर्थ पबैत अछि। तेसर दृष्टि ज्ञाता-ज्ञेयक भेदकें ज्ञानक आवश्यक शर्त मानैत अछि—फूलकें देखनेक अर्थ फूल आ देखनिहारक भिन्नता अछि। एहि भेदपर भक्ति आ परमात्माक समक्ष जीवक पृथक् स्थिति महत्त्व पबैत अछि। ओहि कारण मुक्ति ‘मिलन’क एकरूप सूत्र नहि रहैत; स्वरूप-बोध, प्रेमसंगति आ परम निकटताक भिन्न अर्थ सम्भव होइत अछि।

रचना तीनू दृष्टिक साधनाक महत्वो परखैत अछि। ज्ञान, प्रेम आ समर्पणक प्राथमिकतामे भिन्नता मनुष्यक धार्मिक मनोविज्ञानक विविध आग्रह बनि उठैत अछि। मुदा अनुभवक साधारण समानता दार्शनिक सिद्धान्तक विरोध समाप्त नहि करैत। “यदि भेद मिथ्या, तँ भक्ति केकरा सँ?” आ “यदि भेद अन्तिम, तँ एकता कतय?” सन प्रश्न वास्तविक तनावक रूपमे बनल रहैत अछि। एहि कारण कविता काव्यमय संवाद अछि, दार्शनिक बहसक अन्तिम निर्णय-पत्र नहि।

ऐतिहासिक टिप्पणी-परम्पराक संकेत एतय उपयोगी अछि—सूत्रक लघुता अनेक व्याख्या सम्भव बनबैत अछि, आ प्रत्येक व्याख्या अपन युग, साधना आ प्रमाणक प्राथमिकता लऽ कऽ आबैत अछि। मुदा विशिष्ट भाष्यकारक पाठ प्रत्यक्ष उद्धृत नहि भेलासँ समीक्षो कोनो अनाम

कथनकेँ कोनो ग्रन्थक शब्दशः प्रमाण नहि ठहरबैत। साहित्यिक स्तरपर तीन दीप, तीन दुआर आ खुलल आकाशक छवि संवादक रूपरेखा बनबैत अछि।

‘भीतरक आकाश, बाहरक आकाश’मे अन्तिम आधारक खोज प्रश्नवाचक रूपमे छल; एतय ओहि प्रश्नपर अनेक परम्परागत उत्तर प्रतिपक्ष रूपमे उपस्थित अछि। कविताक विशिष्टता मतभेदक उच्चारण अछि, दुर्बलता जटिल दार्शनिक मतसभकेँ सीमित बिम्बमे समेटबाक बाध्यता। ई सीमा काव्य-रूपकक सीमा अछि, त्रुटिपूर्ण श्रेय देबाक अनुमति नहि।

१८. दू हवाक बीच जागैत नव भोर — इतिहासक भेट, आत्मिक सम्भावना आ आलोचनात्मक आधुनिकता

एक सभ्यता सीमा-बन्द घरमे एकाकी नहि बढैत—एहि प्रतिज्ञासँ कविता आरम्भ होइत अछि। दूरक हवा तलवार, व्यापार, पुस्तक आ प्रार्थना लऽ कऽ आबैत अछि। बाह्य सम्पर्ककें कवि एकमात्र मधुर विनिमय नहि मानैत: सत्ता, भय आ संघर्षक उपस्थितिसँ इतिहासक हिंसक आयाम स्वीकारैत अछि। मुदा समयक दीर्घ क्रममे भाषा, स्थापत्य, संगीत आ विचार सेहो एक-दोसरसँ बदलैत अछि। हवाक रूपक एहि दोहरा अनुभवक वाहक अछि।

“इतिहासक आघात केवल दीवार तोड़ैत नहि, आईनाओ समक्ष रखैत” कथन रचनाक प्रमुख वैचारिक केन्द्र अछि। आघात अपन पहिचानक विवेचन करबैत अछि—जे रीति पहिने स्वतःसिद्ध छल, ओ आब कारण माँगैत अछि। परम्पराक आलोचना ओहि परम्पराक सर्वथा विनाश नहि; आलोचनाविनु पहिचान जड़ता बनि सकैत अछि। एहि विचारमे कवि अपन सांस्कृतिक आत्मरक्षाकें आत्मजाँचक प्रतिद्वन्द्वी नहि बनबैत।

आधुनिकता सम्बन्धी कविता द्विधा दृष्टि अपनबैत अछि। मशीन दूरी घटा सकैत अछि, मुदा अकेलापनक समाधान स्वतः नहि; राज्य नियम बना सकैत अछि, मुदा करुणा उत्पन्न करबाक गारंटी नहि; विज्ञान आयु बढ़ा सकैत अछि, मुदा जीवनक मूल्यनिर्णयक पूरा दायित्व नहि उठा सकैत। ई कथन वैज्ञानिक उपलब्धिक अस्वीकृति नहि, ओकर विषयक सीमा आ मानवीय नैतिक प्रश्नक भिन्नता देखबैत अछि। कविता प्रौढ़ आधुनिकताकें अतीतक हास्यास्पद अवशेष मानबाक विरुद्ध रखैत अछि।

रचनमे पाथर, वृक्ष, पशु आ मनुष्यक बीच आत्मिक विकासक सम्भावना सम्बन्धी विचारो अछि। मनुष्यक “छोट हम” अनुभव, देह, तर्क आ इतिहाससँ बनैत अछि, मुदा व्यापक आत्मिक गहराईक खोज ओ सीमित पहिचान पर प्रश्न उठबैत अछि। ई विचार प्रगतिशील आत्मिक विकासक काव्यात्मक प्रस्ताव अछि; जैविक विकासक प्रयोगजन्य सिद्धान्तसँ एकरा अभिन्न नहि ठहराओल जायत। ई भेद राखिते कविता विज्ञान आ अध्यात्मक आलोचनात्मक सह-अस्तित्व पर अधिक ठोस बनैत अछि।

परम्परा आ आधुनिकताक मेल रचना मे आधा-आधा जोड़ नहि, नव गुणक सम्भावित जन्म अछि। नया प्रश्न, नया संवेदना आ नया संस्था—एहि त्रयी सँ कवि संगमक सक्रिय अर्थ स्थापित करैत अछि। दोसरक अनुकरण नहि, अपन पुरान रूपक यथावत् संरक्षणो नहि; स्मृति आ आलोचनाक संयोजन अछि। एहि ठाम विदेह समानान्तर ऐतिहासिक पद्धतिक प्रासंगिक प्रश्न उभरैत अछि जे सत्ताधारी इतिहासक बाहर लोकक दैनिक अनुभव एहि परिवर्तनकें कोना चिन्हैत अछि। मुदा कवितामे विशिष्ट काल-दस्तावेजक अभाव रहला कारण एहि प्रश्नक उत्तर आगामी ऐतिहासिक अध्ययनमे खोजनाइ आवश्यक।

अन्तमे समुद्रक नमी लऽ आबैत हवा आ आँगनक माटिक गन्ध एक नव श्वास बनबैत अछि। दृश्य रचनाक इतिहास-दर्शनकें संवेदनात्मक रूप दैत अछि। खिड़की खुलल अछि, मुदा घरक नींव सजग रहबाक चाही—एहि द्वैतक कारण कविता न अन्ध आत्मसमर्पण, न पृथक्तावादी भयक समर्थन करैत अछि। ‘तीन दुआर’मे एक परम्पराक भीतर दार्शनिक मतभेद छल; एतय सभ्यतासभक भेट आ आलोचनाक सम्भावना अछि। खण्ड १क अन्तिम पद्य रूपमे ई रचना आरम्भक ‘कालक धार’क इतिहास-प्रश्न कें नवा सामाजिक क्षितिज दैत अछि।

१९. नजरि लागि जाइ छै — मायक नेह आ लोकविश्वासक भीतरी नाटक

एहि कविताक मूल स्वर मायक चिन्तासँ बनैत अछि। “जे नजरि लागि जाइ छै” कथन अनेक बेर लौटैत अछि, मुदा प्रत्येक बेर अर्थ एके नहि रहैत। बेटाक प्रशंसा सुनिते मायक करेज धकसँ होइत अछि; जे सामान्य दृष्टिसँ आनन्दक बात अछि, ओ मातृत्वक भयमे संकट बनि उठैत अछि। प्रेमक गहराई आ अनिष्टक आशंका एक-दोसरसँ उलझल अछि। कविता लोकविश्वासक अस्तित्वकेँ केवल बाहरी सिद्धान्त नहि, घरोआ व्यवहारक अनुभव रूपमे देखबैत अछि।

सरिसौ-तोरी आ मेरचाइक धुआँ, सुरसुरी लागब अथवा नहि लागब—ई सभ संकेत लोक-उपचारक दृश्यात्मक वस्तु अछि। मायक मन एहि अस्पष्ट सङ्केतकेँ अपन आश्वासनक पद्धति बनबैत अछि। सुरसुरी जखन लागैत अछि तखन माय मुस्कुरा उठैत छथि आ आगिमे फेर किछु डालैत छथि। कविता लोकविश्वासक वैज्ञानिक सत्यता प्रमाणित नहि करैत; ओ विश्वास आ स्नेहक सँगठित दैनिक अभिनय देखबैत अछि।

शिल्पक आधार आवर्तित पाँति आ मायक बोली अछि। “बाते-बातपर हमर बेटाकेँ” सन पुनरुक्ति डरक लय बनबैत अछि; अन्तमे ओकरा निराशाजनक अन्त नहि, मायक मुस्कीक विराम भेटैत अछि। लोकभाषाक सहजता विषयक अनुरूप अछि। कविता आधुनिक बौद्धिक उपेक्षासँ बाँचि ओहि भावनात्मक संरचनाकेँ चिन्हैत अछि जतय विश्वासक काम सन्तानक रक्षा करबाक चिन्ताक संग जुड़ल अछि। एतय मायक निजी आवाज संग्रहक पहिल खण्डक दार्शनिक निष्कर्षसभसँ स्पष्ट भिन्नता रखैत अछि।

एहि रचनाक आलोचनात्मक सीमा ई प्रश्न अछि जे असुरक्षा घटेबामे अनुष्ठानक वास्तविक प्रभाव कतेक अछि। गीत उत्तर नहि दैत; तकर महत्व मनोवैज्ञानिक सत्यक अंकनमे अछि। प्रेमक चिन्ता जखन लोकक रीत बनैत अछि, साहित्य ओकरा अन्धविश्वास अथवा प्रमाणित चिकित्सा दुनूमे जल्दीसँ समेटि नहि सकैत।

२०. भाग्यशाली — थाकल प्रतिरोध, समूहीय उपहास आ आत्मगत विडम्बना

“हारि गेल”क छोट उद्घाटन पाठककेँ पराजित मानसिक अवस्थामे पहुँचा दैत अछि। “विचित्र जीव”सभ एक-दोसरक विरोधमे रहितो एक संग पक्ष आ विपक्ष बनि जा सकैत छथि। एहि विरोधाभासी व्यवहारक बीच वाचकक साँस फूलैत अछि आ माथ फाटबाक अनुभूति होइत अछि। राजनीतिक वा बौद्धिक समूहक अन्तर्विरोधक व्यंग्यक सम्भावना प्रबल अछि, मुदा कविता ककरो सुनिश्चित संगठन अथवा ऐतिहासिक व्यक्तिक नाम नहि दैत।

“संगी जोश बढ़ा दै छथि” कहलाक तुरन्त बाद उपहास, पुरान लड़ाइक गाथा आ बैसाखीक सहारे चलबाक बिम्ब आ जाइत अछि। सहयोग आ हतोत्साहनक सीमा अस्पष्ट बनैत अछि। जे उत्साह देइत छथि, ओएह व्यक्ति कखन थाकल लोकक “मोनक पकमान” बनबैत छथि। ‘भाग्यशाली’ शीर्षक ताहि अर्थमे सोझ प्रशंसा नहि; हताश अनुभवक विपरीत विडम्बनात्मक प्रकाश अछि।

“अहाँकेँ स्टार भेटल, तकर रहस्य की?” आ “सय पन्नामे घोसिआयल एकटा छोटो गप” सन उल्लेखक भीतर मान्यता आ वास्तविक पाठकीय श्रमक बीच अन्तर खींचल गेल अछि। उपाधि, प्रदर्शन आ कठिन कामक असमान मूल्याङ्कन कविताक चोट अछि। व्यंग्यक शक्ति मुखौटा बदलैत पात्रसभ आ बदलैत उच्चारणमे अछि; शिल्पगत कठिनाई ई जे सन्दर्भ अत्यन्त टुटल-जुड़ल अछि आ कतेक आरोप बिना दृश्य-परिस्थितिक विस्तारक पाठकपर छूटि जाइत अछि।

अन्तमे “लोकक प्रेम” आ “विश्राम”क विचित्र सम्बन्ध एक अस्थिर विराम दैत अछि। प्रेम विश्राम देलक वा संघर्षक इच्छा ढील कएलक—दुनू अर्थक सम्भावना अछि। एहि अनिश्चितताक बीच कविता काव्यगत तनाव सुरक्षित रखैत अछि; एकरा पूर्ण सामाजिक कथानक मानिकऽ बेसी पात्र-विवरण जोड़ब आधारहीन होयत।

२१. जाइत जाइत — दूर देशक यात्रा आ प्रमाणक अनिर्णय

एहि कवितामे यात्रा एकटा निश्चित नक्शाक अनुसार नहि चलैत। वाचक पहिने अनेक बेर घुरि आएल अछि; ओहि बेर ओकरा लगल जे बाटक अदहा हिस्सा पार कएल गेल। आब ओ एते दूर जाय चाहैत अछि जतयसँ पुनरागमन असम्भव लगैत अछि। एहि कथनमे दूरी मात्र भौगोलिक नहि, अपन पुरान परिचय सँ अलग होयबाक अस्तित्वगत भय अछि।

“बिलाइत रस्ता”, “ने कोनो चिन्हासी” आ “ने कनियो आस”क आवृत्ति निरन्तर आगाँ बढ़बाक विरोधाभास तैयार करैत अछि। यात्रा पूरा होइत अछि, मुदा ओहि पूर्णताक बाद “एकटा काजक ... फेरसँ आरम्भ”क बात अबैत अछि। परिणाम अन्तिम सत्य नहि, नव प्रयोगक आधार अछि। “प्रयोगेक प्रयोग” आ “परिणामेक प्रमाण”क कथन एहि संशयक भाषा अछि: जे यात्राक उद्देश्य छल, ओकर प्रामाणिक फल अखनो अस्पष्ट अछि।

पुरान देशक “डेरायल लोक” आ “पिरौछ गाछ-बृच्छ”क स्मृति नव वातावरणक आशा सँग जुड़ल अछि। देश बदललासँ निश्चयपूर्वक मुक्तिक गारंटी नहि—रस्ता फेर दूर दिस धकेलि सकैत अछि। एहि द्वन्द्वक कारण कविता सरल पलायनक प्रशस्ति नहि बनैत। पुरान परिचयक भार आ नव प्रयोगक आकांक्षा दुनू उपस्थित अछि।

शिल्पमे “जाइत जाइत”क ध्वन्यात्मक पुनरावृत्ति पयरक लय दैत अछि, जबकि टुटल पाँति यात्राक अनिर्णीत विराम। ‘भाग्यशाली’क समूहीय विरोधक बाद एहि कविता अधिक आत्मगत अछि; कतहु साफ घोषणा नहि, खाली बढ़ैत दूरी आ पहिचानक संकट अछि।

२२. बिलाइत आसक चेन्हासी — दृश्य-अक्षर आ अन्हारक गति

एहि कविता सँ पाठककेँ अत्यन्त छोट आकारमे एकटा गहन दृश्यानुभव भेटैत अछि। दुनू कात गाछ, रस्ताक संग चलैत छाया आ घन होइत अन्हारक बीच वाचक अपन ‘चेन्हासी’ पक्का होयबाक आशा करैत अछि। मुदा छायाक घनता ज्ञान नहि दैत; उलटे ओ परिचित मार्गकेँ मिटबैत अछि। आस आ दृश्य-बोधक बीच असंगति कथ्यक मुख्य बिन्दु अछि।

मूल पाण्डुलिपिमे “घ”, “न ग र”, “हो”, “इ”, “त”, “चे”, “न्हा”, “सी” सन बिखरल अक्षर आ पाँतिक रूप विशेष महत्त्वपूर्ण अछि। एकरा सामान्य टंकण-दोष कहि स्वतः सुधारि एकरेखीय गद्य बनाओल जाए, तँ कविताक दृश्य-प्रयोग मेटि जाएत। पाठक शब्दकेँ टूटैत आ पुनः बनैत देखैत अछि, जखनकि वाचकक चिन्हबो टूटैत अछि। ई रचना आँखिसँ पढ़बाक प्रक्रिया पर स्वयं टिप्पणी बनैत अछि।

अन्तक “अन्हार गुज्ज भऽ जाइत अछि / हमर आसक चेन्हासी बिला जाइत अछि” आरम्भक घन होइत छायाकेँ अर्थगत परिणति दैत अछि। रस्ताक भौतिक उपस्थितिक संग मनक मार्ग-बोधक अनुपस्थिति द्विरुक्त शून्यता रचैत अछि। शिल्पक सफलता ध्वनि आ दृश्य-पंक्तिक अस्थिर विन्यासमे अछि; पाठान्तरिक मुद्रणमे अक्षरसभक विन्यास बिगड़ला पर अर्थगत क्षति होएबाक सम्भावना विशेष रहैत अछि।

‘जाइत जाइत’मे चिन्हासी हेरायबाक चिन्ता विस्तृत यात्रा छल; एहि रचनामे ओही अनुभव अत्यन्त संक्षिप्त, लगभग चित्रात्मक रूप ग्रहण करैत अछि। दुनूकेँ अलग कविता मानब आवश्यक अछि, कारण एकमे यात्रा-कालक प्रश्न, दोसरमे अक्षरक भौतिक विखण्डन मुख्य काव्य-क्रिया अछि।

२३. शामिल बाजाक दुन्दभी वादक — इन्द्रिय-विपर्यय आ सहभागिताक अभिनय

कवि “देखैत दुन्दभीक तान / सुनैत शून्यक दृश्य”क इन्द्रिय-विपर्यय सँ आरम्भ करैत अछि। सामान्यतया जे सुनबाक वस्तु अछि ओकरा देखल जा रहल अछि, आ जे देखबाक वस्तु अछि ओकरा सुनल जा रहल अछि। एहि परस्पर अदल-बदलसँ कविता अनुभूतिक विश्वसनीयता आ प्रदर्शनक बाहरी रूपपर प्रश्न उठबैत अछि। प्रकृतिक कैनवास, उफनैत समुद्र आ अन्हार खोहक चित्र एहि भ्रमकेँ अनेक दृश्य दैत अछि।

सागरक असीमता, गोल पृथ्वीक परिधि आ आकाशक सीमा पूछैत कविता गणना आ अनुभवक भिन्नता सामने अनैत अछि। मनुष्य जकरा मापि लेल मानैत अछि, ओहि मापक आगे फेर नवा असीमताक कल्पना जन्मि सकैत अछि। मुदा रचना केवल विज्ञानक विस्मयक काव्य नहि; ई मापनक व्यग्रताक कारण प्रत्यक्ष चित्र देखब आ लहरि सुनब बिसरि जाएबाक विडम्बना सेहो खोलैत अछि।

अन्तक “शामिल बाजाक दुन्दभी वादक” एकटा व्यंग्यात्मक आत्म-परिचय अछि। मूल पाठमे राजस्थानक बाजा-बजेनिहार समूहक ओ व्यक्ति सम्बन्धी टिप्पणी अछि जे बाजाकेँ मुँह लगबैत छथि, मुदा स्वर निकालबाक अनुमति नहि रहैत। एहि टिप्पणीसँ कविताक सामाजिक अर्थ स्पष्ट होइत अछि—संगमे रहब आ वास्तविक योगदान देब सर्वथा एक बात नहि। अनुष्ठानिक सहभागिता कभी-कभी मात्र अभिनय बनि सकैत अछि।

बिम्बक जटिलता आ व्यंग्यक दूरी कविता केँ अन्य लोकदृश्यसँ अलग करैत अछि। “स्वरकेँ देखबाक, चित्रकेँ सुनबाक” सन प्रयोग संवेदनक विपर्ययकेँ काव्य-शिल्प बनबैत अछि; परन्तु अत्यधिक अमूर्त असीमता-विवेचन शेष दृश्यसभ सँ कतहु दूर चलि जाइत अछि। अन्तक टिप्पणी विषय स्पष्ट करैत अछि, मुदा कविताक अन्तर्निहित रहस्यकेँ किछु कम सेहो करैत अछि।

२४. मन्दाकिनी जे आकाश मध्य — नदी-संगम आ विस्मयक रूपक

“मन्दाकिनी जे आकाश मध्य / देखल आइ पृथ्वीक ऊपर” एहि उद्धाटनमे ऊर्ध्व आ अधःक द्वन्द्व अछि। जे आकाशक मन्दाकिनी अछि से पृथ्वीक नदी-संगममे देखल जा रहल अछि। बदरी विशाल, केदारनाथ, अलकनन्दा आ मन्दाकिनी शब्दसभ स्थानक सांस्कृतिक स्मृति अनैत अछि। नदीक उफान आ पर्वतक ऊँचाई दृश्यकें तीर्थानुभव आ प्राकृतिक विस्मय दुनू स्तरपर बनबैत अछि।

“हरहड़ाइत धार दुनू मिलैत”क ध्वनि जलक गति सुनबैत अछि। हिम, शीतल पवन, पर्वतश्रेणी आ फेनिल जलक चित्र एकदम भौतिक अछि, मुदा “ककर निवास” सन प्रश्न अनुभवकें लौकिक भूगोलसँ रहस्यक दिशि खींचैत अछि। एहि मिलनमे नदीक संवेदनात्मक विवरण धार्मिक प्रतीकमे एकमात्र समर्पित नहि; भौतिक दृश्यक अपन सौन्दर्य बनल रहैत अछि।

रचना एकहि उद्धाटन-पाँतिक पुनरावृत्तिसँ आरम्भ आ अन्तकें जोड़ैत अछि। हिमालयक विस्तृत स्थान-ध्वनिक भीतर वाचकक हृदय “स्तंभित” अछि, आ प्रकृति “नव दृष्टि” देइत अछि। काव्यक सफलता एहि विस्मयक प्रत्यक्ष उपस्थितिमे अछि; स्थानविशेषक ऐतिहासिक विवरण वा पर्यावरणक वैज्ञानिक जानकारी एहि पाठमे पर्याप्त नहि, तँ समीक्षा ओ तथ्य बाहरसँ आरोपित नहि करैत अछि।

पूर्व कविता ‘शामिल बाजाक’ सागरक असीमताकें अनुभूतिक उलटफेरसँ देखैत छल; एतय वास्तविक नदीक ध्वनि अनुभवक केन्द्र बनैत अछि। दुनूमे जलक उपस्थिति अछि, मुदा एकर रूपकगत प्रकार भिन्न—पहिल चेतनाक विडम्बना, दोसर स्थलदर्शनक स्तब्ध विस्मय।

“अर्थशास्त्र बनबैत अछि कम्पनीकें मनुक्ख / आ मनुक्ख बनैछ कननमुँह” — एहि तीक्ष्ण विरोधसँ ‘नव व्यवस्था’क पहिल कविता आरम्भ होइत अछि। कम्पनीकें कानूनी-आर्थिक व्यक्तित्व देबाक रूपकक सामने वास्तविक देहधारी व्यक्तिक असहायता अछि। अर्थशास्त्रक संस्था आ समाजक मनुष्य बीच ई उलटफेर कविताक व्यंग्यक केन्द्र अछि।

आम्रपाली, मृच्छकटिकक नायक, शकुन्तला आदि साहित्यिक-सांस्कृतिक संकेत आधुनिक पर्यटन, होटल-व्यवसाय आ राजनीतिक धन-व्यवस्थाक बीच विचित्र रूपमे उपस्थित छथि। पुरान काव्य-पात्र नव कारोबारक रूप ग्रहण करैत छथि; एहि काल-विपर्ययमे बजार सभ्यता-स्मृतिक नामो अपन ब्राण्ड बनाय सकैत अछि। मुदा पात्रसभकें शाब्दिक आधुनिक जीवनी देब पाठक उद्देश्य नहि; ई संदर्भ-स्थानान्तरणक काव्य-व्यंग्य अछि।

कविताक छोट पाँतिसभ व्यंग्यकें घना बनबैत अछि, यद्यपि पात्र-संकेत नब पाठकक लेल बिना साहित्यिक सन्दर्भ कठिन भए सकैत अछि। आर्थिक संस्थाक व्यक्तित्व बनाम वास्तविक मनुष्यक अवमूल्यनक बिम्ब ‘नव व्यवस्था’क आगाँक दलित आ पुरहित सम्बन्धी रचनासभ लेल प्रस्तावना अछि। एहि कविताकें ‘नव व्यवस्था’ शीर्षकक अन्तर्गत स्वतंत्र उपरचना मानि समीक्षा कएल गेल अछि।

२६. नव व्यवस्थाक दलित — चौबटियापर श्रम, भीख आ असमानता

पीयर-लाल बत्ती, गाड़ीक शीशा पोछैत नेना आ पत्रिका बेचैत बच्चासभक चित्र कविता केँ शहरक चौबटिया पर आनैत अछि। ‘नव व्यवस्थाक दलित’क केन्द्र जाति-नामक पुरान वर्गीकरणक यान्त्रिक पुनरुक्ति नहि, शहरी अर्थव्यवस्थामे असुरक्षित श्रम आ अभावक दृश्य अछि। युवा भिखमंगनी, कोरामे बच्चा, खज्जित पयर आ निरीह आँखि सामाजिक बहिष्करणक अलग रूप चिन्हैत अछि।

“भीख नै आशिरवादी” सन विडम्बना पाठमे गरीबीक भाषिक आवरणकेँ उघारैत अछि। जे बाहरी दृष्टिसँ भीख अछि ओकरा ‘आशीर्वाद’ कहि व्यवस्था अपन नैतिक असुविधा कम करबाक कोशिश करि सकैत अछि। मुदा कविताक उच्चारणक धरातल अनिश्चित अछि; ई पाँति ककर ठामसँ कहल गेल, से पूर्ण स्पष्ट नहि। समीक्षागत सावधानी एहि व्यंग्यकेँ व्यावहारिक सामाजिक विमर्शक रूपमे स्वीकारब आ निर्दिष्ट पात्रक अविज्ञात मनोभाव नहि गढ़ब अछि।

कोयलाक भट्टीक धुँआसँ कारी भेल श्रमिकक तुलना ‘नीके’ कहबक साथ कवि केहन श्रमक मूल्य तय होइत अछि, से कठिन प्रश्न बनबैत अछि। एतय सम्मानित श्रम, शारीरिक जोखिम आ भिक्षाक विवशता बीच सीधा नैतिक क्रम निर्धारण टुटैत अछि। कविता अति संक्षेपमे दृश्यक चोट दैत अछि, लेकिन संरचनागत कारणसभ विस्तृत नहि करैत; एहि कारण ई सामाजिक निदानक पूरा ग्रन्थ नहि, प्रबल काव्य-साक्ष्यक एक छोट झलक अछि।

२७. नव व्यवस्थाक पुरहित — लघु उद्योग आ जोखिमक असमान वितरण

एहि कवितामे “लघु उद्योगक मालिक” आ “पुरोहित”क संयोजन विशेष व्यंग्यपूर्ण अछि। धार्मिक अधिकारक पद आधुनिक आर्थिक सत्ताक भूमिकामे प्रत्यारोपित भऽ रहल अछि। सरकारी ऋण, कम्पनी निर्माण, घाटा आ बन्दीकरणक उल्लेख संस्थागत जिम्मेदारीक प्रश्न उठबैत अछि।

“कम्पनीक मालिक नै निदेशक छी हम” कहैत वक्ता उत्तरदायित्वसँ दूर होयबाक एक सम्भावित कानूनी-भाषिक चाल देखबैत अछि। कम्पनी घाटामे पड़ैत अछि, श्रमिकक जीवन संकटमे पड़ैत अछि, मुदा निदेशकक सुरक्षा बनल रहैत अछि—कविताक मुख्य नैतिक आरोप ई असमान जोखिम-वहन अछि। एकरा सभ उद्योग वा सभ निदेशकक बारे सत्यापित सांख्यिकी बनाउब अनुचित; पाठमे ई लक्षित व्यंग्यक स्वर अछि।

“अर्थशास्त्र बनबैत अछि कम्पनीकेँ मनुक्ख / आ मनुक्ख बनैछ कननमुँह”क आवर्तन पहिल ‘नव व्यवस्थाक मनुक्ख’ सँ प्रत्यक्ष संरचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करैत अछि। सभसँ प्रभावी शिल्प एहि लौटैत पाँतिक बदलल प्रसंगमे अछि—पहिने संस्थाक व्यक्तित्वक सामान्य घोषणा, एतय ऋण आ श्रमिकक जोखिमक दृश्यसँ ओकर परिणति। एहन अनुक्रममे कविता अपना अन्तर्निहित तर्ककेँ अगिला रचनासँ पुष्ट करैत अछि।

२८. नव आ पुरान व्यवस्थाक हाट — प्रवासन, जाति आ दूहरा सामाजिक आचरण

भैरवस्थानक हाटसँ दिल्ली-मुम्बईक बजार धरि यात्रा कविता केँ एक ठोस सामाजिक भूगोल दैत अछि। तरकारी-बेचनिहार, होटलक भनसिया, श्रमिक आ लघु कामक लोग शहरमे रोजी-रोटीक नव परिस्थिति अपनबैत छथि। एहि परिवेशमे विवाह, जाति आ सामाजिक संगत सम्बन्धी पुरान बन्धन कतहु ढील होइत अछि, मुदा गाम लौटला पर ओही मनुष्य फेर पुरान पदक्रमक व्यवहार अपनाबैत छथि।

“ट्रेन अछि साक्षी ऐ मनसि द्वैधक” कविताक सबसँ तीक्ष्ण सामाजिक दृश्य अछि। रेल डिब्बा शहर आ गामक बीच मात्र यातायात नहि, बदलैत सामाजिक पहचानक संक्रमण-स्थान अछि। आदमी यात्रा करैत करैत कोना अपन कथन, जातिगत परिचय आ पद बदलैत अछि—ई व्यंग्यक केन्द्र अछि। काव्य-वाचक व्यक्तिसभक नाम, वस्त्र, पेशा आ सम्बोधनक परिवर्तन देखाबैत अछि, मुदा प्रत्येक व्यक्तिक स्वतंत्र जीवन-वृत्त प्रस्तुत नहि करैत।

नवा व्यवस्थाक मुक्तिकारक सम्भावना पर कविता शङ्का करैत अछि। शहरक बाजार जातिक व्यवहार ढील कऽ सकैत अछि, मुदा जखन सामाजिक लाभ बदलैत अछि, पुरान उच्च-नीचक भाषा लौटि सकैत अछि। आर्थिक आधुनिकता अपने आप सामाजिक न्याय नहि होइत—रचनाक आलोचनात्मक प्रतिज्ञा एहि ठाम मजबूत अछि। दलितपन केवल एक स्थिर पहचान नहि, आर्थिक व्यवस्था आ सामाजिक अपमानक बदलैत गठजोड़मे देखल जा रहल अछि।

आम्रपाली, चारुदत्त आ वसन्तसेनाक साहित्यिक स्मृति ‘नव व्यवस्थाक मनुस्व’ सँ फेर लौटैत अछि। ई आवर्तन आधुनिक व्यापारक भीतर पुरान सांस्कृतिक प्रतीकक अपहरण वा पुनर्पाठक व्यंग्यक ढङ्ग अछि। कहबाक तीव्रता आ बिम्बक भीड़ रचनाक बल अछि, मुदा बहुत नामक शीघ्र आवागमन सामान्य पाठकक लेल कुछ ठाम अपारदर्शी हो सकैत अछि। ‘नव व्यवस्था’क एहि समूहमे पहिल तीन रचना संस्थागत व्यक्तित्व, अभाव आ ऋण-सत्ताक दृश्य दैत अछि; एहि कविता ओ सभकेँ प्रवासन आ जातिक दूहरा व्यवहारसँ जोड़ि एक विस्तृत सामाजिक आलोचना रचैत अछि।

२९. जखन मशीन आ बिलाड़ि दुनू बुझैए हमरा मृत — इच्छामृत्यु, स्वप्न आ काल-स्थानक विलयन

कविता भीष्मक बाणशय्यासँ आरम्भ करैत अछि, मुदा महाभारतक वीरगाथाक पुनर्कथनमे नहि रुकैत। वाचक पूछैत अछि—इच्छामृत्यु किएक? भीष्मक कष्ट, क्षत्रियक सत्ता आ ब्राह्मणक विद्यासभक संग वर्तमान शासनक “गणतांत्रिक युधिष्ठिर”कें रखल गेल अछि। ई ऐतिहासिक कालसभक सीधा अभिलेखीय समता नहि, बल्कि सत्ता-केंद्रक टिकाऊ चरित्रपर व्यंग्यात्मक तुलनात्मक प्रश्न अछि। कविता देहक मृत्युसँ पहिने स्वतन्त्र इच्छा आ नागरिक जिम्मेदारीक सम्भावित मृत्युक प्रसंग उठबैत अछि।

“हमर युधिष्ठिर पाँच सय तैंतालीस” सन सङ्ख्यात्मक प्रयोगक राजनीतिक आशय लोकप्रतिनिधित्वक समूह आ जिम्मेदारीक हस्तान्तरण दिस खुलैत अछि, मुदा कविता ओ सङ्ख्याक आधिकारिक काल-निर्देश वा संस्थागत व्याख्या नहि दैत। ओकर मुख्य व्यंजना सामूहिक नागरिक इच्छाक स्थगन अछि। भीष्मक इच्छामृत्युक बिम्ब नागरिकक “अपन भावना आ इच्छाकें” शासनकें सौंपि देबाक स्थितिसँ टकराइत अछि। एही टक्करमे पुराणक पात्र वर्तमानक नैतिक प्रश्न बनि उठैत छथि।

तकर बाद कविता अचानक निद्राक अनुभवमे प्रवेश करैत अछि। मशीन आ बिलाड़ि वाचककें मृत बूझैत अछि; बिलाड़ि माथ लग बैसैत अछि, आ बिज्जी गहुमनसँ रक्षा करैत अछि। वाचक अपनाकें मनुक्ख मानैत अछि, मुदा जीव-जन्तु अपना-अपन दृष्टिसँ ओकर परिचय बदलि दैत अछि। ई दृष्टिभेद रचनामे पहिचानक एक सूक्ष्म प्रश्न दैत अछि: जकरा हम वस्तुगत “हम” मानैत छी, ओ दोसर जीवक अनुभूति मे दोसर अर्थ धारण करैत अछि। निद्राक भीतर जीवन आ मृत्युक अन्तर सेहो संवेदनक आधारपर अनिश्चित होइत अछि।

एहिसँ अधिक व्यापक दृश्य काल आ स्थानक परस्पर मिज्झर होयबाक अछि। “करिया तरहड़ि”, “उजरा तरहड़ि”, सृष्टिक सिकुड़ैत बिन्दु आ फेर विस्तारक चित्र ब्रह्माण्ड-कल्पनाक काव्यात्मक रूप अछि। एहि दृश्यसभकें आधुनिक खगोलभौतिकीक प्रमाणित समीकरणक नाम देब ठीक नहि, कारण मूल पद्य कोनो गणितीय व्युत्पत्ति प्रस्तुत नहि करैत। कविता अन्तरिक्ष-

विज्ञानक शब्द-छविक उपयोगसँ स्वप्नक अचिन्त्य क्षेत्र खोलैत अछि—जतय समय थमैत, स्थान नमडैत, आ ध्वनि-शब्दक उत्पत्तिक प्रश्न उपजैत अछि।

खजुराहो, बिनु छातक योगिनी मन्दिर, शिव आ तरेगणक छवि ब्रह्माण्डीय स्वप्नकेँ भू-सांस्कृतिक स्मृतिसँ जोड़ैत अछि। दृश्य जतेक दूर विस्तार लैत अछि, ओतेक बेर वाचक फेर निज देह, नींद आ मृत्युक प्रश्न पर लौटैत अछि। शब्द शाश्वत अछि वा नहि, ध्वनिक आरम्भ-अन्त की—एहि जिज्ञासामे भाषा अपना अस्तित्वक जाँच करैत अछि। ई रचनाक बहुस्तरीय उपलब्धि अछि जे राजनीतिक इच्छा, पशु-दृष्टि, मृत्यु, ब्रह्माण्ड आ भाषाकेँ एक स्वप्न-सरणिमे रखैत अछि।

रचनाक शिल्पगत चुनौती एहि अचानक फेरबदलमे अछि। महाभारतसँ वर्तमान राजनीति, ओतयसँ बिलाड़ि, तकर बाद कृष्णविवर-सदृश कल्पना आ अन्तमे योगिनी-मन्दिरक पुनरागमन—ई सभ क्रम उच्च मानसिक वेगक अनुभूति दैत अछि, मुदा नब पाठकक लेल अर्थक सम्बन्ध सहज स्पष्ट नहि। एहि विच्छिन्नताकेँ केवल अव्यवस्था कहब अनुचित; स्वप्न-सम्बन्धी काव्यपरियोजनामे ओहि असंगति स्वयं तर्कसंगत काव्यविधि भए सकैत अछि। शीर्षकक मृत्युबोध अन्तमे भीष्मकेँ फेर सम्बोधित करैत अछि आ सम्पूर्ण रचना वृत्ताकार बनैत अछि।

३०. हाइ रे कुमारिल!! — अस्पतालक असहायता आ ईश्वर-विवादक व्यंग्य

कविताक आरम्भ “ट्रेन छल लेट”क अत्यन्त सामान्य वाक्यसँ होइत अछि। दिल्ली पहुँचलाक बाद सरकारी अस्पतालक भर्ती-कक्ष, व्यस्त चिकित्सक, बारम्बार लौटबाक निर्देश आ गन्दगीक शिकायत नागरिकक चिकित्सकीय असुरक्षा स्पष्ट करैत अछि। “हुनूज दिल्ली दूर अस्त”क पुनरावृत्ति ऐतिहासिक उक्तिक नव व्यंग्यात्मक रूप बनबैत अछि—समय बदलल, गणतन्त्र आएल, मुदा सामान्य रोगीक लेल संस्थागत पहुँच अखनो दूर अछि।

साबुन-तेलपर कर, निःशुल्क उपचारक दावा आ निजी अस्पतालक खर्चक बीच कवि सार्वजनिक दायित्वक प्रश्न पूछैत अछि। नर्सक प्रतिक्रिया आ वित्तमन्त्री लग जाएबाक व्यंग्य प्रशासनिक जिम्मेदारीक निरन्तर स्थानान्तरण देखबैत अछि। कविता सार्वजनिक स्वास्थ्यक आँकड़ा नहि प्रस्तुत करैत; एक रोगीक अनुभवक स्वरमे संस्थागत उदासीनताक साहित्यिक चित्र बनबैत अछि।

ईश्वरक शरीरी-अशरीरी स्वरूपक विवाद अचानक बीमार देहक चिन्तासँ दार्शनिक वादमे बदलि जाइत अछि। कुमारिल आ बादरायणक नाम आबैत अछि; मकड़ीक जालक उपमा सँ जगतक उपादानक प्रश्न उठैत अछि। कवि प्रश्न करैत अछि जे मकड़ी जाल अपन भीतरक पदार्थसँ बनबैत अछि, तखन संसारक सर्जनाक उपमानक अर्थ की? ई तर्कक प्रश्न अछि; केवल एहि पद्यसँ मूल भाष्यकारक शब्दशः मत निर्धारित नहि कएल जा सकैत।

अन्तमे डॉक्टरकें “ऐ छोट-छीन दुनियाँक भगवान” कहल गेल अछि। आरम्भक दूरस्थ सरकारी डॉक्टर आब आला लगबैत, सुइया भोकैत आ शरीरक नाड़ी-तंत्र देखैत अछि। देहक सूक्ष्म जगतकें ब्रह्माण्डक तरेगणसँ जोड़ैत बिम्ब एहि व्यंग्यकें करुण गहराई दैत अछि। जकर प्रति रोगी असहाय अछि, ओही चिकित्सक ओकर देहक वास्तविक निरीक्षण करैत अछि—यही विरोध कथ्यक केन्द्र अछि।

ई कविता दुइएक स्तरपर सफल अछि: लोकभाषाक तीक्ष्ण हँसी आ दर्शनशास्त्रीय प्रश्नक मेल। ओकर सीमा छलौंगक कठिनता अछि—अस्पतालसँ ईश्वर-विवाद बीच सम्बन्ध पाठककें स्वयं जोड़य पड़ैत अछि। ‘जखन मशीन आ बिलाड़ि’मे मिथक आ आधुनिक ज्ञानक स्वप्नमय टकराव छल; एतय ओहि टकरावक सामाजिक आधार बीमारी आ सरकारी अस्पताल अछि।

३१. आकांक्षाक अग्नि — इच्छा, दोहराईत दिनचर्या आ जलबाक जोखिम

एहि लघु पद्यक आरम्भ आगिकेँ “आँचब आ प्रज्वलित राखब” सन क्रियासँ होइत अछि। वाचक आगि जरबैत अछि, मुदा पातक ढेरीपर आगि खसला सँ पसाहीक खतरा सेहो अछि। आकांक्षा एहि दोहरा स्वभावमे उपस्थित अछि—ऊर्जा जगबैत अछि, मुदा अनियन्त्रित भेलापर विनाशक सम्भावना बनैत अछि। आगि मात्र सकारात्मक पुरुषार्थक प्रतीक नहि।

“आ इच्छा आकांक्षाक पूर्तिक? / आ आकांक्षा कोन?” प्रश्न इच्छाक लक्ष्यकेँ स्वयं संदिग्ध बनबैत अछि। जे ‘निरन्तरता’ अनुभव होइत अछि, से कदाचित् एकहि काजक पुनरावृत्ति मात्र अछि। नीक भोजन आ सौन्दर्य-चिन्तनक इच्छा मनुष्यक सामान्य भाव अछि, मुदा कवि ओकरा सन्तोषक अन्तिम प्रमाण मानि नहि लेइत अछि। तीव्र भावना, तामस आ नोरक संक्षिप्त अन्त एहि आसक्तिक अनिश्चित परिणति देखबैत अछि।

पद्यक शक्ति ओकर छोट आकार आ ज्वलनशील बिम्बमे अछि। आगिकेँ सम्हारब अथवा फैलि जाएबक उलझन नैतिक विवेकक रूप लेइत अछि। ‘बुद्धिक भरोसे गढ़ल नव सत्यक गढ़नि’ एहि ठाम एक उपशीर्षकीय समूहचिह्न अछि; उपलब्ध मूल पाठमे ओकर स्वतंत्र रचनाशरीर नहि अछि। एहि कारण स्वतंत्र समीक्षा ‘आकांक्षाक अग्नि’क देल जा रहल अछि, काल्पनिक अतिरिक्त कविताक नहि।

३२. अनुक्रमणिका आ विषय सूचीसँ आगाँ — लोककारीगरीक ज्ञान

‘अनुक्रमणिका’ आ ‘विषय सूची’ शीर्षकमे पुस्तक-आधारित ज्ञानक बाहरी वर्गीकरण अछि, मुदा कविता पाठककेँ धुनकी, तकुरी, ताँति, सूत आ मड़ियबाक प्रक्रियामे अनैत अछि। लिखल पन्नासँ बाहर निकलि श्रमक ध्वनि आ देहक कारीगरी स्वयं शिक्षा बनैत अछि। “ईहो अछि शिक्षा / ई अछि ईलम” कथन सांकेतिक नहि, कारीगरक व्यवहारक मान्यताक स्पष्ट माँग अछि।

बाड, बडठी, बडोर, धुनकी, लारनि सन स्थानीय शब्द कविताक अर्थ-सम्पदा अछि। एहि शब्दसभकेँ सामान्य हिन्दी पर्यायमे बदलि देला सँ विशिष्ट श्रम-पद्धतिक साक्ष्य मेटि सकैत अछि। लय धुनक धप आ तकुरीक घुमाइमे बसल अछि, जकर परिणाम सूत पागबाक क्रियामे देखाइत अछि। ई शब्दावली प्रमाणित लोकशब्दक जीवनपर कविता रचैत अछि।

अन्तमे “लोकक सुख-दुःखमे ठाढ़”, परिवार, टोल आ गामक पर-पंचैतीक उल्लेख कारीगरीकेँ सामुदायिक सम्बन्धसँ जोड़ैत अछि। ज्ञान केवल लेख वा पाठ्यक्रम नहि; ओ व्यवहारक भीतर प्रसारित होइत अछि। मुदा एहि दृष्टिक अर्थ औपचारिक ज्ञानक निषेध नहि— शीर्षक लिखित अनुक्रमक सीमितता चिन्हबैत अछि। पूर्व कविता ‘आकांक्षाक अग्नि’मे निजी इच्छाक आगि छल; एहि रचनामे आकांक्षा सामुदायिक श्रम आ लोक-ज्ञानमे विस्तार पबैत अछि।

३३. व्यावहारिक आ सैद्धांतिक — ज्ञानक श्रेणीभेद आ लोकनिर्णयक साहस

कविता मखान उठेबाक औजार आ श्रमरत वृद्धाक दृश्यसँ शुरू होइत अछि। “सैद्धांतिक शिक्षक आ व्यावहारिक श्रमिक / एकटा आभिजात्य आ दोसर क्लान्त” कहि विद्या आ कामक सामाजिक प्रतिष्ठाक अन्तर पर सोझ प्रश्न उठैत अछि। कवि एहि दूरीकेँ मात्र वर्ग-विरोधक उद्घोषणा नहि बनबैत, बल्कि पूछैत अछि जे दुनू एक व्यक्ति वा अनुभवमे मिलि सकैत अछि की नहि।

भेड़पालन, पागक आकार, वस्त्रक रंग, बुनाइ आ कपड़ाक प्रकारक बहुविध उल्लेख पाठककेँ हस्तकला आ ग्रामीण कौशलक शब्द-जगतमे अनैत अछि। स्थानीय वस्तुसभक नाम एतय सजावट नहि, लोकजीवनक भौतिक विवरण अछि। वर्गभेदक सिद्धान्त एहि विवरणक आगाँ अपूर्ण देखाइत अछि, कारण ज्ञानक वास्तविक प्रयोग जटिल श्रम-पद्धतिसँ जुड़ल रहैत अछि।

कविता अन्तमे सामूहिक “हेंज”क व्यवहार आ अपन नैतिक निर्णयक बीच संघर्ष उठबैत अछि। जँ पंचायतक निर्णय वाचककेँ अनैतिक लगैत अछि, तँ भीड़क संग हँसैत रहब कि अपन बुद्धिक भरोसे विरोध करब? एहि प्रश्नमे सैद्धान्तिक ज्ञान व्यवहारमे उतरबाक चुनौती बनैत अछि। सारा दृश्य सामग्री अन्तमे स्वतन्त्र विचारक नैतिक कसौटीपर पहुँचा दैत अछि।

रचनाक शक्ति विशिष्ट शब्द-संपदा आ नैतिक द्वन्द्वक मेलमे अछि; सीमा अत्यधिक सूचीमय स्थानसभ अछि जतय बिम्ब-संग्रह अर्थक संचारकेँ कुछ देर रोकैत अछि। ‘अनुक्रमणिका आ विषय सूचीसँ आगाँ’मे लोककारीगरीकेँ शिक्षा कहल गेल छल; एतय ओहि शिक्षा आ सामाजिक निर्णयक जोखिमक बीच संघर्ष अधिक प्रत्यक्ष अछि।

३४. हमर शरीरक भाथीमे पैसैत अछि वायु — देहक भट्टी आ आत्मप्रश्न

“भाथीमे पैसैत वायु” एहि चित्रमे देह लौह-कारीगरीक भट्टी बनैत अछि। हवा आगिकेँ जरबैत अछि, पुरान लोहेक काम आरम्भ होइत अछि, आ वाचक अपन आकांक्षाकेँ भाथीक उष्णतासँ जोड़ैत अछि। श्वासक जैविक प्रक्रिया आ लुहारक औजारक समानान्तरता एहि छोट पद्यक मौलिक बिम्ब अछि।

आगि जरलापर कविता “आत्माक स्वरूप” आ देहसँ आत्माक सम्बन्धक प्रश्नपर मुड़ैत अछि। ई प्रश्नक उत्तर कोनो दार्शनिक पद्धति निश्चित करैत नहि भेटैत; ओहि दुनू बीच “पंच” बनबाक संकेत एक लोकसामाजिक बोध लऽ अबैत अछि। विवादक न्यायाधीशक रूपमे स्वयंकेँ देखब आत्मनिरीक्षणक विडम्बना सेहो अछि—हम अपन अनुभवक पक्षकार आ निर्णायक दुनू हो सकैत छी।

पद्यक संक्षिप्तता ओकर बल अछि: श्वास, अग्नि, देह आ आत्माबहस एक कारीगरीक दृश्यसँ जुड़ैत अछि। “व्यावहारिक आ सैद्धांतिक”क ज्ञान-श्रम द्वन्द्व एहि ठाम आध्यात्मिक प्रश्न धरि पहुँचैत अछि, जकर विश्लेषण विस्तृत घोषणासँ नहि, केवल भट्टीक बिम्बसँ सम्पन्न होइत अछि।

३५. कबिराहाक कनसीपर उठैत धुन — पूजा, कारीगरी आ सामाजिक अभिनय

कवितामे पित्तरिक बासन, कलगैयाँ लोटा, दीयठी, दीप, पवित्री आ जनउ सन वस्तुसभ घरोआ धार्मिक कर्मक पदार्थ बनैत अछि। मुदा एहि वस्तुसभक भीतर कारीगरीक श्रम उपस्थित अछि—बासनकेँ आघातसँ आकार देबाक क्रिया। पूजा आ शिल्पक मिलन कविताक एक गहिर अर्थ-स्तर अछि: पवित्र मानल वस्तु सेहो मानवीय हाथसँ बनैत अछि।

“बुझि गेलौं, गढ़ि लेलौं आत्मा आ ईश्वर” एहि घोषणा पर तुरन्त समूहक अभिनयक प्रश्न उठैत अछि। वाचक “हेंजक सत्य” आ “हेंजक संस्थाक सत्य” सँ अलग होएबाक सम्भावना पूछैत अछि। ई आलोचना धार्मिक अनुभवक स्वयंसिद्ध निषेध नहि, सामूहिक स्वीकृति आ व्यक्तिगत परीक्षा बीच अन्तर अछि। जखन हेंजक दबाव अपन सत्य बनि जाइत अछि, तखन स्वतंत्र जाँच कठिन होइत अछि।

स्थानीय धातुशिल्पक शब्द आ पूजा-वस्तुक क्रम कविता केँ पाँति-दर-पाँति इन्द्रियग्राह्य बनबैत अछि। अन्तक प्रश्न “जँ हेंजक सत्यक पार जा सकी तखने ने?” पाठकेँ खुलल छोड़ैत अछि। ‘हमर शरीरक भाथी’मे बाहरी भट्टी आत्मप्रश्नक रूपक छल; एतय पित्तरिक बासन आ धार्मिक व्यवहार सामाजिक सत्यक संरचनाक प्रश्न बनैत अछि।

३६. भुजनाठीसँ लाड़ैत आकांक्षाक अग्नि — स्मृति आ डरक धधक

भुज्जा, बालु, चूल्हाक पौरी आ तपैत बासनक उल्लेखसँ कविता घरेलू आगिक निकट पाठककेँ आनैत अछि। ‘आकांक्षाक अग्नि’ एतय अमूर्त दार्शनिक उक्ति नहि, भुज्जा फोड़बाक श्रम आ तापक दृश्य बनैत अछि। चूल्हाक व्यवहारक पाँति अचानक स्वप्नक जीवनक ओर बढ़ैत अछि।

“जिबैत अछि एकटा जीवन हमर स्वप्नमे” कथन रचनाक केन्द्र अछि। जागलाक बाद धकधक करैत छाती आ डरौन आकृतिसँ स्पष्ट होइत अछि जे स्वप्नक अनुभव देहपर प्रभाव छोड़ि सकैत अछि। घटना केवल कल्पना नहि रहैत; भयक जैविक अनुभूति बनैत अछि। मुदा कविताक छोट अंश स्वप्नमे देखल आकृतिक पूरा परिचय नहि दैत; समीक्षामे ओकरा निश्चित मनोवैज्ञानिक घटना अथवा दैहिक रोगक नाम नहि देल जा सकैत।

अन्तक “आ तकरा पाछाँ”क अनिश्चित विराम पाठकेँ आगाँ बढ़बाक आग्रह दैत अछि। घरेलू आगि आ भीतरी डरक बीचक सेतु आवाज आ तापक अनुभूति अछि। एहि लघु रचनाक शक्ति अधूरा छोड़ल स्वप्न-अनुभव अछि, नहि कि पूरा कथानकक विस्तार।

३७. अतिखाइन — स्वादक भराव आ आकांक्षाक सीमा

मकड़क मखानीक “सोन्हगर आ झूर” स्वाद तीन पाँतिक रचनामे अति ठोस भोजनानुभव उपस्थित करैत अछि। स्वादक सकारात्मक आरम्भ तेसर पाँतिमे आकांक्षाक अति-भोगमे बदलि जाइत अछि। “अतिखाइन भऽ गेल अछि, हमर आकांक्षाक अग्नि” कथन इच्छाक मात्रा बढ़लाक बाद सुखक विपरीत असर देखबैत अछि।

कविताक प्रभाव ओकर अत्यन्त संक्षिप्तता अछि: न लम्बा उपदेश, न दृश्यसँ बाहरक नैतिक ग्रन्थ। स्वाद स्वयं नियन्त्रणक प्रश्न बनि उठैत अछि। एतय ‘आकांक्षाक अग्नि’ श्रृंखलाक पूर्वक आगि-बिम्ब अपन छोट, लोक-भोजनवाला रूप पबैत अछि। रचनाकेँ अल्प आकारक कारण सामान्य गद्य-विवरण मानि उपेक्षित करब उचित नहि।

३८. भैसाठ — चाउरक प्रक्रिया, स्वाद आ जिजीविषाक अग्नि

एहि कवितामे अदहन पानि, चाउर, मुरही, कोड़ाइ आ तेलक क्रियाक्रम घरेलू खाद्य-कारीगरीकेँ काव्यक शरीर बनबैत अछि। बासन, पकाउब आ स्वादक सूक्ष्म प्रक्रिया पाठककेँ केवल तैयार भोजन नहि, ओकर निर्माण-श्रम देखबैत अछि। लोकजीवनक शब्दावली साहित्यिक साक्ष्यक रूप ग्रहण करैत अछि।

“तेबासि नीक, मुदा बसियानि”क छोट विरोध भोजनक समय, उपयोगिता आ स्वादक बदलैत सम्बन्धक संकेत अछि। कविता वैज्ञानिक पोषण-विवेचन नहि करैत; घरोआ अनुभवक क्रममे समयक प्रभाव दर्ज करैत अछि। अन्तक “हमर आकांक्षाक अग्नि” एहि व्यवहारक भीतर इच्छा आ श्रमक निरन्तर ताप जोड़ैत अछि।

‘अतिखाइन’मे अति-स्वादक संकट छल; ‘भैसाठ’मे श्रम, पाक-समय आ ऊर्जा केन्द्र बनैत अछि। दुनू लघु रचनाक समक्ष उचित आलोचनात्मक संयम आवश्यक अछि—पद्य जे लोकवस्तु प्रस्तुत करैत अछि ओकरा देखब, मुदा तीन-चारि बिम्बपर मनगढ़न्त पूर्ण पौराणिक तत्त्वमीमांसा नहि चढ़ाएब।

३९. धेनुआर घानी — तेल, नोन आ अवशिष्टक श्रम-ज्ञान

‘मोहब’ आ ‘तेलिहानी’सँ आरम्भ भऽ कविता घानीक घुमाव, तेलहनक खली, रेह, पनारक पानि आ नोन बनेबाक अनेक खेप धरि पहुँचैत अछि। ई रचनाक समय घड़ीक समय नहि, निर्माण-प्रक्रियाक समय अछि। तेल निकाललाक बाद जे ‘अवशेष’ बचैत अछि, ओ बेकार नहि; नव पदार्थक सम्भावना ओकरा भीतर रहैत अछि। ‘सुच्चा’क पुनरावृत्ति एहि परिशोधन-प्रक्रियाक ध्वनि-चिह्न बनैत अछि।

‘काही शोरा’, ‘तेलहा शोरा’, ‘जरुआ शोरा’, ‘कलमी शोरा’ सन शब्द लेखकीय भाषामे लोक-रसायन आ बाजारक श्रम-शब्दावली दैत अछि। आलोचक लेल एहि पदसभक अस्तित्व स्वयं महत्त्वपूर्ण साक्ष्य अछि; बिना स्वतंत्र लोकभाषिक प्रमाण एक-एक पदक आधुनिक रासायनिक समतुल्य निर्धारित करब अनुचित होयत। कविताक विशिष्ट शिल्प क्रियापद आ पदार्थनामक क्रमबद्ध संचय अछि, जे छन्दोबद्ध पाँतिक स्थानपर कार्य-विधिक लय रचैत अछि।

अन्तक ‘हमर आकांक्षाक अग्नि’ एहि समस्त प्रक्रिया केँ वाचकक भीतरी उत्कण्ठासँ जोड़ैत अछि। आगि एतय दार्शनिक अलंकार बनबाक पहिने उत्पादनक वास्तविक ताप अछि। ‘भैसाठ’मे भोजन-पाक आ श्रमक क्रम छल; ‘धेनुआर घानी’मे उत्पादन, अवशिष्ट आ पुनःप्रयोगक दीर्घ शृंखला अछि। सूचीबद्धता कखनो कविताक अनुभूतिकेँ दबा दैत अछि, मुदा ओही सूची लोक-श्रमक सजीव अभिलेख सेहो बनैत अछि।

४०. मन्तुर पढ़ि छत्ता लग जायब — लोकमन्त्र आ रक्षा-कर्तव्यक नैतिक उलटफेर

एहि कविताक पहिल पाँतिसभ नोन, मधु, चिड़ै पकड़बाक उपकरण आ लोक-शब्दावलीक बीच चलैत अछि। तकर बाद प्रसंग तेजी सँ बिज्जी आ गहुमनक संघर्ष दिस मुड़ैत अछि। बिज्जी बच्चासभक माथ लग पहरा दैत अछि, साँपकेँ रोकैत अछि, मुदा साँप मारलाक बाद ओ स्वयं मनुक्खक शिकारीक निशाना बनि सकैत अछि। रचनाक असल नैतिक संकट एही मोड़पर बनैत अछि: जकरा रक्षक देखल गेल, ओकर रक्षा आब के करत?

‘गहुमन साँपक मन्तुर’क लोक-पाँति पद्यमे उद्धृत अछि; एकरा कविताक भीतरक सांस्कृतिक स्वर मानब चाही, प्रमाणित औषधीय उपाय नहि। मन्तुर एतय नियन्त्रणक अनिश्चित इच्छा, भयकेँ शब्द देबाक क्रिया आ बचावक आशाक रूपमे काम करैत अछि। ‘मन्तुर पढ़ि छत्ता लग जायब’क आवर्तन आत्मविश्वासक घोषणा नहि, विपन्न अवस्थामे पुनः-पुनः कहल गेल आश्वासन होइ सकैत अछि।

कविताक उपलब्धि पशु-लोककेँ मनुक्खक केवल पृष्ठभूमि नहि बनायब अछि। बिज्जी, साँप, चिड़ै आ बच्चाक जीवन परस्पर निर्भर अछि। शिकार आ रक्षाक भूमिका एक क्षणमे बदल जाइत अछि। मुदा लोकमन्त्रक आकर्षण आ प्रत्यक्ष संरक्षणक व्यवहारक सम्बन्ध जानि-बुझि अपूर्ण छोड़ल गेल अछि। एहि अनिश्चिततामे रचनाक भाव-तनाव रहैत अछि।

४१. बकछुछरु खेलाइत भीखू संग — बाँसक शिल्प, पेशागत असमानता आ आत्मसम्मान

‘बाँसकरमक विश्वकर्मा’ कहि भीखूक सम्बोधन कविताक पहिल महत्त्वपूर्ण निर्णय अछि। बाँस चीरब, सूप-पथिया बनायब, वंशलोचन निकालब—ई सभ कौशलक विस्तृत नामकरण केवल दृश्य-वर्णन नहि; समाज जे काजकेँ नीच मानि सकैत अछि, कविता ओकर तकनीकी जटिलता देखबैत अछि। ‘डोमासी’क स्थलगत उपस्थिति एहि कौशलक संग सामाजिक श्रेणीकरण सेहो स्पष्ट करैत अछि।

भीखूक दू भायक जीवन-यात्रा एकहि परिवारक भीतर शिक्षा, सरकारी पद, अस्पतालक सेवा आ पैतृक शिल्पक भिन्न राहि प्रस्तुत करैत अछि। सरकारी अधिकारी भाय ‘हाकिम’ छथि, दोसर भाय अस्पतालमे काम करैत छथि, मुदा भीखू ओही ठाम अपन पेशामे ठाढ़ अछि। एतय प्रगतिक एकमात्र माप पद-प्रतिष्ठा नहि: भीखूक व्यवहारमे सामाजिक उत्तरदायित्व आ उपयोगी सम्बन्धक पूँजी अछि।

वाचकक पिता अस्पतालमे भर्ती छथि आ शल्यक्रियाक तिथि टारल जा रहल अछि। भीखू ओतय अपन भायक माध्यमसँ मदतिक आशा जगबैत अछि। एहि ठाम ‘मुँह झलकि गेलै’क दोहराव साँझक दृश्यकेँ भावात्मक बनबैत अछि। ‘हँ’ कहबाक तृप्ति आ वास्तविक मदति देबाक आत्मतृप्तिक अन्तर कविता सावधानीसँ चिन्हबैत अछि: सदाशयता उपयोगी काजसँ परीक्षा दैत अछि।

एहि रचनाक रचनात्मक बल अछि जे लोकशिल्प, जातिगत पदानुक्रम, अस्पतालक अनिश्चितता आ मानवीय सहायता एकहि घटनामे भेटैत अछि। अन्तमे आकांक्षाक अग्नि ‘अछि नै अछि मिझाइत’—ई डगमग अवस्था असफलता आ सम्भावना दुनूक स्थान सुरक्षित रखैत अछि। ‘अनुक्रमणिका आ विषय सूचीसँ आगाँ’मे लोककारीगरी ज्ञान छल; एतय ओहि ज्ञानक धारणकर्ता एक पूर्ण मानवीय व्यक्तित्व बनि उठैत अछि।

४२. उजाहिमे उपलाइत हम आ माँछ — शिकारीक अनुभवमे शिकार बनबाक भय

मछहरक प्रसंग ‘डकही पोखरि’ आ ‘बिड़इ’क भेदसँ खुलैत अछि। मखानक पात पोखरिक स्वरूप बदलने अछि, मुदा माछ धरेबाक व्यवहारक सूक्ष्म शब्दावली सजीव अछि। कबड़, कच्छाछोप, जाल खिरबैत, फिरचड़, टापी छापि—एहि शब्दसभसँ दृश्य ककरो बाहरी पर्यटकक नहि, जल-जीवनक भीतरक अनुभव बनैत अछि।

माछ ‘मारनिहार, बनेनिहार आ तरनिहारकेँ’ देखैत अछि—एहि असामान्य दृष्टिक कारण जीवकेँ केवल पकड़ल जाएवला वस्तु मानल नहि जा सकैत। वाचक जाल खिरबैत-खिरबैत अचानक बुझैत अछि जे कियो ओकरो बाँधि रहल अछि। शिकारी आ शिकारक स्थान बदलि जाइत अछि; ई उलटफेर कविताक मुख्य वक्रोक्ति अछि। ‘सहद’ आ छातीक भीतर किछु पैसबाक बिम्ब अनुभवकेँ देहक भीतरी असहजतासँ जोड़ैत अछि।

‘इछाइन गन्ध’ पहिने जलसँ निकलल माछक गन्ध अछि, फेर जीवनक नियति बनबाक आशंका। बाहरी घ्राणानुभूति भीतरक चेतना बनि जाइत अछि। रचनाक उच्च उपलब्धि एही रूपान्तरणमे अछि: प्रकृतिकेँ देखनेवला मनुक्ख स्वयं प्रकृतिक नियन्त्रणमे आबि जाइत अछि। अन्तक प्रश्न उत्तर नहि दैत; जाल फेकबाक कौशल जीबाक संकटमे बदलि जाइत अछि।

४३. ठाढ़ लत्तीकेँ पढ़ैत छी — पानक खेतीमे आत्मरूपान्तरण

कविता पानक जड़ि लग गारल खरही, सरपत, सीकी, बाँसक सलाका आ बेलक डोरसँ आरम्भ होइत अछि। ‘पढ़ैत छी’ क्रियाक वस्तु पुस्तक नहि—लत्ती अछि। ई रूपक केवल सुन्दर नहि, ज्ञानक वैकल्पिक पद्धति सेहो: खेतीक अनुभवी दृष्टि रोग, बढ़ती, कूट, पातक आकार आ तोड़बाक क्रमकेँ पढ़ैत अछि।

मध्यभागमे वाचक ‘पानक ढोल बनि गेल छी’, ‘छर्चा बेल बनि गेल छी’ सन आत्मरूपक अपनबैत अछि। देखनिहार आ देखल वस्तुक सीमा धुँधला पड़ैत अछि। झलमा, फुट्टा, तेलगगरा सन रोगसंज्ञा शरीरक नश्वरतासँ मिलि जाइत अछि; ‘पातकेँ फेरफार कऽ मृत्युकेँ टारैत छी’ कथनमे कृषि-व्यवहार आ मृत्युचिन्तनक अनपेक्षित मिलन अछि।

उत्पादनक अन्तिम चरणमे पात पूजा लेल निहुछल जा सकैत अछि वा बाजारक चमकैत पन्नीमे ठूसल सामान बनि सकैत अछि। एहि दू परिणतिक बीच मूल्यक प्रश्न अछि—पूजा, सौन्दर्य, बाजार आ उत्पादकक श्रम एक समान नहि। कविता एतय परम्पराक रोमानी स्तुति नहि, श्रमसँ वस्तु बनब धरि रूपान्तरक अध्ययन अछि। विवरणक घनता नब पाठक लेल कठिन भऽ सकैत अछि, मुदा ओकरा हटा देला सँ काव्यक लोक-ज्ञानो नष्ट होयत।

४४. श्राद्ध ने मरा जाय — शोकक बीच कर्मकाण्डक द्वन्द्व

छओ पाँतिक एहि लघु कविता मे एकक बाद एक मृत्यु घटैत अछि। काकाक मृत्यु श्राद्ध-अवधिमे भेलाक कारण पहिल श्राद्धक विधि प्रभावित होएबाक चिन्ता उपस्थित अछि। शोकक मानवीय तीव्रताक अपेक्षा विधि-क्रमक भय अगिला वाक्यसभपर छा जाइत अछि। ई रचनाक करुण विडम्बना अछि।

‘एकक श्राद्ध जायत मराय’ लोक-वाक्यक उलट प्रयोग अछि। मृत्युक बाद मृतककें स्मरण करबाक संस्कार स्वयं ‘मरि’ सकैत अछि—एहि भाषिक मोड़मे कर्मकाण्डक सामाजिक दबाव प्रकट होइत अछि। पण्डितो शास्त्रक निश्चित उपाय नहि कहि पबैत छथि, आ पिताक श्राद्धक रक्षा लेल मामागाम खबरि पठेबाक व्यावहारिक समाधान तलाशल जाइत अछि।

कविता कोनो सर्वमान्य धर्मशास्त्रीय नियम स्थापित नहि करैत; एक परिवारक चिन्ता आ लोकविधिक स्थितिकें साहित्यिक विषय बनबैत अछि। छोट आकारक कारण पात्रक मनोवैज्ञानिक विस्तार नहि भेटैत, मुदा संक्षिप्त संवादात्मक गतिक कारण प्रश्न चुभैत अछि—मनुष्य मृतकक लेल शोक करैत अछि, अथवा शोकक ‘ठीक’ विधि बचबैत अछि?

४५. शलातुर गाम — व्याकरणक इतिहास आ सीमाक राजनीतिक रूपक

‘तक्षशिला’, ‘शलातुर’, ‘पाणिनि’ आ ‘युआन च्वांग’क नामसँ कविता भाषिक परम्पराक दीर्घ काल खोलैत अछि। काबुल-सिन्धु क्षेत्र, बामियानक मूर्ति-विनाश आ आजुक सीमा-विवाद एक तात्कालिक ऐतिहासिक आलेख नहि, स्मृति-क्षेत्रक काव्यात्मक संयोजन बनैत अछि। स्थाननाम एहि रचनाक सांस्कृतिक भार बहन करैत अछि।

‘चक्र घूमल / टूटल अराड़ि ठाढ़ भेल’ पुनरावृत्ति इतिहासक आवागमन आ सीमा-रेखाक कृत्रिमता पर प्रश्न करैत अछि। ‘दियाद’ शब्द राजनीतिक सीमा लग रहितो निकटता आ प्रतिद्वन्द्विताक दोहरा अनुभव जगबैत अछि। १४९८ आ १९६२ सन वर्ष-संकेत कविक ऐतिहासिक तुलना प्रस्तुत करैत अछि; हुनकर तथ्यात्मक व्यापकता स्वतंत्र इतिहास-स्रोतसँ अलग सत्यापन चाहैत अछि, ताहि लेल समीक्षामे काव्यक कथनकेँ प्रमाणित ऐतिहासिक निष्कर्ष मानल नहि गेल अछि।

रचनाक प्रमुख उपलब्धि ई जे भाषा-विज्ञानक आचार्यक स्मृति सँ आधुनिक भू-राजनीतिक सजगताक प्रसंग उठैत अछि। मुदा बहुतेक कालखण्ड अल्प पाँतिमे रखल गेलाक कारण तर्कक बीचक सीढ़ी पाठक स्वयं जोड़ैत अछि। ‘भीखू’क कविता एक परिवारक भीतर पेशागत दूरी देखबैत छल; ‘शलातुर गाम’ सांस्कृतिक सम्बन्ध आ राजनीतिक विभाजनक व्यापक दूरीक बोध करबैत अछि।

४६. बड़का सड़क छह लेन बला — विकासक चमक आ गामक निर्वासन

एक नेना बारम्बार ‘माय!’ कहि छह लेनक चिक्कन सड़कक दृश्य सुनबैत अछि। ओकर स्वरमे कौतूहल, गर्व, दूरी आ प्रश्न एक संग उपस्थित अछि। सड़क धानक खेत लग अछि, मुदा गामक लोक रोजगारक लेल दिल्ली-पंजाब जाएल छथि; पक्की सड़कक बगलमे घरक फूस-खपड़ा आ निर्धनता बनल अछि। एहि दृश्य-विरोधसँ विकासक अर्थक परीक्षा होइत अछि।

लाल झण्डाबला लाल कार, ओकर बन्द शीसा आ ठंढा हवा नेनाक आँखिमे सामाजिक विभाजनक प्रत्यक्ष प्रतीक अछि। कारक बच्चा सभ चिड़ै किनि लैत अछि, मुदा खरीद-बिक्रीक एहि संक्षिप्त सम्पर्कसँ सामाजिक दूरी नहि मिटैत। बाहरी धनाढ्य जगत एतय ‘विदेशी’ लगैत अछि, यद्यपि सड़को गामक लग अछि। ‘गाम मयूर, सड़क पाँखि, हम सभ पएर’ एहि अनूठा उपमामे सौन्दर्य आ असमान गतिशीलता दुनू अछि।

‘वर्ल्ड बैंक फण्ड’ लेल नेनाक प्रशंसापूर्ण प्रश्न व्यंग्यक नाभि अछि: जँ एहि धनसँ एतेक नीक सड़क बनैत अछि तँ गामक घर, खेनाइ आ रोजगार किएक नहि? कवितामे बैंकक वित्तीय परियोजनाक दस्तावेज नहि अछि; ई स्रोत-वचन नेनाक सुनल गपक रूपमे अछि। एहि कारण समीक्षा नीतिगत दाबीक सत्यापनक बदला सामाजिक प्रश्नक संरचना पर केन्द्रित अछि।

पाठमे प्रवासनक अपमान, ‘बिहारी’ कहि गारि देबाक प्रसंग आ परदेसमे हिंसाक आशंका सेहो अछि। सड़कक दोहराओल ‘छह लेन’ संख्या आवागमनक सहूलियतसँ बेसी विकासक असन्तुलित प्राथमिकताक चिह्न बनैत अछि। मुक्तछन्दक लम्बा आवर्तन नेनाक बोलबाक गति रचैत अछि, यद्यपि अन्तिम हिस्सामे किछु प्रश्न पुनरुक्त भऽ जाइत अछि। ई पुनरुक्ति ओकर आग्रहक सामाजिक बल बढबैत अछि।

४७. पक्काक जाइठ — पोखरिक संस्कार आ जातिगत प्रतिष्ठा

‘पक्काक जाइठ’मे पोखरि काते कंक्रीटक जाइठ लगबाक दृश्य अछि। पुरान लकड़ीक जाइठसँ पक्का संरचनाक भेद देहातक भौतिक परिवर्तनक सूचक अछि। पोखरिक महार, दुपहरियाक पानि आ कजरी सन शब्द एहि परिवर्तनकेँ परिचित पर्यावरणक भीतर रखैत अछि।

पद्य ‘पोखरिक यज्ञोपवीत’क उल्लेख करैत अछि आ दोसर टोलक पोखरिकेँ ‘डबरा’ कहबाक सामाजिक आधार खोलैत अछि। ओकर मालिक ‘अद्विज’ छलाह, यज्ञोपवीतसँ पहिने मृत्यु भऽ गेल—ई वर्णन संस्कारक जाति-सापेक्ष श्रेणीकरण देखबैत अछि। कविताक कथक ई सामाजिक दृष्टि दर्ज करैत अछि; आलोचना ओकरा सर्वथा न्यायोचित मानि नहि लेइत अछि।

कंक्रीट पानिमे रहि आओर कठोर होइत अछि, मुदा लकड़ीक आयु सीमित—एहि तुलना सँ आधुनिक स्थायित्वक चाहना स्पष्ट अछि। तथापि स्थायित्व केवल सामग्रीक नहि; लोक-मान्यता आ जातिगत स्मृतियो कठोर भऽ सकैत अछि। एहि अर्थ-व्यंजनामे रचनाक बल अछि। ‘बड़का सड़क’क चमकक समान एतयो पक्कापन प्रतिष्ठाक चिह्न बनैत अछि, मुदा पोखरि आ संस्कारक सम्बन्ध प्रश्नक नव स्तर खोलैत अछि।

४८. पता नै घुरि कऽ जायब आकि... — प्रवासी श्रमिकक अनिश्चित घरफेर

कविताक पहिल आ अन्तिम स्वर एके अछि—‘पता नै घुरि कऽ जायब / आकि एतै मरि-
खपि / बिलायब’। पुनरागमनक एहि वाक्यद्वारा प्रवासन किछु दिनक यात्रा नहि, जीवन-मृत्युक
विकल्प बनि जाइत अछि। घरक दुआरि, दूभि, गाय, घूर आ आमक मासक स्मृति परदेशक श्रम-
जीवनक विपरीत एक ठोस स्थान रचैत अछि।

पंजाबक चाहक स्वाद आ ओकरा संग सुनल अफीम मिलाओल जएबाक गप अफवाह आ
अनुभवक अस्थिर सम्बन्ध देखबैत अछि। कविता ई आरोप स्वयं प्रमाणित नहि करैत; वाचकक
‘आब सुनै छिए’ कहबाक धरि सीमित अछि। दिल्लीक चमकैत स्टीलक बरतनक सामने पुरान
टिनही थारीक स्वाद स्मृति बनि उठैत अछि: सुख वस्तुक मूल्यसँ नहि, पारिवारिक संगति आ
अपनत्वसँ उपजैत अछि।

‘बिहारी! बिहारी!’क आवर्तन अपमानकें बाहरी स्वरक चोट बनबैत अछि। ‘उज्जर’ लोकक
घृणायुक्त दृष्टिक तुलना बिखाह काँटसँ करैत कविता देखबैत अछि जे हिंसा केवल शारीरिक
नहि, दृष्टि आ सम्बोधनमे सेहो रहैत अछि। ककबा, पापड़ आ मालिशक काज अनेक अस्थायी
पेशासभक संकेत अछि।

अन्तमे ददियाक अर्घ्य, बाल्यकालक पानिमे कूदबाक ध्वनि आ गाछक एकठाम ठाढ़ रहबाक
सामर्थ्य अपन घरक स्मृतिकेँ जीवनक टिकाउ आधार बनबैत अछि। ‘बड़का सड़क’मे नेना गाममे
ठाढ़ भऽ परदेसक आवश्यकता पूछैत छल; एतय परदेसमे फँसल वाचक घरफेरक अनिश्चितता
जीबैत अछि। रचनाक दीर्घ पुनरावृत्ति अन्तर्मनक अटकावक उपयुक्त लय रचैत अछि।

४९. गजल — विराग, भूख आ नियत लयक भीतर विडम्बना

एहि गजलसँ पहिने बहरे मुतकारिबक छन्द-परिचय देल गेल अछि। ‘जुआरी अनेरे’, ‘मदारी अनेरे’, ‘नचारी अनेरे’, ‘विचारी अनेरे’ सन अन्त्यस्वरसँ आवर्तक ध्वनि बनैत अछि। ई ध्वनि कथ्यक थाकल मोनकेँ एक स्वरमे बाँधि रखैत अछि। उपलब्ध पाठमे शब्दविभाजन किछु ठाम असामान्य अछि, तँ छन्दक निश्चित अरूजी शुद्धताक निर्णय मात्र मुद्रित परिचयसँ नहि, उच्चारणक पूर्ण परखक बादे सम्भव अछि।

‘घरोमे उपासे / बहारो निरासे’ पाँतिकेँ रचनाक सामाजिक केन्द्र कहि सकैत छी। भीतर भूख आ बाहर निराशा—दुनू स्थितिमे जीबाक विकल्प संकुचित अछि। ‘खटोली उठा’क बिम्ब लोक-श्रम आ बोझक संकेत देइत अछि; एहि दुनूमे जीवनक विडम्बना हास्यसँ नहि, विरागसँ खुलैत अछि।

काफिया-सदृश ध्वनिक एकरूपता गजलकेँ स्मरणीय बनबैत अछि, मुदा किछु पाँतिमे अत्यधिक दुर्लभ पद कथ्यक तत्काल स्पष्टताकेँ कम करैत अछि। ‘पता नै घुरि कऽ जायब’क लम्बा आवर्तन जँ प्रवासनक असहायता रचैत छल तँ ई छोट गजल ओही असुरक्षाकेँ नियंत्रित लयक भीतर संकुचित करैत अछि।

५०. प्रकृति, पुरुष — पर्यावरणक नकल, दूरीक सौन्दर्य आ लौटबाक दुविधा

एहि रचनामे लघु पद्य, टनका, शेनर्यू आ गद्यांश परस्पर आवागमन करैत अछि। ‘घर गाछ पहाड़’क नकल, चित्रकारी आ फोटोक माध्यमसँ ‘प्रकृति प्रेमी’ बनबाक व्यंग्य मुख्य आरम्भिक विचार अछि। मनुक्ख पर्यावरणसँ दूर भऽ ओकर प्रतिरूप घरमे रखैत अछि; वस्तुक प्रतिकृति आ ओकर सजीव सम्बन्धक बीच भेद कविता पुनः-पुनः उठबैत अछि।

एकपेड़िया सड़क, हरियर गाछ, आकाशक मलिन होयब आ छह-अठ लेनक विस्तार ‘बड़का सड़क’क विकास-चित्रकेँ नव परिप्रेक्ष्य दैत अछि। एतय सड़क मात्र आर्थिक निवेश नहि, जीवन-पर्यावरणक सीमित होयबाक संकेत अछि। बरफक शिखरपर पहुँचि वाचक देखैत अछि जे दूरसँ सुन्दर लगैत दृश्य निकट पहुँचला पर बदलि जाइत अछि; गामसँ शिखर आ शिखरसँ गाम देखबाक दूरी सौन्दर्यबोधक सापेक्षता प्रदर्शित करैत अछि।

‘प्रकृति पुरुष’क नाम सांख्यिक दार्शनिक पारिभाषिक युग्मक सम्भावना जगबैत अछि, मुदा मूल काव्यमे शास्त्रीय गुणत्रयक क्रमबद्ध प्रतिपादन नहि भेटैत। एहि शीर्षकक यथार्थ शक्ति पर्यवेक्षक मनुक्ख आ देखल पर्यावरणक दूरीक आवागमनमे अछि। वाचक सेहो ‘प्रकृति बनल हएब’क सम्भावना कहैत अछि; अतः प्रकृतिकेँ निष्क्रिय दृश्य मानबाक स्थितिपर रचना प्रश्न करैत अछि।

हरदि, पनिसोखा, किसानक रोपनि, बनिजारक यात्रा आ रस्ता तकैत वाचकक प्रश्न प्राकृतिक संकेतकेँ लोकजीवनक कामसँ जोड़ैत अछि। ‘पनिसोखा’ आशाक चिह्न अछि, मुदा सतरंगिया आशा ‘संत्रास’ सेहो बनि सकैत अछि। एहिमे सौन्दर्यक सोझ उत्सव नहि, प्रतीक्षाक अनिश्चितता अछि।

लम्बा रचनामे अनेक रूपक एकठाम जमा होयबाक कारण सूत्र निरन्तर फिसलैत अछि। तथापि ई बहुरूपता एक विषयक स्थिर व्याख्या नहि देबाक शिल्पगत निर्णय सेहो अछि। हाइकू-सदृश संक्षेप आ गद्यक विस्तारक आवर्तन मूल ग्रन्थक स्वप्न-जागरण सम्बन्धी प्रयोगक संग मेल खाइत अछि।

५१. हाइकू/ शेनर्यू/ टनका — क्षणचित्रक बहुलता आ लोकभाषाक संक्षिप्त छवि

ई शीर्षकक अन्तर्गत एकटा कविता नहि, बहुतेक लघु पद्य-इकाई एकत्र अछि। समुद्र, मेघ, गाछ, चिड़ै, खेत, इनार-बेंग, बाढ़ि, चान, भेड़, साँप आ लोक-औजारक बिम्ब बदलैत रहैत अछि। ‘पात आ चिड़ै’, ‘व्याकुल चिड़ै’, ‘घुरैत खेत’ सन दृश्यसभ छोट-छोट अवलोकनक एक निजी कोश बनबैत अछि। एहि उपशीर्षकक प्रत्येक पाँतिकें अलग स्वतंत्र पोथी-शीर्षक मानि संख्या फुलाएब अनुचित; उपलब्ध स्रोतमे ई एक समूहित प्रविष्टि अछि।

‘प्रकृति नृत्य/ प्रकृति संग जीब/ प्रकृति भऽ कऽ’क आवर्तन देखनिहार आ प्रकृतिक सीमा मिटाबय चाहैत अछि। एक दिशि ‘समुद्र थल/ मिलैए अकासमे’ जकाँ व्यापक क्षितिज; दोसर दिस ‘मखान पान’, ‘गोरहा ढोल’, ‘बौआचौरी’, ‘सरही फल’ सन विशिष्ट मिथिला-लोकक शब्द। एहि द्वन्द्वमे स्थानीयता आ वैश्विक दृश्यक निरन्तर आदानप्रदान अछि।

हाइकूक परम्परागत क्षणबोध, शेनर्यूक मानवीय विडम्बना आ टनकाक भाव-विस्तारक संकेत रचनामे भेटैत अछि, मुदा सभ पदकें अक्षर-गणनाक कठोर एकहि विदेशी मानकपर स्वतः सिद्ध कहि नहि सकैत। मैथिली उच्चारण, मात्राक प्रस्तुति आ पद्यक निश्चित सीमाक पृथक परीक्षण अपेक्षित अछि। ई काव्यरूपक सर्जनात्मक ग्रहण अछि, छन्दशास्त्रीय दाबीक प्रमाणपत्र नहि।

‘अम्ल बरखा’क जीवन-विरोधी रूप, ‘अमरलत्ती’क गाछकें मारिकऽ जीवब आ ‘इनार-बेंग’क सीमित दृष्टि पर्यावरण-चिन्ता कें अनेक दृष्टान्त दैत अछि। किछु लघु रचना केवल वस्तु-दर्ज करैत अछि, किछुमे अर्थक प्रखर उलटफेर अछि। ई गुणविभाजन महत्त्वपूर्ण अछि; समूहमे सब पद समान कलात्मक शक्ति धारण नहि करैत।

‘प्रकृति, पुरुष’क लम्बा बहुपरतीय गद्य-पद्य मिश्रणक बाद ई लघु-अवलोकनसभ निरन्तर अर्थक विराम दैत अछि। पाठककें प्रत्येक चित्रमे दार्शनिक निर्णायक सिद्धान्त नहि खोजनाइ चाही; किछु पाँतिक उपलब्धि केवल क्षणकें सघन भाषामे पकड़ब अछि।

५२. कुण्डलिया — नैतिक निर्णय, हारि-विजय आ आवर्तक छन्द

एहि शीर्षकक भीतर सत्य-असत्यक भेद, भयसँ मुक्ति, हारि-विजयक समता आ उचित समयपर बाजबाक विवेक सम्बन्धी अनेक कुण्डलिया अछि। ‘जे छै होनी लेख’क दोहराओल खण्ड समर्पण आ नैतिक सक्रियताक बीच प्रश्न जगबैत अछि: जँ सभ परिणाम ‘होनी’ अछि तँ सत्यक पक्षमे संघर्षक स्थान कतय? कविता सत्यक जीतक आशा रखैत अछि, मुदा नियतिक भाषा सेहो अपनबैत अछि।

‘छत्ता घुरछा’क अन्हार, ‘काल भेल विकराल’ आ ‘घोरन छत्ता’ सन बिम्ब पहिल कुण्डलियाक अमूर्त नैतिक विवेचनकेँ दृश्य बनबैत अछि। तेसर कड़ी ‘विजय बिन गर्व’ आ हारिलापर नहि घबरायबाक प्रस्ताव रखैत अछि। एहि उपदेशमे व्यवहारिक संयम अछि, मुदा हारिक सामाजिक कारणक विस्तृत परीक्षण नहि।

अन्तिम खण्ड ‘बोल वचन हुआए नीक’ आ उचित समयपर गुम्म रहबाक उपदेशक माध्यमसँ भाषिक उत्तरदायित्वक प्रश्न उठबैत अछि। कुण्डलियाक आवर्तन केवल तुकान्तक सजावट नहि; पहिल कथनकेँ अन्तिम पाँतिक अर्थमे फेर गूँजाबैत अछि। तथापि मूल छन्दक निश्चित मात्रात्मक शुद्धताक निर्णय लेल पाँति-दर-पाँति स्वतंत्र छन्दगणना अपेक्षित अछि।

५३. मिथिलाक ध्वज गीत — भाषिक पुनरुत्थानक सामूहिक प्रण

‘मिथिलाक ध्वज फहरायत जगतमे’ एहि भविष्यसूचक पाँतिसँ कविता सामूहिक आत्मविश्वासक गीत बनैत अछि। ‘माँ’क सम्बोधन मिथिलाकें निजी परिवारक निकट आनैत अछि। एहि भावुकताक भीतर ‘विद्या’, ‘उद्योग’, ‘कर्मभूमि’ आ ‘बुद्धि चातुर्य’क उल्लेख सांस्कृतिक प्रतिष्ठाकें वास्तविक काजसँ जोड़ैत अछि।

‘मैथिली अछि अल्पप्राण भेल ज्यों’ स्वीकारोक्ति विजयोत्सवी स्वरमे एक अनिश्चितता अनैत अछि। भाषाक दुर्बलता स्वीकारलाक बाद ‘सन्ध्यक्षर’, ‘वर्ण स्फोट’ आ ‘स्पर्श’क संकेत भाषिक अस्मिताक नूतन रचनात्मक ऊर्जा बनबैत अछि। ध्वजक रक्षा केवल नारा सँ नहि, भाषाक पुनर्जीवनसँ होयत—ई अर्थ पाठमे निहित अछि।

गीतक सामूहिक आवाहन ओकर उपलब्धि अछि; चूँकि नाटकीय स्वर उद्घोषपर आधारित अछि, आत्मसमीक्षाक सूक्ष्मता कम अछि। एहि सीमाकें विधागत दोष मानब जरूरी नहि: ध्वज गीत सार्वजनिक गायनक लेल अपन अलग बोध-लय माँगैत अछि। मूल पाठमे तकर तुरन्त बाद ‘टुटैत अबैत स्वप्नक बीच’ नामक उपविभाग शुरू होइत अछि, ताहि संक्रमणसँ सामूहिक आ निजी स्वप्नक दू धारा क्रमशः सामने अबैत अछि।

५४. जोति बड़द सोचमे पड़लौं — स्मृतिक भोथरायब आ अपन धरतीक अस्थिरता

‘मोन गेल भोथिआय’ कहि कविता मानसिक अस्पष्टताक एकदम ठोस दृश्य रचैत अछि। जोतल खेत, बड़द, साँझ आ चारूकात ताकब—ई दृश्य श्रमक दिनक अन्त आ स्मृतिक थाकल अवस्थाकेँ संग अनैत अछि। खेतक कामक सन्दर्भ अस्पष्ट रहितो ‘हरायल बड़द’क खोज मानसिक भटकावक सजीव रूपक बनैत अछि।

‘कहबै ककरा ई गप्प / सुनि हँसत’ पाँति सार्वजनिक उपहासक भय आ निजी अनुभूतिक असुरक्षा जोड़ैत अछि। एकरा मात्र वृद्धावस्थाक रोगक चिकित्सकीय लक्षण कहब स्रोतक सीमा लाँघि जाएब होयत; उपलब्ध पद्य अनुभवक चित्र दैत अछि, रोग-निदान नहि।

ई रचना प्रारम्भिक ‘अनचिन्हार आखर’क अनेक पाँतिसँ प्रत्यक्ष ध्वन्यात्मक आ पाठगत सम्बन्ध रखैत अछि। दुनूमे जोत, बड़द आ भोथिआयल मोन भेटैत अछि। फेरो ई शीर्षकक अंतर्गत स्वतंत्र स्थित पाठक समीक्षा उचित अछि, कारण उपविभागमे पुनः आवृत्त भेलाक सामाजिक-मनोवैज्ञानिक स्थान अलग अछि। पाठान्तरक सूक्ष्म मिलान अन्तिम समेकित समीक्षामे उपयोगी होयत।

५५. बिसरलौं फेर- कर्णक मृत्युक छोट-छीन रूप — स्मृतिच्युति आ असमर्थताक विडम्बना

एहि छोट कविता मे वाचक बारम्बार अपने केँ कहैत अछि जे आइक गप नहि बिसरब, मुदा काजक बेर बात मोन नहि पड़ैत अछि। निश्चय आ व्यवहारक एही टूटल सम्बन्धमे हास्य आ करुणा दुनू अछि। ‘गप्प पर गप्प’क भीतर चलैत मोन एक ठाम ठहरि नहि पबैत।

‘कर्णक मृत्युक छोट-छीन रूप’क तुलना महाभारतक घटना केँ प्रत्यक्ष पुनर्वर्णित नहि करैत। वाचकक स्मृतिगत असहायता केँ एक महान आख्यानक त्रासदीक छोट संकेतसँ तोलैत अछि। तुलना वृहत्तर ऐतिहासिक समानता नहि, आत्मव्यंग्यक अतिशयोक्ति अछि; एही अनुपात-भङ्गमे बिम्बक तीखापन अछि।

अन्तक ‘मसोसि कऽ / रहि जाइ छी गुम्म’ सम्पूर्ण हलचलकेँ मौनमे बदलि दैत अछि। ‘जोति बड़द सोचमे पड़लौं’मे चहुँकात ताकैत मोन छल, एहि रचनामे मोन भीतरक गप्पक भारसँ गुम्म भऽ जाइत अछि। दुनू मिलि स्मृति-स्वप्नक शीर्षकवाला उपविभागक सुसंगत लघु-युग्म बनबैत अछि।

‘कनकनी छै बसातमे’ पाँति सर्द मौसमक संकेत करैत अछि, मुदा मृत देहक अन्त्येष्टिक क्रम आओर दोसर सामाजिक शीतलताक अर्थ खोलैत अछि। पोस्टमार्टमक बाद शिल्लपर राखल देह, गोइठाक आगि, तिलाज्जलि आ घरफेरक क्रम अत्यन्त दृश्यात्मक अछि। ई केवल संस्कार-विवरण नहि; देह, परिवार आ समाजक बीच पुनः बनैत दूरीक पाठ अछि।

कविता बारम्बार कहैत अछि जे महिला-विधवाक परिस्थिति ‘साठि साल पूर्वक वएह खिस्सा’ बनल अछि। नदी कमलासँ यमुना भऽ गेल, वस्त्र बदलल, मुदा सामाजिक व्यवस्था ठामक ठाम। डेढ़ मासक बच्चाकेँ कोरामे रखने माय, शोक आ अकेलापनक आशंका—एहि तीन संकेतसँ सामाजिक आलोचना देहधारी बनैत अछि।

विवाह पंचमी, शतानन्द पुरहित, सीता-विवाहक लोकस्मृति आ नैनाजोगिनक प्रसंग पुरान विवाह-संस्कारक प्रतिष्ठाकेँ सामने रखैत अछि। ओकर विपरीत विधवा-विवाहक प्रस्तावपर क्रुद्ध प्रतिक्रिया वर्तमानक नैतिक संकुचन खोलैत अछि। एहि द्वैधमे कविताक आलोचनात्मक शक्ति अछि: धार्मिक सांस्कृतिक गौरव जे समाज अपनबैत अछि, ओहि समाजमे जीवनक नव आरम्भ पर कठोर निषेध बनल अछि।

रचनाक अन्तिम फलकमे ‘डस्टबिनमे राखल बमक विस्फोट’, रक्तस्राव आ ‘ब्रेकिंग न्यूज’क बात प्रवेश करैत अछि। समाचार कहैत अछि जे नगर फेर पटरीपर आबि गेल, मुदा मृतक परिवारक जीवनक ‘रेल’ आबि सकत कि नहि—ई प्रश्न अनुत्तरित अछि। दाह-संस्कारक निजी शोक आ आतङ्क-विस्फोटक सार्वजनिक खबर परस्पर टकरा दैत अछि।

‘हाड़मे ढुकल रहत ई सर्द कनकनी’ आवर्तन बाहरी मौसमक तुलना सामाजिक कुरीति आ सामूहिक विस्मृतिक दीर्घ आयुसँ करैत अछि। रचना एक क्षणक ‘कटिहारी’ नामसँ अनेक काल-सूत्र जोड़ैत अछि; कखनो प्रसंगान्तरण तीव्र अछि, तथापि शीतलताक मूल प्रतीक सब स्तरकेँ बाँधि रखैत अछि। ई पाठमे विधवाक पीड़ाकेँ गुमनामीसँ बाहर आनबाक विशिष्ट साहित्यिक प्रयत्न अछि।

५७. डैनियाही दुपहरिया — स्वप्नक हिंसा आ निद्राक हेरफेर

‘डैनियाही दुपहरियाक घाम’क बीच निन्नक विचित्र जीवन खुलैत अछि। सहस्रबाढ़निक दानवाकार आकृति, पोखरिक झोंटावाली पनिडुम्मी, तान्त्रिक-संघर्ष आ प्रेमीक प्राणरक्षाक क्रम लोककथाक भयावह दृश्य रचैत अछि। दुपहरियामे अन्हारक भय उठब एही स्वप्न-विधिक उलटफेर अछि।

स्वप्नक भीतर प्रेमी प्रेयसीकेँ बचबैत अछि, मुदा संगहि प्रहार सहैत, पएर बाँधल जाइत आ अपन प्राण संकटमे पड़ैत अछि। जागरणक बाद पहलमान, तीव्र धावक आ मालिकक स्वर सन भिन्न प्रसंग एकाहि अनुभूतिक तन्तु बनि प्रवेश करैत अछि। ताहि कारण रचना रैखिक कथानक नहि, स्वप्नक अनेक मुँह बनैत अछि।

अन्तमे ‘निन्नकेँ आस्ते-आस्ते देलक माहुर मिलि कय सभ मित्र’ बड़ तीक्ष्ण मोड़ अछि। जे निद्रा तृप्तिक आश्रय होयबाक चाही, ओ सभक हस्तक्षेपसँ विषाक्त भऽ उठैत अछि। एहि पाँतिकेँ वास्तविक आपराधिक घटनाक प्रमाण कहब उचित नहि; रचना स्वप्नक दूषित अवस्थाक बिम्ब देइत अछि। ‘कटिहारी’मे शीतक सामाजिक हिंसा छल, एतय निद्राक भीतर असुरक्षाक हिंसात्मक रूप अछि।

५८. खाम्ह अदृढ़ताक ठाढ़ — अदृश्य देबाल आ आकांक्षाक अस्थिर आधार

एहि लघु कविताक पहिल दृश्य ‘मोनक रंग-बिरङ्कक अदृश्य देबाल’ ढहबाक अछि। देबाल छूटैत अछि, मुदा ‘खाम्ह अदृढ़ताक ठाढ़’ बचल अछि। खाम्ह सामान्यतः आधार होइत अछि; अदृढ़ कहलापर ओकर अस्तित्व विरोधाभास बनि जाइत अछि। रचनाक शिल्प एहि एक असम्भव स्थापत्य-बिम्बपर टिकल अछि।

‘आकांक्षाक बखारी’ अन्न-संग्रहक भौतिक शब्दकें भावनाक भीतर आनैत अछि। हिमाल-लकड़ीक मन्दिर, ओसारापर तुलसीक गाछ, इनार-पोखरिक महार आ स्विमिंगपूलक नील देबाल अलग-अलग प्रकारक प्रतीक बनि उपस्थित अछि। धार्मिक वस्तु आ आधुनिक कृत्रिम जल-रंग दुनूक भीतर दृश्य-निर्माणक प्रश्न उठैत अछि: हम जकरा सहृदयता, प्रकृति वा शान्तिक प्रतीक मानैत छी, ओ वास्तविक अनुभवक स्थान लेइ सकैत अछि की?

कविता ‘ढहैत’ आ ‘बहैत’क अल्प-आवर्तनसँ समाप्त होइत अछि। ठाढ़ खाम्ह आ बहैत समयक विरोध उत्तर नहि पबैत, मुदा पाठककें ध्येय आ आधारक अन्तर पर विचार करबैत अछि। ‘प्रकृति, पुरुष’मे तस्वीरसँ प्रकृति प्राप्त करबाक भ्रम छल; एहि छोट पद्यमे मन्दिर, तुलसी आ स्विमिंगपूलक दृश्यसभ प्रतीकक क्षमताक अलग-अलग परीक्षा करैत अछि।

५९. निन्नक ओहि पार — स्मृति, कालमापन आ चेतनाक अस्थिर रील

‘राति अपन कारी पट्टी आँखिपर बान्हि दैत अछि’ पाँतिसँ सुतल देह आ बाहर ठाढ़ समयक दू स्तर खुलैत अछि। चलचित्रक स्थिर चित्रसभकेँ घुमबैत गति बनबाक उपमा कविता चेतनाक निरन्तरता पर लागू करैत अछि। बोध खण्डित घटनाक शृंखला अछि कि एक अविच्छिन्न अनुभूति—ई प्रश्न खण्ड १क कालचिन्तनकेँ नव लोकविधिमे लौटबैत अछि।

स्वप्नविहीन निन्न मृत्युक रूप अछि कि जीवनक—कवि प्रश्नक रूपमे कहैत अछि, प्रमाणित जैविक निष्कर्षक रूपमे नहि। शरीरक कोशिका टूटबाक आ बनबाक प्रक्रिया, स्मृतिक बचल रहबाक अनुभव आ घड़ीक नाप एक-दोसरा पर चढ़ल अछि। ‘घड़ीक अङ्क मेटा देलहुँ तँ की बचत?’क प्रश्नद्वारा मात्रात्मक समय आ जीयल समयक अन्तर व्यक्त होइत अछि।

अमेजनक पातक नीचाँक जीव आ मनुक्खक दुपहरियाक भिन्नता एकक मानक सभ पर लागू करबाक असम्भवता देखबैत अछि। सुंड़ी लेल ओकर पातक कोन एक संसार अछि; तकर जीवनक माप मनुक्खक घड़ीसँ निश्चय नहि कएल जा सकैत। एहिमे प्रमाण-आधारित विनम्रता आ नैतिक सहानुभूति दुनू अछि।

‘भूत क्षणभंगुर’, ‘भविष्य क्षणभंगुर’ आ ‘वर्तमान सेहो क्षणभंगुर’क आवर्तनकेँ कर्म-सिद्धान्तक प्रश्न बाधित करैत अछि: जँ सभ क्षण बदलैत अछि तखन रोपबाक आ फसल काटबाक सम्बन्ध कोना बाँचैत? कविता समाधान निर्देश नहि करैत; स्मृतिकेँ ‘प्रतिलिपि’ मानैत अनुभवक विश्वसनीयता जाँचैत अछि। शिल्पगत सीमा अनेक भिन्न वैज्ञानिक आ दार्शनिक विषयक तीव्र संलयन अछि, उपलब्धि ई जे सभ प्रश्न निन्नक एक रूपकसँ निसृत अछि।

६०. सड गामक पोखरि कात — बंशीक प्रतीक्षा आ सूक्ष्म हिलकोर

एहि पद्यमे एकटा पोखरिक कात बंशी पाथि ठाढ़ रहबाक दृश्य अछि। माछ पकड़बाक सफलता अनिश्चित, मुदा ‘आकांक्षाक पंखयुक्त अश्व’ प्रतीक्षाकें गतिशील बनबैत अछि। पानिक तल स्थिर लगैत अछि, छोट कीड़ीक चलन सूक्ष्म हिलकोर जगबैत अछि। बाहरी स्थिरता आ भीतरक गति एहिमे केन्द्रीय विरोध अछि।

‘विश्वासक छोर विज्ञानक ओर’ पाँति अनुभूति, आशा आ प्रमाणक दूरी संकेत करैत अछि। बंशी पाथब एक व्यवहारिक प्रयोग भऽ सकैत अछि, मुदा सधल प्रतीक्षाक परिणामकें ‘ज्ञानक पिण्ड’ कहल जा रहल अछि। शिकारक इच्छा आ ज्ञानक उत्सुकता परस्पर मिलैत अछि, एतय दोसर जीवक जीवनक प्रश्न सेहो उपजैत अछि।

अन्तमे ‘शान्त-प्रशान्त-वाकहीन मनुक्ख’कें भावनाक हिलकोर विहल करैत अछि। ‘उजाहिमे उपलाइत हम आ माँछ’मे शिकारी स्वयं शिकार बनबाक असुरक्षा अनुभव करैत छल; एहि कवितामे शिकारसँ बेसी अपेक्षा आ मौनक काल-अनुभव प्रमुख अछि। शब्दान्तरक किछु दुर्लभ पद सांकेतिक घनता बढ़बैत अछि, मुदा सूक्ष्म दृश्य कहनाइ सम्हारि रखैत अछि।

६१. सड सागर तटपर — समुद्रक लहरि आ इतिहासक टूटल तार

महाबलीपुरमक सागर तटपर सूर्य-मन्दिर आ पाण्डव-रथक उल्लेख वाचककेँ भौगोलिक दृश्यसँ सांस्कृतिक स्मृतिमे अनैत अछि। समुद्रक नुनगर पानि आ लहरिक टक्कर देहपर घटैत अछि, जखन गाड़क बात इतिहासक विस्मृतिक प्रश्न जगबैत अछि। अंकोरवाट, कैस्पियन क्षेत्र आ पल्लव परम्पराक संदर्भ काव्यक भीतर आकलन अछि; एहि उल्लेखसभसँ कोनो विस्तृत ऐतिहासिक समानता स्वतः प्रमाणित नहि होइत।

‘गामक बोरिंग पम्पसेट’ आ ‘अमेरिकन इंजीनियरक खैरात’क अचानक तुलना आधुनिक तकनीकी निर्भरता पर व्यंग्य करैत अछि। सागरक विराटता देखिते वाचक अपन समाजक सीमासँ बाहर नहि रहि पबैत। ‘छोड़ू भसियेलौं कतऽ फेर’ आत्म-संशोधनक स्वर अछि— इतिहासक लम्बा बहस समुद्रक इन्द्रियग्राह्य अनुभवकेँ बाधित करैत अछि।

अन्तिम भागमे लहरि जेना तटकेँ साफ करैत अछि, तहिना हास्य आ स्नेह मोनक चिन्ताकेँ बहा दैत अछि। मुदा ‘मात्र एतबे’क आत्मनियन्त्रणक पाछाँ ‘तकर विपरीत’क अनुत्तरित संकेत बचल अछि। ई पाठ आत्मविश्वासक एकरेखीय विजयगीत नहि; सम्भावना आ संशय बीच झूलैत मानसिक यात्रा अछि।

‘ज्ञान अपूर्ण’ आ ‘शंका सेहो अपूर्ण’क युग्म कविताक मूल प्रतिज्ञा अछि। देखल, सुनल आ भोगल अनुभवक सीमासँ ‘नम्र सत्य’क भेदिया खोजल जाइत अछि, मुदा ओ भेदिया जँ सब किछु देखि लेत तँ ओ ज्ञानकेँ कोना व्यक्त करत—ई प्रश्न निरन्तर पीछा करैत अछि। ‘अनुमानक काट लेल एकटा आर अनुमान’ प्रमाणमीमांसाक आत्म-परीक्षाक कविता-रूप बनि उठैत अछि।

मधुमाछीक संगीत, परबाक खोप आ मनुक्खक घरक तुलना जीव-जगतक भिन्न निर्माण-क्षमताकेँ चिन्हबैत अछि। ई उदाहरण विश्वक पूर्ण ज्ञानक प्रमाण नहि, मनुक्खक सीमित अनुभवक विरुद्ध वैकल्पिक निरीक्षण अछि। दर्शनमे अनुमान प्रमाण होयबाक लेल हेतु-व्याप्तिक परीक्षण चाहैत अछि; कविता शंका जगबैत अछि, मुदा तार्किक व्याप्ति स्थापित नहि करैत। एहने भेद रखब मूल पाठक सम्मान अछि।

‘खोइंचा’क परत खोलैत अदृश्य चमकैत आधारक खोज, अणुक टूटबाक अग्नि आ ब्रह्माण्डक उत्पत्तिक कल्पना एक गहन रूपक-शृंखला अछि। ‘ईहो तँ अछि अनुमान / से ई केना भेल प्रमाण?’ कहि कवि अपन कल्पनाक सत्य-दाबीक स्वयं समीक्षा करैत अछि। ई आत्म-संशय कविता केँ जड़ दार्शनिक प्रचारसँ अलग करैत अछि।

गीता, कर्म, हानिरहित व्यवहार, चेतनाक व्यक्तिगत स्थिति, मिर्गी आ स्वप्नविहीन निन्नक उल्लेख नैतिक आ जैविक स्तरसभकेँ मिलाबैत अछि। मिर्गी सम्बन्धी कथनकेँ चिकित्सकीय प्रमाण नहि मानल जा सकैत, आ चेतना शरीरसँ फराक भऽ जाएबाक प्रतिज्ञा वैज्ञानिक रूपेँ सिद्ध नहि कएल गेल अछि। रचनाक उपलब्धि अंतिम निष्कर्ष नहि, सर्वज्ञताक असम्भावना नकारि प्रमाणक प्रश्न जिवैत रखब अछि।

६३. घृणाक तरहरिमे — प्रेमक जलाशय आ शत्रुताक रूपान्तरण

‘प्रेमक तरहरि! / नै!!’क आरम्भ पाठकक अपेक्षाकें तुरन्त उनटि दैत अछि। वाचक पहिने घृणाक तरहरि खूनबैत अछि आ ओहिमे प्रेम गारैत अछि। घृणा के मेटेबाक लेल ओकरा उपेक्षित नहि, ओकराक बीच रूपान्तरणक काज शुरू कएल गेल अछि। माटि काटबाक श्रम प्रेमक भावनाकें ठोस, सामूहिक कार्य बनबैत अछि।

बरखा मासमे भरि जाइत प्रेमक पानिक कल्पना स्वाभाविक करुणाक आशा रखैत अछि, मुदा पानि कतेक काल ठहरत से तरहरिक गहराइपर निर्भर अछि। प्रेम एतय तत्काल मुस्की नहि, दीर्घ कारीगरी अछि। ‘पनिडुम्मी’क अन्तिम प्रवेश लोकभयक स्मृति लऽ अबैत अछि; ई बिम्ब स्पष्ट विजयक आश्वासन नष्ट करैत अछि।

एहि लघु रचनाक शक्ति नैतिक भावकें पोखरि खुनबाक शारीरिक श्रममे बदलब अछि। जेना ‘पक्काक जाइठ’ पोखरिक निर्माणसँ सामाजिक मान्यता जोड़ैत छल, एहि ठाम जलाशय शत्रुताक रूपान्तरणक स्थल बनैत अछि। तैओ ई प्रस्ताव केवल उपमा अछि; संघर्षक वास्तविक सामाजिक कारण एहि पाठमे विस्तारसँ नहि खुलैत।

६४. जावत रहब — प्रेमक घेराबा आ मृत्युक बादक शक्ति

‘जावत रहब / नै छूबि सकत क्यो’क घोषणा स्वायत्तताक दृढ़ स्वर अछि। ओकरा लग ‘प्रेमक पुत्र’ शक्ति आ ऊर्जासँ भरल अछि, मुदा चारूकात ‘स्थूल-प्रेमक गिलेबा’सँ उठल घेराबा अछि। प्रेमक नामपर थोपल गेल रक्षण वा अधिकार वास्तविक जीवित सामर्थ्यकेँ सीमित करैत अछि।

वाचक कल्पना करैत अछि जे ओकर नहि रहलापर वियोग प्रेमक पुत्रकेँ कठोर बनत आ घेराबा तोड़बाक संघर्ष तीव्र होयत। ‘मारि देबै तँ मारि दियौ’क आवाहन शाब्दिक हिंसाक अनुमोदन नहि, भयक अन्तिम सीमापर व्यक्त प्रतिरोधक उच्च स्वर अछि। एक व्यक्ति मरलापर ओकर संग अनेक वस्तु मरबाक चेतावनी सामूहिक सम्बन्धक क्षतिपर बल दैत अछि।

अन्तमे ओही घेराबाक चिन्ता फेर आबैत अछि। आरम्भक आत्मविश्वासक पाछाँ अनिश्चित भविष्य उभड़ैत अछि। ‘घृणाक तरहरिमे’मे प्रेम घृणाकेँ रूपान्तरित करबाक श्रम छल, एतय प्रेम स्वयं घेराबाक कठोर रूप धरि सकैत अछि। एहि आन्तरिक विरोधमे कविताक विशिष्टता अछि।

६५. चतुरहस्त — नृत्य, डफ-खजुरी आ रक्तबीजक विरोध

पहिल युगल नृत्य ‘चतुरहस्त’ हस्तसंचालनसँ खुलैत अछि। सत्य-झूठक निर्णायक प्रसंगमे डफ-खजुरी, चामक आवरण आ डोरीक कम्पनक ध्वनि उपस्थित अछि। ‘गुम.. गुम.. गुमकी’ ध्वन्यनुकरण केवल तालक वर्णन नहि, मंचीय ऊर्जा पैदा करैत अछि।

‘तखन दोसर नृत्य’क उद्घाटन संग रक्तबीजसभ आ ‘शिखरहस्त’क बिम्ब प्रवेश करैत अछि। आनंदमय युगल-सञ्चालनक बाद संघर्षक सामूहिक संकेत दृश्य बदलि दैत अछि। रक्तबीज मिथकीय पुनरुत्पादनक प्रतीक बनैत अछि; एहि संक्षिप्त पद्यमे ओकर विस्तृत पौराणिक कथा नहि, हिंसक बढ़ोत्तरीक एक छवि मात्र अछि।

नृत्यक हस्तमुद्रा आ ढोलक ध्वनिक सङ्गति एहि रचनाक बल अछि। सत्यक निर्णय ककरा द्वारा आ कोना होयत, ओ प्रश्न खुलल अछि। बादक ‘बुढ़िया डाही’मे रक्तबीजक बिम्ब पुनः विशाल सामाजिक रूप धारण करैत अछि; ई कविता ओकर पहिल संक्षिप्त रंगमंचीय संकेत प्रदान करैत अछि।

६६. बुढ़िया डाही — सर्जन-विरोधी हिंसा आ रुधिरसँ फुलैत प्रेम

‘कमलक मृणाल, पुरैनि, कमलगट्टा’क जल-परिवेश पहिने प्रेमक दह बनैत अछि। तकर तुरन्त बाद सृजन करबाक इच्छापर चोरबैत, धमकबैत, आंगुर काटबाक वा आँखि निकालबाक हिंसक आवाजसभक आवर्तन अछि। सुन्दर कमलदह आ क्रूर सामाजिक चेतावनीक एहि विरोधसँ कविता अपन मुख्य तनाव पबैत अछि।

कविताक ‘बुढ़िया डाही’ एक जटिल सम्बोधन अछि। कियो ओकरा भयावह व्यक्तित्व मानैत अछि, मुदा अन्तमे ‘ओ हमर बुढ़िया डाही’ कहल जाइत अछि। स्त्री-रूपककेँ केवल दुष्टता अथवा केवल मातृत्वमे समेटि देब पाठमे व्याप्त विसंगति मिटा देत। ई नाम एक सामाजिक आरोप, विद्रोहक पात्र आ स्नेहक पुनर्निर्मित सम्बन्धक बहुवचन रूप बनेनै रखैत अछि।

‘धारकेँ मोड़ि देब’क संकल्पक सामने प्रश्न उठैत अछि जे विरोधसँ धार आओर उदण्ड बनत कि नहि। रक्तक एक-एक ठोप पुनः बीआ बनबाक रक्तबीज-बिम्ब बतबैत अछि जे हिंसाकेँ केवल हिंसासँ समाप्त कएल नहि जा सकैत। संकल्पक हारि-पतन सेहो लोक-स्मृतिमे भविष्योन्मुख चेतावनी छोड़ि सकैत अछि।

अन्तिम फलकमे ओही ‘घृणाक तरहरि’क माटिमे कमल फुलैत अछि; लाल अरहुल रक्तक स्मृतिकेँ फूलमे बदलैत अछि। ‘घृणाक तरहरिमे’क पूर्ववर्ती प्रेम-जलाशय एहि ठाम संघर्षक विस्तृत नाटक बनि जाइत अछि। ऊर्जस्वी प्रतिमासभ कविताक उपलब्धि अछि, मुदा धमकीसभक तीव्र संचय किछु पाठक लेल बिम्बक स्तरसभ अस्पष्ट करि सकैत अछि।

६७. आ तखन, फैसला हेतै आब — बदलैत बोली आ हिंसाक पुनर्जन्म

‘उनटि जाइए लोक / उनटि जाइ छै बोल’क संक्षिप्त उद्धाटन सामाजिक व्यवहारक पलटू स्वभाव देखबैत अछि। मधुर वाणी ‘बिखाह’ बनैत अछि; अतएव भाषा मात्र सन्देश पहुँचबैत नहि, भरोसक सम्बन्ध गढ़ैत अथवा तोड़ैत अछि। ‘फैसला हेतै आब’ कहब भविष्यक न्यायपर दृढ़ दाबीसँ बेसी टकरावक प्रतीक्षाक संकेत अछि।

गोबरझारसँ स्मृति चमकायबाक असामान्य बिम्ब घरेलू सफाई आ स्मरणक नैतिक काजकें जोड़ैत अछि। रक्तबीज आ सहस्रबाढ़निक बिम्ब पुनः आबैत अछि—आक्रमणसँ अत्याचारी बीआ आर बढ़ैत जायत। एहि स्थिति मे हिंसाक आवृत्ति रोकब संकल्पक लक्ष्य अछि।

‘जकरा बुढ़िया डाही अहाँ कहै छिऐ’क सम्बोधन पछिला कविताक स्त्री-रूपक के नव सामाजिक विवादमे आनैत अछि। नाम देबाक शक्ति आ नाम द्वारा कलंकित करबाक हिंसा एतय सँग-सँग अछि। पूर्ण निर्णायक फैसला मूल पाठमे देल नहि गेल; शीर्षकक भविष्यकाल आलोचनात्मक अपूर्णता बनि रहैत अछि।

६८. जँ विश्वास कऽ ली अहाँपर, ऐ प्रकृतिपर — आश्वासनक विघटन आ सत्यक अनेक अक्ष

एहि कविताक आरम्भ विश्वासक एक परिकल्पनासँ अछि: जँ प्रकृति वा ‘बुढ़िया डाही’क कथन सहज स्वीकारि ली, तँ सत्य तकनाइ बाम हाथक खेल बनि जायत। मुदा आश्वासन देशान्तर पहुँचैत बिलाइत अछि, शंका फैलैत अछि, आ स्मृति प्रश्न-प्रतिप्रश्नमे भकुआइत अछि। एहि संक्रमणमे विश्वासक सुविधा टूटैत अछि।

‘न हम ने ओ अछि स्थिर’ कथन प्रत्यक्ष अनुभूतिक बदलैत अवस्थाक स्वीकृति अछि। सत्यक ‘खोइंचा’ खोलला पर एक पातर परत, फेर दोसर परत भेटैत अछि। नव-नव सत्यक जन्म ‘कटान’ आ ‘ढलान’सँ जोड़ल गेल अछि; एहि शब्दसभमे प्रकृतिक भूगोल, बुद्धिक श्रम आ बहुल अनुभवक एकहि रूपक-शृंखला बनैत अछि।

अन्तक ‘अपन अक्ष’ तकैत अनेक सत्य एक केन्द्रहीन वृत्तचित्र रचैत अछि। ई रचना सिद्धान्त रूपमे सभ सत्य समान कहैत नहि अछि; बल्कि एके दाबीक सत्यापन कखन आ कोना अस्थिर होइत अछि, से देखबैत अछि। ‘सर्वज्ञाता’क अनुमान-प्रमाणक प्रश्न एहि ठाम विश्वासक व्यक्तिगत सम्बन्ध आ स्मृतिक विघटन धरि पहुँचैत अछि।

शिल्पमे बहैत वाक्य आ घूमैत अक्षसभ स्वयं अनिश्चितताको रूप दैत अछि। कठिनता एहि बातमे अछि जे ‘बुढ़िया डाही’क प्रतीक एकहि जगह मनुक्ख, प्रकृति आ सत्यक संरचनाक भाषा बनैत अछि। तथापि पूर्वक दू कविताक संग पढ़ला पर एहि रूपान्तरक साहित्यिक संगति स्पष्ट होइत अछि।

६९. घड़ी पूजा — बहुधर्मी लोकाचारक भीतर प्रश्नक अनुशासन

‘धर्मराजक भगवती घर’ आ ‘घड़ी पाबनि’क विस्तृत चित्रसँ कविता शुरू होइत अछि। चौदहटा पातरि, खीर-पूड़ी, लड्डू, नव चुल्हा आ पातरि गाड़बाक क्रिया घरक भीतर पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलैत लोकाचारक मूर्त रूप अछि। ‘भगवती घर’ नाम रहितो आराध्यक नाम धर्मराज होयबाक प्रश्न कविताक भाषिक असंगति नहि; स्थानीय धार्मिक जीवनक बहुस्तरीय इतिहासक संकेत अछि।

बालापीरक घर-आँगनक पूजा, कबीरक सत्संग आ पीरक उर्स-मजारक यात्राक उल्लेख एक-दोसरासँ अलग धार्मिक विधिसभकेँ समक्ष अनैत अछि। कवि समान उच्चारण वा समान विधि प्रमाणित करबाक प्रयास नहि करैत; एक नामक अनेक स्थानिक प्रयोग देखैत अछि। दरगाह, सत्संग आ मिथिलाक आँगनक बीच आवागमन ‘बहुधर्मी’ अनुभवक साहित्यिक रचना अछि, एकर प्रत्येक स्थल-इतिहासक तथ्य स्वतंत्र सन्दर्भसँ जाँचल जा सकैत।

‘हम ब्राह्मण’क आवर्तन मध्यभागमे प्रतिरोधी स्वर अनैत अछि। देवप्रतिमाक नाचब-कनब, मन्दिरक थरथरेब आ अन्धविश्वासक आकर्षणक बरक्स ‘विज्ञान, तर्क, बुद्धि’ तथा गुरु सँ वार्ता करबाक माँग अछि। रचना लोकाचारक विनाशक उद्घोष नहि, ओकर भितरी कारण तकबाक साहस बनैत अछि। तें ‘घड़ी पूजा कोन पूजा?’क प्रश्न श्रद्धाक उपहाससँ अलग अछि।

मीमांसा, सांख्य, बौद्ध, वेदान्तक नाम संक्षिप्त तुलनात्मक पदक रूपमे आबैत अछि। ‘श्रद्धा मात्रसँ की हएत’, ‘प्राप्ति लेल तप’, ‘सभटा जिम्मा अछि आत्मक’ सन कथन दार्शनिक व्यवहारक आलोचना संकेत करैत अछि; मुदा पूर्ण शास्त्रीय पूर्वपक्ष-सिद्धान्त रचना प्रस्तुत नहि करैत। एहि पदसभकेँ ग्रन्थ-प्रामाणिक प्रतिपादन घोषित कएल नहि जा सकैत।

अन्तमे कवि फेर घरक खाधि खूनि गाड़ल प्रसाद आ भगवती घरसँ नवेद बाहर नहि जाएबाक ओर लौटैत अछि। एहि वृत्ताकार शिल्पक शक्ति अछि जे दिगन्तक दर्शनक बाद साधारण रीतिक अनुत्तरित प्रश्न बाँचल अछि। पाठक धार्मिक स्मृतिक बहुवचन स्वर सुनैत अछि, मुदा एक निश्चित प्रमाणक अभाव सेहो देखैत अछि।

७०. नाराशंसी — कविता, वैदिक स्वर आ लोकजगतक अन्तर्संवाद

‘कविक कविताक छन्दक रस’ सँ भयभीत विश्वदेव ओकरा छन्दमे बाँधि दैत छथि—ई आरम्भ काव्यक स्वतन्त्र शक्ति आ विधागत अनुशासनक तनाव निर्माण करैत अछि। ‘नाराशंसी’क गायन एक ओर वैदिक-लोक स्मृतिक उद्घोष, दोसर ओर कविक रसपर नियन्त्रणक प्रतीक अछि। कविताक वस्तु स्वयं कविता बनि जाइत अछि।

अरणिमन्थन, द्युलोक, गायत्री, गन्धर्वलोक आ सोमरसक शब्दसभ संग कर्कश बजरी-सूगाक आ मधुर स्वरवाला सूगाक विरोध अछि। एकहि पक्षी-रूपक द्वारा भिन्न ध्वनिक मूल्य रखल गेल अछि। कमलाक रेत, विलुप्त गाछी, नदीक धारा, नाव आ माछ धरेबाक घेराव एहि स्वर्गीय प्रतिमासभकेँ अत्यन्त स्थलीय लोकजीवनमे रोपैत अछि।

‘भालसरिक गाछ’ सरकारी सड़कपर आबि जाएब आ ‘ई गामक नै / भऽ गेल अछि सरकारी’ कहब अधिकारक परिवर्तनकेँ मूर्त बनबैत अछि। भू-सम्पत्तिक राज्यसापेक्ष स्थिति, विलुप्त गाछी आ टुट्सा फूटबाक आशा एक संग चलैत अछि। लोकपर्यावरण मात्र पृष्ठभूमि नहि, कविता आ संस्थाक सम्बन्धक राजनीतिक धरातल बनैत अछि।

पाणिनि, त्रयोदशी, गायत्रीक चिह्नरूप आ वररुचिक कथा शास्त्रीय शब्द-स्मृतिसँ नया कथा-क्रम बनबैत अछि। एहि आख्यानसभक ऐतिहासिक-ग्रन्थीय शुद्धताक परीक्षण अलग आवश्यक अछि। कवि स्वयं व्याकरण आ छन्दकेँ ‘नै बुझल’ कहि विशिष्ट कला-स्वतन्त्रताक प्रश्न उठबैत अछि; एहि आत्म-वाक्यकेँ शास्त्रक प्रमाणक अभाव कहि मात्र खारिज करब अनुचित।

‘शरीरक नदी-धार’ आ नाड़ीतन्त्रक तुलना बाहरी विद्युत्, मेघ आ समुद्रसँ कएल गेल अछि। अन्तर्मनक स्वर आ बाहरी ऋतक एक संगति प्रतिपादित होइत अछि, मुदा आधुनिक शरीरविज्ञानक प्रमाणित समरूपता एहि बिम्बसँ सिद्ध नहि। अन्तक आरम्भिक पदसभक पुनरावृत्ति कविताकेँ वृत्ताकार बनबैत अछि—रस बाँधबाक शक्ति आ ओकर सँ बाहर छलकबाक इच्छा दुनू अखन सक्रिय अछि।

७१. निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम् — आर्यभट आ चन्द्रयानक समय-संवाद

एहि पद्यमे आर्यभटक कुसुमपुरसँ चन्द्रयानक अन्तरिक्ष अभियानधरि समयक एक कल्पनात्मक सेतु बनैत अछि। सूर्य-चन्द्रक व्यास, पृथ्वीक गतिक उल्लेख आ ग्रहणमे राहुक बदला छाहक स्पष्टीकरण ज्ञानक इतिहासक चिह्न बनैत अछि। वैज्ञानिक सिद्धान्तक विस्तृत प्रमाण कविता नहि प्रस्तुत करैत; तकर ऐतिहासिक स्मृतिकेँ समकालीन उत्साहमे रूपान्तरित करैत अछि।

‘कुसुमपुर अछि श्रीहरिकोटा’ काव्यात्मक वाक्य अछि—दू भौगोलिक स्थानकेँ शाब्दिक एक मानब नहि, ज्ञान-उत्पादनक युगान्तरक संगति पढ़ब उचित अछि। ‘इसरोक वैज्ञानिक लोकनिकेँ’ देल बधाई सामूहिक विज्ञानक श्रमक स्वीकृति अछि। ‘पंद्रह सय साल’क अन्तराल गनबाक ठोस ऐतिहासिक प्रसंग अलग स्रोतसँ सत्यापित होयत, मुदा पद्यक भावना प्राचीन-वर्तमानक संधानमे अछि।

अन्तक संस्कृत उद्धरण ‘आर्यभटस्त्विह निगदति...’ आ श्रीहरिकोटाक नाम साहित्यिक-संकेतिक द्विभाषिकता प्रकट करैत अछि। ‘सर्वज्ञाता’क अनुमान-प्रधान व्यापक अनिश्चयक बरक्स ई पद्य परिकलना आ वैज्ञानिक जाँचक सम्भावना पर भरोस व्यक्त करैत अछि। छोट आकारक बावजूद नामक प्रतिध्वनि अर्थसघन अछि।

७२. सपना — ईश्वरक अनिश्चितता आ निद्राक टूटल सीमा

‘सपना? खूब डरेलक’ सँ आरम्भ भऽ रचना भय आ निद्राक अभावकेँ एक संग रखैत अछि। स्वप्न केवल रातिक दृश्य नहि; मन जागल अवस्थामे सेहो ‘देश कालक सीमा’ आ ‘पुरखाक भ्रम’क प्रश्नमे उलझल रहैत अछि। छातीक धकधकी प्रश्नक शारीरिक प्रभावकेँ मूर्त करैत अछि।

‘जगक जन्म’क प्रश्नक उत्तर नहि भेटला पर ईश्वरक नाम लएबाक प्रवृत्ति पर कवि पुनः प्रश्न करैत अछि—ईश्वरक मन आ स्वरूप स्वयं कसरी बूझल जायत? तखन प्रश्न हल नहि होइत, केवल दोसर स्तरमे प्रवेश करैत अछि। ‘भाग्यराजक कठपुतली’ कहब आ सभ किछु ‘अपने’ करबाक अन्तर क्रिया-स्वायत्तता आ नियतिवादक द्वन्द्व बनैत अछि।

कविता अन्तमे न सुन्दर सपनाक प्रतीक्षा करैत अछि न केवल डरावन दृश्यक निष्कर्ष। ‘सपना सुन्दर आकि डरओन नै कोनो / अछि आब अबैत’क अस्पष्ट स्थिति भयक क्रमशः सामान्यीकरणक संकेत दैत अछि। ‘डैनियाही दुपहरिया’मे लोकदानवक हिंसक स्वप्न छल; एहि रचनामे अदृश्य प्रश्न स्वयं निद्राक शत्रु बनैत अछि।

७३. चुप्पीक अपन बोली — आत्मप्रश्नसँ दोसरक पीड़ा धरि

‘सत्यक नाम लैत-लैत कण्ठ थाकि गेल’ पाँति अमूर्त आध्यात्मिक पदक बारम्बार उच्चारणक थकान व्यक्त करैत अछि। आत्मा, संसार आ मोक्षक शब्द सोझाँ रहितो भीतरक गिटुऽ नहि खुलैत। कविता केवल दर्शनक नकार नहि, प्रश्न उठबैत अछि जे अवधारणाक ज्ञान दोसरक दुःखक प्रति जागरणमे कखनो रूपान्तरित होयत?

दिनभरि जमा फिकिर, गहीर निन्नमे अपन नामो छूटि जाएब आ जागि खाली तरह्त्थी भेटब — ई सभ अनुभव आत्मपरिचयक आश्रितता पर प्रश्न करैत अछि। सपनाक दृश्य संग घुरबाक विपरीत निराउ निन्नसँ खाली हाथ घुरब स्मृति आ चेतनाक अन्तरकें समक्ष रखैत अछि।

‘जीवनक अन्त अपन इच्छासँ चुनबाक प्रश्नो उठैए, मुदा प्रश्न उठब उत्तर भेटब नहि होइए’ पाँति कठिन नैतिक क्षेत्रकें अनिर्णीत रखैत अछि। कविता एखन बाँचल श्वासकें सुनबाक धैर्य चुनैत अछि। एहि सावधानीमे रचनाक गरिमा अछि: दार्शनिक निष्कर्ष अथवा आत्मविनाशक कल्पनाकें सनसनीखेज लक्ष्य नहि बनायब।

७४. स्मृति-भय — बाल्यस्वप्नसँ दर्शन-विज्ञानक आलोचनात्मक मन्थन

नगरक कोलाहलमे स्मृति बिसरि जाएब आ ओकर संग भय बढ़ब—एहि साधारण अनुभवसँ अत्यन्त विस्तृत कविता आरम्भ होइत अछि। बच्चाक करची-कलम, सुखायल दवात आ पैघ भऽ पुनः लिखबाक इच्छा स्मरण आ सृजनक बीच सम्बन्ध स्थापित करैत अछि। ‘स्वप्नानुशासन’ भेटि गेल, मुदा ‘शब्दानुशासन’ टूटल—एहि विरोधसँ रचना अपन शिल्पक आत्म-प्रश्न सेहो उठबैत अछि।

सहस्रबाढ़निक दानवाकार दृश्य, ब्रह्माण्डक निर्माता आ ‘ओकरो निर्माता के?’ सन प्रश्न अनन्त पुनरावर्तनक बौद्धिक भय प्रकट करैत अछि। लेखक कहैत अछि ‘पढ़िकेँ दर्शन / नै करब चिन्तन’, मुदा तुरन्त फेर प्रश्नक भँवरमे प्रवेश करैत अछि। ई कथन दार्शनिक बहसक निषेधक अन्तिम निर्णय नहि, खोजक थकानक नाटकीय क्षण अछि।

सप्तऋषि, अष्टसिद्धि, नौ निधि आ दशावतारक लम्बा श्रृंखला धार्मिक-सांस्कृतिक स्मृतिक एक सम्पूर्ण संग्रह रचैत अछि। ‘मत्स्य’ सँ ‘वामन’ धरि अवतारक क्रमकेँ आधुनिक उत्पत्ति-सिद्धान्तक समरूपता मानबाक आकांक्षा पाठमे व्यक्त अछि, मुदा ई वैज्ञानिक उद्विकासक प्रमाण नहि। कविता पुराण, विज्ञान आ नैतिक चिन्ताकेँ एक मंचपर लऽ अबैत अछि; प्रत्येकक ऐतिहासिक प्रमाणस्थिति अलग राखल आवश्यक अछि।

‘दर्शन भेल जतय अनुत्तरित / विज्ञान देलक किछु समाधान’ आ तकर उलटा कथन ज्ञान-परम्पराक परस्पर सहायता केँ उद्धाटित करैत अछि। वैज्ञानिक निरीक्षणक स्थानपर ज्योतिषीय भाग्यवाद अथवा दार्शनिक बहसक स्थानपर कर्मकाण्ड रखबाक प्रतिरोध एतय स्पष्ट अछि। तैओ ‘विज्ञान’ आ ‘दर्शन’क भीतरक विविधता संक्षिप्त घोषणासभमे पूरा नहि अँटैत।

शकुनिक चौपड़, कर्ण-एकलव्यक प्रसंग आ सरस्वतीक सुखायल धार समाजमे शिक्षा-संस्थाक जड़ता पर व्यंग्य करैत अछि। खेत, भूख, कला आ विज्ञान जोड़ि कविता पुछैत अछि जे बौद्धिक परम्पराक विस्तार किएक रुकैत रहल। एहि ठाम इतिहासक व्यापक दाबीक सत्यापन अलग सन्दर्भ चाहैत अछि; कविताक न्यायोचित आलोचनात्मक मापन ओकर प्रश्नक ताकतपर आधारित अछि।

अन्तिम ब्रह्माण्डीय प्रश्न—सर्जकक नियम कोन, सृष्टिक प्रयोजन की, भगवानक मस्तिष्कमे स्वप्न चलैत अछि कि नहि—कोनो धर्ममीमांसाक अन्तिम निषेध वा स्थापना नहि। ‘स्मृति-भय’क उपलब्धि व्यक्तिगत भूलक पीड़ासँ सामूहिक ज्ञान-विरासतक व्यापक आलोचना धरि गति अछि। सीमा लगातार प्रसंग-बदलाव आ महाकाव्यात्मक सूचीक बोझ; काव्यक विशिष्टता आ असुविधा दुनू एही विस्तारसँ उपजैत अछि।

‘विकराल राति’क मेघ, विद्युत् आ वृत्रहन्ता इन्द्रसँ कविता वैदिक छविक ऊँचाई पकड़ैत अछि। कवष ऐलूषक ऋक्, अमृत भेला सूगा आ बजरी सूगा दुई दिशाक आवाज बनैत अछि— एक द्युलोक दिस, दोसर पृथ्वी दिस। एहि प्रतिमासभक संग ‘नाराशंसी’क पद्यसँ प्रत्यक्ष अर्थसम्बन्ध अछि।

कवि पुछैत अछि जे ‘वादक सम्बल’ लऽ ऊपर जाएब कि पृथ्वीपर घुरि सामाजिक भूखक सामना करब। ‘सोझाँ ठाढ़ जाड़क विकराल रातिक भूख’क ठोस परिस्थिति वैचारिक विवादकें छोट करि दैत अछि। भूखक समक्ष निरर्थक संवादक आलोचना रचनाक मुख्य नैतिक केन्द्र अछि।

अन्तमे भोरक संग वस्तुक किछु कम होइत जाएब आ बिलायल प्रतीक्षा जीवनक क्षीणताक माप अछि। दर्शनक ऊर्ध्व यात्रा आ भूखक स्थलीय कठोरता बीच ई कविता निर्णायक चयन नहि देइत, मुदा प्रश्न जोरदार रखैत अछि। ध्वनिक समृद्धि ओकर बल अछि; वैदिक प्रसंगसँ लोक-भूखक अचानक मोड़ सम्पूर्णतः सहज नहि।

७६. क्षणक अछोर — लिखबाक समय आ निष्कर्षक सावधानी

‘एखुनका बात लिखैत छी / लिखि सम्पूर्ण करिते ओ बीतल बात बनि जाइए’ कहि कविता लेखनक वर्तमानकें तुरन्त भूतमे बदलि देइत अछि। विचारक गति अनुभवक समयसँ पाछाँ पड़ैत अछि। एहि छोट दृश्यक बल कालक सम्बन्धमे कोनो विशाल सिद्धान्त नहि, लिखबाक ठोस प्रक्रियाक भीतर संकट देखेनाइ अछि।

पाथरक चुप्पी, देहक स्फूर्ति आ थकान, शक्तिक नाम आ ओकर घरक अज्ञान, रूपसँ नाम धरि आवागमन—ई सब अनुभूति आ वर्गीकरणक दूरी रचैत अछि। ‘मस्तिष्क बहुत जोड़-घटाव करैए’ मुदा अनुभव ओकर हिसाबसँ बाहर बाँचि जाइत अछि।

खसल पातकें हवा ऊपर उठबैत अछि, वाचक क्षणभर बुझैत अछि जे पात अपन डाढ़ि दिस घुरि गेल; हवा हटिते ओ आँगनमे ठहरैत अछि। ‘निष्कर्ष रोकि लेलहुँ’क अंतिम व्यवहार एहि कविताक ज्ञानात्मक उपलब्धि अछि। प्रत्यक्ष दृश्यसँ शीघ्र अर्थ निर्धारित करबाक प्रलोभनक प्रति एक सम्यक् विराम—एहि ठाम नव्य-न्यायक संशय आ निश्चयक अन्तर उपयोगी तुलनात्मक कसौटी बनैत अछि।

एहि रचनाक आरम्भ चेतना, मस्तिष्क आ ज्ञानेन्द्रीयक सम्बन्धसँ होइत अछि। ‘मात्र संख्या एक देखि सकै छी हम’ आ आन संख्या अनुमान होयबाक विचार कविक चिन्तन-प्रतिज्ञा अछि, गणितक सर्वमान्य सिद्धान्त नहि। ‘एक परमात्मा’ आ ‘मारिते रास जीवात्मा’क भेदसँ व्यक्तिगत सत्यक प्रश्न उठैत अछि।

दृष्टि जकरा देखैत अछि, ओकरे तकबाक प्रक्रिया पुनः दृष्टिक ओर प्रश्न पठबैत अछि। इन्द्रियसँ पहुँचैत दृश्य आ छूटि जाएवला अनुभूतिक बीचक अन्तर ज्ञानक अपूर्णता स्पष्ट करैत अछि। ‘जकरा बुझलहुँ तकरे समुच्या जगत कहि देब?’ पाँति पूर्णताक अतिशय दाबीसँ सावधान करैत अछि।

‘मञ्चपर ठाढ़’ चमत्कार कहनिहारक सम्मुख ताली बजैत भीड़ आ चुपचाप फूटैत पल्लवक विरोध रचनाक मार्मिक केन्द्र अछि। साधारण जीवनक विस्मय अनदेखल रहैत अछि, जखन अद्भुतक कथन लोककेँ मोहित करैत अछि। अन्तमे बच्चा पात उलटैत अछि; ओकर जीवित प्रश्न पोथीक दाबी पर नैतिक नियन्त्रण बनि ठहरैत अछि।

‘सर्वज्ञाता’मे सर्वज्ञानक अनुमानिक सीमा छल; एहि रचनामे अत्यधिक विश्वासपूर्ण प्रचारकक विपरीत प्रश्न करैत बच्चाक नन्हा दृष्टान्त अछि। अन्तिम स्वर प्रमाणक खोजमे नम्रता अछि, जे चमत्कारक आकर्षणसँ अलग अछि।

७८. विचारक विराम — इतिहासक दूर उजास आ निकट पीड़ाक आवाज

‘मोनक बतकही कने थमल / तँ दुखक असल अबाज सुनाइ पड़ल’ कहि कविता बौद्धिक बहससँ संवेदनक दिशामे मोड़ लैत अछि। कविता सान्त्वना सेहो दैत अछि आ ‘सुतल चोट’ सेहो जगबैत अछि; एतय कलाक नैतिक जटिलता दृढ़ अछि।

दूरक ताराक पुरान प्रकाश आ पएर लग एखन हिलैत घासकेँ एके समयमे देखबाक दृश्य भिन्न काल-स्तरक सजीव संयोजन अछि। दूरक ज्योतिसँ प्राचीन घटना बोध होइत अछि आ निकट घासक कम्पनसँ तात्कालिक अनुभव। रचना कालक विराटताकेँ रोजमर्रा अनुभूतिक नकार नहि बनबैत।

मुखक बदलैत मुस्की आ विचारक रचयिताक बीच सम्बन्ध काव्यमे दृष्टिकोणक सीमा बनैत अछि। ‘आत्माकेँ कालातीत मानैत छी / तँ जन्मक गिनती ओहि पर केना चलत?’क प्रश्न दार्शनिक संगतिक परीक्षा अछि। देहक समय आ साक्षीक समयक अन्तर अनुत्तरित अछि; अतएव ‘विराम’ अनिश्चयक स्वीकृति अछि, आलस्य नहि।

७९. भयक पकड़ ढील होइत — मृत्युक कल्पनाक संग बैसबाक अभ्यास

मृत्युक नाम सुनिते देह सिकुड़बाक अनुभवसँ कविता शुरू होइत अछि। वाचक एतय भयकेँ तुरन्त नकारैत नहि; ‘ओहि भयक संग किछु बेर बैसैत छी’ कहि ओकरा देखबाक धैर्य चुनैत अछि। एहि छोट बदलावमे रचनाक भाव-परिणति निहित अछि—भय शून्य नहि भेल, मुदा ओकर पकड़ ढील अछि।

‘आत्मबोधक अर्थ जँ केवल नव शब्द हो’ तखन कम्पन नहि थामत—एहि पाँतिमे अनुभव आ भाषणक अन्तर स्पष्ट अछि। आत्मबोधकेँ जादुई औषध नहि, आत्मनिरीक्षणक प्रक्रियाक रूपमे पढ़ब उचित अछि। देखनिहार आ देखल भयक बीच ‘कने ठाम’ बनेबाक चित्र ध्यानात्मक अन्तरालक सघन रूपक अछि।

अन्तिम पाँति मृत्युक तारीखक अज्ञान स्वीकारैत अछि। रचना अविनाशिताक कोई अचूक दावा नहि करैत; अस्थिर देहक स्वीकृति आ एखनक साँसक सहज अनुभवकेँ प्रमुख करैत अछि। ‘चुप्पीक अपन बोली’क जीवनसमर्थक विरामक संग एतय दार्शनिक भावसंगति अछि।

८०. कलहक अभ्यास — नन्ह जीवक दृष्टिसँ अहिंसाक व्यवहारिक परीक्षा

‘की कखनो एहन भोर छल’ कहि कविता संघर्षक इतिहासक प्रश्न उठबैत अछि। चिड़ैक दाना, माटिक महीन छिद्र आ अनदेखल प्राणसभक उल्लेख बतबैत अछि जे पैघ जीवक सहज चलन छोट जीवक विपत्ति बनि सकैत अछि। एहि मापक असमानतामे नैतिक उत्तरदायित्वक प्रश्न अछि।

केवल ककरो रोकि देलासँ कलह नहि मेटब; अपन व्यवहारक आदत बदलबाक आवश्यकता पर कविता बल दैत अछि। ‘बुद्धक शान्त मुख’क चित्र टँगला सँ मन नहि बदलैए—ई दृश्य प्रतिष्ठित प्रतीक आ वास्तविक अभ्यासक अन्तर बतबैत अछि।

रचनाक बल अहिंसाकेँ समूचा जगतक एक घोसणा नहि, दिनक छोट काजक सजगता बनबैत अछि। ‘भयक पकड़ ढील होइत’मे अपन मृत्युभयक जाँच छल; एतय अपन क्रियासँ आनकेँ पहुँचैत हानिक जाँच छपैत अछि। किछु प्रश्न बहु व्यापक अछि, मुदा अनदेखल जीवक उदाहरण ओकरा अनुभवपर टिकबैत अछि।

८१. अपन परिचयक खाली ठाम — पद, पहचान आ दोसरक स्वतन्त्रताक नैतिकता

दिनक अन्तक काज-सूचीमे अपन प्रश्न नहि भेटब कविता केँ प्रशासकीय दिनचर्यासँ गहन आत्म-प्रश्न धरि पहुँचबैत अछि। नाम, पद आ ठेकान हटलापर शेष की रहत—ई प्रश्न पुनः ‘अपन परिचयक कोठा एखनो खाली’क आवर्तनमे लौटैत अछि। खालीपन असफलताक चिह्न नहि; बिना नव उपाधि जोड़े आत्म-चिन्तन करबाक अवकाश अछि।

ओसारापर पानि माँगैत अपरिचित लोकक पियास पहिचानक एक नैतिक कसौटी अछि। दोसरक जिनगी अपन नहि रहितो पियासक अनुभव दूर नहि अछि। शान्ति केवल बन्दूक चुप भेला सँ नहि होइत; अपमान, भीतरक तैयारी आ प्रतिशोधक पुनर्जन्म रोकबाक श्रम आवश्यक अछि। ई सामाजिक शान्तिक व्यावहारिक विश्लेषण अछि।

‘विचारक ठाम माथ / स्नेहक निवास छाती’क प्रचलित विभाजनकेँ कविता आलोचनात्मक बनबैत अछि। दुःख दुनूकेँ एक संग भारी करैत अछि; दू दरबार बना देने निर्णय सरल नहि होइत। इच्छा आ विवेककेँ एके काजक लग बैसेबाक सुझाव मनोवैज्ञानिक समन्वयक रूपक अछि, वैज्ञानिक नाडीविज्ञानक मानचित्र नहि।

अन्तिम भागमे निकटता आ सहमतिज्ञानक प्रश्न अत्यन्त स्पष्ट अछि। ‘दोसरक इच्छा सुनल जाइ / ओकर असहमतिक ठाम रहय’ कहब प्रेमकेँ स्वामित्वसँ अलग करैत अछि। वंशावली, जाति वा अपन रुचिक साँचा थोपब के प्रेम नहि मानल गेल अछि। एहि ठाम व्यक्तिगत आत्मपहिचान आ दूसरेक स्वतन्त्रता एक साथ विचारित अछि।

‘जावत रहब’मे स्थूल प्रेमक घेराबा तोड़बाक आकांक्षा छल; एहि रचनामे घेराबा घटाबय हेतु सहमति, दायित्व आ भरोसक व्यवहारिक सूत्र भेटैत अछि। लम्बा मुक्तछन्द बीच-बिचमे उपदेशात्मक होइत अछि, मुदा पियास, आँगन आ दिनक सूची ओकरा ठोस जीवनक आधार दैत अछि।

८२. घड़ीक बाहरी किनार — माप आ अनुभूतिक सीमा

घड़ीक टिक-टिकसँ उठल प्रश्न—‘ई माप आरम्भ कतऽ भेल?’—कालकेँ केवल घटनाक गणना नहि रहने दैत। वाचक घटना सँ घटना धरि डोरी तनैत अवधि बनबैत अछि, मुदा डोरी पकड़निहार स्वयं समयक भीतर बान्हल अछि। एहि विडम्बनामे मापक आ मापल वस्तुक सम्बन्ध जटिल होइत अछि।

पोथीक अनेक नक्शा सम्पूर्ण कालक बाहर किछु छोड़ैत अछि। ‘सम्पूर्ण समयकेँ समक्ष राखि के देखत?’ पाँति सर्वज्ञानक दृष्टिक परीक्षा अछि। ऋषिक कालातीत अनुभूतिक उल्लेख सिद्ध प्रमाण नहि, कालमापनक मर्यादा अनुभव करबाक निमित्त अछि।

‘निन्नक ओहि पार’मे घड़ी आ कोशिकाक काल लम्बा कविता बनैत छल; एहि लघु रचनामे समयक डोरीक एक रूपक पर्याप्त भऽ उठल अछि। संक्षेप एकर प्रमुख शक्ति अछि—असीम प्रश्न उत्तरक आडम्बर बिना खुजल रहैत अछि।

८३. एतहि खोज — धार्मिक प्रतीक्षाक बदला रोजक करुणा

‘पवित्र दिनक प्रतीक्षामे साधारण दिन बीति गेल’क आरम्भ आध्यात्मिक उपलब्धि केँ भविष्यक कोनो महान अवसर सँ बाँधि रखबाक आलोचना अछि। वाचक रोजक काज नीक सँ करब, दोसरक बात सुनब आ स्वीकारल जिम्मेवारी निभाएब चुनैत अछि। एहिमे साधारण दिन स्वयं धार्मिक अनुभूतिक सम्भावित धरातल बनैत अछि।

परम सत्य कहनिहारक ‘गम्भीर स्वर’ सँ स्वयंसिद्ध सहमत नहि होयबाक कथन प्रमाण आ प्राधिकारक अन्तर चिन्हबैत अछि। ‘ईश्वरक उपस्थिति मानब तँ लगक जीवन केँ अनदेखल कोना करब?’ प्रश्न श्रद्धा केँ नैतिक व्यवहार सँ जोड़ैत अछि।

एहि कविताक विशिष्टता घोषणा-भारी दर्शन सँ बचि अत्यन्त साधारण कर्तव्यक भाषा चुनब अछि। ‘घड़ी पूजा’मे घरक लोकाचारक कारण तकल गेल छल; एतय धार्मिक खोजक उत्तर दैनिक देखभालक रूपमे संक्षिप्त कएल गेल अछि।

८४. प्राणक गवाही — घायल जीव आ सिद्धान्तक नैतिक परीक्षण

‘पशु-यन्त्रक विचार’ सुनबाक समय आँगनमे घायल जीवक पीड़ा देखि वाचकक ध्यान बदलि जाइत अछि। जीवक कष्टक उत्तर केवल दर्शनक परिभाषा नहि, तत्काल मदति अछि। अमूर्त सिद्धान्तक विरोध नहि, ओकर उपयोगिता पर व्यवहारक प्रश्न ई पद्यक केन्द्र अछि।

मनुक्ख अपन लेल विशेष अधिकार लिखैत अछि, मुदा दोसर प्राणक जीवन ‘पोथी’मे दर्ज नहियो हो तँ ओकर पीड़ा छोट नहि होइत। एहिमे प्रमाणक सामाजिक-नैतिक असमानता चिन्हित होइत अछि: शक्तिशालीक भाषा कमजोर जीवक अनुभवकें दबा सकैत अछि।

कल्पना नव वस्तुक रूप पहिने मनमे बनबैत अछि, मुदा ओहि रूपक वास्तविक निर्माण अलग श्रम माँगैत अछि। आत्मन्-ब्रह्मक अनन्तताक प्रसंगमे ‘अंश काटि’ रखबाक प्रश्न एक सिद्धान्तगत विरोध खोलैत अछि। ‘कलहक अभ्यास’मे सूक्ष्म प्राणक हानिक चेतना छल; एतय घायल जीवक सोझ उपस्थितिसँ कर्तव्य तुरन्त अनिवार्य बनैत अछि।

८५. शब्दशास्त्रम् — नाम, अनुभूति आ बोलक सीमा

बच्चा पहिल बेर ककरो नाम लैत अछि तखन घरक एक कोन चिन्हार बनैत अछि। ध्वनि पहिने रहितो सम्बन्ध जुड़ला पर ‘बोल’ बनब भाषा केँ सामाजिक घटना रूपमे देखबैत अछि। ‘की नाम देलासँ जगत बनल / कि बनल जगतकेँ नामसँ चिन्हय लगलहुँ?’क प्रश्न भाषा आ यथार्थक प्राथमिकता पर अछि।

‘ॐ’क उच्चारण, श्वासक विस्तार आ मौनक गूँजक बिम्ब ध्वनिक अनुभूति आ शाब्दिक अर्थक अन्तर बनबैत अछि। केओ समग्रताक अनुभव देखैत, केओ केवल कम्पन सुनैत—एहि द्विदृष्टिमे आध्यात्मिक व्याख्या आ इन्द्रियग्राह्य प्रत्यक्षक पृथक स्थितिसभ सुरक्षित अछि।

‘शब्द-ब्रह्म’ भाषाकेँ साधारण औजारसँ पैघ स्थान देइत अछि, मुदा ‘जे अनुभव बोलमे नहि अँटल’ ओकर अस्तित्वक प्रश्न बचल अछि। ‘चमत्कारक पोथी’क ज्ञान-सीमासँ एहि रचनाक निकट सम्बन्ध अछि। शब्दक वैभवक संग ओकर मर्यादा चिन्हब रचनाक आलोचनात्मक उपलब्धि अछि।

८६. अपन दाबीक सोझाँ — आत्मप्रशंसाक भीतर नुकाएल भूल

छओ पाँतिक ई पद्य अपन महिमाक कथा कहैत-कहैत भूलक खबर दबा देबाक प्रवृत्ति चिह्नित करैत अछि। एकहि हाथसँ सहारा देब आ चोट करब—मानवीय व्यवहारक एही विरोधक संक्षिप्त स्वीकारोक्ति अछि। कवि अपनाकेँ निर्विकार नैतिक निर्णायक नहि बनबैत।

‘अपन अज्ञान मानलासँ / सुधारक पहिल ठाम खुलैए’ समापन विनम्रता केँ सक्रिय नैतिक अभ्यास बनबैत अछि। रचनाक सीमित आकारमे सामाजिक परिस्थितिक विस्तार नहि, मुदा कथन आत्मनिरीक्षणक सोझ ईमानदार आवाज लैत अछि।

‘सर्वज्ञाता’क विशाल प्रश्नावलीक एक अल्प वाक्यमे मानवीय रूप एतय देखल जा सकैत अछि—सभटा जानबाक दावा छोड़ि अपन भूल मानब। संक्षिप्तताक कारण ई रचना पूर्ववर्ती लम्बा दार्शनिक पद्यसभक तुलनामे प्रभावी विराम प्रदान करैत अछि।

८७. माया-अविद्या — अपन लोभक पर्दा आ दूसरेक घरक दीप

आँखिपरक पर्दा केवल बाहरी दृश्य नहि झाँपैत, अपन लोभक चेहरो नुकबैत अछि। एहि मोड़पर ‘माया-अविद्या’ आत्मनिरीक्षणक नैतिक श्रेणी बनैत अछि। दोसरक आवश्यकता पहिने बाधा लगैत अछि, मुदा ओकर बच्चाक चिन्ता आ घरक दीप देखि धारणा बदलैत अछि।

रचना विवाद अथवा क्रोधक समाप्तिक वादा नहि करैत; ‘नष्ट कऽ देबाक आग्रह’ छोड़ि देबाक प्रस्ताव देइत अछि। शान्ति उत्सवक भाषण नहि, रोजक निर्णयक अभ्यास अछि। ई जटिल दार्शनिक पदक व्यावहारिक विनियोगक उदाहरण अछि।

‘एतहि खोज’मे साधारण कर्तव्यक धार्मिक अर्थ छल; एहि कवितामे आलोचनात्मक दृष्टि अपनेक आक्रामक चाहनाक पर्दा हटबैत अछि। बिम्ब छोट अछि, मुदा गहिर मानवीय संवेदनासँ भरल।

८८. चिन्तक — जगतक कारण आ जीबाक अर्थक दू अलग प्रश्न

‘खालीपनक बदला ई भरल संसार किए अछि?’ कहि वाचक अनेक उत्तरक खोज करैत अछि। कियो आदिक कथा सुनबैत अछि, कियो पोथी खोलैत अछि; मुदा कथा समाप्त भेलो पर प्रश्न बचल रहैत अछि। चिन्तक जखन पूछैत छथि जे वाचक ‘घटनाक पहिल तारीख’ चाहैत अछि कि ‘अपन एतऽ हेबाक अर्थ’, तखन रचनाक बौद्धिक मोड़ घटैत अछि।

बाहरी घटनाक कारणक्रम आ जीवनक व्यक्तिगत अर्थक प्रश्न एके कसौटीसँ हल नहि होइत। एतय विज्ञान आ आत्मानुभूतिक अलग क्षेत्रक भेद स्पष्ट होइत अछि। एहि भेदक अर्थ विज्ञान अथवा दर्शनक परस्पर-विरोध नहि; अनुसन्धानक लक्ष्य स्पष्ट करबाक आवश्यकता अछि।

वाचक आँखि मुनि अपन ‘उत्तर माँगबाक हड़बड़ी’ सुनैत अछि। चिन्तन समाप्त नहि होइत, पर अनजानकँ थोड़े समय सहि लेबाक सामर्थ्य उपजैत अछि। मरलाक बादक ठेकानक प्रश्नक सामने जन्मक पहिनेक अज्ञान रखल गेल अछि—ई तुलनात्मक अस्थिरता वाचककँ एखनक दिनक महत्त्व देखबैत अछि।

अन्तमे चिन्तक देहरी धरि छोड़ैत छथि आ जीवन अपन काजमे लागल अछि। प्रश्न संग घर घुरबाक बावजूद दिन शून्य नहि भेल। ई रचनाक विशिष्ट समाधान अछि: अनुत्तरित प्रश्नक संग सेहो कर्म, सम्बन्ध आ अनुभवक जीवन सम्भव अछि। ‘चुप्पीक अपन बोली’क मौनक नैतिकता एहि ठाम प्रश्न-सहनक विस्तार पबैत अछि।

८९. बीतैत दिनक संग — घरक निशान आ सीमित समयक उत्तरदायित्व

पुरान घरक देबालपर बर्खक निशान आ आँगनमे खेलैत बच्चा एकहि ठाम बीतल आ एखनक समयकेँ दृश्य बनबैत अछि। जीवन तारीखक अन्तर मात्र नहि; दिनक स्पर्श, बिसरल स्मृति आ बदलैत सम्बन्धक सँ बनैत अछि। ई छोट दृश्य कविताक काल-दार्शनिक प्रश्नकेँ व्यवहारिक आधार दैत अछि।

‘आत्मबोधमे कालक पकड़ छुटैए’क कथन वाचक अपन अनुभवक निश्चित निष्कर्ष नहि, खोजक रूपमे रखैत अछि। जन्मक पहिनेक आ अन्तक पाछाँक प्रश्न जिवैत अछि, मुदा ताहि अनिश्चयक कारण एखनक साँस बिसरब अनुचित मानल गेल अछि।

‘काज करी, सम्बन्ध निभाबी’क अन्तिम प्रस्ताव जीवनक साधारण सक्रियताकेँ अर्थ प्रदान करैत अछि। ‘चिन्तक’मे प्रश्न संग घुसबाक बादो दिन निरर्थक नहि छल; एहि पद्यमे ओहि निष्कर्षक काव्यात्मक विस्तार अछि।

९०. देहक देहरी — संवेदन आ जागरणक दैहिक आधार

पयर धरतीक कठोरता बूझैत अछि, चाम हवा सँ मौसमक खबर लैत अछि—एहि दू साधारण अनुभवसँ देह ज्ञानक पहिल माध्यम बनैत अछि। देहक सुधि प्रायः पीड़ा उठला पर होइत अछि, ई आत्मालोचन रचनाक नैतिक आरम्भ अछि।

मोनक प्रसन्नता भोजनक स्वाद बदलैत अछि, चिन्ताक समय ओही स्वाद फेर बदलि जाइत अछि। कवितामे भीतर-बाहरक आवागमन प्रतिपादित अछि; एहिसँ मनक सम्पूर्ण स्थिति दैहिक कारणक रूपमे सिद्ध नहि होइत, मुदा अनुभूतिक आपसी सम्बन्ध स्पष्ट अछि।

विश्राम, भोजन, चलब आ स्नेहकेँ ‘छोट देखभाल’ कहि जागरणक आवश्यक आधार बनाओल गेल अछि। साधनाक नामपर शरीरक अवमाननाकेँ ई रचना अस्वीकार करैत अछि। ‘चुप्पीक अपन बोली’क श्वासक प्रति सजगता एहि ठाम प्रतिदिनक शरीर-देखभाल धरि पहुँचैत अछि।

११. चिन्ह आ बुझब — परिचयक मर्यादा आ मान्यताक गाँठि

वर्षसँ चिन्हल व्यक्ति किएक चुप अछि, से नहि बूझि पायब रचनाक आरम्भिक विडम्बना अछि। नाम-मुखक परिचय आ दोसरक अन्तःस्थिति बुझबाक क्षमता अलग अछि। एहि उदाहरणसँ जगतक ज्ञानक सम्बन्धमे जाँच शुरू होइत अछि—जे सुनैत आएलहुँ, ओ स्वतः प्रमाण नहि।

‘पुरान होयब आ सत्य होयब एके बात नहि’क वाक्य परम्पराक कालावधिकेँ प्रमाणक स्थानापन्न बनाबयसँ सावधान करैत अछि। छोट पाथरक बनबाक अनेक अज्ञात कथा दृष्टिक सीमितता चिन्हबैत अछि; एहि सीमाबोधसँ जिज्ञासा उपजैत अछि।

बीतल अनुभव आ भविष्यमुखी अनुमान आइक दृष्टिकेँ रंग दैत अछि। एहि ‘रंग’क आत्मबोध उचित निर्णयक शर्त अछि। ‘मुक्ति केओ देबय नहि आएत’ कहि रचना मान्यताक गाँठि अपने खोलबाक उत्तरदायित्व रखैत अछि—ई एक व्यावहारिक ज्ञानमीमांसाक संक्षिप्त कविता अछि।

९२. डीह — धरतीक स्मृति आ पूजाक जीवित अर्थ

‘एहि माटिपर पुरखाक पएर पड़ल छल’क उद्धाटन डीहकें केवल भूखण्ड नहि, पीढ़ीगत स्मृति बनबैत अछि। चौखट, ग्रामदेवक दीप आ घराड़ी संबंधक स्थानीय रूप अछि। एहि भूभागपर श्रम, अन्न आ परिवारक निरन्तरता जुड़ल अछि।

‘भगवती कहि प्रणाम करी तँ / ओकर जल-माटिक सुधियो लिअ’ पाँतिमे धार्मिक आदर आ पर्यावरणीय देखभालक नैतिक संगति व्यक्त अछि। स्मृति मात्र पूजाक वाचिक क्रिया नहि; पानि-माटि बचाबयवला व्यवहारो चाही।

लघु रचनाक शक्ति बाहरी धरतीक महत्त्वकें अमूर्त गौरवक बदला जवाबदेही बनबैत अछि। ‘घड़ी पूजा’मे रीतिक कारण तकबाक प्रश्न छल; एतय पूजा काजमे उतरबाक कसौटी बनैत अछि।

९३. मनुक्ख — मानवकेन्द्रित पदानुक्रमक समक्ष आन प्राणक स्वर

‘अहाँ अपन लेल सर्वोच्च आसन राखने छी’ एक असामान्य सम्बोधन अछि, जकर वाचक अपनाकेँ मनुक्खेतर प्राणक पक्षमे रखैत अछि। ‘हम अहाँक भाषा नहि बजैत छी / तैयो भुख, भय आ आराम चिन्हैत छी’ पाँति भाषा-भेदकेँ पीड़ाक अनुभवक अभाव नहि मानैत अछि। जीवक अनुभूतिकेँ मनुक्खक पोथीक मान्यता पर निर्भर नहि रखबाक प्रस्ताव नैतिक केन्द्र अछि।

‘एके धरती’, ‘एके हवा’क आवर्तन देहधारी जीवनक साझा आधार बनबैत अछि। मनुक्खक ऊँच आसन कने नीचाँ आएब आ आन प्राणक जीवनक ठाम पैघ होयब अधिकारक पुनर्वितरणक चित्र अछि; ई केवल विनम्रताक भावुक आग्रह नहि।

अन्तिम भागमे सम्पन्न घर, धन, विद्या, बल आ निरोग देह सुखक साधन भऽ सकैत अछि, मुदा सम्पूर्ण सुख नहि। अपन उपलब्धिकेँ घेरि रखने भय घटेबाक उपाय आनक जीवन नीक होएबमे साझेदारी अछि। ‘प्राणक गवाही’क घायल जीव एतय एक सामूहिक नैतिक वक्ता बनि प्रवेश करैत अछि।

९४. अन्तक प्रश्न, आइक दिन — क्षणिक देह आ कर्मक दीर्घ प्रभाव

कलेन्डरक पन्ना पलटबाक काज एक दिन हमर हाथसँ नहि होयत—एहि ठोस भविष्यबोधसँ कविता आरम्भ होइत अछि। मृत्युक सीमा स्वीकारब वर्तमानक कर्तव्यसँ मुक्त होयब नहि, कारण एक मनुक्खक कएल काज दोसरक दिनमे रहि जाइत अछि।

‘असल स्वरूपकेँ कालातीत’ मानबाक विचार मृत्यु पर दृष्टि बदलि सकैत अछि, मुदा रचना ओकरा निश्चित प्रमाणित तथ्यक रूपमे प्रस्तुत नहि करैत। ई दार्शनिक सम्भावनाक संग एखनक व्यवहारक महत्त्व सुरक्षित रखैत अछि।

छोट पद्यक आखिरी निर्णय—सीमित दिनमे अपन व्यवहारक अर्थ चुनब—‘बीतैत दिनक संग’क कर्ममुखी दृष्टि केँ आओर संक्षिप्त करैत अछि। कविता कालातीतताक सम्भावना आ नश्वर देहक उत्तरदायित्वक बीच संतुलित स्वर रखैत अछि।

संग्रहक शीर्षक-पद्य ‘आ स्वप्नमे यएह तँ रहय’सँ शुरू भऽ स्मृति पर प्रत्यक्ष संशय प्रकट करैत अछि। एक व्यक्ति घटनाक बात पूछैत अछि—‘हम कतय रही ऐ घटनामे’—मुदा घटना स्वप्नमे घटल भेला सँ वाचक ओकर प्रत्यक्ष व्याख्या नहि कऽ पबैत। स्वप्न-जागरणक बीचक तेसर अवस्था, ‘दूटा अक्ष’क काटब आ देशान्तरक अस्थिर बिम्ब ई पहिचानक सीमा रचैत अछि। रूपकक गणितीय भाषाकेँ वास्तविक बहुआयामी भौतिकीक सिद्ध सिद्धान्त नहि मानल जा सकैत।

एहि अनिश्चयक बीच रोहित-हरिश्चन्द्र-वरुण आ शुनःशेपक विस्तृत आख्यान प्रवेश करैत अछि। मूल कथाक भीतर सन्तानक चाह, बलिदानक प्रतिज्ञा, वारम्बार समय माँगब आ रोहितक शस्त्रधारी बनि जंगले प्रस्थानक प्रसंग अछि। एहि घटनासभक क्रममे मृत्यु पर अधिकारक प्रश्न उठैत अछि: अभिभावक अथवा शासक कोनो जीवित व्यक्तिक देहपर अन्तिम निर्णय लेबा लेल कतेक समर्थ अछि?

अजीगर्तक दरिद्र परिवार आ तीन पुत्रसभक बीच शुनःशेपक अप्रिय स्थितिक उल्लेख कविताक करुण केन्द्र अछि। पुत्र बेचबाक गाय-संख्याक क्रम वाचकक नैतिक व्याकुलता तेज करैत अछि। ‘तीन सय गाय हमरासँ पैघ?’ प्रश्न मनुष्यमूल्य आ धनक तुलनाक असह्य विडम्बना खोलैत अछि। एहि ठाम बलिदानक प्राचीन रूपक आधुनिक अर्थमे सहमति, मजबूरी आ शक्ति-असमानताक प्रश्न बनि उठैत अछि।

देवता-दर-देवता आवाहन, बन्धन खुजब आ शुनःशेपक विश्वामित्रक संग नव सम्बन्धक क्रम धार्मिक आख्यानक संस्कार-पक्ष खोलैत अछि। मुदा कविताक भीतर प्राश्निक बारम्बार पूछैत अछि—‘मृत्युदण्ड बा ई रहै बलि?’। ई प्रश्न दण्डक न्यायिक आधार आ यज्ञीय समर्पणक इच्छाक बीच भेद खोजैत अछि। वाचकक प्रस्ताव ‘अनिच्छुकक बलि तँ भइये नै सकैत’ एक आलोचनात्मक नैतिक तर्क अछि; एकरा सभ ऐतिहासिक बलि-विधानक प्रमाणित व्याख्या कहब स्रोतक सीमा लाँघि जाएब होयत।

‘ओ नहिये माताक प्रिय नहिये पिताक’क आधारपर दण्डक दोष कोना ठहरत—एहि प्रश्नमे परिवारक प्रेमक असमान वितरण प्रकट होइत अछि। कवि शुनःशेपक कथा सँ रोहितक निर्णयक

महत्त्व निकालैत अछि: शस्त्रधारी भेलाक बाद रोहित पिता द्वारा तय बलिक विरोधमे चलि गेल। एहि पुनर्पाठमे स्वयंक इच्छा नैतिक अर्थक केन्द्रीय प्रमाण बनबैत अछि। एहने आलोचनात्मक पुनर्प्रयोग आधुनिक सामाजिक सम्बन्धक लेल सृजनात्मक महत्त्व रखैत अछि।

तकर बाद प्राशनिक आ कथावाचकक सम्बन्ध जटिल भऽ जाइत अछि। कियो कहैत अछि जे जागल वाचकक मान राखैत अछि; कियो ओकर सुतलाक बाद जागैत अछि। ‘स्प्लिट पर्सनेलिटी’क उल्लेख पाठमे आत्मपरक शंकाक नाटकीय उपकरण अछि; एकर आधारपर वाचकक निश्चित चिकित्सकीय निदान करब अनुचित होयत। दुनू स्वरक परस्पर सम्बोधनक कारण रचना संवादात्मक नाटकक रूप लैत अछि, जतय प्रश्न पूछनिहार स्वयं प्रश्नक पात्र बनि जाइत अछि।

‘कियो दोखी नै, आ सभ दोखी’क विरोधाभास गरीबी, कर्तव्य, परिस्थिति आ निर्णयक जटिल सम्बन्ध व्यक्त करैत अछि। ‘प्रोग्रामिड’ आ ‘वायरस’क आधुनिक शब्दसभ कर्मक चक्र-चालि सँ टकराइत अछि; ई जैविक अथवा संगणकीय समानता नहि, अपन काजक अनपेक्षित परिणामक रूपक अछि। अजीगर्तक दरिद्रता बुझबाक प्रयत्न ओकर कर्मक नैतिक प्रश्न मिटबैत नहि; कविता आसान दण्डात्मक फैसला टारैत अछि।

अन्तिम फलकमे स्वप्नमे उपस्थित साथी आ जागरणमे उपस्थित साथी दुनू स्वर ‘मिज्झर’ भऽ जाइत अछि। घटना कहिया आ कतय भेल, कियो उपस्थित छल कि नहि—ई सभ प्रश्न पुनः पहिल पाँतिक दिश घुर्दैत अछि। शीर्षकक सार्थकता एही वृत्ताकार संरचनामे अछि: मिथकीय कथा स्मृतिक प्रमाणक प्रश्नमे प्रवेश करैत अछि, आ निजी स्मृति सार्वजनिक नैतिक बहसक रूप लैत अछि।

शिल्पगत उपलब्धि विशाल आख्यानकें स्वप्न-स्थितिक बहुवचन बोलमे बदलब अछि। सीमा प्रसंगक अत्यधिक विस्तार आ कतेको ऐतिहासिक-ग्रन्थीय पदक बिना उद्धरण-सन्दर्भ उपस्थित होयब अछि; शुनःशेष सम्बन्धी मूल वैदिक स्रोतक पाठान्तर भविष्यक ग्रन्थाधारित शोधमे अलग सत्यापित होयत। तथापि एहि मूल कविताक स्वतंत्र आलोचनामे पाठक समक्ष बलि, दण्ड, स्वामित्व, सहमति आ भयक प्रश्नक अन्तर्संगति स्पष्ट रूपेँ उपस्थित अछि।

९६. स्थितप्रज्ञतामे लिबैत सत्य! — श्रमिक-मृत्यु आ सार्वजनिक सत्यक विडम्बना

‘मजूर सभक मृत्यु’, पुलसँ खसि पानिमे डूबब आ मृतकक रिपोर्ट-कम्पेन्सेशनक अन्तर कविताक आरम्भमे तीक्ष्ण सार्वजनिक नैतिक प्रश्न बनबैत अछि। पचास मृत्यु आ दस रिपोर्टक संख्या काव्यक भीतर कथित घटना अछि; स्वतंत्र दस्तावेज बिना ओकरा प्रमाणित दुर्घटना-आँकड़ा मानि नहि लिखल जा सकैत। मुदा कथनक सामाजिक आशय स्पष्ट अछि—मृत श्रमिकक संख्या घटेला सँ उत्तरदायित्व सेहो घटाओल जाइत अछि।

‘नेता ठीकेदार आ अफसर’क संग पुल-इंजीनियरक ईमानदारीक व्यंग्य सत्ता-संरचनामे जिम्मेवारीक विखण्डन देखबैत अछि। सत्य, कर्तव्य, स्वतन्त्रता आ समृद्धिक शब्दसभ नीतिगत आचरणक विरुद्ध कसौटी बनैत अछि। ‘खलनायककें महिमामण्डित’ करबाक विडम्बना सामूहिक नैतिक निर्णयक असफलता पर प्रहार करैत अछि।

अन्तक ‘स्थितप्रज्ञतामे लिबनाइ’ दरअसल ‘नम्रता’ छल—ई आत्म-सम्पादनक स्वर कविता केँ अति-निश्चयात्मक नैतिक भाषणसँ अलग करैत अछि। श्रमिक-मृत्युक करुण यथार्थक सामने आध्यात्मिक स्थितप्रज्ञता आ न्याय माँगबाक जिदक बीच तनाव बाँचि जाइत अछि। ‘बड़का सड़क’क विकास-रचना-सँ एहि पुलक दुर्घटनाक सामाजिक विरोधक तुलना सार्थक अछि।

१७. ई जिनगी कोनो बेजाय नै अछि — असफलताक पाछाँ जीवनक स्वीकृति

‘कागजक पन्ना पर नव राग’क आरम्भ पूर्वक असंगत, लक्ष्यहीन चलनसँ एक नव लय भेटबाक संकेत अछि। ‘घुरि कऽ के जायत ओइ रस्ता’ कहि वाचक बीतल जीवनक पीड़ा सँ स्वतन्त्र होयबाक आकांक्षा व्यक्त करैत अछि।

‘ई जिनगी कोनो बेजाय नै अछि’क आवर्तन स्वयंकेँ बुझायबाक स्वर सेहो बनैत अछि; जीतक उद्घोष नहि। हारि, दुत्कार आ कुकुड़केँ ऐँठ-कूठ खुएबाक दृश्य बाँचबाक असमान सम्मानक प्रश्न खोलैत अछि। नीच ठाम देल गेल जीवनो निरर्थक नहि—एहि करुण दृष्टिसँ रचना प्रभावित करैत अछि।

कविता अत्यन्त संक्षिप्त अछि, एहि कारण ओकर सामाजिक वातावरण पूरा विस्तृत नहि, मुदा बारम्बार कहल गेल जीवन-स्वीकृति वास्तविक संघर्षक पाछाँ आयल लगैत अछि। ‘चुप्पीक अपन बोली’ आ ‘भयक पकड़ ढील होइत’क संग एहि रचनाक जीवनसमर्थक भावसंगति अछि।

९८. महत्वाकांक्षा — कटैत पतङ्ग आ उपलब्धिक क्षणभङ्गुरता

उडैत गुड्डिक ऊँचाई ‘महत्वाकांक्षा’क दृश्य बनैत अछि। मंझाक काँच-बूकल डोरी प्रतियोगिताक तेज धार अछि; कागज-कलमसँ ओकर तुलना जीवनक वैचारिक प्रतिद्वन्द्विताक खेलक भीतर रखैत अछि। उड़ानक सुन्दरता ओकर कटबाक जोखिमक संगहि उपस्थित अछि।

‘जतऽसँ आरम्भ ओतै खतम’ पदक वृत्ताकार गति महत्वाकांक्षाक अन्तिम अवसान बतबैत अछि। ‘बीच उड़ानक स्मृति’ आ ‘खसैत कालक?’क अपूर्ण प्रश्न सफलता-केन्द्रित जीवनक स्मृतिहीन असफलताक दिशा देखबैत अछि।

एहि सघन लघु रचनामे कल्पना आ वस्तुगत खेलक दूरी अल्प अछि। ‘अतिखाइन’क इच्छाक अति आ ‘आकांक्षाक अग्नि’क ज्वलनशील रूपक एतय आकाशमे उड़ैबाक खेलक स्वरूप पबैत अछि; लालसा पुनः एक सीमित दृश्यसँ परखल जाइत अछि।

९९. ओकरा हँसैत देखि जे आबि जाइ छौ तोरा नोर — पराजितक हँसी आ मुक्त करबाक प्रेम

कविताक पहिल वाक्य एक अपरिचित सम्वादक बीचमे पाठककेँ राखैत अछि। ककरो हँसैत देखि दोसरक नोर आबैत अछि; तेसर आवाज प्रश्न करैत अछि जे ई हँसी पराजयक चिह्न किए बुझल जाइत अछि। एतय हँसी आ कननीक सामान्य अर्थ उनटि जाइत अछि। जीतल लोक हँसैत अछि, मुदा हारल व्यक्ति सेहो कखनो हँसि सकैत अछि; एही बहुअर्थकतापर कविताक नाटकीय विन्यास टिकल अछि।

पराजित व्यक्तिक लेल कहल गेल अछि जे ओ ‘कोनोटा प्रयास बाँकी नै छोड़लक’ आ ‘प्रयासमे कोनो बेइमानी नै केलक’। ताहि कारण हारिक नैतिक अर्थ परिणामसँ अलग करि देखल गेल अछि। जीतल लोक अखनो डरायल अछि, जकरा ‘विजय’ कहल जा रहल अछि। एहि विपर्ययमे पराजयक सार्वजनिक अर्थ आ प्रयत्नक निजी गरिमा बीच संघर्ष अछि।

‘तोरा दुआरे ओकर हारि नै भेलै’क आश्वासन दोषभावसँ जूझैत सम्बोधित पात्रकेँ मुक्त करबाक प्रयास अछि। तैओ वक्ता हर सम्भावित मनोभावक पूरा हिसाब नहि दैत; ओकर मंशा सान्त्वना आ स्वतन्त्रता अछि। ‘कऽ देलकौ स्वतन्त्र तोरा / तोरा की सभकेँ’ पाँति प्रेमक एक विरल रूप प्रस्तावित करैत अछि—प्रेम अपन अधिकार छोड़ि सकैत अछि।

अन्तिम ‘सुनैत रहनाइ / बिनु काटा-काटीक’ पराजितक चुप्पीकेँ सक्रिय संवेदना बनबैत अछि। जे पहिने बहुत बजैत छल, आब दोसरक गप सुनत। ई एक संवादात्मक मुक्तछन्द अछि, जाहिमे पुनरावृत्त प्रश्न लय बनबैत अछि; दुःखक समाधान नहि, ओकर संग जीबाक ढंग बदलि जाइत अछि। एतय ‘महत्वाकांक्षा’क कटैत गुड्डीक बाद हँसी आ हारिक मनोवैज्ञानिक जटिलता खुलैत अछि।

१००. देहरीक ओहि पार — ओस, देह आ घरक सम्बन्धक बहुवचन

ओससँ भीजल देहरीपर नाइट पएर रखबाक सिहरनक संग खण्ड ३ शुरू होइत अछि। राति मनुक्ख अपन निन्मे छल, मुदा दूब हरियरीमे जागल छल—एहि विरोधसँ मनुक्खक अनुभूतिकें प्रकृतिक एकमात्र माप नहि मानल गेल अछि। ‘आँखि मुनलहुँ, गाछ नहि नुकेल’ पाँति दृष्टिक विराम आ वस्तुक अस्तित्वक स्पष्ट अन्तर चिन्हबैत अछि।

फूलक लाली आ मोनक हुलास एक-दोसराक लग बैसल अछि, मुदा लालीकेँ हुलासक समतुल्य नहि मानल गेल। दृश्य आ भाव भिन्न रहितो संवाद करैत अछि। देहरीपर पुरान पीढ़ीक ठहराव आ प्रिय व्यक्तिक दूर जाएबक घटना दूरी आ नेहक सम्बन्ध खोलैत अछि।

अन्तक एक मुट्ठी माटिक ठोसपन दिनभरक धूरा, दूरी आ अधूरा प्रश्नसभक बीच आधार बनैत अछि। रचनाक उपलब्धि अमूर्त ‘घर’केँ स्पर्श, गन्ध आ व्यवहारक माध्यमसँ प्रकट करब अछि। एहि पद्यमे प्रकृति मनुक्खक इच्छाक अधीन नहि, सह-अस्तित्वक अपन जीवन सहित अछि।

१०१. अनचिन्ह घाटक नेह — पत्रक जलछवि आ प्रत्यक्षक सीमा

अहाँक चिट्ठीमे एकटा एहन घाट अछि जतए वाचकक पएर कहियो नहि पड़ल। अक्षरमे पानिक हिलकोरि अनुभव होइत अछि, मुदा ओ घाट प्रत्यक्ष नहि। अपन पोखरिक शीतल पानि अँगुरी सँ छूबैत वाचक दूरक घाटक शब्द-अनुभूति सँ तुलना करैत अछि। एहि दू अनुभूतिक भेद कविता सम्हारि रखैत अछि।

पानिक चमककेँ चान बुझबाक भूल अगिला मोड़ अछि—चान तखन धरि उगले नहि छल। वस्तुगत पानिक सत्य आ मनक जोड़ल अनुमानकेँ अलग कएल गेल अछि। ‘जतए चिन्ह नहि भेटल’क स्थिति, ‘मेघक पएरक चिन्ह’क समान प्रमाण-सीमाक परीक्षा तैयार करैत अछि।

आशाक नाव खुलैत अछि, शङ्काक बाँस किनारपर रहैत अछि। ई निर्णय अन्धविश्वास नहि, अधूरा प्रमाणक बावजूद नेहक दिश चलबाक साहस अछि। अन्तमे पानिक गन्ध हथेलीमे आ अहाँक बोल मोनमे रहैत अछि; दुनूक बीचक बाट कल्पना आ अनुभवक सहकारसँ बनैत अछि।

१०२. बोलीक चिरै — चित्रसँ सम्बोधन धरि अर्थक उड़ान

नेना भीतपर नाव, नील धार आ घरक चित्र बनबैत अछि; बिना वास्तविक यात्रा कएने मनमे हिलकोरि उठैत अछि। चित्रक रङ्ग अनभेल घटनाक कल्पनात्मक थान बनबैत अछि। तकर बाद कविता बोलक अर्थक सामाजिक परिवर्तन दिस बढैत अछि।

एकहि ‘आउ’ शब्द पाहुनक आमन्त्रण, मायक ममता आ खेलक पुकार भऽ सकैत अछि। ‘पानि’ शब्द लोटा मँगबाक आग्रह अथवा छप्पर लग दौड़बाक चेतावनी बनि सकैत अछि। एहि अर्थान्तरक आधार शब्दक अकेल अस्तित्व नहि, प्रसंग, स्वर आ सम्बोधन अछि। कविता व्यवहार-आधारित अर्थमीमांसाक अत्यन्त सुलभ उदाहरण प्रस्तुत करैत अछि।

अन्तमे नेना सुतल अछि, माथपर हथेली रखला सँ कोनो वाक्य नहि बनय पड़ैत। ‘बोलीक चिरै’ पाँखि समेटैत अछि, नेह जागल रहैत अछि। भाषाक शक्ति आ मौनक सम्प्रेषण एक-दोसराक विरोधी नहि। ‘शब्दशास्त्रम्’क भाषिक जिज्ञासा एहि ठाम घरक दृश्यसँ प्रमाणित अनुभव प्राप्त करैत अछि।

१०३. मेघक पएरक चिन्ह — वर्षाक अनुमान आ बालिकाक करुण प्रतिसाद

राति बरखा भेल कि नहि—प्रश्नक उत्तर काँच माटिक गड़हा, पातपर अटकल बूँद आ टपकैत छप्परक आधारपर खोजल जाइत अछि। मेघक पएर देखल नहि गेल, मुदा ओकर चिन्हसँ बीतल घटना चिन्हल गेल। ई अनुमानक साहित्यिक रूप अछि, मुदा जतए चिन्ह नहि, ओतए निष्कर्ष रोकि लेल गेल अछि।

दूसर दृश्य कृषिक प्रतीक्षाक अछि—बियाक बोरा ओसारामे, खेतक बाट ताकैत लोक। पुरबा बहलाक बादो ‘बरखाक बचन’ नहि। आशा आ निश्चित ज्ञानक भेद एहि ठाम जीवनोपयोगी प्रश्न अछि।

छोट बेटी पातक बूँद देख ‘सुन्नर!’ कहैत अछि, ओहि बूँदकेँ गनैत नहि। भीजल चिड़ैकेँ काँपैत देखि बच्ची अपन अँचरा पसारैत अछि, आ ‘बचाउ’क पुकारसँ वाचकक हाथ बढ़ैत अछि। ज्ञानक ठंढा परीक्षण आ करुणाक उष्ण तात्कालिकता रचनाक दू पूरक लय बनैत अछि।

१०४. अँगुरीमे बसल गीत — सिक्कीक बुनाइ आ मायक शिक्षाक उत्तरजीवन

माए सिक्कीक डलिया बुनैत छलीह; रौद हुनक अँगुरीपर बैसल छल। तिनकाक ऊपर-नीचाक विन्यास दृश्यकें श्रमक काव्य बनबैत अछि। वाचक ‘मोन कतए अछि’ पुछैत अछि, मुदा मायक मन हुनक जतनमे भेटैत अछि। भीतरक भाव बाहरी कारीगरीक अभ्याससँ ज्ञात भऽ रहल अछि।

टेढ़ किनार सोझा करब, छुटल तिनका फेर सटायब आ खिझियाएल नेनाकें हँसि कऽ सिखायब—ई सभ शिक्षा उपदेश नहि, साझा काज अछि। वाचक पहिने सिक्कीक उत्पत्ति जनैत छल, मुदा पहिल घेरा बान्हैत तिनका हाथसँ छूटि गेल। ज्ञानक पुस्तकीय परिचय आ हाथक कौशलक बीच स्पष्ट अन्तर अछि।

अन्तमे माए लग नहि छथि, अधबुनल डलिया बचल अछि। नव नेना तिनका छिटकबैत अछि, वाचक हँसि कऽ बटोरैत अछि। एहि दोहरायल सहनशीलतामे मायक ‘गीत’ बाँचल अछि। ‘बकछुछरु खेलाइत भीखू संग’क लोकशिल्पक सामाजिक अर्थ एहि ठाम स्त्रीक पारिवारिक शिक्षाद्वारा अनुभूतिक गहराई पबैत अछि।

१०५. पलकक ओहि पार — भयक स्वीकृति आ भीतरक गाँठिक ढील

रातिक करिया ओढ़नी चलि गेलो पर आँखिक कोनमे डर बचल अछि। ई आरम्भ बाहरी अन्हार समाप्त भेलाक बाद भीतरी कम्पनक निरन्तरता बतबैत अछि। वाचक अपन कहल कथनकेँ परखैत अछि—‘कतेक दोसराक कहल बात हम अपन नाँवसँ बजैत रहलहुँ’—अर्थात् अपन मानल सत्यक स्रोतपर प्रश्न करैत अछि।

सपनामे डूबि गेल गाम जागलापर आँगनमे अछि। जे सत्य एक बेला भयक कारण छल, दोसर बेलामे ओकर स्थिति बदलि गेल। रचना स्वप्नक अनुभवकेँ झूठ कहि रद्द नहि करैत, अनुभवक समयगत मर्यादा देखबैत अछि।

अन्तमे कोनो मुकुट नहि, केवल ‘कसि पकड़ल एकटा गाँठि’ ढील भऽ जाइत अछि। बाहर देहरी पहिनहि खुलल छल। ई लघु मनोवैज्ञानिक मोड़ ‘भयक पकड़ ढील होइत’क संग निकट अछि: समाधान भयक अनिवार्य नाश नहि, ओकर प्रति दृष्टिक परिवर्तन अछि।

१०६. अँजुरीसँ आगाँ — पकड़बाक सीमा आ खाली हाथक सम्भावना

पोखरिक कात नेना अँजुरीमे आकाश उठबैत अछि, मुदा घर जाएब धरि पानि अँजुरीसँ चुबि जाइत अछि। हाथ खोललाक बाद आकाश ओतहि भरल रहैत अछि। एहि अल्प दृश्यक लाक्षणिक अर्थ अछि—अधिकारक पकड़क छुटलासँ वस्तुक अस्तित्व समाप्त नहि होइत।

वाचक दिनक हिसाब, ताराक गणना आ भरल बखारीक तुलना करैत अछि; भण्डार जतेक भरैत अछि, नव भूख ओतेक जागैत अछि। ‘एहि भरलापनमे तृप्ति कतऽ?’ प्रश्न परिग्रहक सीमा चिह्नबैत अछि।

दूरक ‘तोरा’ पुकारिते भीतर कियो सुनि रहल अछि—ई आत्मिक उपस्थिति प्रेमक माध्यमसँ अनुभूत होइत अछि। ‘जतऽ हमर बुझब ठमकि जाएत / ओतऽ सिनेहक आसन देब’क अन्तिम नैतिकता ज्ञान-अपूर्णताकेँ शत्रु नहि मानैत। खाली अँजुरी भोरक ग्रहण-क्षमता बनि उठैत अछि।

१०७. पएरक अपन बाट — विरासतक जुत्ता आ करुणासँ मुड़ैत दिशा

बाबाक पुरान जुत्ता पहिरि पहिल यात्रा शुरू होइत अछि, मुदा एड़ी छिलैत अछि। जुत्ता उतारि माटिपर नाइट पएर रखला सँ व्यक्तिगत मापक अनुभव आरम्भ होइत अछि। विरासत उपयोगी अछि, पर ओ सभ बेर वर्तमान देहक आकार नहि अँटैत।

गामक चौकपर सभक संग एके दिशि चलबाक कथन अछि; मुदा बीच सड़क घायल चिड़ै भेटैत अछि। वाचकक बाट ओही ठाम मुड़ैत अछि। भीड़क आदेशसँ अलग नैतिक निर्णय छोट प्राणक मदतिक रूपमे प्रकट होइत अछि।

साँझ धरि न झण्डा, न जीतक घोषणा, केवल उड़ि गेल चिड़ै आ माटिसँ सटल पएर अछि। कविताक उपलब्धि ‘अपन बाट’कें आत्मकेन्द्रित स्वच्छन्दता नहि, उत्तरदायित्वक आधार बनबैत अछि। ‘प्राणक गवाही’क घायल जीव एहि ठाम दिशाबदल करबयवला नैतिक घटनाक रूप धरैत अछि।

१०८. बोलक भीतर बसात — मायक पुकार, बाँसक सुर आ चुप्पीक गमक

दूरसँ मायक ‘आउ’ बोलमे भातक गमक, अँचराक गरमाहटि आ दिनभरि प्रतीक्षा उपस्थित अछि। वाचक अक्षर गनैत रहैत अछि, मुदा घर पहिनहि छातीमे उतरि जाइत अछि। एहि दृश्यसँ भाषिक ध्वनि आ भाव-सम्बन्धक अन्तर स्पष्ट अछि।

बाँसक फाँकसँ सुर तब उभरैत अछि जखन साँस खाली ठामसभकेँ छूबैत अछि। गीत एक-एक छेदमे नहि, छेदसभक सम्मिलित सम्बन्धमे अछि। ई वस्तुगत संगीतक बिम्ब वाक्यक समग्र अर्थक रूपक सेहो बनैत अछि।

अन्हारमे ठाढ़ मनुष्य बुझल वस्तु वास्तवमे भीजल कपड़ा निकलैत अछि—भयक अनुमान प्रत्यक्ष जाँचसँ ढहैत अछि। अन्तमे वाचक बोलबाक पहिने ठहरैत अछि आ अनकहल अनुभूतिक लेल ठाम छोड़ैत अछि। ‘बोलीक चिरै’मे मौनक स्पर्श छल; एतय चुप्पी सेहो बोलक भीतरक बसात बनि उठैत अछि।

१०९. सभक लेल पाँति — भातक साझा अधिकार आ भीजल खाम्हक श्रम

भोजक पाँति आँगनमे बिछल अछि, मुदा केओ देहरी लग ठाढ़ रहि जाइत अछि। भीतर भातक बाफ उठैत अछि आ बाहर भूख ठिठुरैत अछि—एहि दोसरापर टिकैत दृश्यसँ सामाजिक बहिष्कारक तीक्ष्ण विरोध बनैत अछि। वाचक अपन पात समेटि ‘पाँति देहरी धरि’ बढबैत अछि; बराबरीक आदर्श एहि ठाम सोझ भौतिक परिवर्तन बनि उठैत अछि।

‘भात नहि पूछलक एको बात / पानि नहि केलक छुआछूत’ पाँति जातिगत पदानुक्रमक कृत्रिमता प्रश्नगत करैत अछि। भोजन आ पानिक मानवीय आवश्यकता समान रहितो पाँतिक सीमा समाज गढैत अछि। रचना सामाजिक निषेधक दार्शनिक चर्चा नहि, साझा भोजनक व्यवहारिक प्रतिरोध देखबैत अछि।

आनक चूड़त छप्पर सम्हारबा लेल वाचक सुखायल ओछाओन छोड़ि बाँस पकड़ैत अछि। हाथमे फफोला पड़ैत अछि, मुदा भीतर ठंडक अनुभव होइत अछि। सभक लेल ठाम होयबाक शर्त केवल स्वागत नहि, आनक संकटमे श्रम देब सेहो अछि। एहि अर्थमे ‘सभक लेल पाँति’ करुणा केँ गृह-सम्बन्धक नव व्यवस्था बनबैत अछि।

११०. कुहेसाक बनल घर — स्वप्नक महल आ सम्बन्धक अनदेखल आधार

नदीक कात कुहेसासँ उज्जर महल बनैत अछि आ बसातसँ ओकर छत उड़ि जाइत अछि। दृश्य काव्यक पहिल पाठ एतबे अछि जे भासमान ठोसपन स्थायी आधार नहि। तकर बाद स्वप्नक राजकीय घर आ जागल दुखक अनुभव एक-दोसराकेँ काटैत अछि।

छप्पर बाँसपर, बाँस धरतीक नमीपर, धरती मेघक बाटपर निर्भर—एहि क्रममे प्रत्येक वस्तुक अस्तित्व दोसरक सहारासँ बनैत अछि। ‘हमर साँसक नन्हक डोरी / कतेक अनदेखल हाथमे छल’ एहि परस्परवलम्बनकेँ मानव-जीवनमे विस्तृत करैत अछि। ई प्रतीत्यसमुत्पादक समग्र शास्त्रीय प्रतिपादन नहि, निर्भर सम्बन्धक काव्यात्मक अनुभव अछि।

महल आ राज गेलो पर नदी आ भोर बचल अछि। अपन कहल सम्बन्धक पकड़ ढील भेला पर ‘कतेक जीवन लगसँ बहैत अछि’क अनुभूति उपजैत अछि। ‘देहरीक ओहि पार’मे प्रकृति मनुक्खक निन्नसँ स्वतंत्र छल; एतय मनुक्खक महल क्षणिक, नदीक प्रवाह निरन्तर रहैत अछि।

१११. एक नामक कतेक पात — सामान्य संज्ञा आ विशिष्ट जीवनक भेद

नेना दस पात बिछबैत अछि आ सभकेँ एकहि नाम दैत अछि, मुदा ककरो किनार कटल अछि, ककरो भीतर कीड़ाक घर। सामान्य संज्ञा पातसभक साम्य पकड़ैत अछि, व्यक्तिगत इतिहास नहि। एक शब्दक छाँहिमे आम-नीमक भिन्नता, ऋतु आ स्वादक स्मृति बाँचल रहैत अछि।

जब वाचक अपन तर्कसँ दोसरक बात काटय चाहैत अछि, नेना ओकर हथेलीपर पात राखि दैत अछि। ‘तर्कक तेज नोक’क सामने ‘कोमल हरियरी’ काँपैत अछि—एहि बिम्बमे विचारक कठोर सार्वभौमिकरणक नैतिक संकट अछि। भेद चिन्हब जरूरी, मुदा भेदक नामपर जीवनक नाजुकता नहि तोड़ब।

अन्तक प्रस्ताव ‘सभकेँ एक कहि मेटब नहि / अलग कहि दूरो नहि करब’ एक संतुलित अर्थदृष्टि अछि। ‘शब्दशास्त्रम्’क नाम आ जगतक प्राथमिकता एहि ठाम पातक ठोस प्रयोगसँ नव स्पष्टता पबैत अछि। संक्षिप्त दृश्य रचनाकेँ भाषाशास्त्रीय प्रश्नक सजीव काव्य बनबैत अछि।

११२. फेर चिन्हल देहरी — परिवर्तनक बीच स्मृतिक प्रत्यभिज्ञान

बरखक बाद गाम घुरला पर पोखरि छोट, पुरान गाछ झुकल बुझाइत अछि। ‘हम पैघ भेलहुँ कि बाट सिमटल’ प्रश्न देहक विकास आ स्मृतिक पुनर्निर्माणक दोसर स्तर खोलैत अछि। पुरान स्थान ओही रहितो देखबाक आँखि बदलैत अछि।

भीतरसँ सुनल खोंखी, बदलल कंठ आ पुरान आँखिक पानि प्रत्यक्ष चिन्हब आ पुरान स्मृतिक बीच पुल अछि। हाथ बढ़िते दूरी गलैत अछि। ‘जे काल्हि छल, से आइ नहि छल / तइयो सभ अनचिन्हो नहि छल’क द्वंद्व परिवर्तनकें पूर्ण विच्छेद नहि मानैत अछि।

अन्तमे ‘हमरा भीतर जे नेना छल / ओ पहिने दौगि घर घुसल’ स्मृतिक काल-अतिक्रमणक सघन छवि अछि। मानवीय पहिचान निरन्तर पुनःगठनक प्रक्रिया अछि। ‘पएरक अपन बाट’मे बाबाक जुत्ता नब पएरकें छिलैत छल; एतय नेनाक स्मृति वर्तमान देहसँ पहिने घर पहुँचैत अछि।

११३. आधखुलल किवाड़ — सीमित नक्सा आ अनदेखल संसारक स्वीकार

एकटा किवाड़ खोलिते दोसर आँगन, तकर पाछाँ गल्ली—ई क्रम ज्ञानक प्रत्येक नब खोजक संग जगतक विस्तार देखबैत अछि। ‘जे नहि देखलहुँ, नहि कहब ओ कतहु होइते नहि अछि’क निषेध परिचयक सीमा केँ वस्तुक अभावसँ अलग रखैत अछि।

पातपर ओस देखाइत अछि, मुदा जड़िक पियास नहि। डूबैत सुरुजकेँ दू ठामसँ अलग-अलग रूपमे देखबाक उदाहरण दृष्टिसापेक्षता प्रकट करैत अछि, बिना सत्यकेँ पूर्ण व्यक्तिपरक बना देने। ‘आगि एक, कतेक ओकर रूप’क वाक्य बहुवचन अनुभूतिक एक चित्र अछि।

प्रश्नक हाथ पकड़ि चलब, चुप्पी भेटला पर बैसब आ झूठक उत्तर नहि गढ़ब—एहि अन्तमे काव्यक ज्ञान-नीति स्पष्ट अछि। ‘अनचिन्ह घाटक नेह’मे पत्रक कल्पना आ वास्तविक पानिक भेद छल; एतय किवाड़क फाँकसँ ओही अपूर्ण ज्ञानक उजास आबैत अछि।

११४. आँगनक खुलल दिशा — बहुसंस्कृतिक सहवासक गृह-रूपक

चारू दिशासँ धुन, धानक गन्ध, ओढ़नीक गरमाहटि आ मेघ घरक आँगनमे पहुँचैत अछि। आँगनक पैघ होयब जमीन बढ़बाक कथा नहि, विविध अनुभूतिक स्वागतक छवि अछि। अनचिन्ह बोली-भेष रहलो पर थाकल पएर धेबाक लेल एकहि पानि चाही।

‘अपन ढंगसँ दीप जराउ’क संग पड़ोसीक निन्नमे अँगार नहि फेकबाक आग्रह धार्मिक-सांस्कृतिक स्वतन्त्रता आ परस्पर अहानिक न्यूनतम नैतिक शर्त दैत अछि। बहुवचन प्रार्थनाक बीच एक रंगक चुप्पी नहि; ककरो स्मृति, ककरो आराधना, ककरो नेनाक निन्न अछि।

कविता सहिष्णुताकेँ निष्क्रिय सहन नहि, भोजन आ चूल्हाक साझेदारी तक विस्तार दैत अछि। ‘सभक लेल पाँति’मे एक भोजन-पाँतिक सीमा हटल छल; एतय आँगन चारू दिशाक जीवन लेल खुलैत अछि।

११५. नेनाक बोलीमे भोर — बालप्रश्नसँ सामाजिक सहकार्य धरि

‘दादी, छाँह किएक चलैत अछि?’—नेनाक साधारण प्रश्नसँ पूरा घर बाहर आबि जाइत अछि। ऊँच आसनक विचार माटिक चौकीपर बैसैत अछि; माए कलछुल आ बाबू खुरपी राखि सुनैत छथि। ज्ञानक संवाद एतय पद-क्रम तोड़ैत घरक साझा कर्म बनबैत अछि।

दूर बजारक हलचल धानक मोल बदलैत अछि आ दोसर गामक टूटल बाँध अपन ओछाओन भिजबैत अछि। एहि प्रसंगमे आत्मनिर्भर घरक बन्द किवाड़ पर्याप्त नहि; आर्थिक आ पर्यावरणीय सम्बन्ध दूरक समुदायकँ एक-दोसरा संग बाँधि रखने अछि।

‘अहाँक खाम्ह उठबऽ हम आएब / हमर छत पर अहाँ हाथ देब’ सहभागिताक स्पष्ट रूपक अछि। नेनाक माटिक घरक दिस ‘सभक बाट’ खोलल गेल अछि। प्रश्न करबाक बालसुलभ शक्ति सँ परस्पर मदतिक सामाजिक विचार धरि पहुँचनाइ एहि कविताक सुन्दर रचनात्मक यात्रा अछि।

११६. खाली खूँटीक छाँह — निषेधक अर्थ आ बाँचल सम्भावना

खूँटीपर ओढ़नी नहि अछि, ताहिसँ वाचक पहिने कहैत अछि ‘किछु नहि अछि’। दादी देबालक ठंढा देह छुवाबैत छथि आ बुझबैत छथि जे खाली ठामो एक ठाम अछि, छूटल वस्तुक स्मृति सेहो। एहि घरेलू दृश्यसँ अभावक अर्थमे उग्र निषेधक सीमा प्रकट होइत अछि।

साँझकें न दिन न रातिक दू अलग डिब्बामे राखल जा सकल। संधिकालक अनुभव तय श्रेणीसभक बीच उभरैत अछि। ओढ़नी खूँटीपर नहि अछि, मुदा धूपमे सूखि रहल अछि—नहि भेटब वस्तुक नाशक प्रमाण नहि।

‘बोलक किवाड़मे एकटा फाँक खुलल रखलहुँ’क अन्तिम प्रस्ताव शाब्दिक निरपेक्ष निषेधक बदला संभाव्यताक भाषा अपनबैत अछि। ‘आधखुलल किवाड़’क ज्ञान-विनम्रता एहि ठाम अभाव-प्रत्ययक सूक्ष्म पारिवारिक रूप पबैत अछि।

११७. दोसर आँखिक ठाम — नहरिक पानि आ दृष्टिबदलसँ उगैत हरियरी

एक व्यक्ति खेत सुखायल देखैत अछि, दोसर घुमड़ैत मेघ आ बीआक पोटरी। दुनू मेड़पर बैसैत छथि आ अपन बातक शोर घटेलाक बाद नहरिक पानि नजरि आबैत अछि। ई उदाहरण दृष्टिकोणक अन्तरक साथ सामूहिक निरीक्षणक उपयोगिता देखबैत अछि।

दोसरक दृष्टि अपन दृष्टिसँ अलग होयबाक कारण गलत नहि; खेतक हरियरीक सम्भावना कखनो नहरक गुप्त प्रवाहमे अछि। रास्तामे पिपरीक पाँति देखि पएर रोकब आन प्राणक छोट संसारक सम्मान करैत अछि।

‘जँ ककरो पीड़ नहि सुनलहुँ / हमर बुझब अधूरा रहत’क अन्तिम कथन ज्ञानक नैतिकता केँ करुणासँ जोड़ैत अछि। ‘एक नामक कतेक पात’मे वस्तुक विशिष्टता देखबाक आग्रह छल; एतय दोसरक आँखिसँ देखबाक व्यावहारिक अभ्यास अछि।

११८. माटिक भीतर पाँखि — बीआ, घाव आ सामूहिक नवजीवन

करिया बीआक खोलक भीतर ‘हरियर पाँखि’ सिमटल अछि। वाचक ओकरा निर्जीव बुझैत छल, मुदा बरखा आबिते माटि फाटि हरियरी निकलैत अछि। जड़ि अन्हार दिस आ पात उजास दिस खुलैत अछि—एकहि जीवक दू विपरीत दिशा परस्पर सहायक अछि।

आँधी सँ टूटल डाढ़िक घावकेँ फूलक उपमा दऽ फुसलाबय सँ कवि मना करैत अछि। दुखक ‘अपन साँच’ अछि, मुदा ओकर कात नव कोपड़ फूटि सकैत अछि। एहि ठाम आशा पीड़ाक अस्वीकार नहि, पीड़ाक उपस्थितिमे जीवनक नव प्रयास अछि।

अन्तिम सामूहिक खाम्ह आ सभकेँ समेटयवला नव छत एक बीआक जैविक दृष्टान्तकेँ समाजक पुनर्निर्माणक प्रस्ताव बनबैत अछि। ‘नेनाक बोलीमे भोर’क परस्पर खाम्ह उठेबाक भावक संग ई प्रत्यक्ष संगति अछि।

११९. रंगक अनकहल स्वर — अरिपनमे भूलक नव पाँखि

अरिपन देबाक काल टेढ़ पड़ल एकटा बिन्दुकेँ नेना चिड़ै बना दैत अछि। जे भूल वाचक लेल सुधारबाक वस्तु छल, से नेनाक कल्पनामे नब रचनात्मक सम्भावना बनि उठैत अछि। एहि छोट घटनामे कला पूर्वनिर्धारित नक्साक अधीन नहि, आकस्मिक विचलनसँ विकसित होइत अछि।

पिठारक रेखा मायक थकान बिसराबैत अछि आ बूढ़ी आँखिमे बीतल लगनक स्मृति जगबैत अछि। एकहि अरिपन अनेक काल-अनुभव जगबैत अछि। गीतक बोल आ धुन अलग कऽ पकड़बाक असफलता कलाक समग्र भाव-संरचनाक संकेत अछि।

‘सुन्नरता केवल फूल नहि छल’क अन्तिम विचार सौन्दर्यकेँ दूसरेक अनकहल पीड़ा दिस बढ़ल हाथ बनबैत अछि। ‘अँगुरीमे बसल गीत’क सिक्की-बुनाइ आ एहि अरिपनक बीच स्त्रीक श्रम, स्मृति आ हस्तकला रूपी जीवित सौन्दर्यक अर्थपूर्ण संगति अछि।

१२०. भीतरक अचल ठाम — भावक आवागमन आ साक्षीक खुलल स्थान

कोठरीमे कलछुल, चालनि, लोटा आ थारी आकार आ टूटल-साबुत स्थितिक अनुसार रखल जाइत अछि, मुदा देखनिहारक लेल कोन ठाम अछि—ई प्रश्न वर्गीकरणक अधूरापन देखबैत अछि। वस्तु चिन्हबाक काम करनिहार दृष्टिक स्थिति ओहि सूचीमे नहि अँटैत।

क्रोध, दुःख, हँसी आ डर आबैत-जाइत अछि; वाचक एकर पूर्ण समतुल्य अपनाकेँ नहि मानैत। ‘ने हम क्रोधक सम्पूर्ण लाल, ने हम दुखक सम्पूर्ण भार’ पाँति भावना आ व्यक्ति बीच भेदक काव्यात्मक प्रतिपादन अछि। एतय ‘अचल ठाम’ अनुभवक रूपक अछि; आत्माक अनिवार्य कालातीत अस्तित्वक प्रमाण नहि।

अन्तक ‘सभ चीजक गिनती सम्पूर्ण भेल / देखबाक उजास नहि गनल’ वस्तुगत मापनक सीमा पर प्रश्न अछि। रचनाक बल क्रोधक मानसदृश्यसँ घरेलू बासनक ठोस सूची धरि दृष्टिक सहज आवागमन अछि। ‘घड़ीक बाहरी किनार’क मापकक स्थितिक समस्या एहि ठाम देखनिहारक रूपमे लौटैत अछि।

१२१. निन्नक पाछाँ सेहो जागल — स्वप्नक क्षणिक सत्य आ दिनक जाँच

स्वप्नमे नाव बनि बिनु पानिक बहैत वाचक अपन दिशाभ्रम अनुभव करैत अछि। जागलापर दिनमे ई कथा सुनि लोक हँसैत अछि, मुदा भयक स्वप्नकालमे हँसीक कोनो स्थान नहि छल। एहि विरोधसँ ‘जाहि बेलाक जे साँच लागल / दोसर बेला बदलि देलक’क अर्थ स्पष्ट अछि।

गहिर निन्नमे न नाव छल, न बाट, न अनुभवक कथा; जागलापर ‘नीक सुतलहुँ’ कहब स्मृतिक अनुपस्थितिक विचित्र आत्म-व्याख्या अछि। ‘के सँभारने छल ई शान्ति?’क प्रश्न आत्मबोधक अनिश्चित स्थिति पर अछि, मुदा रचना कोनो चिकित्सकीय वा metaphysical (अधिभौतिक) निर्णायक निष्कर्ष नहि देइत।

दिनकेँ दिन जकाँ आ सपनाकेँ सपना जकाँ जाँचबाक आग्रह अनुभवक सम्मानक संग प्रमाणक सीमा मानैत अछि। ‘पलकक ओहि पार’मे डरक गाँठि ढील भऽ गेल छल; एहि रचनामे दुनू अनुभवस्थितिक पृथक सत्यत्वक आत्मसजगता खुलैत अछि।

१२२. टेढ़ बाटक हरियरी — भूगोलसँ बदलैत लक्ष्य धरि

कागजपर गाम पहुँचबाक सोझ बाट बनाओल गेल, मुदा वास्तविक धरतीपर पोखरि, बाँसक झाँझ आ कादो भेटैत अछि। ‘बाट धरतीसँ सीखैत अछि’ एहि पाँतिमे अमूर्त योजना आ भौतिक जगतक भेद स्पष्ट अछि। नक्सा उपयोगी अछि, किन्तु ओकरा बदलैत अनुभवसँ बारम्बार मिलाबय पड़ैत अछि।

पुरान प्रश्न नव परिस्थिति मे लौटैत अछि—पहिने पेटक चिन्ता छल, आब ‘सभक हिस्साक’ प्रश्न उठैत अछि। एक बीआ दोसर खेतमे दोसर ढंगसँ पात खोलैत अछि; समस्या आ उत्तरक समाजगत सन्दर्भ बदलैत अछि। पाछाँ बिसरल औजार आगाँक काजमे उपयोगी होयब स्मृतिक व्यावहारिक मूल्य देखबैत अछि।

तेढ़ बाटक प्रत्येक मोड़पर ककरो स्वर आ छाँह भेटैत अछि। जकरा देरी बुझल गेल, ओकरा अनुभवक विस्तार बनि जायत। ‘पएरक अपन बाट’क निजी दिशा एहि ठाम साझा जीव-जगत आ सीखबाक असमान मार्गमे विस्तार पबैत अछि।

१२३. कंठसँ उड़ल चिड़ै — मौखिक गीतक पीढ़ीदर-पीढ़ी यात्रा

दादीक कंठसँ उड़ल चिड़ै मायक साँझमे बैसैत अछि आ नेनाक निन्नमे घोंसला बनबैत अछि। ई स्वर लिखल पन्ना बिना पीढ़ीक भीतर अपन आश्रय पबैत अछि। ‘कागज तावत खाली छल / गीत घर-घर जाइत रहल’ पाँति लोकगीतक मौखिक प्रसारणक अत्यन्त सघन चित्र अछि।

कलम जखन उड़ैत स्वरकें स्याहीमे ठहराबैत अछि, ओकर गति समाप्त नहि होइत। पाठकक कंठमे गीत फेर नव बसात पबैत अछि। एतय लिखित अभिलेख संरक्षणक साधन अछि, संगीतक अन्तिम जीवित रूप नहि। आओर किछु स्वर चूल्हाक धुआँमे बिलायल, किछु कानसँ कान बचल—लिखित संकलनक सीमा स्वीकारल गेल अछि।

‘पुरान पाँखि नोचि’ नहि फेकबाक आ नव उड़ान सुनबाक प्रस्ताव परम्पराक अन्ध-अनुकरण अथवा निर्मम विच्छेदन दुनूसँ अलग अछि। एहि रचनाक खण्ड ३मे अन्तिम स्थान अर्थपूर्ण अछि: घर, भाषा, नेह आ स्मृतिक सभ सूत्र मौखिक गीतक जीवित हस्तान्तरणमे भेटैत अछि। प्रारम्भिक ‘मृत्यु गीत (लोकगीत)’क स्वतंत्र समीक्षासँ सेहो ई विचार जुड़ैत अछि—लोकगीत लेखकीय स्वामित्व नहि, सामूहिक स्मृतिक अनेक कंठक जीवन अछि।

१२४. जड़िक नव पात — परम्परा, ऋतुचक्र आ विकासक नैतिकता

पुरान गाछक खोहमे ओसक एकहि बूँदकेँ केओ बीतल दिनक नोर, तँ केओ नव भोरक पहिल हँसी बुझैत अछि। ई आरम्भ देखबैत अछि जे वस्तुक भौतिक स्थिति एक रहितहुँ स्मृति आ अपेक्षाक कारण अर्थ अलग-अलग बनैत अछि। कवि कोनो दृष्टिकेँ तत्काल असत्य नहि कहैत; ओ अर्थक जनममे देखनिहारक समयबोधक भूमिका देखबैत अछि। गाछक छालक दरार आ भीतर चलैत रसक विरोध पुरानपनकेँ निस्सारता मानबाक सरल निर्णयकेँ रोकेत अछि।

‘जड़ि धरतीक कथा सुनैत छल, / फुनगी दूरक हवा बजबैत छल’मे स्थानीय आधार आ बाहरी सम्पर्कक दू दिशा एकहि जीवित देहमे भेटैत अछि। पात झरि माटि बनैत आ नव पात गीत बनैत अछि; विनाशक अन्तिम चित्रक बदला पदार्थक पुनःप्रवेश आ अनुभवक नव रचना उपस्थित अछि। एहि चक्रकेँ मनुष्यक इतिहासपर अक्षरशः लागू करब उचित नहि; एतय ई प्रकृतिक परिवर्तनसँ सांस्कृतिक निरन्तरताक बिम्ब रचैत अछि।

अन्तिम पाँतिमे कवि धरोहरक रक्षा लेल बढ़बाक ठाम बचेनाइ आवश्यक मानैत अछि। परम्पराक संरक्षण यदि नब बीआ लेल स्थान नहि छोड़य, तँ ओ अपनहि आधारक जीवित चरित्र नष्ट करैत अछि—एहन आलोचनात्मक संकेत एहि पद्यक केन्द्रीय उपलब्धि अछि। ‘कंठसँ उड़ल चिड़ै’मे मौखिक गीतक नव कंठ धरि पहुँचब जेना छल, तहिना एहि गाछक जड़ि नव पातक अवसर खोलैत अछि; मुदा पहिलमे श्रुति, दोसरमे प्रकृति मुख्य माध्यम अछि।

१२५. काल्हिक बीआ — उत्तराधिकारक अधिकार नहि, भविष्यक जिम्मेदारी

दादी कोठी खोली मुठ्ठी भरि धान दैत छथि; दाना-दाना पर हुनक हथेलीक अदेखल लिखाइ अछि। खाद्यान्न एतय मात्र पदार्थ नहि, पीढ़ीसभक श्रम आ अनुभवक संचय अछि। रचनाक प्रभाव एहि बातमे अछि जे धरोहरक स्मृतिकेँ भावुक पूजामे बन्द नहि कएल गेल; दादीक सलाहमे बीआ सुखायब, सड़बसँ बचायब आ पानि पहुँचायब सन ठोस कृषिकर्म उपस्थित अछि।

बन्द अन्हारमे रखला पर बीआक सुरक्षा सड़बामे बदलि सकैत अछि। ई वाक्य संग्रहक बारम्बार लौटैत संरक्षण-विरुद्ध-नवोन्मेषक प्रश्नकेँ खेतक परीक्षण योग्य उदाहरण दैत अछि। वाचक आन गामक बीआ देखैत अछि, मुदा अपन माटिक गन्ध नहि बिसरैत; बाहरक प्रयोगक स्वीकार आ स्थानिक परिस्थितिक जाँच एक दोसरक विरोधी नहि अछि। ‘किछु सीखलहुँ, किछु फेरि परखलहुँ’क आवृत्तिसँ वैज्ञानिक सावधानी आ अनुभवक विनम्रता व्यक्त होइत अछि।

कोठी भरल रहबाक सुखसँ हरियर खेतक सुख पैघ कहल गेल अछि। उपज भविष्यकालक अनिश्चित श्रमपर निर्भर अछि; दानमे भेटल सम्पत्ति उत्पादन बनब तखनहि सम्भव जखन अगिला पीढ़ी अपन कर्तव्य निभाबय। ‘जड़िक नव पात’क नव बीआ एहि रचनामे हस्तान्तरणक ठोस प्रक्रिया बनैत अछि। एहि पद्यक सीमा जे कर्जा, भूमिहीनता वा बीआक स्वामित्वक संस्थागत प्रश्न नहिहँ खुलैत; तथापि कविता अपन छोट आकारमे परम्पराक प्रयोगशील नैतिकता रचैत अछि।

१२६. दू बाटक बीच — कर्मक भूख आ अन्तर्मुखी प्रश्नक समवाय

एक आँगनसँ खेत आ वन दिस खुलैत दू बाट पहिल दृष्टिमे जीवनक द्वैत बनबैत अछि। खेतक बाट भूखक ‘भट्ठी’क तात्कालिकता स्मरण करबैत अछि, वनक बाट भीतरक मोनक जाल देखबाक आग्रह दैत अछि। दुनू वाणीकेँ जीवित व्यक्तित्व देब रचनाक मुख्य शिल्प अछि। ई बिम्ब खेतकेँ केवल भौतिकता अथवा वनकेँ केवल पलायन मानि स्थिर वर्गीकृत नहि करैत; आवाजसभक आपसी अपूर्णताकेँ केन्द्र बनबैत अछि।

‘दुनू लग सम्पूर्ण गगन नहि छल’ वाचकक निर्णायक कथन अछि। ओ बीचक मेड़पर ठाढ़ भऽ ककरो निरस्त नहि करैत, दुनू सुनैत अछि। एतय मध्यस्थिति निर्णयहीनता मात्र नहि; अलग आवश्यकता लेल अलग प्रमाण आ साधन मानबाक संयम अछि। भूख मेटेबाक लेल खेतक अन्न प्रत्यक्ष चाही, मुदा मानसिक व्यग्रताक उपचार मात्र अन्न नहि—एहि विभेदसँ कविताक दार्शनिक बल जन्मैत अछि।

साँझमे खेतसँ अन्न आ वनसँ शीतल हवा घुरैत अछि; आँगन भिन्न स्वर लेल एकहि स्थान बनि उठैत अछि। अन्तिम चित्र समन्वयक अछि, किन्तु ई सामाजिक संघर्ष सदिखन सहजे मिति जायत एहन दाबी नहि। ‘रोटीक पाछाँक भूख’मे जे प्रश्न फेर खुलत, तकर पूर्वराग एतहि अछि। स्पष्टता आ लयक उपलब्धि संग कविता अपन द्वन्द्वकेँ अपेक्षाकृत शीघ्र सामंजस्य दैत अछि—एहि सहज समाधानक सीमा ध्यान देबाक अछि।

१२७. एक जल, अनेक लहरि — भेदाभेदक अनुभूति आ सम्बन्धक परीक्षण

पोखरिमे पड़ल चान सय टुकड़ीमे काँपैत अछि, मुदा एक टुकड़ी छुलासँ सम्पूर्ण उजास हिलैत अछि। एहि प्रतीकक बल अछि जे अनुभवमे एकता आ बहुलता एकहि समय देखाइत अछि। ‘एक’ केवळ सबटा टुकड़ी मेटेबाक नाम नहि, ‘अनेक’ सेहो पूर्ण असम्बद्ध टापू नहि। चानक प्रतिबिम्बक दृष्टान्त दार्शनिक संकेत अछि; वास्तविक जगतमे सभ भेदक स्वरूप एकरा आधारपर प्रमाणित नहि कएल जा सकैत अछि।

किनारक अलग-अलग घास आ एकहि ओसक गन्धक संग कवि पूछैत अछि—सभ एके हो तँ केकरा बजाबी, सभ अलग हो तँ आवाज कतय पहुँचत? ई प्रश्न भाषिक सम्बोधनक आधार पर सम्बन्धकें परखैत अछि। निज देहमे साँस लैत वाचक स्वीकार करैत अछि जे हवा साझा द्वारसभसँ अबैत अछि। व्यक्तिगत अस्तित्व आ सामूहिक आश्रयक एहि अन्तर्सम्बन्धमे अद्वैतक बिम्ब आ व्यवहारगत भेदक तनाव बचल अछि।

अन्तमे पयर जलमे आ वाचक भेदक धारपर बैसल अछि; कविता कोनो एकमत निष्कर्ष घोषित नहि करैत। एहि खुलापनक कारण ई पद्य ‘दू बाटक बीच’क बनि गेल सामंजस्यसँ अलग छवि रखैत अछि। एकर सौन्दर्य दर्पणरूप जलमे नहि, जलक हिलकोरामे उपस्थित चन्द्रमाक अस्थिरता अछि। पुनरावृत्त ‘एक’ आ ‘अनेक’ प्रश्नक धुन रचैत अछि; विचारक स्पष्टता एतय शिल्पक दू किनार जोड़ैत अछि।

१२८. खाली पीढ़ी — अनुपस्थितिक उपस्थिति आ स्मृतिक वस्तु

आयबाक अपेक्षित व्यक्ति नहि आयल, मुदा दुआरक पीढ़ी दृश्य रहल। ‘लकड़ी, बुनाइ, धूप’क ठोस त्रयी चीजक उपस्थितिकेँ देखबैत अछि, ओतहि ओकरा उपयोग करनिहार व्यक्तिक अभावक भाव जगैत अछि। कविता अभावकेँ शून्य चित्र बनाकऽ नहि छोड़ैत; बरु दृश्य वस्तु सम्बन्धक अदृश्य स्मृति धारण करैत अछि। घरक अर्थ ईंटक सीमा नहि, बाँचल आ नहि कहल संवादक जीवित सम्बन्ध अछि।

उत्तर दिशासँ झुकल गाछ दक्षिणसँ सोझ लागैत अछि। वाचक दुनू दिशाक आँखि बचौने बीचक छाँहमे रहैत अछि। एहि सरल स्थान-परिवर्तनमे दृष्टिकोणक प्रासंगिकता स्पष्ट अछि, मुदा एहि सँ गाछक वस्तुगत स्थिति मनमानी भऽ गेल नहि मानल जा सकैत। व्यक्तिक अनुपस्थितिक मूल्य सेहो देखि रहल लोकक सन्दर्भसँ आकार पबैत अछि। एतय वस्तु-दृष्टि आ स्मृति-दृष्टि दू स्तर परस्पर पूरा करैत अछि।

‘एक अभावो खाली नहि’ एहि कविताक निर्णायक भाव अछि। पीढ़ीपर हाथ रखलासँ वाचक नहि रहबक व्यक्त अर्थ सुनैत अछि। वस्तुकेँ संवेदनशील स्मृतिक वाहक बनबैत ई रचना ‘खाली खूँटीक छाँह’क अभाव-विवेचनसँ जुड़ैत अछि; ओतय ओढ़नीक वास्तविक अनुपस्थिति आ सम्भाव्य स्थिति अलग-अलग रहत। एहि पद्यक सीमित प्रसंग—कोन व्यक्ति, कोन कारणसँ अनुपस्थित—अज्ञात अछि; अनिश्चितता ओकर संवेदनात्मक शक्ति बढ़बैत अछि।

१२९. पयरसँ आगाँ प्रश्न — अनन्त विभाजनक तर्क आ चलैत देहक अनुभव

चलैत पयर आ मनक ‘पहिने आधा, फेर आधा’ बँटैत रेखा बीच टकरावसँ कविता आरम्भ होइत अछि। गाम आगाँ देखाइत अछि, देह पसीनामे नहायल अछि, मुदा कागजपर यात्रा ठमकल अछि। ई दृश्य अनन्त विभाजनसँ जुड़ल गतिसम्बन्धी दार्शनिक उलझनक काव्यात्मक प्रतिरूप अछि। कवि कोनो गणितीय समाधानक दावा नहि करैत; ओकर प्रश्न अछि जे सूत्रमे रोकल गति आ अनुभवमे घटैत गति बीच सम्बन्ध कोना बुझल जाय।

वाचक केवल गन्तव्यक लोभ नहि, ‘जे बात ठीक बुझाइत छल’ ओकर भीतर उठल संशयकेँ सेहो महत्त्व दैत अछि। एहि ठाम तर्क अनुभवक विरोधी स्वभावतः नहि; ओ अनुभवकेँ फेर निरीक्षणक अवसर दैत अछि। मुदा जखन विभाजनक प्रक्रिया जीवनक गति अस्वीकार करय, तखन देहक पसीना प्रश्नक मूल तथ्य बनैत अछि। पयरक प्रमाण आ मनक अचरज अलग संज्ञानात्मक काम करैत अछि।

अन्तिम नव बाट यात्रा समाप्ति नहि, संशोधित बोधक आरम्भ अछि। ‘दू बाटक बीच’मे खेत आ वनक दू उपयोगी दिशा छल; एतय अनुभव आ अमूर्त विवेचनक द्वन्द्व अछि। रचनाक छोट आकारक सीमा जे अनन्त श्रेणी आ वास्तविक दूरीक गणितीय अन्तर नहि खोलैत; ओ विषयक चिन्ता जगबैत अछि, स्थापित उत्तर नहि दैत। काव्यक स्तरपर ई असम्पूर्णता विवेचनक सत्यनिष्ठा सेहो अछि।

दिनभरि देहक काज, राति मोनक काज—एहि दू पाँतिक समान्तरतासँ कविताक समयरचना बनैत अछि। रोटी सेंकब आ चूल्हि मिझायबक बादो भीतर दोसर आगि जरैत अछि। घरेलू कार्यक समाप्ति आ जिज्ञासाक अनन्तता बीच ई विरोध मनुष्यकेँ केवल श्रम-साधन मानबाक सीमा देखबैत अछि। देहक ‘एतहि बसू’ आ मोनक अकुल प्रश्नक नाटकीय सम्बोधन पाठकेँ शुष्क दार्शनिक अमूर्तनसँ बचबैत अछि।

पुरान गीत नव प्रश्नमे बदलि जाइत अछि आ बीतल लोकक चुप्पीमे अगिला जीवनक पदचाप सुनाइत अछि। स्मृति एतय बन्धन नहि; भावी सम्भावनाक माध्यम अछि। वाचक दूर दिशामे अलग घर नहि बनबैत, अपन आँगन सेहो नहि छोड़ैत। खोजक भूगोल बाहरी पलायनसँ भीतरक विस्तारित अनुभव दिस सरकैत अछि। एहि कारण ‘दूर किनार’ काल्पनिक स्थलक संकेत नहि, चेतनाक नैतिक-अस्तित्वगत प्रश्न अछि।

‘एहि जीवनसँ नाव खोललहुँ’क अन्तमे जीवन छोड़ेब नहि, वर्तमानक भीतर नव अर्थ आरम्भ करब अछि। ‘रोटीक पाछाँक भूख’मे समान प्रश्न अधिक प्रत्यक्ष रूप लेत। रचनाक प्रभाव सांसारिक आ आध्यात्मिकक बीच कठोर दीवार नहि बनायब अछि। तथापि भीतरक खोजक सामाजिक शर्त—ककरा श्रम सँ घर चलैत अछि—एतय अनकहल रहैत अछि; ई प्रश्न सम्पूर्ण संग्रहक सामाजिक पाठमे जोड़ल जा सकैत अछि।

१३१. रोटीक पाछाँक भूख — शरीरक तृप्ति आ अस्तित्वगत पियास

पहिल कौर देहकें, दोसर थाकल श्रमकें आ तेसर मोनक प्रश्नकें समर्पित—कौरक क्रम कविताक विचार-विन्यास बनबैत अछि। देहक आवश्यकता नगण्य नहि कएल गेल, उल्टा पहिल स्थान ओकरे भेटैत अछि। मापल खेत, धान आ दिनक कमाइक बाद जे ‘हम किएक छी’ पुछैत अछि तकर माप उपलब्ध नहि। एहि भेदमे गणनाक उपयोगिता सुरक्षित रहितहुँ ओकर सर्वव्यापकताक दावा सीमित होइत अछि।

घामक अर्थ त्वचा आ छाँहक अर्थ थाकल पयर जनैत अछि। ज्ञान केवल मानसिक परिभाषामे नहि; श्रमशील देहक संवेदनामे सेहो घटैत अछि। भोजनक बाद उठैत प्रश्न सुखी निरुपयोगी अवकाशक उपज नहि, थाकल श्रमिकक भीतरक जिज्ञासा अछि। कविता देह आ मोनक द्वन्द्वक निष्कर्ष नहि दैत; ओ हमर व्याख्यामे स्थूल भूख मेटलाक बादो बचल अर्थक प्रश्नकें सामाजिक-वर्गीय श्रमक सन्दर्भसँ जोड़ि सकैत अछि।

थारी धोइ उलटा राखल वाचक जलमे अपन मुख देखैत अछि आ ‘तृप्त देहक शान्त किनारपर / अगम पियासक गीत’ सुनैत अछि। भौतिक पात्र, परावर्तन आ दार्शनिक प्रश्न एकहि दृश्य मे गूँथल अछि। ‘मोनक दूर किनार’मे रोटी बनेबाक बाद जगल भीतरक आगि एतय रोटीक बादक पियास बनि लौटैत अछि। रचनाक सबलता देहक वास्तविक भूख अस्वीकार नहि करैत अस्तित्वगत प्रश्न धरि पहुँचब अछि।

१३२. करघाक नव फूल — हस्तकला, स्त्रीस्मृति आ रूपान्तर

सन्दूकक तहमे राखल मायक पुरान नमूना—लाल किनारी, उज्जर बीच—समयकेँ रंग आ बुनाइमे सुरक्षित करैत अछि। करघा काव्यक बिम्ब मात्र नहि; मायक हाथक कौशल, कपड़ाक बनावट आ पीढ़ीक अनुभवक भौतिक आधार अछि। एहि कारण नब रचनाक पहिल अवस्था पुरान वस्तुक स्मरण अछि, मुदा कविता ओकरे अक्षरशः दोहरायब अनिवार्य नहि मानैत।

बरखाक बूँदक लय बानामे उतरैत अछि; संगीतक एक माध्यम वस्त्रक दोसर माध्यममे रूपान्तरित होइत अछि। ‘पुरान फूलक पाँति बचल / मुदा पातक मोड़ बदलल’मे बदलावक मापक स्पष्ट अछि: रूपात्मक पहिचान बचल, विन्यास नव भेल। बाहरी ऋतु आ गामक गन्ध मिलि एहन सृजन रचैत अछि जतय स्थानिक परम्परा अपन बन्द सीमा तोड़ैत अछि। ई प्रक्रिया निःशर्त प्रगतिक घोषणा नहि, सृजनक अनुभव अछि।

माय किछु नहि बजैत छथि; आँचरपर हथेली फेरैत छथि आ मुँहपर मुस्की उगैत अछि। ई मौन स्वीकार जनाइत अछि, ओकरा लेखकीय अनुमतिक औपचारिक प्रमाण बना देनाइ अतिशयोक्ति होयत। ‘काल्हिक बीआ’मे दादीक धरोहर बीआक नव ऋतुमे छल; ‘करघाक नव फूल’मे मायक नमूना नव बानामे। दुनू पद्यमे स्त्रीक श्रम पीढ़ीगत नवोन्मेषक केन्द्रीय आधार अछि—ई संग्रहक महत्त्वपूर्ण सामाजिक सूत्र अछि।

१३३. फेर अँकुरायब — कर्मक प्रतिफल आ करुणाक पुनरागमन

पतझड़मे झरल पात माटिक गन्धमे भेटैत अछि। पहिने जकरा अन्त बुझल गेल, ओ अगिला अँकुरक आहार बनि उठैत अछि। प्रकृतिक ई चक्र कविताक नैतिक प्रश्नक आलम्बन अछि। मुदा झरल पात आ नैतिक कर्मक प्रतिफल एकहि प्रकारक सिद्ध तथ्य नहि—कवि रूपकक माध्यमसँ मानवक व्यवहारक दीर्घ परिणाम सोचैत अछि।

‘एक कठोर बोलक काँटा / कतेक दिन धरि बोहैत छी’क विरुद्ध चुप्पे देल दया दोसर हाथमे छाँह बनैत अछि। चोट आ सहायता दुनूक याद समयक पार चलैत अछि; धरोहर केवल वस्तु नहि, आचरणक प्रभाव सेहो अछि। ककरो दुःख हलुक करबाक इच्छामे वाचक स्वार्थक ‘चक्र’ छोड़बाक मानवीय प्रस्ताव दैत अछि। एहि ठाम कर्मक चर्चा फललाभक गणना नहि, परपीड़ाक बोधसँ बनल आचरण अछि।

‘जँ फेर अँकुरायब’क शर्त भविष्यक पुनर्जन्म सिद्ध करबाक दर्शनशास्त्रीय प्रतिज्ञा नहि, सम्भाव्य भविष्यकेँ सम्बोधित नैतिक कल्पना सेहो पढ़ल जा सकैत अछि। कविता बहसकेँ विश्वासक निर्णयपर बन्द नहि करैत; जे जीवन एखन उपस्थित अछि, ओहिमे दयाक अभ्यासक आग्रह राखैत अछि। ‘जड़िक नव पात’क जैविक नवीकरण एहि ठाम सामाजिक स्मृति आ क्षमाशीलताक बिम्बमे रूपान्तरित होइत अछि।

१३४. भोरक खुलल आँखि — स्वप्नभय आ जागरणक पुनर्परीक्षण

राति सपनामे घर बहि गेल, जागलापर तकियापर नोर भेटैत अछि। घटनाक वस्तुगत अभाव ओकर अनुभूत असरकेँ नकारि नहि सकैत—ई पद्यक पहिल सूक्ष्म भेद अछि। स्वप्नक भीतरक भय शरीर आ मोनपर छाप छोड़ैत अछि, ताहि लेल जागरणकेँ केवल ‘झूठ सपना’ कहि सम्पूर्ण अनुभव समाप्त नहि कएल जा सकैत। ‘जे नहि छल से हृदय हिलौलक’ पाँति विषयक अनुपस्थितिक संग भावक उपस्थितिक ठोस प्रमाण दैत अछि।

भोरमे काठक खाम्ह फेर चिन्हल जाइत अछि, मुदा कवि अपन नजरिक ‘छाप’ सेहो स्वीकार करैत अछि। देखबाक प्रक्रिया कोनो सर्वथा निष्पक्ष खिड़की मात्र नहि; पूर्व भय, स्मृति आ आशाक सहभागितासँ रूप ग्रहण करैत अछि। परदा हटला पर घर नष्ट नहि होइत; ओ अनचिन्ह रूपमे खुलैत अछि। एहि व्याख्यामे जागरण निश्चयक अन्तिम अवस्था नहि, अनुभवक दोबारा जाँचक अवसर अछि।

डरक पकड़ ढील भेला पर जीवनमे ‘किछु ठाम’ बढैत अछि। कविताक उपचारात्मक रूपक अनुशासन देबैत अछि, मुदा वास्तविक आघातक समूचा उपचार ई अवश्य करैत अछि एहन दावा मूल पाठ नहि करैत। ‘निन्नक पाछाँ सेहो जागल’मे तीन अवस्थाक भिन्न बोध छल; एहि ठाम स्वप्नसँ घुरबाक विशिष्ट भावप्रभाव देखल गेल अछि। बिम्बक एकरूपता कविता सँभारैत अछि।

१३५. बोलैत आँगन — स्थान, सम्बोधन आ सामूहिक अर्थ

घरक देबाल, दुआरक चरमर ध्वनि आ पोखरिक जलकें एक-एक वस्तुरूपमे चिन्हित कएल जा सकैत अछि; मुदा ओकर अर्थ केवल वस्तुक गुणमे समाप्त नहि। दुआरक आवाजमे ककरो आयबाक आशा आ पोखरिक तटपर बीतल दुपहरि बसैत अछि। रचना ‘स्थान’क जील अर्थ खोलेबाक लेल घरेलू ध्वनि आ गन्ध चुनैत अछि, न कि दार्शनिक पदावलीक दीर्घ परिभाषा।

पानि भरनिहारि आ वाचक एक दोसरक अनकहल सुनैत छथि। ‘दू जनक बीचक विराममे / एक नव संसार आकार धरल’क अनुभूति बतबैत अछि जे अर्थक निर्माण शब्दक उच्चारण मात्रसँ नहि, सुनेबाक तैयारी आ साझा समयसँ होइत अछि। ‘नाम देलासँ ठाम उघरल, / सुनलासँ अर्थक पात खुलल’मे नामकरण आ संवादक अलग क्रिया अछि। भाषा जगतकें केवल सूचीबद्ध नहि करैत; जीवनक सम्बन्ध सेहो खोलैत अछि।

‘नक्शाक बाहर’मे नक्शा मायक हँसी नहि पकड़ि सकैत; एहि आँगनमे जलक लोटा गामक सामूहिक स्मृति वापस आनैत अछि। दुनू पद्य स्थानक दोसर अर्थक महत्त्व दैत अछि, मुदा पहिलमे अभाव आ दोसरमे प्रत्यक्ष साझा श्रवण प्रमुख अछि। कविता सामुदायिकताक गुण देखबैत अछि; एकर सीमा जे घरक भीतर उपस्थित सत्ता-असमानताक विभाजन पर प्रत्यक्ष सवाल नहि उठबैत।

नक्शाक छोट पोखरि आ अंकमे मापल जलक परिमाणसँ रचना आरम्भ होइत अछि। पोखरि किनार पयर धरलासँ बालपन, नाओ डुबेबाक खेल आ पहिल भय-जयक स्मृति उपस्थित होइत अछि। एकहि स्थल परिमाणात्मक आ अनुभवजन्य दुनू स्वरूपमे खुलैत अछि; कवि पहिलकें नकारैत नहि, दोसरकें ओकरा भीतर समायब असम्भव मानैत अछि। एहि भेदक सत्यता रचनाक विशेष बल अछि।

अपरिचित हाथ बढ़ला पर जलसँ पैघ भरोस भेटब नदी-पोखरिक स्मृतिकें सामाजिक सम्बन्धसँ जोड़ैत अछि। पुरान अनुभव जतेक व्यक्ति-केंद्रित अछि, ततेक ओहिमे दोसरक सहायता सेहो अछि। ‘पानिक भीतर जील दिनक / अगिनत उजास’क बिम्ब वस्तुक मात्रा आ अर्थक विशालता बीच अन्तर देखबैत अछि। ई अन्तर मापकक अनुपयोगिता सिद्ध नहि करैत; जलसंरक्षणक नीति बनबैत समय माप तँ जरूरीए अछि।

अन्तमे किनारक घास छुबैत वाचक स्थल-रक्षाक हाथसँ होयबाक प्रस्ताव दैत अछि। एतय स्मृति संवेदनासँ पर्यावरणीय जिम्मेदारी धरि पहुँचैत अछि। ‘जड़िक नव पात’क गाछ बचाबय लेल बढ़बाक ठाम छोड़बाक आग्रह आ एहि पोखरिक संरक्षण बीच धरतीक प्रति दायित्वक एक निरन्तरता अछि। कविताक निष्कर्ष भावुक स्थानभक्तिमे समाप्त नहि, संरक्षणक वास्तविक काज दिस संकेत करैत अछि।

१३७. नक्शाक बाहर — प्रतिनिधित्वक सीमा आ घरक अप्रतिरूप अर्थ

गामक नक्शामे देबाल आ बाट भेटैत अछि, मायक हँसी नहि। एहि सटीक विरोधसँ कविता संकेत आ अनुभूत जीवन बीचक अन्तर पर प्रश्न उठबैत अछि। नक्शा निरर्थक नहि—अन्तमे ओ वाचककेँ घर धरि अनैत अछि—मुदा घरक पूर्ण अनुभव ओकरा भीतर नहि अँटैत। एहि कारण रचना न त यथार्थक छवि-निर्माण नकारैत, न छविकेँ यथार्थक पूर्ण स्थानापन्न मानैत।

मायक हँसीक नाम लिखलासँ मुँहक छवि तऽ उभरैत अछि, ‘स्वरक गरमी’ बचल रहैत अछि। नाम आ अनुभवक बीचक फाँक एतय संवेदी माध्यमक भेदसँ स्पष्ट अछि। ‘बैसू, राति बहुत भेल अछि’ सन साधारण वाक्यमे शब्दार्थक अतिरिक्त आतिथ्य, आश्रय आ समयक भाव अछि। एक संकेत कखनो चित्र, कखनो दुआरक थाप, कखनो सम्बोधन बनैत अछि; अर्थ परिस्थिति अनुसार पसारैत अछि।

कागज जेबमे राखि घर पहुँचब आ चौखट लाँघि अनरेखांकित जीवन भेटब रचनाक सफल अन्त अछि। ‘बोलैत आँगन’मे जगहक अर्थ ध्वनि आ स्मृतिसँ खुलैत अछि; एतय भाषिक आ चित्रात्मक प्रतिनिधित्वक सीमा मुख्य अछि। परन्तु ई पढ़ब नहि चाही जे अभिलेख, इतिहास आ नक्शा असत्य अछि। कविता संकेतक सार्थक उपयोग मानि ओकर परे बचैत मानवीय अनुभवक मान रखैत अछि।

मोनक अनेक कोठरीमे अन्न, गान आ दोसरक दुःखक लेल ठाम अछि। चाहकें एकमात्र उपभोगक प्रवृत्ति नहि मानि अनेक दिशाक भावक रूप देल गेल अछि। खाली हाथ हवा छुबैत अछि आ अदृश्य आकृति बनैत अछि—एहि बिम्बमे इच्छाक उद्भव वस्तुक उपस्थिति पहिने होइत अछि। जकरा एखन तक आकार नहि भेटल, ओ कल्पना आ व्यवहारक संग घर-जकाँ रचि सकैत अछि।

वाचक अपन चाहक घरक सीढ़ी गनैत अछि, सुखक ऊँच-नीच पर विचार करैत अछि। ‘किछु सुख बाँटि कऽ बड़का भेल’ विशुद्ध निजी आनन्दक गणनाक आलोचना अछि। ई वैयक्तिक पसिन्नक तथ्यक बदला मूल्यगत परख अछि; दोसरक भलाइमे अपन सुखक विस्तारक अनुभव एतय मूल आधार अछि। ‘चाहक भीतर चाह सुधरल’ कहब आत्मसमालोचनाक क्रियाशील क्रम देखबैत अछि।

अन्तमे अपन लेल जराओल दीपक उजास पड़ोसी धरि पहुँचैत अछि। ‘सुखक सीढ़ी’मे मिठाइ बाँटबक छोट प्रसंग एही विचारकें ठोस घरेलू घटना बनबैत अछि, मुदा एहि पद्यमे इच्छा-संरचनाक वास्तुरूपक अधिक महत्त्वपूर्ण अछि। रचनाक सीमा जे साझा आनन्दक संस्थागत शर्त पर चर्चा नहि करैत; तखनहुँ निजी कामना आ सामाजिक दायित्वक मेलक सुलभ काव्यात्मक विवेचन अछि।

१३९. आवाजक पुल — पियास, सम्बोधन आ अपूर्ण अनुभव-साझेदारी

‘पानि चाही’ सन सामान्य कथनक बाद लोटा बढेबाक क्रिया रचनाक समूचा कथ्य रचैत अछि। शब्द ध्वनिमात्र नहि; ओ दोसर व्यक्तिक व्यवहार बदलैत अछि। संवादक सफलता एतय अमूर्त सूचना नहि, पियासक वास्तविक अवस्थामे सहायता पहुँचनाइ अछि। कवि ओहि साधारण क्षणकै नैतिक सम्पर्कक उदाहरण बनबैत अछि, जकर सूक्ष्मता भाषा आ क्रियाक संयुक्ततामे अछि।

‘हमर पियास अहाँ नहि पीबि सकलहुँ’मे अनुभूतिक अस्थानान्तरणीयता स्पष्ट मानल गेल अछि। तखनहुँ काँपैत स्वर आ नजरिक संकेतसँ सहायता सम्भव अछि। एकर अर्थ नहि जे दोसरक भीतरक अनुभव अक्षरशः जनल गेल; मनुष्य एक-दोसरक पीड़ाकै सम्पूर्ण जीने बिना सेहो जिम्मेदार प्रतिक्रिया दऽ सकैत अछि। एहि भेदसँ कविता ‘अहाँक पीड़ा’क सहानुभूतिक विमर्शसँ गहिरे जुड़ैत अछि।

दू किनार अलग रहितहुँ जल लेल बाट खुलब संवादक सफल रूपक अछि। पुल दूरी मिटा नहि दैत, पार जायबक सुविधा दैत अछि। मौन संकेत आ शब्दक बीच सहयोग एकरे कारण विश्वसनीय अछि। ‘किएकक अनेक रंग’मे श्रोता अनुसार प्रश्नक काज बदलैत अछि; एहि ठाम श्रोता बुझि व्यवहारमे उत्तर देनाइ भाषा-सम्बन्धक मुख्य कसौटी बनैत अछि।

१४०. सुखक सीढ़ी — बाँटबाक अभ्यास आ नैतिक सुखक विकास

छोट मिठाइक टुकड़ा पहिने सम्पूर्ण उत्सव अछि। बहिनीक चाह देखलापर आधा बाँटि देल जाइत अछि, मुँहक मिठास घटैत अछि, मोनक मिठास बढ़ैत अछि। एहि पदार्थ-स्वाद आ सम्बन्धजन्य आनन्दक विपरीत गतिमे कविता सुखक दू रूप अलग करैत अछि। ओ देहक सुखकें अस्वीकार नहि, ओकरा एक मात्र मूल्य बनबाक सीमाकें देखबैत अछि।

ठोकर खा खसल व्यक्तिक हाथ पकड़बाक तेसर अनुभवमे किछु वस्तु प्राप्त नहि होइत, तखनहुँ अनमोल प्राप्तिक बोध अछि। आरोहणक क्रम व्यक्तिगत उपभोग, साझा वस्तु, आ निष्काम सहयोग धरि खुलैत अछि। ई रचनाक ‘सीढ़ी’ रूपक नैतिक विकासक दृश्य क्रम दैत अछि; कविता ई नहि कहैत जे प्रथम पायदान तोड़ि देनाइ चाही। जीवनक भौतिक आनन्द आ सम्बन्धक करुणा एक-दोसरक शत्रु नहि अछि।

‘दोसरक हँसीमे घर खोजलहुँ’क पाँति सुखक परिभाषा बदलैत अछि। ‘चाहक आकार’मे व्यक्तिगत दीप पड़ोसी धरि गेल छल; एतय बाल्यक ठोस स्मृतिमे एकहि मूल्य-विस्तार देखाइत अछि। एतय कथा-जकाँ क्रम अभिधात्मक रूपसँ स्पष्ट अछि; रूपकक जटिलता कम, नैतिक अनुप्रयोगक सहजता अधिक। एहि स्पष्टताकें गूढ़ दर्शनक नाम नहि देब उचित होयत।

१४१. अलपनाक दुआर — हस्तरेखाक लोककला आ स्वागतक रचना

दादी चाउर पीसि अँगुरी भींजबैत छथि; माटिपर रेखसँ पात आ पातसँ अँगना बनैत अछि। कला एतय संग्रहालयक वस्तु नहि, पाहुन लेल स्थान रचबाक जीवित घरेलू कार्य अछि। चाउरक उज्जर लेपक संग जे ‘दूर बसल प्रिय लोक’क प्रतीक्षा जुड़ैत अछि, ओ अलपनाकेँ आतिथ्यक भाषामे रूपान्तरित करैत अछि। रचनाक आरम्भमे सामग्री, देहक क्रिया आ सामाजिक आशय बराबर महत्त्वपूर्ण अछि।

वाचक रेखाकेँ बाहर बढ़बैत चिड़ैक पयर बनबैत अछि; जे पाहुन आयल नहि, ओकरो लेल ठाम खुलैत अछि। परम्परागत बान्कीमे नव प्रयोग जोड़ब पुरानेक अपमान नहि, सम्भावित आगन्तुकक स्वागतक विस्तार अछि। ‘रंगक अनकहल स्वर’मे नेना अरिपनक टेढ़ बिन्दुकेँ चिड़ै बनबैत छल; एतय चिड़ैक पयर सचेत रूपेँ देहरीक सीमा बढ़बैत अछि। दू ठाम लोककला नब अर्थ पबैत अछि, मुदा घटनाक प्रेरणा अलग-अलग अछि।

‘एक अँगुरीक छोट घुमावमे / अनदेखल सम्बन्ध चमकल’क अन्त कला आ सामाजिक सम्बन्धक अविच्छिन्नता दर्शबैत अछि। कलाक मूल्य केवल चित्रक आकार नहि, ओ जे भेटक सम्भावना बनबैत अछि सेहो अछि। कविता घरेलू स्त्रीक श्रमकेँ केन्द्रीय स्थान दैत अछि; अलपनाक जटिल जातीय-सामाजिक इतिहास नहि खोलैत, ताहि लेल एतय कृतिसापेक्ष सीमा स्वीकार करबाक चाही।

भोजक समय थारी बिछला पर परोसनिहारक हाथ ठमकि जाइत अछि—के पहिने, के पाछाँ? ई असहज क्षण समाजक श्रेणीक्रमकेँ बिना दीर्घ घोषणापत्रक खुला करैत अछि। एक व्यक्तिक भूख मुखर अछि, दोसर चुप्पे सहैत अछि; समान भोजन-सूची समान सामाजिक पहुँचक प्रमाण नहि। कविताक बल अछि जे असमानता केवळ थारीक संख्यासँ नहि, दृष्टि, झिझक आ आसनक दूरीसँ पहिचानल जाइत अछि।

वाचक अपन आसन सरकाइ पाँतिक बाहरक लोककेँ बजबैत अछि आ ऊँच दान-चबूतरासँ उतरि एक धरतीपर बैसैत अछि। एहिमे परोपकारक एकतरफा ऊँचाई बदली समान सहभागिताक सापेक्ष स्थिति बनैत अछि। ‘न्याय केवल अन्नक माप नहि, / मानक भूखो तृप्त करय’क पाँति वितरणात्मक न्याय आ गरिमा-दृष्टिक भेद उठबैत अछि। एहि सूत्रकेँ व्यवहारमे आँखि मिला कऽ थारी देबाक छोट क्रिया ठोस बनबैत अछि।

‘सभक लेल पाँति’मे पहिले समावेशक भोजनछवि छल; एहि कवितामे विशेष रूपसँ ‘दान’क ऊँच आसन छोड़बाक आग्रह अछि। दानदाता आ ग्रहणकर्ताक सम्बन्ध यदि नीचे-ऊपर बनि रहल हो तँ अन्नसँ अधिक गहिर अन्याय बचि सकैत अछि। कविता समाधानक सूक्ष्म मानवीय संकेत दैत अछि; संरचनागत आर्थिक विषमताक व्यापक विश्लेषण ओकर काव्य-सीमाक बाहर अछि।

१४३. जियबाक कारीगरी — अपूर्ण आत्म आ कर्मक आकार

‘काँच माटि जकाँ जनमलहुँ’क आरम्भ मनुष्यकेँ पहिनेसँ सम्पन्न अपरिवर्तनीय रूप नहि मानैत। भूख, भरोस आ भूलक संग वाचक अपन आकार गढ़ैत अछि। चाकपर घूमैत माटिक बिम्ब जीवनकेँ वस्तु-निर्माणक आखिरी अवस्था नहि, निरन्तर चलैत कर्म बनबैत अछि। एहिमे अपन चयनक महत्त्व अछि, मुदा सम्पूर्ण स्वनिर्माणक भ्रम नहि; गामक दुःख आ दोसरक अंश सेहो व्यक्तिक बनबामे शामिल होइत अछि।

लाभक लोभ आ नेहक बाट बीच चुनाव करैत व्यक्तिक निर्णय हाथमे जमैत अछि; जे छोड़ल गेल, ओ प्रश्नक रूपमे बचैत अछि। एहि स्थितिमे नैतिक जीवनक अर्थ केवल उचित आदर्शक ज्ञान नहि, सीमित अवसरमे कएल निर्णय आ ओकर स्मृतिक सामना अछि। ‘घरक सुख बाहर लऽ गेलहुँ’क पाँति निजी उपलब्धिक सामुदायिक विस्तार देखबैत अछि। दोसरक सहभागिता मानलासँ व्यक्तिक एजेंसी मेटाइत नहि, ओ अधिक जिम्मेदार बनैत अछि।

अन्तमे ‘साँझक माटि एखनो कोमल, / चाक एखनो घूमि रहल’ परिवर्तनक सम्भावना बचौने रखैत अछि। एहि पद्यक दार्शनिक ध्वनि व्यक्तित्वक निर्माण आ कर्तव्यक पुनर्निर्धारणसँ जुड़ैत अछि; तथापि कोनो एक पश्चिमी वा भारतीय दार्शनिक पद्धतिक पद्यानुवाद मानि देब प्रमाणित नहि। ‘फेर अँकुरायब’क नैतिक नवजीवन एहि ठाम एकहि जीवनमे निरन्तर कारीगरी रूपमे देखाइत अछि।

आँखि फूलकेँ सुन्दर कहैत अछि आ हाथ ओकरा तोड़बाक लेल बढ़ैत अछि। सौन्दर्यक अनुभवसँ स्वामित्वक इच्छाधरि जे तत्काल छलाँग अछि, कविता ओकरे क्षणिक व्यवहारमे पकड़ैत अछि। डाढ़ि काँपैत अछि, पराग झरैत अछि, तखन मोन ठमकैत अछि। फूलक जीवन देखला पर वाचकक पहिल भाव मेटाइत नहि, ओकर अर्थ नव नैतिक सीमासँ जुड़ैत अछि।

‘हम रंगक मोह नहि छोड़लहुँ, / केवल मुठ्ठी खोलि देलहुँ’क निर्णय महत्त्वपूर्ण अछि। सुन्दर वस्तुक सम्मान लेल सौन्दर्यप्रतिक आसक्ति सम्पूर्ण त्यागब अनिवार्य नहि; ओकर स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करब सेहो सम्भव अछि। फूलक डाढ़िसँ जुड़ल रहब स्वयं सौन्दर्यक एक रूप बनैत अछि। ई विवेक देखने मात्रसँ नहि, हाथक कार्य रोकबाक ठोस क्रियासँ प्रकट होइत अछि।

‘आँखिक उजास हाथ धरि आयल, / हाथक संयम मोन धरि गेल’ पद्यक नैतिक आ शिल्पगत केन्द्र अछि। अनुभूति क्रियाकेँ सुधारैत अछि आ सुधारल क्रिया व्यक्तित्वक निर्माण करैत अछि। ‘छुबैत धरती’मे घास छुबैत वाचक स्थल-रक्षाक निर्णय लेलक; एतय फूल नहि तोड़ब अहानिक सूक्ष्म रूप अछि। कविता सरल अछि, मुदा इच्छाक तिरस्कार नहि करैत ओकर संयमक व्यावहारिक अर्थ देखबैत अछि।

१४५. देखि रहल छी — बाह्य दृष्टिसँ आत्मबोध धरि

देबाल आ देहपर पड़ैत धूपक गरमी एकहि घटना-क्षेत्रमे अछि, मुदा वाचक ‘हम गरमी जनैत छलहुँ’ कहि अनुभूतिक अपन स्थिति दर्ज करैत अछि। एक चिड़ै छतपर उतरैत अछि आ नजरि ओकर पाछाँ जाइत अछि; तखन प्रश्न उठैत अछि जे नजरि लगबाक प्रक्रिया स्वयं कोना अनुभव होइत अछि। ई ध्यानक विषयसँ ध्यानक क्रिया धरि लौटबाक क्षण कविता बनैत अछि।

देखल वस्तुसँ घुरि मोन अपन देखबकें छूबऽ चाहैत अछि। ‘शान्त जलमे दोसर उजास’ एहि आत्मपरावर्तनक रूपक अछि, जकरा काव्यगत अनुभूति मानबाक चाही; एहि सँ आत्माक कोनो विशिष्ट तत्त्वमीमांसक सिद्धान्त स्वतः सिद्ध नहि होइत। देहक गरमी आ चिड़ैक स्वर कविता समाप्तितक साथ रहैत अछि। अतः आत्मबोध संसार-विमुख ध्यान नहि, संसारक बीच अपन उपस्थितिक सजगता अछि।

‘भीतरक अचल ठाम’मे देखनिहारक स्थिति वस्तुक गिनतीसँ बाहर छल; एतय कवि वस्तुक गिनती नहि, देखबाक सजग मोड़ प्रस्तुत करैत अछि। एहि भेदसँ रचना एकर पुनरावृत्ति मात्र नहि बनैत। अनुभूतिक सूक्ष्म प्रसंगक कारण कविता अपन ‘हम’कें सर्वज्ञ घोषित नहि करैत। देह-स्थित वस्तु आ जानबाक आश्चर्यक एक संग रहब एकर विशेष संवेदनात्मक उपलब्धि अछि।

१४६. हमरा नीक लगैत अछि — तथ्य, रुचि आ साझा अनुभवक भिन्नता

‘मेघ घेरलक’ आ ‘साँझ सुन्दर’क कथन परस्पर भिन्न प्रकारक अछि। पहिलक जाँच आँखि कयलक, दोसर मोनक दुआर खटखटौलक। एहि समीकरणमे दृश्य तथ्यक सत्यापन आ सौन्दर्यक पसिन्नक अनिवार्य अन्तर अछि। कवि एकहि साँझक रंगसँ दू जनक दू अनुभव बनैत देखबैत अछि, मुदा एहि भिन्नतासँ साझा आकाश मेटाइत नहि।

वाचककेँ धूसर किनार प्रिय अछि, दोसर व्यक्तिकेँ लालिमक पातर धार। रुचिभेदकेँ विवादक कारण नहि बनाओल गेल; दुनू संग देखबाक नेह सुरक्षित अछि। एतय व्यक्तिगत पसिन्नमे अतिशय निजीकरण नहि, अनुभवक सार्वजनिक साझा अवसर देखाइत अछि। अलग मूल्याङ्कनक अस्तित्व तथ्यक विपरीत दावाक एकरूप समस्या नहि। एहि भेदकेँ कविता छोट संवादमे सुलभ बनबैत अछि।

साँझक ‘विस्तृत आँचर’ अन्तमे सहअस्तित्वक रूपक बनैत अछि। ‘एक जल, अनेक लहरि’मे एक-बहुक दार्शनिक सम्बन्ध जल-चन्द्रक छविमे छल; एहि पद्यमे समान दृश्य आ असमान रुचिक सामाजिक शान्ति मुख्य अछि। रचनाक छोट सीमा जे तीव्र सौन्दर्यगत असहमतिक जटिलता नहिएँ खोलैत; तथापि अस्वीकार नहि करैत स्वीकारक उदार अभ्यासक चित्र अछि।

१४७. अवश्य होयत? — गणितीय निश्चितता आ अनुभवजन्य अपेक्षाक भेद

बरखा पहिने अनेक बेर आयल अछि, एहि अनुभवक भरोसपर बीआ सहेजल जाइत अछि। मुदा आकाशक चुप्पी एहि आशाकें निश्चित सत्य बनबाकसँ रोकैत अछि। ‘दू मुठ्ठीमे दू-दू दाना / जोड़लासँ चारि’क गणितीय निश्चितता आ मेघक भविष्यत् आगमनक सम्भावना बीच कवि स्पष्ट सीमा खींचैत अछि। ई पद्य पूर्वानुमानकें निरर्थक नहि कहैत; अनिश्चित परिणामक दायरा मानबाक आग्रह करैत अछि।

मनक चाह प्रबल होइतहुँ मेघ खिंचि नहि अबैत अछि। इच्छाक तीव्रता बाह्य घटनाक कारणात्मक प्रमाण नहि; ‘आशाक स्वर ऊँच करिते / सत्यक माप नहि बढ़ि गेल’क वाक्य एहि भेदक सूक्ष्म आलोचना अछि। अनुभवसँ सीखल व्यवहार आवश्यक अछि, मुदा ओ आकस्मिक विचलन समाप्त नहि करैत। ई व्याप्तिक प्रश्नक सरल काव्यरूप अछि, औपचारिक न्याय-प्रमाणक सम्पूर्ण प्रतिपादन नहि।

अन्तिम निर्णयमे बीआ रखब, बाट ताकब आ पानिक व्यवस्था करब एकठाम अछि। अज्ञात स्वीकार करबाक अर्थ निष्क्रिय बैठब नहि; अनिश्चितताक भीतर विवेकपूर्ण तैयारी करब अछि। ‘काल्हिक बीआ’मे धरोहरक बीआ खेतमे छिटबाक कर्तव्य छल; एतय बीआ रखलासँ भविष्यत् बरखाक गारण्टी नहि। दूनु कविताक अन्तर विवेक आ आशाक सम्बन्धकें समृद्ध करैत अछि।

१४८. अनमोलक छाँह — विनिमय-मूल्य आ मानवीय अर्थक भेद

हाटमे पीतल तौलल जाइत अछि, माटिक बरतनक दाम लगैत अछि, मुदा बूढ़ीक गीतक मूल्य पूछिते स्वर ठमकि जाइत अछि। आर्थिक विनिमयक कसौटी आ स्मृतिक गीतक भावगत उपादेयता बीच ई तुलना कविताक आधार अछि। गीतसँ अन्न नहि उपजैत, मुदा ‘मोनक अकाल’ टरैत अछि—भूखक शब्दक पुनःप्रयोगसँ पदार्थ आ अनुभवक दू अलग आवश्यकता उभरैत अछि।

थाकल माथ सहलायब, दोसरा पीड़ा घटायब आ किछु वस्तुक अपनहि प्रिय होयब—कवि मूल्यक अनेक सम्भव आधार गनैत अछि। काजक वस्तु आ अपनेमे प्रिय वस्तुक भेद सूक्ष्म अछि; कविता एहि भेदकेँ दार्शनिक परिभाषाक कठोरता नहि दैत, व्यवहारक निरीक्षणमे रखैत अछि। हाटमे दाम नहि लगबासँ गीतक श्रमहीनता अथवा कलाकारक आर्थिक अधिकारक अभाव सिद्ध नहि होइत—एहि सम्भाव्य सामाजिक प्रश्न पर पाठ मौन अछि।

झोरामे कनेक किनल सामान रहितहुँ ‘जे अनमोल छल से सङ्ग चलल’ अन्तिम चित्र बजारसँ भावक परे बचल जीवन बतबैत अछि। ‘रोटीक पाछाँक भूख’क अस्तित्वगत पियास एहि ठाम गीत आ नेहक सामाजिक परिप्रेक्ष्य पबैत अछि। कविताक उपलब्धि हाटक यथार्थ नहि नकारैत ओकर मूल्यांकनक सीमा समझायब अछि; बूढ़ीक गीतक मौखिक परम्परा ‘कंठसँ उड़ल चिड़ै’ सँ जुड़ैत अछि।

१४९. मेहनतिक रंग — श्रमशरीर आ सौन्दर्यक सामाजिक स्वामित्व

भट्ठीक आगि सँ लाल मुख आ धूरिसँ करिया हाथ बासनक चमकक अदृश्य इतिहास अछि। किन्ननिहार तैयार वस्तुक चमक देखैत अछि, वाचक कारीगरक अँगुरी पर दृष्टि दैत अछि। एकहि बरतन पर उपभोगक नजरि आ उत्पादनक नजरि अलग संवेदना बनबैत अछि। बासनक पेट गढ़ब आ ओकरा पर ‘भोर’ उतारब श्रमक तकनीकी कारीगरीकेँ काव्यात्मक गरिमा दैत अछि।

‘सुन्दरता केकरो एकल धन नहि’क वाक्य सौन्दर्यक अनुभव पर सामाजिक अधिकारक प्रश्न उठबैत अछि। दिनभरि बोझ उठबैत हाथो रंगक सपना देखैत अछि। ई श्रमिककेँ केवल उत्पादनक औजार मानबाक विरोध अछि; ओ अपन सौन्दर्यबोध आ कल्पनाक स्वतन्त्र वाहक अछि। वाचकक कर्तव्य चमकक पाछाँ श्रमक चिह्न पढ़ब अछि, मुदा एहि पहचानसँ वास्तविक मजदूरीक न्याय अपने आप नहि होइत।

कारीगर दूर रहि जाइत अछि आ बरतन ग्राहकक घरक कोनमे चमकैत अछि; एहि अन्तरे श्रमफल आ श्रमिकक सामाजिक दूरी जाहिर अछि। ‘ओकर श्रमक मान बचल रहय’क अन्तिम आग्रह सौन्दर्यक सम्पूर्णता लेल सम्मान आवश्यक मानैत अछि। ‘करघाक नव फूल’मे मायक हस्तशिल्प स्मृतिक रूप छल; एतय उत्पादक आ उपभोक्ताक विषमता अधिक स्पष्ट अछि। कविताक सामाजिक चेतनाक विशिष्ट बल एहि असमान दृश्य-विन्यासमे अछि।

१५०. नामक ओहि पार — संज्ञा आ बहु-इन्द्रिय अनुभव

नेना पहिल बेर ‘आम’ उच्चारण करैत अछि आ माय फल देखबैत छथि। ध्वनि रंग आ गन्धसँ जुड़ैत अछि; छोट शब्द जगत धरि पहुँचबाक पहिल बाट बनैत अछि। मुदा काँच-पाकल, खट्टा-मीठ आमक अनुभूतिक समूचा विस्तार एकहि नाममे नहि अँटैत। एहि भेदक माध्यमसँ कविता सामान्य संज्ञाक उपयोगिता आ अनुभवक बहुलता एक संग स्वीकार करैत अछि।

आँखि, जीह आ हाथ फलकेँ अलग-अलग अनुभूतिगुणसँ परिचित करैत अछि। एक वस्तुक अनेक संवेदना मिलि एक अर्थ-क्षेत्र रचैत अछि; नाम ओहि भेटकेँ सम्भव बनबैत अछि, ओकर अन्तिम विकल्प नहि बनैत। कविता नामक आलोचना करितहुँ भाषा त्यागबाक आग्रह नहि दैत। ‘नाम हमर सङ्ग चलैत रहल, / फल अपन स्वाद खोलैत रहल’ मे शब्द आ वस्तुक समानान्तर यात्रा अछि।

‘बजबाक पहिल दिन’मे शब्द वस्तुसँ अनुपस्थित रहितहुँ अर्थक स्मृति बनबैत अछि; एहि पद्यमे वस्तुक उपस्थितिक सम्पूर्ण स्वाद नामक सीमा पर प्रश्न अछि। दूनू एक-दोसरकेँ पूरा करैत अछि। ‘एक नामक कतेक पात’क अलग-अलग पातक रूपक सेहो एही सामान्य-विशेष सम्बन्धक पूर्वरूप अछि; तखनहुँ आमक स्वाद-गन्धक बहु-इन्द्रिय दृश्य अधिक ठोस बनल अछि।

१५१. बजबाक पहिल दिन — भाषा सीखबाक सामाजिक क्रिया

नन्हक नेना लोटा, पानि आ कखनो खाली हाथ दिस अँगुरी उठा कऽ सम्बोधन सीखैत अछि। कविताक रुचि शब्द-सूची बनबयमे नहि, उच्चारणक संग वस्तु आ काजक सम्बन्ध देखबयमे अछि। ‘पीबक बेरक छोट इशारामे / कतेक सम्बन्ध जोड़लहुँ’क पाँति भाषा-अर्जनमे साझा क्रिया, पुनरावृत्ति आ परस्पर प्रत्युत्तरक महत्त्व प्रत्यक्ष करैत अछि।

नामक उच्चारण रुकला पर वस्तु नष्ट नहि, वस्तु सामने नहि रहला पर नाम बचि सकैत अछि। अनुपस्थित पानिक स्मरणसँ पियासक स्वर निकलैत अछि। एतय भाषा वर्तमान वस्तुक निर्देशमात्र नहि; स्मृति, इच्छा आ सम्भावित क्रियाक साधन अछि। नेना सीमित बोलसँ नव कथ्य रचैत अछि, ताहि लेल सीखल भाषाक प्रयोग सर्जनात्मक अछि। मूल पद्य भाषिक अर्जनक विस्तृत वैज्ञानिक सिद्धान्त घोषित नहि करैत; ओ ओकर दृश्य रूप देखबैत अछि।

‘ध्वनि एकसरे नहि सिखौलक, / सङ्ग जियब अर्थक बाट बनल’ पद्यक मुख्य निष्कर्ष अछि। बोलबाक अभ्यास सामूहिक जीवनमे आकार पबैत अछि। ‘कंठसँ उड़ल चिड़ै’क गीत पीढ़ीक भीतर चलैत छल, मुदा ओहिमे परम्परागत स्वरक हस्तान्तरण छल; एहि पद्यमे नेनाक नब शब्दानुभव अछि। भाषा अपन सामाजिक स्रोतसँ बनैतहुँ व्यक्तिक नब संसार रचैत अछि— एहि द्विस्वरक कारण कविता सजीव अछि।

दूरक उज्जर विस्तारकेँ पानि बुझल गेल, लग गेलापर बालु भेटल। घामक कारण उपस्थित ई भ्रम अनुभवक पूर्ण निषेधक आधार नहि बनैत। वाचक आँखि बन्द नहि करैत; ओ ‘ठाम बदललहुँ, हाथ लगलहुँ’ कहि प्रत्यक्षक अनेक क्रियासँ पहिल धारणा सुधरैत अछि। कविता त्रुटि पहिचानबाक प्रक्रिया केन्द्रीय बनबैत अछि; गलत देखबाक भय देखब छोड़बाक कारण नहि।

विशेष भ्रमक कारण खोजब सामान्य संशयक तुलना मे अधिक फलदायी अछि। ‘विश्वासक अर्थ अन्हर पकड़ नहि, / जाँचक अर्थ सभटा नकार नहि’क वाक्य दुनू चरम स्थितिक आलोचना करैत अछि। भ्रमक प्रश्न इन्द्रियज्ञानक सीमा देखबैत अछि, मुदा दोसर जाँच ओकर विश्वसनीयता सुधारि सकैत अछि। नव्य-न्यायक भाषामे भ्रम आ संशय भिन्न स्थिति अछि; कविता औपचारिक वर्गीकरण नहि, व्यवहारगत परीक्षणक आवश्यकता रेखांकित करैत अछि।

अन्तमे दूर पोखरिक धार चमकैत अछि। प्रारम्भक झूठ चमक आ अन्तक सत्यापित जलक बीच पाठक सोचैत अछि जे एकहि दृश्य-चिह्न अलग सन्दर्भमे भिन्न सिद्ध होइत अछि। ‘अवश्य होयत?’मे भविष्यक मेघ निश्चय नहि छल; एतय वर्तमान दृश्य नव प्रमाणसँ सुधारल गेल अछि। दुनू रचनामे जाँच आवश्यक, मुदा अनिश्चितताक प्रकार अलग अछि।

१५३. हरेक पातक अपन हरियरी — सामान्य अर्थ आ विशिष्ट अनुभवक समवाय

‘सभ पातकें पात कहैत छी, / तैयो सभटा एके नहि’ एहि स्पष्ट वाक्यमे सामान्य नाम आ व्यक्तिगत वस्तुक बीचक अन्तर आरम्भ होइत अछि। कोनो पातपर कीड़ाक चिन्ह, कोनो पर ओसक बूँद—नाम समान रहितहुँ देह आ इतिहासक भेद अक्षुण्ण अछि। कविता वस्तुसभकें केवल अलग-अलग नहिऐँ करैत; एकहि गाछक सह-अस्तित्वमे ओकरा देखबैत अछि।

मोनेमे हरियरीक सामान्य रूप अनेक पातसँ बनैत अछि, मुदा छूबाक लेल एक विशिष्ट पातक नरम किनार हाथमे अबैत अछि। एहि दोसर क्रियासँ अमूर्त वर्गीकरणक ज्ञान आ व्यक्तिगत स्पर्शक अनुभव अलग होइत अछि। कवि सामान्य नामक सुविधा मेटेबाक बदला ओकर भीतर अनन्यताक संरक्षण चाहैत अछि। सामान्यीकरण जखन जीवनक विशिष्ट चोटक चिन्ह मिटबैत अछि, तखन ओकर नैतिक सीमा सेहो उपस्थित होइत अछि।

सभ पात संग हिलैत अछि, तैयो अपन उजास नचबैत अछि—ई सामूहिक गति आ व्यक्तिगत स्वरूपक संयुक्त अन्त अछि। ‘एक नामक कतेक पात’मे नेनाक पातसभक विशिष्टता देखल गेल; एहि पद्यमे एक विशिष्ट पातक स्पर्शसँ ओही विमर्श नव संवेदनशील रूप पबैत अछि। शीर्षक मूल ग्रन्थक जथावत् राखल गेल अछि; सम्पादकीय भाषिक नियमक कारण ओकर प्रमाणित वर्तनी बदलल नहि गेल।

१५४. रंगक सङ्ग रूप — गुणवाचक शब्दक प्रसंगाधीन अर्थ

‘गहिर नीला’ सुनि वाचक पूछैत अछि—ककर नील? आकाश, आँचर आ पोखरि जलमे एकहि रंगशब्द भिन्न पदार्थक संग अलग अनुभूति दैत अछि। कविता गुणकें वस्तुसँ सम्पूर्ण अलग करि बोलबाक सीमा देखबैत अछि। कोनो एक प्रसंगमे सार्थक विशेषण अन्यमे स्वतः ओही अर्थ नहि दैत; भाषा पदार्थ, दृश्य आ अनुभूतिक संग काम करैत अछि।

‘कठोर पाथर’ आ ‘कठोर बोली’क उदाहरणमे शब्दक प्रयोग बाह्य भौतिक प्रतिरोधसँ मानवीय सम्बन्धक चोट धरि बदलैत अछि। पहिल हाथकें, दोसर मोनकें रोकैत अछि। ई रूपान्तर दूनू अर्थक अनिवार्य एकता सिद्ध नहि करैत, मुदा समान पदक अर्थ-सन्निकर्ष आ भेद बुझबाक बाट खोलैत अछि। ‘गुणकें देहसँ दूर करिते / ओकर अर्थ सरकि गेल’ कविता पढ़बाक मुख्य सूचना अछि।

रंग आ रूप संग देखब, बोल आ प्रसंग जोड़ब—एतय भाषिक विवेकक व्यवहारिक विधि अछि। ‘नामक ओहि पार’मे नाम फलक समूचा स्वाद नहि पकड़ि सकल; एहि पद्यमे विशेषणक अर्थ सन्दर्भ बदलला पर सरकैत अछि। दूनू रचना संकेतक उपयोगिता आ अपर्याप्तताकें साथ रखैत अछि। एकल शब्दक ‘सूखल डाढ़ि’मे सम्बन्धक रस भेटब अन्तिम सजीव बिम्ब अछि।

१५५. गाँठिक भीतर बाट — अर्थबोधक धीरज आ सन्दर्भक बहुलता

हाथमे उलझल सुतरी खींचलासँ गाँठि अधिक कसैत अछि। एतय जल्दबाजीक उलट परिणाम भाषा आ समझ दुनूक लेल रूपक बनैत अछि। बल छोड़ि एक-एक मोड़ देखल जाएत; एक छोर बुझला पर दोसरक सम्बन्ध बदलि जाइत अछि। अर्थ-व्याख्यामे शब्दकेँ अलग खींचि निश्चित करबाक प्रयास कखनो उलझन बढ़ा सकैत अछि—ई कविता दृश्यरूपमे अनुभव करबैत अछि।

आँगनक बोल, नीरव प्रार्थना, खेलक नियम आ नेहक मानक अलग-अलग गाँठि अछि। एकहि विधिसँ सभकेँ खोलल नहि जा सकैत; प्रसंग अनुसार समझबाक काज बदलैत अछि। रचना बहुविध अर्थक कारण निर्णय स्थगित करबाक आग्रह नहि करैत; ओ अति-शीघ्र निर्णयक भ्रम तोड़ैत अछि। ‘किएकक अनेक रंग’मे एक प्रश्नक अलग अभिप्राय एही बोधक विस्तारित प्रयोग अछि।

अन्तमे सुतरी सुरक्षित बचल रहैत अछि, मुदा वाचकक जल्दबाजी खुलि गेल। समस्या समाधानक संग समाधानकर्ताक चित्तक परिवर्तन कविता लेल अधिक महत्त्वपूर्ण अछि। ‘बजबाक पहिल दिन’मे अर्थ सामूहिक व्यवहारसँ बनैत छल; एतय ओ अर्थ जटिल भेलापर धैर्यसँ छानब आवश्यक अछि। पद्य अपन मौलिक प्रभाव रोजमर्राक धागा आ गाँठिक सटीक दृश्यसँ पबैत अछि।

नेना पात झरबाक कारण पूछैत अछि; उत्तर भेटैत अछि जे डाढ़ि सुखायल। तकर बाद ‘मोन किएक कानल?’ पूछला पर पहिल प्रकारक उत्तर ठमकि जाइत अछि। कविताक ई नन्हक संवाद एकहि प्रश्नवाचक शब्दक अनेक प्रयोजनक भेद देखबैत अछि। प्रकृतिक घटनाक कारणात्मक व्याख्या आ मनुष्यक वेदनाक कथात्मक अर्थ एक जकाँ नहि बनैत।

कखनो कारण, कखनो आशय, कखनो ढाढ़स आ कखनो केवल लग बैसबाक निमन्त्रण— प्रश्नक अर्थ श्रोता आ अवस्थासँ बनैत अछि। ‘जे बात केवल ठीक छल पहिने, / ओ आब ओकर काजक भेल’मे शुद्ध तथ्य-उत्तरक पर्याप्तता पर प्रश्न अछि। सही उत्तर यदि पूछनिहारक वास्तविक आवश्यकता नहि बुझय, तँ संप्रेषण अपूर्ण रहि सकैत अछि। तथापि ढाढ़स देबाक नामपर असत्य कहबक समर्थन मूल पाठ नहि करैत।

‘कारणक सीढ़ी’मे धुआँक कारण पूछब प्रमाणक सूक्ष्म प्रशिक्षण बनैत अछि; एहि पद्यमे कारणक प्रश्न मानवीय सम्बन्धक भाषा धरि विस्तारित अछि। दुनू कविता ‘किएक’क बल स्वीकार करैत अछि, मुदा उत्तरक एकरूप नहिँ मानैत। नेनाक आँखि दिस तकब उत्तर बदलैत अछि—ज्ञानक मानवीय पक्षकँ एतयसँ पैघ महत्त्व भेटैत अछि।

१५७. अञ्जुरीक उजास — कृतज्ञता, श्रद्धा आ करुणामय कर्म

भोरमे दुआर धोइ धरतीपर एक चुटकी जल देल जाइत अछि। वाचक स्पष्ट करैत अछि जे ई क्रिया सूर्य नापबाक उपकरण नहि, कृतज्ञताक अभिव्यक्ति अछि। धार्मिक-सांस्कृतिक व्यवहारक मूल्यांकन लेल ओकर प्रयोजन पहिचानब आवश्यक अछि—एतय कविताक पहिल अर्थपूर्ण अन्तर अछि। झुकल हाथमे थकान आ उठल हाथमे आशा देखबैत ओ कर्मक देहगत लय पर ध्यान दैत अछि।

वाचक श्रद्धाक आँखिक शान्ति देखैतहुँ ‘प्रश्नक दीप’ बुतबैत नहि। ओ पूछैत अछि जे श्रद्धा कतय नेह बढ़बैत अछि आ कतय डर ओकर रूप धारण करैत अछि। एहि प्रश्नसँ कविता अन्ध-अनुसरणक स्थाने विवेकपूर्ण सहानुभूतिक अवसर खोलैत अछि। परम्पराक अर्थ ओकर अनुष्ठानिक वस्तुसँ अधिक मनुष्यक सामाजिक व्यवहारमे परखल जा सकैत अछि।

जुड़ल अञ्जुरी खुलैत अछि आ भूखल व्यक्तिकेँ अन्न दैत अछि। एहि अन्तिम संक्रमणमे प्रार्थना करुणामय कर्मक रूप पबैत अछि; श्रद्धाक आलोचनात्मक कसौटी मानवीय सहायता बनैत अछि। ‘बराबरक थारी’मे गरिमासहित भोजन देबाक नैतिक प्रश्न छल; एतय सहायता अनुष्ठानक कृतज्ञतासँ उपजैत अछि। मुदा दानक ऊँच-नीच पर मूल पाठ निःशब्द अछि, ताहि लेल दूनू कविताक आलोचनात्मक अन्तर बचल रहैत अछि।

तारा गिनि रातिक विस्तार नपबाक उपलब्धि रहलो पर एकल ओछाओनक उदासी नहि बुझल गेल। गणितीय मापन आ भावनात्मक अकेलापनक बीच ई भेद रचनाक केन्द्र अछि। ई जाँच-प्रणालीक उपहास नहि; मापनक वस्तु आ मानवीय दुःखक प्रश्न अलग अछि। सिरान लग बहुत उत्तर रहितहुँ मोनक पियास चुप्पे जीवित रहैत अछि।

बाहर पात हिलैत अछि, वाचकक साँस ओकर लयमे मिलैत अछि। एकान्तक बन्द आत्मकेन्द्रित घरसँ बाहर संसारक संग अनुभवक नब सम्बन्ध बनैत अछि। एहि शान्तिकेँ समस्त प्रश्नक समाधान कहि देब कविता विरुद्ध होयत; मूल पाँति अछि ‘प्रश्न मेटल नहि, भार बदलल’। प्रश्न रहल, प्रश्नक संग जीबाक ढंग परिवर्तित भेल।

‘मोनक दूर किनार’मे भीतरक खोजक आरम्भ छल; एहि ठाम विचारक परिश्रमक बाद उत्तरहीनतामे स्थिर श्वासक अनुभूति अछि। पद्यक ध्वनि शान्त रसक निकट पहुँचैत अछि, मुदा सम्पूर्ण वैराग्य नहि—जीवनक संग बैसि रहबाक आग्रह अछि। संक्षिप्त बिम्बक कारण कविता बौद्धिक विजयक बदला विनम्र अनुभवकेँ महत्व दैत अछि।

१५९. कहलासँ बचल — विरहक पुनर्भेटमे मौनक सकारात्मक अर्थ

दीर्घ विरहसँ लौटल व्यक्तिक लेल बहुत वाक्य सोचल गेल, मुदा केवाड़ी खुलिते आँखि मिलैत अछि आ सभ वाक्य रुकि जाइत अछि। एहि अवरोधमे अर्थक अभाव नहि, भावना आ भाषाक सामर्थ्यक अस्थायी अन्तर अछि। हथेली लग हथेलीक गरमीसँ मिलनक जे बोध बनैत अछि, ओ उच्चरित वाक्यक स्थानापन्न बनेबाक बाध्यता बिना स्वयं संकेत अछि।

‘मौनक अर्थ रिक्ति नहि छल, / ओहिमे बरखक स्वर छल’क पाँति मौनकेँ समयसँ भरल स्मृति मानैत अछि। एहि कारण निस्तब्धता नकारात्मक चुप्पी नहि, बीतल दूरीक अनुभवक संकुचित रूप बनैत अछि। मुदा भाषा पूर्णतया विफल नहि; अन्तमे ‘बैसू, थाकल होयब अहाँ’ सन सरल सम्बोधन फेर लौटैत अछि। ओहि साधारण आमन्त्रणमे नेहक असाधारण अर्थ भरल अछि।

‘आवाजक पुल’मे पानिक आग्रहक छोट बोल सम्बन्धक बाट खोलैत छल; एतय न्यूनतम वाक्यक पहिने मौनक भव्यता अछि। दुनू कविता बोल आ क्रियाक अन्तर्सम्बन्ध देखबैत अछि। ‘कहलासँ बचल’क शिल्पगत शक्ति घटनाक विरलता आ दृष्टि-हथेलीक लघु विन्यास अछि; भावक तीव्रता ओकरा विस्तृत अलंकार बिना मिलैत अछि।

१६०. खेलक बोली — वस्तु, भूमिका आ भाषिक व्यवहार

नेनाक खेलमे एक पाथर आइ चूल्हि अछि, काल्हि राजा छल। भौतिक पाथर समान रहितहुँ खेलक नियम आ साझा कल्पनाक कारण ओकर भूमिका बदलैत अछि। कविता ई प्रसंग शब्दार्थक परिवर्तनक सजीव दृष्टान्त बनबैत अछि। नामक परिवर्तन एकान्त मनमानी घोषणा मात्र नहि; खेलक सहभागी सभ जन ओहि वस्तुक संग नव ढंगसँ व्यवहार करैत छथि।

‘नाम बदलल तँ खेल बदलल, / खेल बदलल तँ काज बदलल’क क्रम भाषा आ क्रियाक परस्पर संलग्नता देखबैत अछि। गंभीर भाषिक उलझन कखनो वस्तुक गलत नामकरण नहि, शब्दक प्रयोग-ठामक भूलसँ उठि सकैत अछि। नेनाक खेलक धूरिमे वाचक अपन अमूर्त विचारक व्यावहारिक धरती पाबैत अछि। कविताक छोट रूपक भाषाशास्त्रीय पूर्ण सिद्धान्त नहि; भाषा-प्रयोगक प्रति सजगता खोलैत अछि।

‘बजबाक पहिल दिन’क नेना शब्द आ वस्तु सीखैत छल; एतय नेना ज्ञात वस्तुकें साझा नियमानुसार नव काज दैत अछि। भाषा अर्जन आ भाषा-खेलक एहि भेदमे संग्रहक भाषिक विमर्श क्रमशः विस्तार पबैत अछि। ‘मोनक धुन्ध हलुक भऽ गेल’कें विचारक समाप्ति नहि, प्रयोगक माध्यमसँ दृष्टि स्पष्ट होयब मानब उचित अछि।

१६१. भीतरक नीरव घर — जागरण, स्वप्न आ निर्विषय विश्रामक प्रश्न

दिनमे रंगक पाहुन आँखिक खिड़कीसँ भीतर अबैत अछि, रातिमे सपना अपन मेला सजबैत अछि, तकर बाद गहिर शान्ति उतरैत अछि। एहि क्रममे रचनाक तीन अनुभवावस्था दृश्यात्मक घर-रूपकमे संगठित अछि। दिनक बाह्य अनुभव आ रातिक स्वप्न दुनू चलायमान मेला अछि; नीरव विश्रामक वर्णन ओकर तुलना मे अधिक निराकृति अछि।

जागला पर वाचक पूछैत अछि—‘ओहि नीरव घरमे के छल?’ जखन कोनो दृश्य नहि बचल तँ विश्रामक छाप मोनमे कोना अछि? ई स्मृति, सुषुप्ति आ आत्मबोधक दार्शनिक प्रश्नक काव्य रूप अछि। प्रश्नक उपस्थितिमात्रसँ कोनो विशिष्ट शाश्वत साक्षी सिद्ध भऽ जाइत अछि एहन निष्कर्ष ग्रन्थक एहि पद्यमे नहि अछि। ओ उत्तरक जल्दबाजी छोड़ि अनुभवक अन्तर सुनबाक अभ्यास करैत अछि।

‘सपनो जखन सुतल’मे स्वप्नक अवसानक बाद ‘नीक निन्न’ कहलाक आधार पूछल गेल; एहि पद्यमे घरक स्थानिक बिम्ब अनुभवक स्तरसभकेँ जोड़ैत अछि। दूनू कविता परस्पर संदर्भ दैत अछि, मुदा एहि ठाम विशेष बात प्रश्नक अनुत्तरित रहबक बावजूद नीरव शान्तिक श्रवण अछि। एकर काव्यशक्ति निश्चित दार्शनिक निर्णय नहि, आश्चर्य बचौने राखब अछि।

१६२. कारणक सीढ़ी — अनुमानक जाँच आ तर्कक पूर्वाधार

धुआँ देखिते लोक आगिक ठाम बतबैत अछि, तखन प्रश्न उठैत अछि—धुआँ सदिखन एकहि कारणसँ उठैत अछि की? एहि प्रश्नसँ प्रत्यक्षक आधारपर कएल अनुमानक विश्वसनीयता जाँचबाक आवश्यकता जन्मैत अछि। कविता कारण-कार्यक सरलीकृत आदतकेँ सावधानीसँ देखैत अछि; पृष्ठभूमिक स्थितिक भेद, कारणक पहचान आ निष्कर्षक वैधता विषय बनैत अछि।

एक प्रश्नपर दोसर प्रश्न आ ‘जल्द बुझाईकेँ फेर जाँचबैत’ बुद्धिक पयर बढ़ब एतय काव्यक प्रगतिचिह्न अछि। नव्य-न्यायक व्याप्ति, हेतु आ उपाधि-विचारसँ एहि प्रवृत्तिक तुलना सम्भव अछि, मुदा कविता कोनो औपचारिक न्यायसूत्रक पाठमात्र नहि। ‘नन्हक अन्तर’ छूटला पर निष्कर्षक मोड़ बदलैत अछि; तर्कक सूक्ष्म विभाजनक आवश्यकता ओहि अनुभवसँ उजागर होइत अछि।

वाचक सीढ़ी चढ़ितहुँ नीचाँक पायदान सहलाबैत अछि। नवीन विवेचन पूर्व श्रमकेँ मेटैत नहि, ओकरा पर टिकैत अछि। ‘फेरसँ ताकू’मे दृश्यभ्रमक सुधार छल, एहि पद्यमे अनुमेय कारणक जाँच केन्द्र मे अछि। प्रत्यक्ष-संशोधन आ अनुमान-समीक्षा दूनू आवश्यक अछि, मुदा समान प्रक्रिया नहि। रूपकक सरलता सैद्धान्तिक सावधानीक पहुँच बढ़बैत अछि।

१६३. ओझरायल उजास — आत्मप्रतिमा, संशय आ खुलल हथेलीक अनुभव

उजास भरल कोठरीमे अपनहि छाँहसँ डर लगब कविताक मूल विरोध अछि। वाचक ‘जे हम छी’ ओकरा छोड़ि अपन बनायल रूप धारण करैत अछि। ई आत्मप्रतिमाक कृत्रिमताक छवि अछि, जतय अपन बनाओल पहिचान अपनहि अस्तित्वकेँ भयावह बना सकैत अछि। कवि ई संकटकेँ महत्त्व दैत अछि, मुदा आत्माक कोनो स्थिर स्वभावक घोषणा नहि करैत।

‘जँ भीतर दीप जरैत अछि, / ई अन्हार कतयसँ आयल?’ आ ओकर उलट ‘जँ अन्हारे सभटा छल तँ / अन्हारक बोध कोना जागल?’—ई प्रश्न युग्म सर्वसुलभ उत्तरकेँ अस्थिर करैत अछि। विचारक धागा लगातार खींचला पर मुठ्ठी कसैत जाइत अछि। एहि दृश्यसँ तर्कक प्रयत्न आ मानसिक तनावक सम्बन्ध बनैत अछि; विचारक मूल्य समाप्त नहि, ओकर निरंकुश पकड़ पर आलोचना अछि।

हाथ खोलिते हथेलीपर धूपक रेखा पड़ैत अछि। अन्तमे छाँह हटाओल नहि, ओकरा उजासक संग ठाम देल जाइत अछि। एहि अन्तमे द्वैतक संहार नहि, अनुभवमे भेदक स्वीकार अछि। ‘आँखि आ हथेली’मे मुठ्ठी खोलब फूलक जीवन बचेबाक नैतिक क्रिया छल; एतय ई मनक अतिदृढ़ निष्कर्ष ढील करबाक ज्ञानात्मक क्रिया अछि। बिम्बक पुनरागमनक अर्थ एहि प्रसंगानुसार बदलिए जाएत।

१६४. नजरिक मिलन — अवधानक भूमिका आ वस्तुक उपस्थिति

गामक बाटक फूल वाचकक आँखिक आगाँ रहितहुँ देखल नहि गेल, किएक तँ मोन आन ठाम छल। ध्यान घुरलापर रंग, आकार आ सुगन्ध एक अनुभवमे एकत्र होइत अछि। ई विरोध प्रत्यक्षक केवल बाह्य उद्दीपनपर निर्भर नहि होयबाक संकेत अछि। फूल पहिनेसँ उपस्थित छल, मुदा वाचक ओकरा अर्थपूर्ण अनुभवक रूपमे तखने चिन्हलक जखन अवधान ओकर दिस गेल।

कविता एहि बोधकें वस्तुक मनसँ उत्पत्ति नहि बनबैत: ‘दूरी अपन ठामे रहल’क पाँतिमे बाहरी स्थितिक स्थिरता मानल गेल अछि। बदलल अछि अनचिन्हपन। अनुभवक समूचा रूप बाहरी वस्तुक उपस्थितिक संग वाचकक मनोयोगपर निर्भर अछि। ‘भीतरक जागल उजियार’ एतय ज्ञानात्मक सजगताक रूपक अछि, फूलक वास्तविक प्रकाशक प्रमाण नहि।

‘देखि रहल छी’मे वाचक अपन देखबाक क्रियापर लौटि रहल छल; एहि पद्यमे ओहिसँ भिन्न, देखल वस्तुक प्रति ध्यानक आरम्भ अछि। दूनू रचनामे व्यक्तिक सहभागिता अछि, मुदा पहिलमे आत्मपरावर्तन आ दोसरमे बाह्य वस्तुक प्रति सजग सम्पर्क। काव्यक बल एक छोट फूलक उदाहरणसँ व्यापक अनुभव-प्रक्रिया देखाबब अछि।

१६५. सपनो जखन सुतल — गहिर निन्नक स्मृति आ साक्षीक अनुत्तरित प्रश्न

रातिक चित्र आ स्वप्नक रंग क्रमशः मिझाइत अछि, नहि कोनो बाट बचैत, नहि यात्री। भोरक हाँकपर वाचक जगैत अछि आ ‘नीक निन्न पड़ल छल’ कहैत अछि। तखन ओ अपन कथनपर ठमकि पूछैत अछि जे जखन देखबाक कोनो वस्तु नहि छल तँ विश्रामक बोधक आधार की अछि। कविता दैनिक अनुभवमे निहित सूक्ष्म ज्ञानसमस्याकें सोझाँ रखैत अछि।

‘के देखलक ओहि विश्रामकें’क प्रश्न अनेक दर्शनपरम्परामे सुषुप्तिक साक्षीक बहससँ जुड़ि सकैत अछि, मुदा एहि मूल पद्यमे निश्चित सिद्धान्त प्रस्तुत नहि। स्मृति, विश्रामक देहगत छाप आ जागरणक पश्चात् कथन कतेक विश्वसनीय—ई सभ प्रश्न खुलल अछि। रचना प्रश्नकें बचा रखैत अछि, जकर कारण एहिमे निष्कर्षक अतिरेक नहि अछि।

‘भीतरक नीरव घर’मे दिन-सपना-गहिर शान्तिक घररूपक छल; एतय अधिक संक्षिप्त चित्र, जगला बादक बोलक आत्मसमीक्षा बनैत अछि। अन्तमे ‘नाम देबाक जल्दी छोड़लहुँ’ कहब अनुभवक अस्पष्टता मानबाक बौद्धिक संयम अछि। सहज विश्रामक अनुभूतिकें नकारे बिना ओकर ज्ञानात्मक आधारक अनिश्चितता स्वीकार कएल गेल अछि।

१६६. निन्नक तीन किनार — वियोगक तीन अनुभव-स्थिति

जागल दिनक खाली ओसारा प्रिय व्यक्तिक अनुपस्थिति जनबैत अछि; स्वप्नमे ओ व्यक्ति आयल रहितहुँ वियोगक भाव बनल रहैत अछि। गहिर निन्नमे ओसारा, आगमन आ प्रतीक्षा सभ अनुभवसँ हटि जाइत अछि। एहि त्रि-रूप विन्यासमे पद्य एकहि सम्बन्धक अर्थ तीन अवस्थामे अलग ढंगसँ खुलैत देखबैत अछि।

विशेष ध्यान देबाक बात अछि जे गहिर निन्नमे कमी नहि महसूस होयब वास्तविक वियोग समाप्त होयबाक प्रमाण नहि। भोर अबिते नाम आ सम्बन्ध फेर लौटैत अछि। कवि जागरणक सामाजिक सत्य आ सपनाक व्यक्तिगत सत्य गड्ढमड्ढ नहि करैत। अनुपस्थितिक दुखक अनुभव प्रकट होयब लेल स्मृति आ पूछनिहारक चेतना आवश्यक होइत अछि—एहन संकेत पाठसँ उपजैत अछि।

‘खाली पीढ़ी’मे अनुपस्थित व्यक्ति पीढ़ीक माध्यमसँ उपस्थित छल; एहि पद्यमे ओसाराक रिक्ति तीन अनुभवावस्था अनुसार रूप बदलैत अछि। वस्तु-स्मृति आ निद्रा-रचना एहि तरहँ परस्पर पूरक आलोचनात्मक सन्दर्भ बनैत अछि। कविता निन्नकेँ मुक्ति घोषित नहि करैत, केवल अनुभवक सीमाक विचित्र अन्तर देखबैत अछि।

१६७. डगमग धरतीपर — संदेहक विवेक आ विश्वस्त क्रिया

काठक पुलपर पयर राखला पर हलुक आवाज होइत अछि; वाचक रुकि हाथसँ जाँचैत अछि। नदीक वेग, डर आ आशाक स्वर एक संग उपस्थित अछि। डर कहैत अछि किछुओ स्थिर नहि, आशा पार जायबाक आग्रह करैत अछि। दूनूक बात सुनेबाक बाद वाचक अन्हर छलाँग नहि, देखल-सोचलक आधारपर अगिला पयर धरैत अछि।

जे डगमग अछि ओ चिन्हब आ जे मजबूत अछि ओ धरब—एहिसँ कविता संशयकेँ निर्णायक शत्रु नहि मानैत। सभ प्रश्न एकहि बेर मेटब असम्भव अछि; तथापि प्राप्त प्रमाणक अनुसार काज करब आवश्यक। एतय विश्वासक उपयोग प्रवासक पुल पार करबमे अछि, जकर सापेक्ष सफलता अन्तमे देखाइत अछि। ई प्रत्यक्ष सुरक्षा-जाँचक अनदेखी करबाक अनुमति नहि।

पार पहुँचि पुलक काँपब याद रहैत अछि; सफलता पिछला अनिश्चितताक इतिहास नष्ट नहि करैत। ‘अवश्य होयत?’मे बीआ रखबाक सङ्ग पानिक व्यवस्था छल; एतय जोखिमक बीच प्रमाण-सहायित कदम उठायब। दूनू कविता विवेक आ साहसक संगति देखबैत अछि, मुदा पहिल भविष्यक अनिश्चितता आ दोसर वर्तमानक भौतिक जोखिमपर केन्द्रित अछि।

आइक पूब लाल अछि आ चिड़ै उड़ैत अछि। वाचक एहि परिचित भोरक आधारपर अगिला भोरक अपेक्षा करैत अछि, मुदा पुनरावृत्त घटनाक लम्बा इतिहास आगत घटनाक अनिवार्य प्रमाण नहि। ‘काल्हिक अनखुल दुआर / आइक गिनतीसँ नहि खुलैत’क दृश्य अपेक्षा आ निश्चितताक अन्तरकें अत्यन्त सघन बनबैत अछि।

रचना अतिशय संशयमे ठमकैत नहि; वाचक अगिला भोर लेल अन्न रखैत अछि। एहि सँग ई स्वीकार अछि जे अपन दावासँ अगिला सूर्य नहि बनबैत। अनुभवजन्य अनुमानक व्यावहारिक उपयोग आ ओकर प्रमाणगत सीमा संग रहैत अछि। भोरक नित्य दृश्य भावी भरोस बढ़बैत अछि, मुदा भोरक उत्पत्तिक कारण-व्यवस्थाक वैज्ञानिक व्याख्या कविता प्रत्यक्ष प्रस्तुत नहि करैत।

‘अवश्य होयत?’मे बरखाक पुनरागमन आ बीआ रखबाक प्रश्न छल; एहि ठाम सूर्यक परिचित क्रमक माध्यमसँ अधिक सामान्य भविष्य-बोध अछि। रचनाक शब्द ‘आशा’ आ ‘अज्ञात’कें अन्तमे बराबर स्थान दैत अछि। प्रमाणक कमी मानलासँ मानवीय तैयारी बेकाम नहि, बल्कि अधिक उत्तरदायी बनैत अछि।

१६९. सम्भवक खिड़की — कल्पनात्मक असाधारणता आ तार्किक विरोध

मोनमे ‘हरियर चान’ गढ़ला पर कल्पनाक दृश्य बदलैत अछि, बाहरी आकाश नहि। एहि पहिल उदाहरणमे असामान्य दृश्य कल्पनायोग्य अछि, भले वास्तविकता ओहि रूपमे नहिएँ हो। तकर बाद गोल होइतहुँ गोल नहि होयबाक आकार गढ़बाक प्रयासमे शब्द अपनहि अर्थसँ टकराइत अछि। कविता असम्भाव्य परिस्थिति आ आत्मविरोधी वर्णनक अन्तर पर विचार करैत अछि।

‘अनहोनी आ असम्भवक बीच / सूक्ष्म रेखा’क पाँति सामान्य आदतसँ भिन्न सम्भावना आ अर्थगत असंगतिक भिन्नता सुझबैत अछि। कतेक घटना नहि घटल अछि, एहि कारणे सिद्ध रूपेँ असम्भव नहि; मुदा परस्पर विरोधी परिभाषा प्रस्तावकेँ स्पष्ट करबाक बाध्यता आनैत अछि। कवि कल्पनाकेँ रोकैत नहि, ओकर बौद्धिक व्याकरण परखबैत अछि।

अन्तिम खिड़की खोलि हवा आनब विचारक विस्तारक बिम्ब अछि, तखनहुँ ‘जे अपनहि घर तोड़ैत छल’ ओहि बोलक जाँचबाक सावधानी बचल अछि। ‘काल्हिक भोर’क अनुभवजन्य अनिश्चिततासँ एहि पद्यक तार्किक प्रश्न अलग अछि। दुनूकेँ एकहि प्रकारक निश्चय-अनिश्चय मानब तर्कगत भ्रम होयत। कविता संक्षिप्त होइतहुँ ई भेद प्रत्यक्ष बनबैत अछि।

१७०. एहि क्षणक ताप — अनुभूतिक निश्चय आ बाह्य कारणक अनुमान

अन्हारमे आगि देखाइत नहि, मुदा हथेलीक लग तपन अनुभव होइत अछि। वाचक आगिक निश्चित पहिचानक दावा नहि करैत, केवल गरमीक वर्तमान अनुभव स्वीकार करैत अछि।
‘कारणक नाम बदलि सकैत छल, / पहिचानक चूक सम्भव छल’ पाँति अनुभव आ ओकर कारणक बीचक दूरी सुरक्षित रखैत अछि।

ई पद्य संवेदनाक तत्काल उपस्थितिक बोधकेँ बाह्य वस्तुक विवरणक बराबर नहि मानैत। तपन महसूस होयब एक बात, ओकर स्रोत आगि अवश्य होयब दोसर। एहिसँ ज्ञानक दू स्तरक आलोचना उभरैत अछि। अनुभव जतेक तीव्र हो, गलत कारण बतायब सम्भव अछि; ताहि लेल वाचक बाहरी दावाकेँ अगिला परीक्षणक अधीन राखैत अछि।

‘ओकर कथा जाँचि कऽ कहब, / अनुभूति एतहि जागल अछि’ कविताक संयत अन्त अछि। ‘फेरसँ ताकू’मे बालुकेँ पानि बुझबाक दृश्यभ्रम सुधारल गेल; एतय कारण निर्धारित करबाक पहिने अनुभवक सीमित कथन कएल गेल अछि। एहि भिन्न दृष्टान्तसभसँ संग्रह प्रत्यक्ष, अनुभवक उल्लेख आ अनुमानक अन्तर सूक्ष्म करैत अछि।

१७१. जागल की सपना? — सर्वसंशय आ साझा व्यवहारक कसौटी

स्वप्नमे पत्रक अक्षर एतेक स्पष्ट छल जे ओ जागरणक जकाँ लागल; उठला पर हाथ रिक्त अछि, मोनमे ताप बचल। एहि अनुभवसँ वर्तमान जागरणक पहिचानपर प्रश्न उठैत अछि। कवि स्पष्ट स्वप्न-भ्रमक आधारपर सभ वास्तविक अनुभव झूठ कहैत नहि; ओ प्रमाणक कसौटी खोजब चाहैत अछि।

दुआरक थाप, पानिक छुअन आ बोलक उत्तर—अनेक अनुभव परस्पर जुड़ि एक साझा व्यवहार बनबैत अछि। जागरणक अर्थ एहि निरन्तर अन्तर्क्रिया सँ उभरैत अछि। तथापि कविता अन्तिम अधिभौतिक निश्चितताक दावा नहि करैत; झींगुर जकाँ एक महीन प्रश्नक स्वर बचल रहैत अछि। विवेकपूर्ण जीवनक काज एहि स्वरक बीच चलैत रहैत अछि।

‘भोरक खुलल आँखि’मे सपनाक भयक असर आ वास्तविक घरक फेर चिन्हब प्रमुख छल; एहि पद्यमे जागरणक सामान्य प्रमाणप्रणाली विषय बनैत अछि। दूनू मे जागरण बहसक समाप्ति नहि। काव्यक प्रभाव तर्कक प्रश्न आ पानि-दुआरक ठोस व्यवहारकें विरोधी नहि बनबैत सहयोगी रूपमे देखायब अछि।

अन्हार गलीमे मुख देखबासँ पहिने पदचाप चिन्हल जाइत अछि। दिनमे ओहि चालकेँ व्यक्तिक मुख आ नामक संग जोड़ल जाइत अछि। कखनो रूप स्वरक पहिचान करबैत अछि, कखनो स्वर रूपकेँ—ई द्विदिशा पहिचानक निर्माणमे अनेक चिन्हक योगदान देखबैत अछि। ज्ञान एकल पद्धतिक यान्त्रिक क्रम नहि।

गन्धसँ बगिया याद पड़ब आ बगियासँ गन्ध स्मृतिमे जागब ज्ञानक परस्पर-आश्रयी प्रक्रिया अछि। एहिमे अनुभूतिक क्रम परिस्थितिक अनुसार बदलि सकैत अछि; पहिल चिन्ह अनिवार्यतः सार्वभौमिक पहिल नहि। एतय प्रत्येक पहचानक स्वतन्त्रता आ परस्पर सम्बन्ध दुनू जाँचल गेल अछि।

‘एकल रेखासँ जग नहि बनल’क निष्कर्ष पहिचानक बहुसूत्री स्वरूपक प्रतीक अछि। ‘नामक ओहि पार’मे आमक स्वाद, गन्ध आ छुअन एक वस्तुक अनुभव बढ़बैत छल; एहि पद्यमे विभिन्न चिन्हसँ व्यक्ति अथवा स्थान पहिचानबाक क्रम खुलैत अछि। काव्य-संरचनामे आवृत्त ‘कखनो’ प्रयोगक अन्तरकेँ लय दैत अछि।

१७३. चाहीक स्वर — तथ्य-वर्णनसँ नैतिक निर्देशन धरि

एक हाथ दोसरकेँ धक्का दैत अछि, आँखि घटना देखैत अछि, वाचक कहैत अछि ‘एना नहि करू’। एहि तीन क्रममे घटना, प्रत्यक्ष बोध आ नैतिक आदेश अलग देखाइत अछि। जे भेल तकर विवरण, जे होयबाक चाही तकर आग्रह नहि—कविता एहि आधारभूत भेदकेँ छोट उदाहरणमे प्रत्यक्ष बनबैत अछि।

‘केवल नापसँ मान नहि भेटत, / केवल आँकसँ नेह नहि’क विचार मूल्यनिर्णयकेँ तथ्यसूचीक अविकसित विस्तार मानबासँ रोकैत अछि। मुदा कवि अपन आग्रह लेल कारण देबाक जिम्मेदारी सेहो मानैत अछि। नैतिक दाबीक औचित्य तर्कसँ विमुख भावना नहि; चोटक बोध, पीड़ाक साक्ष्य आ उचित व्यवहारक विवेकसँ उभरैत अछि।

अन्तमे घटना लिखब आ चोट सम्हारब अलग काम अछि। पूर्वार्धक द्रष्टा उत्तरार्धमे सहभागी बनैत अछि। ‘बराबरक थारी’मे मानक भूख पहचानबाक सामाजिक कार्य छल; एहि पद्यमे नैतिक आदेशक भाषिक रूप अधिक सूक्ष्मता सँ सामने अबैत अछि। वर्णन आ मूल्यक भेद राखि जिम्मेदारी स्वीकार करब कविता केँ स्पष्ट आलोचनात्मक धरातल दैत अछि।

१७४. अहाँक पीड़ा — अनुभूतिक निजता आ सहानुभूतिक व्यवहार

दोसर व्यक्ति क माथ क हाथ, थाकल नजरि, टूटैत बोलक लय आ चुपचाप सहब—एहि चिन्हसभसँ वाचक पीड़ाक अनुमान करैत अछि। मुदा ओ स्पष्ट मानैत अछि जे दोसरक भीतरक ठेस अपन देहमे अक्षरशः नहि पबैत अछि। एहिसँ सहानुभूतिक प्रश्न अनुभवक सम्पूर्ण समानताक भ्रमसँ मुक्त होइत अछि। अलग व्यक्तिक पीड़ा स्वीकार करब सहायता नहि करबाक बहाना नहि।

‘सम्पूर्ण पीड़ा अपन होअय, / तखने नेह करब, ई नहि’ एहि कविताक नैतिक केन्द्र अछि। दोसरक विशिष्ट अनुभवक सीमा मानितहुँ लग बैसि पानि देनाइ आ बात सुननाइ सम्भव अछि। एतय करुणा स्वतः सर्वज्ञता नहि; सूक्ष्म अवलोकन आ उत्तरदायी उपस्थिति अछि। शब्दक बीचक विरामक अर्थ कखनो खुलल कथनसँ बेसी जनबैत अछि, मुदा गलत अनुमानक सम्भावना सेहो बचल रहैत अछि।

‘आवाजक पुल’मे पियासक स्वरक उत्तर लोटा छल; एहि पद्यमे पीड़ितक अनकहल कष्टक उत्तर सहानुभूतिपूर्ण उपस्थिति अछि। दूनू पद्य ‘दोसर’क अनुभवक अपूर्ण उपलब्धताक बावजूद सम्बन्धक नैतिकता स्वीकार करैत अछि। अलग देहक दूरी रहितहुँ सहभागिताक ठाम बनब कविता लेल निष्कर्ष नहि, चलैत कर्म अछि।

१७५. बोलक बसात — जनभाषाक श्रम, विनिमय आ भरोस

भोरक हाँकसँ जागैत गाम, हाटक सम्बोधन आ मान-मनुहारक प्रवाह भाषा केँ सामूहिक जीवनक हवा बनबैत अछि। बोल कखनो खेतक बँटवारा करबैत अछि, कखनो हाथ मिलबैत अछि। एहि दुनू उदाहरणमे भाषाक सामाजिक परिणाम देखबैत कवि भाषा मात्र मनक विचारक परिवाहक नहि मानैत; ओ सम्पत्ति, सम्बन्ध आ भरोसक काममे भाग लेइत अछि।

दूरक यात्री वचनक भरोसपर घर घुरैत अछि। ई बिम्ब वादाक नैतिक भारक उदाहरण अछि। वाचकक निजी स्वर सेहो सभक श्रम-स्मृतिसँ बनैत अछि; अपन भाषा आन लोकक कर्मक योगदान बिना संभव नहि। लोकभाषा एतय ग्राम्य सजावट नहि, सामाजिक इतिहासक जीवित अभिलेख अछि। एकर सीमाक संकेत एहि ठाम बचल अछि जे बोलसँ खेत बँटबाक प्रसंग निस्सन्देह बराबर न्यायपूर्ण होयत एहन मानल नहि जा सकैत।

‘बोलक घरमे रहैत-रहैत / हम बोलक देहरी देखलहुँ’मे भाषा सभक संसार तक पहुँचबाक माध्यम आ ओकर सीमा एक संग अछि। ‘बोलैत आँगन’क सम्बोधनशील घर एतय पूरा गामक आर्थिक-नैतिक जीवन धरि विस्तृत होइत अछि। भाषा साफ रखबाक काज शब्दकोशीय शुद्धिसँ अधिक पारस्परिक उत्तरदायित्वक संकेत बनैत अछि।

वाचक न्याय हाटमे थारी जकाँ नहि पबैत अछि; समय खेतमे गाछ जकाँ नहि लगैत अछि। मुदा बँटबाराक समय न्याय आ बीआ छिटबाक ऋतुमे समयक अर्थ प्रकट होइत अछि। एहि दृष्टान्तमे अमूर्त शब्दक अर्थकेँ ठोस वस्तुक जकाँ देखब-धराबक अपेक्षाक सीमा स्पष्ट अछि। वस्तु नहि भेटबाक अर्थ जीवनमे ओहि विचारक अभाव नहि।

भाषाक जोड़ आ कर्मक भेदसँ अर्थ बनैत अछि; शब्दक प्रयोग-स्थान पहिचानब एहि लेल महत्त्वपूर्ण अछि। कविता न्याय वा कालक सम्पूर्ण तत्त्वमीमांसा प्रस्तुत नहि करैत। ओ ई व्यावहारिक प्रश्न उठबैत अछि जे एक शब्द कखन निर्णय, कखन अनुभव आ कखन सामाजिक सम्बन्धक नाम अछि। प्रश्नक दार्शनिक बल एतय उदाहरणक साधारणतासँ उपजैत अछि।

‘नक्शाक बाहर’मे घरक नक्शासँ मायक हँसी नहि भेटल; एहि पद्यमे न्यायक थारी न भेटलाक बादो बँटबारामे ओकर वास्तविक नैतिक प्रासंगिकता देखाइत अछि। दूनू पद्य अर्थकेँ प्रत्यक्ष वस्तुक अनुपस्थितिमे सम्पूर्ण भेटबासँ रोकैत अछि। शब्दक घरक कओन दुआर कतय खुलैत—ई अन्तिम जिज्ञासा उपयोगी भाषिक सजगता बनैत अछि।

१७७. सीखल स्वर — भाषिक अर्जनक सामाजिक आ सर्जनात्मक आधार

नवजात जन्मक घड़ी पूर्ण भाषा लऽ कऽ नहि अबैत; रोअब, हँसब, सुनब आ सम्बोधन चिन्हबक क्रमसँ भाषा-अनुभव बनैत अछि। माय, दादी आ हाटक ध्वनि दुनू घरेलू आ सार्वजनिक शिक्षाक स्रोत अछि। कवि भाषा सीखबाक प्रक्रियाकेँ एकल अध्यापकक पाठ नहि, निरन्तर सामाजिक संसर्गरूपमे देखबैत अछि।

नन्हक ध्वनि-भेद बुझला पर अर्थक पहिल पाँखि फूटैत अछि। किछु नियम सुनायल बिना सीखब आ भूल कऽ नब प्रयोग बुझब सामूहिक व्यवहारक महत्त्व देखबैत अछि। ‘सीमित बोलक नन्हक झोरा’ सँ नव कथ्य निकलैत अछि; प्राप्त शब्द-सामग्रीकेँ बच्चा सृजनशील ढंगसँ जोड़ैत अछि। एहि उदाहरणक आधारपर सार्वभौमिक भाषिक अर्जन-सिद्धान्त घोषित करब मूल पाठसँ आगाँ बढ़ब होयत।

‘बजबाक पहिल दिन’मे एक नन्हक नाम सीखबाक क्षण केन्द्र छल; एहि पद्यमे सुनैत-सुनैत विभिन्न सन्दर्भमे नियम ग्रहण करबक दीर्घ प्रक्रिया अछि। व्यक्तिगत सृजन आ सामाजिक परम्पराक संगति एहि दोसर रचनाकेँ अलग महत्त्व दैत अछि। भाषाकेँ स्थिर विरासत मानबाक बदला बदलैत प्रयोगक जीवित साधन मानल गेल अछि।

वाचक अपन मोनमे एक चिन्ह बनबैत अछि, जकर अर्थ केवल स्वयं बुझैत अछि। अगिला दिन ओ पूछैत अछि—अर्थ बदलल आकि ओकर स्मृति चूक गेल? जखन अर्थक जाँच लेल कोनो सार्वजनिक कसौटी नहि, तखन ठीक आ बेठीकक अन्तर पहिचानब कठिन भऽ उठैत अछि। कविता निजी मनक वास्तविकता नहि नकारैत; जाँचक नियमक समस्या उठबैत अछि।

गामक चौकपर बोल खुलैत अछि, लोक एक-दोसरक भूल चिन्हैत आ नियम सुधारैत अछि। साझा व्यवहारमे शब्दक प्रयोग आ सुधारक अवसर रहैत अछि। एही कारण अपन मोनक नीरव संवादोमे ‘एक सम्भव श्रोता’ रहबाक कथन महत्त्वपूर्ण अछि। सार्वजनिक भाषा भीतरक विचारमे उपस्थित होइत अछि; ई भीतरक जीवन शून्य कहबाक निष्कर्ष नहि।

‘खेलक बोली’मे पाथरक भूमिका साझा खेलक नियमसँ बदलैत छल; एहि पद्यमे अर्थक जाँच आ भूल-सुधारक सामाजिक शर्त प्रमुख अछि। दूनू पद्यमे प्रयोगक महत्त्व अछि, मुदा एक खेलक वस्तु, दोसर निजी संकेतक मानदण्ड जाँचैत अछि। रचनाक विचारक शक्ति नन्हक ‘काल्हि’क स्मृतिसंशयसँ आरम्भ भऽ विशाल भाषिक प्रश्न धरि पहुँचब अछि।

१७९. फूल आ फीता — शुद्ध मापन आ स्नेहक अप्रमेय आकार

दर्जी कपड़ा काटबाक लेल फीता तानैत अछि; ठीक माप ओहि काजक आवश्यकता अछि। घरमे मायक आँचरक घेरक माप अलग अछि। कविता गणनाक विरोध नहि करैत; गणना जकर लेल कएल जा रहल अछि ओहि कामक भेद देखबैत अछि। वस्त्रक लम्बाइ आ आश्रयक स्नेहकें एकहि संख्यात्मक इकाइमे समेटब उपयुक्त नहि।

एक बोलमे एके अर्थक स्पष्टता आवश्यक भऽ सकैत अछि, दोसर बोलक अनेक छायामे नेहक गरमी बसैत अछि। तथ्यात्मक सुस्पष्टता आ भावात्मक सम्भावनाक दूनूक अपन औचित्य अछि। गीतक वक्र लय आ अंकक सोझ रेखाक विरोध बिम्बक काव्यगत उपयोग अछि, गणित सदा निरस वा कला सदा अस्पष्ट अछि एहन तथ्यदाबी नहि।

‘फीता कपड़ाक माप देलक, / फूल किनारीमे गन्ध भरलक’ पद्यक समेकित निष्कर्ष अछि। ‘माप आ मापल’मे मापकर्ताक सिद्धान्तगत प्रश्न उठत; एहि पद्यमे मापकक प्रयोग-उद्देश्य पहिने स्थान पबैत अछि। काव्यक मूल्य सही बनाओल वस्तुक सङ्ग प्रिय बनल वस्तुक अलग सार्थकता मानयमे अछि।

बाटक मोड़पर वाचकक बदला कियो पयर धरयवला नहि। दुनू दिशामे सम्भावना अछि, किन्तु चुनबाक काज ओकर अपन अछि। निर्णय नहि कऽ ठाढ़ रहबो चुनबाक एक रूप बनि सकैत अछि—‘ठाढ़ रहबाक निर्णयमे सेहो / अपनहि हाथक छाप’ पाँति भागबाक सूक्ष्म बहानाकें चिन्हबैत अछि।

‘स्वतन्त्रता फूलक हलुक पाँखि नहि, / ओ पयरक सङ्ग चलैत भार’मे स्वतन्त्रताकें केवल अवसर अथवा इच्छापूर्तिक उत्सव नहि मानल गेल। निर्णयक परिणाम व्यक्ति धरि सीमित नहि रहैत, दोसर लोकक जीवनपर सेहो पड़ैत अछि। एहि कारण व्यक्तिगत अधिकार आ सामाजिक जिम्मेदारीक अविच्छिन्नता कविता लेल मुख्य कसौटी अछि।

आकाश खुलल रहितहुँ धरतीक ‘उत्तर’ हाथमे धेने चलब कल्पनाक स्वच्छन्दता आ कर्मक भौतिक परिणामक अन्तर देखबैत अछि। ‘जियबाक कारीगरी’मे जीवनक आकार कर्मसँ बनैत छल; एहि पद्यमे निर्णयक भारक नैतिक तीक्ष्णता अधिक अछि। स्वतन्त्रताक सामाजिक शर्तक जटिलता एतय पूरा नहि खुलैत, मुदा बहानाक आलोचना मार्मिक अछि।

१८१. साँचासँ बाहर — पहिचानक सामाजिक घेरा आ आत्मनिर्माण

‘अहाँ एहन होयब’ कहि पहिनेसँ खींचल घेरामे वाचक अपन श्वासक तंगी अनुभव करैत अछि। जाति आ पेशाक पहचान समाजमे एक व्यक्तिक सम्भावना सीमित करयवला साँचा बनि सकैत अछि। कवि कहैत अछि जे मनुष्य केवल जातिक नाम नहि, केवल काजक चादर नहि। एहि प्रतिरोधमे व्यक्तिगत बहुलता आ सामाजिक वर्गीकरणक तनाव उपस्थित अछि।

कविता परिस्थितिक देबाल अस्वीकार नहि करैत; ‘तैयो भीतर किबाड़ रहय’ कहि सीमाक भीतर उपलब्ध चुनाव पर ध्यान दैत अछि। ई दृष्टि संरचनागत बन्धनकेँ कोनो कल्पनासँ हटाओल गेल मानि नहि चलैत। व्यक्तिगत उत्तर जतेक सम्भव अछि ततेक चुनबाक आग्रह अछि। ताहि लेल एहि पद्यकेँ केवल आत्मविश्वासक प्रेरक नारा मानब ओकर सामाजिक आलोचनाकेँ हलुक करब होयत।

आइक रूप काल्हि बदलि सकैत अछि, मुदा आइक भार वाचक अपन मानैत अछि। ‘अपन पयरक भार’क चुनाव-उत्तरदायित्व एहि ठाम जाति-पेशा सम्बन्धी पूर्वनिर्धारणक विरोधसँ सामाजिक सन्दर्भ पबैत अछि। पद्यक विशिष्ट बल अछि कि ओ संरचना आ कर्तृत्व दूनूक अस्तित्व मानैत अछि; पूर्ण मुक्त इच्छाक मिथक नहि गढ़ैत।

१८२. खुलल आकाशक नीचाँ — अनिर्णीत विश्वदृष्टिक बीच कर्तव्य

ऊपर तकला पर मौन आकाश भेटैत अछि, नीचाँ तकला पर भूखल मनुष्य। एहि स्थानिक विरोधमे दार्शनिक अनिश्चितता आ उपस्थित नैतिक आवश्यकता एकहि क्षणमे रखल गेल अछि। आकाशक निःशब्दता ओकर सभ रहस्य बुझि गेलाक प्रमाण नहि; वाचक अपन सीमित ज्ञानक आधारपर अन्तिम मुहर लगेनाइ अस्वीकार करैत अछि।

कियो एखन सहायता माँगि रहल अछि। एहि सत्यक उत्तर देबाक लेल दूरक आध्यात्मिक प्रश्नक समाधान स्थगित करब आवश्यक नहि। विश्वास रहय वा प्रश्न रहय, ‘मनुष्यता हाथसँ होअय’ पाँति कर्मक प्रत्यक्ष कसौटी बनबैत अछि। ई धारणा धर्मक निश्चित नकार नहि, नैतिक जिम्मेदारीकेँ सैद्धान्तिक निर्णयपर पूर्णतः निर्भर नहि करबाक आग्रह अछि।

‘अञ्जुरीक उजास’मे श्रद्धा भूखलकेँ अन्न दैत समाप्त भेल छल; एहि पद्यमे विश्वदृष्टिक संशय रहलो पर सहायता कएल जा सकैत अछि। दुनू पद्यक साझा सूत्र भूखल व्यक्तिक सन्निकटता अछि, मुदा प्रेरणाक स्रोत अलग अछि। ई भेद संग्रहक बहुवचन दार्शनिक दृष्टिक महत्वपूर्ण संकेत अछि।

१८३. देहक घेरसँ — शरीरक दृश्य रूप आ अनुभूत अन्तरंग

पोखरिक जलमे देखल मुख बाह्य देहक दृश्य रूप अछि; आँखि मुँदि साँस सुनला पर देहक जील भीतरक अनुभव खुलैत अछि। एहि दू स्थिति बीच कवि देहक वस्तुरूप आ अनुभवरूपक अन्तर चिन्हैत अछि। तकर बाद ध्यानक एक क्षणमे देहक ‘घेरा’ हलुक होइत अछि, मुदा मूल पाठ स्पष्ट करैत अछि—न देह नष्ट, न निन्न पड़ल।

‘जे अपनाकेँ वस्तु बनबैत छल, / ओहि पकड़सँ किछु मुक्ति’ मे आत्मबोधक प्रश्न अछि। एतय ‘मुक्ति’ देहक नाश अथवा आत्माक भौतिक देहसँ पूर्ण अलग अस्तित्वक प्रमाण नहि; अपनासँ अत्यधिक वस्तुरूपेँ चिपकल पहिचानक शिथिलता अछि। देहक अनुभवकेँ ध्यानक माध्यमसँ नब अर्थ भेटैत अछि, जकरा आलंकारिक आ प्रत्यक्ष दू स्तर पर पढ़ल जा सकैत।

घुरि धरतीपर पयर रखलापर देहक मान ‘आर बढ़ल’। ई अन्त शरीर-विरोधी तपस्या नहि, शरीरक प्रति नब सम्मान बनबैत अछि। ‘देखि रहल छी’क आत्मपरावर्तन एतय देहक द्वैतिक अनुभवसँ अलग प्रविष्टि पबैत अछि। अपनासँ कनेक दूरी बनाकऽ अपन लग सहजे पहुँचनाइ एहि पद्यक विरोधाभासी किन्तु सुसंगत भाव-संरचना अछि।

१८४. जगतक सङ्ग जागब — ज्ञान, वस्तु आ सामाजिक उत्तरदायित्वक परस्परता

‘हम आँखिमे संसार अनलहुँ, / संसार हमरा घेरने छल’—आरम्भक एहि उलट समानान्तर वाक्यमे आँखि केवल बाहरी दृश्य ग्रहण करैत अंग नहि रहि जाइत अछि। वाचकक विचार संसारसँ बनैत अछि, आ ओकर अनुभवो संसारक भीतर घटैत अछि। भीतर आ बाहरक दूरी घटैत अछि, मुदा दुनूक भिन्नता मेटैत नहि। ‘पाथरक ठोकर’क उल्लेख एकांगी आत्मनिष्ठ व्याख्याकेँ जाँचैत अछि: व्यक्तिक मनक कल्पना मानलासँ पाथरक प्रतिरोध समाप्त नहि होइत।

ओकर उलट ‘केवल पाथर सभटा कहितहुँ / पीड़ाक अर्थ खुलैत नहि’ कहि कविता वस्तुक भौतिक अस्तित्व आ पीड़ाक अर्थानुभवक बीचक भेद बचबैत अछि। ई दोहरा निषेध शिल्पक मुख्य साधन अछि। एक दिस मोनकेँ सर्वेसर्वा बनयबाक आग्रह ठमकैत अछि, दोसर दिस सम्बन्ध-विहीन वस्तुगत तथ्यकेँ पूरा मानवीय यथार्थ मानबाक प्रवृत्ति। एहि कारण रचनाक दार्शनिक स्वर कोनो सुस्पष्ट सम्प्रदायसँ बेसी आलोचनात्मक विवेकक स्वर अछि।

‘भूख, श्रम, इतिहास ठाढ़ छल’क संग वाचकक निजी इच्छा सामाजिक परिस्थिति भीतर उतरैत अछि। अन्तिम ‘सम्बन्धक भार स्वीकारलहुँ’ जागरणक नैतिक पुनर्परिभाषा अछि। ‘देहक घेरसँ’मे अपन देहकेँ वस्तु बनाकऽ देखबाक सीमा छल; एतय व्यक्ति अपन निजी चेतनाकेँ सम्बन्धहीन मानबाक भूलसँ बाहर निकलैत अछि। सामाजिकता काव्यमे निष्कर्ष मात्र नहि, बाट, पाथर आ भूखक क्रमिक दृश्यसभसँ अर्जित अर्थ बनैत अछि।

१८५. हथेलीक पाथर — स्पर्शक प्रत्यक्ष, परोक्ष पक्ष आ वस्तुक आग्रह

पाथर हथेलीपर राखल गेल अछि; रंग आँखिक माध्यमसँ, ठण्डक त्वचाक माध्यमसँ आ भार झुकैत हाथक माध्यमसँ परिचित होइत अछि। एहि तीन प्रमाणात्मक अनुभूतिक मेलमे ‘वस्तु’ कोनो अमूर्त संज्ञा नहि रहल। ‘ओ हमर अनुभव बनल’क बाद तुरन्त ‘मुदा पाथर केवल मनक / कल्पित आकार नहि रहल’क प्रतिवाद अछि। कवि अनुभूतिक आत्मगत पक्ष मानितहुँ वस्तुक स्वतन्त्र प्रतिरोध बचबैत छथि।

‘ओकर अनदेखल पाछाँक तल / एखनो आँखिसँ दूर छल’ विशेष सूक्ष्म बिम्ब अछि। देखल भागकँ सम्पूर्ण वस्तु मानल जाए तँ ज्ञानक दावा अधूरा रहत। पाथर घुमेला पर नव पहलू खुलैत अछि, तथापि पहिने देखल सतह मेटाइत नहि। एहि परिवर्तनमे नया साक्ष्य पहिनुक अनुभवक शून्यीकरण नहि, ओकर विस्तार करैत अछि। समग्रताक अनधिकार दावा नहि करब, काव्य-वाचकक विवेकशील उपलब्धि अछि।

‘जगतक सङ्ग जागब’क पाथर प्रत्यक्ष ठोकरक प्रतिरोध छल, एहि ठाम ओ एक विस्तृत ज्ञानात्मक वस्तु अछि। एहिसँ दू कविताक दर्शन-सम्बन्धक समानता आ शिल्पक भिन्नता स्पष्ट होइत अछि: पहिल सामाजिक प्रसंगमे वस्तुक जिद देखबैत अछि, दोसर हथेलीक निकटतम अनुभूतिमे ज्ञानक सीमा। छोट चार स्तबकक क्रम—छुअन, मनन, अदेखल पहलू, विनय—भौतिक बिम्बकँ दार्शनिक वादमे बिना बाहरी सूत्र थोपने रूपान्तरित करैत अछि।

१८६. एकलसँ सङ्ग — स्वतन्त्र कर्तृत्व आ सामूहिक साधनक आवश्यकता

वाचक बाट चुनबाक स्वतन्त्रता घोषित करैत अछि, मुदा ओहि बाटपर बाढ़ि ठाढ़ अछि। एकल साहस पर्याप्त नहि, किएक तँ पार उतरबाक नाव उपलब्ध नहि। एहि ठाम स्वतन्त्र इच्छा आ भौतिक सम्भावनाक अन्तर प्रत्यक्ष दृश्यसँ प्रकट होइत अछि। ‘बाँस, रस्सी, हाथ जुटल’क तीन सदस्यीय क्रम सहयोगकेँ केवल सुमधुर भावना नहि, आवश्यक सामग्री आ संयुक्त श्रम बनबैत अछि।

दोसर लोकक आगमन निजी संकटकेँ सामूहिक अनुभवमे बदलैत अछि। ‘जे दुःख हमर एकल लागल, / सभक जीवनसँ जुड़ल भेटल’ पाँतिक ‘लागल’ आ ‘भेटल’क अन्तर ज्ञानक परिवर्तन जनबैत अछि। वाचकक अनुभव पहिने अकेलापनक रूपमे छल; मिलनपर ओकर सामाजिक कारण आ साझा समाधान दृश्य होइत अछि। बाढ़ि प्राकृतिक अवरोध रहैतहुँ नाव निर्माणक काज मानवीय परिवर्तनक सम्भावना बचबैत अछि।

कविता समष्टिक महिमामे व्यक्तिक स्वर विलीन नहि करैत: ‘हमर चाहक स्वर नहि मेटायल, / समवेत स्वरमे ठाम भेटल’। ई संतुलन रचनाक उल्लेखनीय नैतिक उपलब्धि अछि। ‘अपन पयरक भार’मे चुनावक अकेल उत्तरदायित्वक प्रश्न छल; एहि कविता आगू बढ़ि ओहि चुनावक साकार होयबाक सामाजिक साधन देखबैत अछि। अन्तिम ‘रुकल यात्राकेँ नाव भेटल’ आरम्भक असमर्थताक शिल्पगत उत्तर अछि; अतः समापन उपदेशसँ नहि, परिवर्तित घटनासँ बनैत अछि।

१८७. समयक पायल — स्मृति, कलात्मक पुनर्पाठ आ समयक अनेकता

‘पुरान धुन नब स्वरमे बाजल’क आरम्भ स्वयमेव विरोधाभासी लगैत अछि, मुदा काव्यानुभवमे पुरान सामग्री नव प्रदर्शनसँ बदलैत अछि। एक श्रोता बीतल दिनक पुनरागमन सुनैत अछि, दोसर अनदेखल भोरक आहट। ओही धुनि पर दू तरहक कालबोध जन्मैत अछि। एहिसँ रचनाक ‘समय’ केवल घड़ीक निश्चल माप नहि, वर्तमान अनुभूतिक संग स्मृतिक सक्रिय सम्बन्ध अछि।

‘पाथरक मूरत स्थिर रहल, / देखनिहारक आँखि बदलल’क केन्द्रमे वस्तु आ दृष्टिक ऐतिहासिक परिवर्तन अछि। एहि उदाहरणमे शिल्प आ अर्थक बीच सावधान भेद अछि: मूरत यथावत्, ओकर अनुभव बदलैत। ‘तिथि गनैत ठमकि गेलहुँ’ कहलाक क्षण गिनतीसँ स्मृतिक लय दिस घूमब अछि। एक सुर वाचकक भीतर बीतल घटनाक स्पन्दन जगबैत अछि; स्मृति एतय निष्क्रिय नकल नहि, नव प्रत्यय बनैत अछि।

‘पायल’क रुनझुन समयक अमूर्त गतिमे श्रवणीय देह दैत अछि। अन्तक ‘अजर जियबाक खेल’कैँ वास्तविक अमरत्वक ऐतिहासिक दावा मानब उचित नहि; ई कलाक नवग्रहणशीलताक ध्वनि अछि। ‘काल्हिक भोर’मे भविष्यक अनुमान अनिश्चित छल; ‘समयक पायल’मे अतीतक नव अनुभूति केन्द्रमे अछि। एहि तुलनामे बीतल आ आगत समयक प्रति संग्रहक दू अलग आलोचनात्मक दृष्टि पहचानल जा सकैत अछि।

१८८. अनगिन ढङ्गक फूल — कलाक माध्यमभेद आ सौन्दर्यक साझा अवकाश

‘गीत कानमे फुलायल’, ‘रंग आँखिमे खिलल’ आ नाचक ‘वक्र गति’—तीन संवेदनात्मक माध्यमक प्रस्तुति फूलक साझा क्रियासँ जुड़ैत अछि। मुदा साझापन समानता नहि। गीतक कालिक बहाव, चित्रक दृष्टिगत एकाग्रता आ नाचक देहगत गति अपन-अपन ढङ्गसँ अर्थ देबैत अछि। कविताक आरम्भ स्वयं एक लघु कलाशास्त्रीय मानचित्र अछि, जतय अवधारणाक पहिने स्वर, रंग आ गति अबैत अछि।

‘सभकेँ एकहि डोरीसँ बान्हब’ आ ‘सभकेँ सर्वथा दूर करब’—ई दू अतिशय स्थितिक निषेध अछि। पहिल विविधताक हानि, दोसर कलासभक बीच सम्भव संगतिक हानि करैत। कवि एतय न त एकल सौन्दर्य-सूत्र घोषित करैत छथि, न सर्वथा असम्बद्ध कलाक उपदेश। ‘चित्र मौनमे समय जगौलक’क रूपक दृश्य माध्यमक भीतर स्मृतिक अवधि जगबैत अछि; ‘सुर क्षण-क्षणमे रूप गढ़लक’ संगीतक बदलैत क्षणकेँ रेखांकित करैत अछि।

रचनाक अन्त ‘काजक सोझ पथ’सँ हटि अनायास चमत्कारक अनुभव अछि। उपयोगिता आ सौन्दर्यकेँ शत्रु नहि बनाओल गेल, मुदा सुन्दरक मूल्यकेँ केवल काजमे समेटबाक सीमा देखाओल गेल अछि। ‘फूल आ फीता’मे मापन आ स्नेहक भिन्न प्रयोजन उभरैत छल; एतय ई चर्चा कलाक विभिन्न माध्यमधरि बढ़ैत अछि। एकहि फूल-रूपकक बारम्बार उपयोग सहमतिक सुन्दर प्रभाव बनबैत अछि, यद्यपि रचनाक पृथक् कलारूपसभक ऐतिहासिक विशिष्टता संक्षेपमे रहि जाइत अछि।

१८९. कसौटीक उजास — परीक्षणक साधनक परीक्षण आ प्रमाणक मर्यादा

वाचक बात जाँचबाक लेल कसौटी लऽ कऽ चलैत अछि, तखन ‘कसौटीए पूछलक, / हमर भरोस कतयसँ अनलहुँ?’ ई उलटाव कविताक बौद्धिक केन्द्र अछि। जाँचक उपकरण स्वतः अन्तिम प्रमाण नहि; उपकरणक विश्वसनीयता सेहो प्रश्नक अधीन अछि। एहि कारण रचना प्रमाणक अनन्त शृंखला आ अनायास स्वीकारक बीचक कठिन स्थानमे प्रवेश करैत अछि।

‘आँखि, स्मृति, सुनल सन्देश, / अनुमानक महीन डोर’क क्रम ज्ञानप्राप्तिक एकसमान मार्ग नहि, भिन्न साधनक संकेत अछि। आँखिक प्रत्यक्ष, पुरान घटनाक स्मृति, परक कथन आ अनुमान सभ अपन सन्दर्भ आ दोषक सम्भावना रखैत अछि। कवि औपचारिक नव्य-न्यायक सूत्र प्रस्तुत नहि करैत छथि; तथापि हेतु-जाँच आ प्रमाणक सीमाक आग्रह न्यायपरम्पराक आलोचनात्मक अभ्याससँ अर्थपूर्ण तुलना आमन्त्रित करैत अछि।

‘जाँचक अन्त अन्हर मानब नहि, / ने अनन्त दौड़मे हारब’क समन्वय व्यावहारिक निर्णयक नियम देबैत अछि। ओ प्रमाण-विवादकेँ सम्पूर्ण मैटैत नहि; उपलब्ध स्पष्ट अनुभवपर सजग कदमक अनुमति दैत अछि। ‘कारणक सीढ़ी’मे धुआँ देखिकऽ आगिक अनुमान जाँचबाक आग्रह छल; एहि ठाम कसौटीक वैधतापरहि प्रतिप्रश्न अछि। आलोचनात्मक दृढ़ताक सङ्ग ई स्वीकार आवश्यक जे कविता प्रमाणमीमांसाक विस्तृत सिद्धान्त सिद्ध नहि करैत, ओ ओकर जीवनगत प्रश्न सजीव बनबैत अछि।

१९०. माप आ मापल — तराजूक पुनःपरीक्षा आ ज्ञानक सम्बन्धात्मकता

धान तौलबाक लेल आनल तराजू पुनः जाँचल जाइत अछि। ‘जे मापक छल एक क्षण पहिने, / ओकरो माप आवश्यक बुझलहुँ’—ई साधारण खेत-हाटक घटना मापनक मानदण्डक परीक्षण बनि जाइत अछि। धानक बोझ वाचकक हाथक कठिन वास्तविकता अछि; उपकरणक त्रुटि वा विचलनक सम्भावना ओहि वास्तविकताकेँ मेटैत नहि, ओकर न्यायसंगत परिमाण तय करबाक पद्धति पर प्रश्न उठबैत अछि।

‘मापल वस्तु आ मापयवला / सम्बन्धमे अपन मान पबैत’ कथनकेँ सर्वथा वस्तुनिष्ठ सत्यक अस्वीकृति मानि लेब अनुचित। कविता एतेक देखबैत अछि जे वास्तविक मापनमे वस्तु, साधन आ प्रयोगक सम्बन्ध सक्रिय रहैत अछि। ‘आँखिक समक्ष दाना चमकल, / मन ओकर समूह बनौलक’मे प्रत्यक्ष दानासभ आ मनक वर्गीकरण भिन्न, मुदा संवादशील अछि। एहि सूक्ष्म भेदमे कविता अनिश्चितताक नामपर समस्त गणना नकारैत नहि।

अन्तमे धानक बोझ आ बुद्धिक भारक युग्म काव्य-गति बन्द करैत अछि। पहिल भौतिक परिश्रम, दोसर प्रमाणक जिम्मेदारी। ‘फूल आ फीता’मे सही माप आ अमाप्य नेहक प्रयोजनभेद छल; एहि ठाम मापमे प्रयुक्त उपकरणक प्रामाणिकता प्रश्न बनैत अछि। दुनू रचनाक माध्यम घरेलू वस्तु अछि, मुदा समीक्षाक कसौटी अलग। तराजूक बिम्ब अर्थशास्त्रीय व्यवहार आ ज्ञानमीमांसाक कठिनाईकेँ एकहि दृश्यपर अवलम्बित करैत अछि।

१९१. भेटक अनेक बाट — इन्द्रियसभक आंशिक गवाही आ संगत सत्य

कटहरक गन्ध पहिने नाक पकड़ैत अछि, ओकर रंग आँखि देखैत अछि आ नरमी हाथसँ भेटैत अछि। गाछपर पाकल फल एकहि रहैत अछि, मुदा अनुभवक प्रवेशद्वार तीन अछि। ‘एक वस्तु लग तीन गवाही’क भाषा इन्द्रियक सूचनाकेँ न्यायालयक कथन जकाँ रखैत अछि। गवाहीसभक मेल भरोस बढबैत अछि; असंगति नव जाँचक अवसर खोलैत अछि। एतय बहुलता अपनेमे त्रुटि नहि, जाँचक सामग्री अछि।

रचना स्पष्ट कहैत अछि—‘गन्धसँ रंग नहि जनब, / रंगसँ स्वादक सम्पूर्ण ज्ञान नहि।’ प्रत्येक इन्द्रियक विषय-सीमाक एहि स्वीकृतिमे प्रामाणिक विनय अछि। जँ गन्धक साधन रंगक निश्चित दावामे बदलि जाए तँ प्रमाणक सीमा लाँघल होयत। तथापि भिन्न इन्द्रिय एक वस्तुक सम्बन्धमे संयुक्त समझ विकसित कऽ सकैत अछि। नव्य-न्यायक इन्द्रियार्थ-सन्निकर्षक प्रसंगसँ तुलना सम्भव अछि, मुदा कविता प्रत्यक्षक परिभाषाक पाठ नहि।

अन्तिम फल तोड़ि सभक संग बाँटब ज्ञानक एकान्त प्रश्नकेँ लोकक व्यवहारमे फेर लऽ अबैत अछि। ई बाट ‘हथेलीक पाथर’क व्यक्तिगत छुअनसँ आगेँ सामूहिक अनुभवक अछि। पाथरक घुमाओल पृष्ठ आर कटहरक इन्द्रियगत गवाही, दुनू ज्ञानक अपूर्णताक बोध देबैत अछि, मुदा पहिल दृष्टिक नव पक्ष खोलैत अछि, दोसर अनेक प्रकारक इन्द्रिय-साक्ष्य जोड़ैत अछि। काव्यक गहिराइ ज्ञान-संचयक बाद साझा फलभोगक छोट अन्तिम दृश्यमे रहल अछि।

१९२. सभ चाबी एक नहि — पद्धतिक विविधता आ अनुपयुक्त समानीकरणक दोष

एकहि गुच्छामे अनेक चाबी देखकर वाचक सोचैत अछि जे सभ लोहाक बनल अछि, एके चाबी पर्याप्त किएक नहि? पहिल ताला खुलैत अछि, दोसरपर चाबी अटकि जाइत अछि। एकहि पदार्थसँ बनल वस्तुसभक प्रयोजन अलग होयबाक ई सरल अनुभव पद्धतिक समानताक भ्रम तोड़ैत अछि। ‘दाँतक सूक्ष्म भेद’ शब्द विशेष महत्त्वपूर्ण अछि: रूपक सफल होयबाक कारण बहुत ठोस उपयोगभेद अछि।

कवि अपन बातकेँ अनावश्यक पद्धति-बहुलताक समर्थन नहि बनबैत। ‘जाँचक साधन जोड़ि सकैत छी, / कखनो एक दोसरमे समाय’ कथन भिन्न विधिक बीच संवादक सम्भावना बचबैत अछि। मुदा ‘भिन्न काजक भिन्न आवश्यकता’ एक यांत्रिक एकरूपताक विरोध अछि। दर्शनमे प्रमाणक विषय, शास्त्रीय व्याख्या वा सामाजिक न्याय—सभकेँ एकहि कसौटीसँ नापबाक जेद दोषपूर्ण भऽ सकैत अछि। ई कविता ओहि सामान्य विवेकक चित्रमय रूप अछि, कोनो शास्त्रीय एकरूप प्रमाण-सिद्धान्तक निर्णायक खण्डन नहि।

‘अनावश्यक बोझ हटौलहुँ’क समापन महत्त्वपूर्ण अछि: गुच्छा पूरा फेंकल नहि जाइत, उपयोगी भेद सुरक्षित रहैत अछि। ‘कसौटीक उजास’मे प्रमाणक साधनपर आत्मप्रश्न छल; एतय प्रश्न अछि कोन साधन कोन काज लेल उपयुक्त। चाबी, ताला आ लोहाक भौतिक दृश्य अमूर्त बहसकेँ पाठकक सामान्य अनुभूतिसँ जोड़ैत अछि। रचनाक संक्षिप्ततामे विचारक स्पष्टता उपलब्धि अछि, मुदा भिन्न चाबीसभक बीच टकरावक कठिन उदाहरण आर खुलि सकैत छल।

१९३. अपनहि प्रकाश — आत्मप्रकाशक रूपक आ ज्ञाताक प्रत्यवमर्श

दीपक लौ देबाल देखबैत अछि, मुदा लौकें देखबाक लेल प्रत्येक बेर दोसर दीप नहि चाही। एहि ठोस प्रकाश-दृष्टान्तसँ कविता सचेत अनुभवक अपन उपस्थितिक प्रश्न उठबैत अछि। ‘एक विचार मोनमे आयल, / तकर अयबक बोधो भेल’क पाँति विचार आ विचारक अवगत होयबाक भेद चिन्हबैत अछि। जखन मन अपन वर्तमान अवस्थाकें अनुभव करैत अछि, तखन ज्ञानक लगातार नव-नव साक्षीक माँग कतय धरि आवश्यक?

‘जँ हरेक उजासक पाछाँ फेर / एक नव उजास तकैत रहब’क शृंखला अनवस्थाक सम्भावनाक काव्यात्मक रूप अछि। प्रकाशक प्रतिमा भारतीय दार्शनिक परम्पराक आत्मप्रकाश अथवा ज्ञानक स्वप्रकाश-विमर्शक स्मरण करा सकैत अछि; मुदा कविताक एहि बिम्बकें कोनो विशिष्ट परम्पराक औपचारिक सिद्धान्तक प्रमाण मानल नहि जा सकैत। लौक उपस्थिति आ मानसिक बोधक प्रकृति भिन्न होयबाक कठिनाई आलोचनाक महत्त्वपूर्ण सीमा अछि।

अन्तिम पाँतिमे ‘वस्तु आ ओकर बोध’क संग ‘बोधक प्रकाशो जागि रहल’—ई त्रिक रचनाकें केवल प्रकाश-विज्ञानक बात नहि रहय दैत। ‘देखि रहल छी’मे देखबाक क्रियापर मोन घुरि आएल छल, एहि ठाम ज्ञानक उपस्थिति फेर कतेक प्रमाण चाहैत अछि, से प्रश्न तीव्र होइत अछि। दीवार, लौ, राति आ दिनक बिम्ब तर्कक अमूर्त अवस्थानकें संक्षिप्त दृष्टात्मक गति प्रदान करैत अछि।

१९४. खुलल बैसार — विचारक बहुवचन आ असहमतिमे श्रोता-धर्म

चारि आसनक बीच 'प्रश्नक दीप' जरैत अछि; बैसारक केन्द्र कोनो विजयी विद्वान नहि, प्रश्न स्वयं अछि। 'एक स्वरक पाछाँ दोसर स्वर'क रचना बहुध्वनिक संवादक आधार बनैत अछि। कियो शब्दक गाँठि खोलैत, कियो शब्दसँ पार तकैत, कियो कर्मक कठिनाई अनैत, कियो भीतरक शान्ति बचबैत अछि। एहि भिन्न प्रवृत्तिसभकेँ लेखक एकहि अन्तिम निष्कर्षमे जबरदस्ती नहि गाभैत छथि।

'असहमतियो आदर पेलक' केवल शिष्टाचारक घोषणा नहि। संवादक प्रमाणगत अर्थ अछि जे अपन सीमा दोसरक प्रश्नक रोशनीमे स्पष्ट भऽ सकैत अछि। मुदा सहमतिक अभाव स्वयं सत्यक प्रमाण नहि; चारि स्वरक बराबर सुनाइ पड़बक अर्थ चारू मतक समान वैधता नहि। कविता सुनबाक नैतिक शर्त बनबैत अछि, आलोचनात्मक निर्णयक प्रक्रिया खुलल छोड़ैत अछि। एहि कारण एकरा विचारक मुक्त सभा कहब उचित, सिद्धान्तसभक पूर्ण समन्वय नहि।

बैसार समाप्त भेला पर 'प्रश्न बचल', आ सभ लोक 'दोसरक आवाज' सङ्ग घर घुरैत अछि। ई अन्त विजय-पराजयक तर्कयुद्धसँ भिन्न स्मृतिपरक सह-अस्तित्वक उपलब्धि अछि। 'एकलसँ सङ्ग'मे हाथ मिलाकऽ नाव बनल छल; एतय भिन्न मत सुनबाक साझा अवकाश बनैत अछि। दूनु रचनामे संगतिक मूल्य अछि, मुदा सामाजिक श्रम आ बौद्धिक सुनवाई अलग रूपमे प्रकट होइत अछि।

१९५. प्रश्नकें खोलू — शब्दार्थक अस्पष्टता आ उत्तरक पूर्वशर्त

‘घर ई अछि की?’—एकहि प्रश्न सुनि वाचक चौखट दिस तकैत अछि, मुदा पूछनिहार आश्रय, स्मृति अथवा अपनपनक ठाम खोजि रहल भऽ सकैत अछि। ‘घर’क भौतिक देवाल आ अनुभवगत सम्बन्धक अर्थ अलग अछि। एहि भेदकें पहिचानने बिना सहमतिक उत्तर दऽ देब प्रश्नक वास्तविक आशय चुकायब होयत। रचना प्रश्नक भाषिक आकारकें संवादक पहिल परीक्षण बनबैत अछि।

‘एके प्रश्नक भिन्न खुलबासँ / उत्तरक सभ बाट बदलल’ पाँतिमे अर्थ-निर्णय आ ज्ञानक दावा बीचक सम्बन्ध अछि। प्रश्न स्पष्ट करब बहससँ पलायन नहि, ठोस उत्तर तक पहुँचबाक तैयारी अछि। मुदा प्रश्नक सम्भावित अर्थ अनन्त बनायबो सहज समाधान नहि; उपयुक्त सन्दर्भ, पूछनिहारक प्रयोजन आ व्यवहारकें देखबाक आवश्यकता अछि। कवि एहि सन्दर्भ-निर्भरता कें चौखट, देवाल, आश्रय आ स्मृतिक मूर्त छविसभमे रूपान्तरित करैत छथि।

‘दुआर चिन्हब आर भीतर पहुँचनाइ’क अन्तर रचनाक अन्तिम उपलब्धि अछि। शब्दक सही संकेत बुझब, ओकरा संलग्न जीवनक स्थिति बुझबाक बराबर नहि। ‘शब्दक घरमे’मे अमूर्त पदक व्यवहारिक ठाम पहिचानल गेल छल; एहि ठाम एकहि घर-शब्दमे भिन्न उद्देश्यक प्रश्न अलग कएल जाइत अछि। कविता भाषा-दर्शनकें गामघरक बोलीमे राखैत अछि, मुदा प्रत्येक प्रश्नक समाधान भाषिक विश्लेषणमे समाहित अछि—एहन अतिरेकी दावा नहि करैत।

१९६. धीरे सुलझल डोर — प्रयोगभेदक क्रमिक विश्लेषण आ साधारण उलझन

एकहि शब्दक अनेक छोर मोनमे जाल बनल अछि; वाचक पूर्वमे भिन्न प्रसंगकेँ एकहि गाँठिमे बान्हि देने छल। एक-एक प्रयोग देखलापर विनती, सूचना आ वचनक अलग भूमिका उघड़ैत अछि। भाषा एतय वस्तुसभक नामक सूची नहि, लोकक बीचक काज अछि। रचनाक सूत-डोर रूपक एहि विश्लेषणकेँ क्रमिक श्रमक रूप दैत अछि—खींचि तोड़बाक बदला धीरे अलग करब।

‘जालक पाछाँ दानव नहि छल’ विशेष आत्मालोचनात्मक कथन अछि। कठिन देखाइत भाषिक समस्या कखनो केवल गलत जोड़सँ सेहो जनमि सकैत अछि; ओकर निराकरण लेल विशाल तत्त्वमीमांसक कल्पना आवश्यक नहि। ‘ठीक ठामपर बोल रखिने / मोनक गाँठि ढीला भेल’ कहि कविता प्रयोगक वास्तविक परिस्थिति लग घुरबाक आग्रह करैत अछि। ई व्यावहारिक भाषिक स्पष्टीकरणक पद्धति अछि, सम्पूर्ण दार्शनिक प्रश्नक सर्वमान्य औषधि नहि।

‘हम विशाल दावा नहि कयलहुँ, / छोट उलझन साफ कयलहुँ’क संयम कविता केँ ओकर मुख्य बौद्धिक विश्वसनीयता दैत अछि। ‘प्रश्नकेँ खोलू’मे बहुअर्थी प्रश्नक आशय पहिचानबाक काज छल; एहि रचनामे अर्थक अलग-अलग व्यवहारक लम्बा पेंच सुलझैत अछि। दूनू पद्यक भाषा-आधारित आलोचना साझा अछि, मुदा एक पूछल गेल प्रश्नक दिशा स्पष्ट करैत, दोसर अनेक प्रयोगक गलत मिश्रण सँ उत्पन्न भ्रम खोलैत अछि।

१९७. नाव आ किनार — विधिगत सुरक्षा आ उद्देश्यक अनिर्दिष्टता

नावक पटरा, रस्सी, पाल आ पतवारक जाँच सूक्ष्म व्यवहारिक बुद्धिक प्रतीक अछि। सभ जोड़ दुरुस्त भेल, जल शान्त रहल, तथापि यात्रा आरम्भ नहि भेल। कारण भौतिक साधनक त्रुटि नहि — ‘कओन किनारक चाह उठल छल, / ई प्रश्न एखनो अनकहल।’ एहि विरामसँ कविताक मुख्य अन्तर उभरैत अछि: ठीक साधनक व्यवस्था आ सुस्पष्ट जीवन-लक्ष्य दू अलग आवश्यकता अछि।

कवि उपकरण-जाँचकें व्यर्थ घोषित नहि करैत: ‘साधनक साफ पहिचान आवश्यक, / ओकर बिनु पयर डूबत।’ तकर पाछाँ नाव निहारैत रहलासँ पारक पियास नहि मेटबाक प्रश्न अछि। वैज्ञानिक अथवा भाषिक पद्धतिक शुद्धता उपयोगी अछि, मुदा अपनहि जीवनक उद्देश्य ताहिसँ स्वतः उत्पन्न होयत—एहन दावा असंगत। रचना कोनो निश्चित आध्यात्मिक किनारक नाम नहि दैत; ‘दूरक हरियरी’ संभावनाक दृश्य बनैत अछि।

अन्तमे वाचक पतवार हाथमे लैत अछि। ई रूपक निष्क्रिय निष्पक्षता छोड़ि उत्तरदायी निर्णयक दिस घुर्ब अछि। ‘कसौटीक उजास’मे जाँच आ निर्णयक सन्तुलन छल; ‘नाव आ किनार’मे साधन आ लक्ष्यक भिन्न सम्बन्ध। नावक बनावट सूक्ष्म, किनारक दिशा खुलल—एहि रचनाक शिल्प भीतरी प्रश्नकें क्रियात्मक अन्त देबैत अछि।

१९८. अर्थक खुलल वन — अर्थपद्धतिक विविधता आ अनुशासित सह-अस्तित्व

‘बोलक वनमे बाट बहुत छल’क उद्धाटन भाषाकेँ खुलल भूगोल बनबैत अछि। विज्ञानक ‘साफ सड़क’, नेहक ‘पातर पगडण्डी’ आ भीतरक मौनक बाट अर्थनिर्माणक भिन्न प्रयोजन प्रकट करैत अछि। एहि बिम्बमे स्पष्टताक विरोध नहि, भिन्न प्रयोगमे एके नापक अनुचित प्रयोगक विरोध अछि। ‘ककरा ठाम कओन अर्थ जगैत’ पूछबाक आग्रह कथनकेँ ओकर जीवनगत ठाम लग परखबाक निर्देश दैत अछि।

न्यायक बोल कर्म बजबैत, श्रद्धाक बोल दिशा खोलैत, रूपक बोल मोन रंगैत, प्रश्नक बोल निन्न उधारैत—एहि क्रममे क्रिया आ शब्दक सम्बन्ध बहुप्रकार अछि। मुदा एहन वर्गीकरणकेँ अन्तिम तत्त्वमीमांसक विभाजन मानब कठिन: न्यायमे भावो रहैत अछि, श्रद्धामे सत्य-दावा सेहो भऽ सकैत अछि। कविता वर्गसभकेँ सम्भावित प्रमुख व्यवहार रूपमे देखबैत अछि, कठोर बन्द खाने रूपमे नहि।

‘वनक विविधता बचल रहल, / अर्थक अनुशासनो बचल’ समापनक निर्णायक द्वंद्व अछि। सर्वमान्य एकल शैली नहि, तँ जे किछु कहल जाए ओ स्वतः अर्थपूर्ण—ई नीतियो नहि। ‘सभ चाबी एक नहि’मे भिन्न उद्देश्य लेल साधनभेदक मान छल; एहि ठाम विचारक लक्षण भाषा-व्यवहारक विविधतामे देखाइत अछि। वनक रूपक पूरा विभागक अनेक लघु पद्यकेँ अन्तिम एकात्मीकरणक बदला परस्पर प्रसंग देबैत अछि।

१९९. बातक भरोस — अर्थबोध, तथ्य-जाँच आ वचनक नैतिक आग्रह

एक यात्री दूरक गामक पोखरि सुखायबाक समाचार अनैत अछि। वाचक पहिने प्रश्न करैत अछि —‘के देखल अछि? / कहिया धरती फाटल छल?’ कहबक अर्थ बुझि लेब आ ओकर सत्य जाँचि लेब एक नहि। एहि भेदमे वक्ताक बात अनर्थक नहि बनैत, मुदा अप्रमाणित खबरकेँ तुरन्त तथ्य मानबाक हड़बड़ी टरैत अछि। साक्ष्यक स्रोत आ समय पूछब आलोचनात्मक संवादक पहिल अभ्यास बनैत अछि।

तकर पाछाँ यात्री ‘गाम बचाउ’ कहैत अछि। आब वचनक कार्य केवल सूचना देब नहि, सहायता लेल आह्वान सेहो अछि। एकहि वक्तव्यक्रममे वर्णनात्मक दावा आ नैतिक आग्रह अलग काज करैत अछि। कविता एहि द्विविधाक जाँच गद्यात्मक सूचीसँ नहि, यात्री-वाचकक संक्षिप्त संवादसँ करैत अछि। संकटग्रस्त गामक प्रसंग आशयक विश्लेषणकेँ मानवीय परिणामसँ अलग नहि रहय दैत।

अन्तिम ‘बात बुझब, बात परखब, / बात निभायब’क त्रिक अर्थ, सत्यापन आ उत्तरदायित्वक क्रम अछि। समाचार झूठ निकलितो सहायता जरूरी भऽ सकैत अछि, आ सच खबरक प्रभावहीन श्रवण नैतिक रूपसँ अपर्याप्त भऽ सकैत अछि—ई सम्भावना काव्यक भीतर खुलैत अछि, यद्यपि पाठ स्वतः सभ उदाहरण नहि खोलैत। ‘प्रश्नकेँ खोलू’मे आशयक अस्पष्टता केन्द्र छल, एहि ठाम सत्य आ वचनक प्रभाव दू अलग कसौटी अछि।

‘कुआँमे जल अछि’क कथनपर वाचक डोरी नीचाँ छोड़ैत अछि; बालटी खाली ऊपर अबैत अछि। दावाक अर्थ समझल गेल छल, मुदा अपेक्षित अनुभव नहि भेटल। एहि सरल दृश्यसँ कविता अर्थपूर्ण कथन आ सत्य कथनक भिन्नता स्थापित करैत अछि। खाली बालटीक दृश्य ठोस अछि, तथापि एक बेर खाली बालटी आयब कुआँक समस्त पानिक अन्तिम प्रमाण नहियो भऽ सकैत अछि; डोरीक लम्बाइ आ अन्य परिस्थिति परीक्षणमे महत्त्व रखैत अछि।

मूल रचना विशेष रूपसँ कहैत अछि—‘दावा सत्य नहि निकलल। / मुदा बुझल बातक अर्थ / ओहि असफलतासँ नहि मेटल।’ पाठक एहि निष्कर्षक शक्ति आ सीमा दूनू देखबाक चाही। अर्थक परिचय परीक्षणक पूर्वशर्त होइत अछि, मुदा परीक्षणक परिणाम एहन परिस्थिति निर्भर करैत अछि जकरा कविता विस्तारसँ नहि कहैत। एहि कारण रचनाकेँ सर्वसमर्थ सत्यापनवादक पूर्ण स्थापना कहब अतिव्याख्या होयत; ई एक व्यावहारिक जाँच-द्वारक उपमा अछि।

‘किबाइक कुण्डी’ छूअलासँ परीक्षणक रास्ता खुलैत अछि, अंतिम सार्वभौम सत्य नहि। ‘बातक भरोस’मे अपुष्ट समाचारक स्रोत पूछल गेल छल; एतय कथनक संभावित अनुभवजन्य परीक्षणक मानचित्र बनैत अछि। दुनू पद्य सार्वजनिक दावाक जाँचक पक्षधर अछि, मुदा पहिलमे शब्दप्रमाणक सन्दर्भ, दोसरमे अनुभवक परीक्षणक सन्दर्भ अलग अछि। मूल शीर्षकक ‘दुआर’ खुलबाक बिम्ब पूर्ण ज्ञानक बन्द दरवाजा नहि बनबैत।

२०१. अर्थक बाँचल ठाम — असमान ज्ञानक बीच साझा व्यवहार आ संशोधनशीलता

वाचक आ सम्बोधित व्यक्ति बरखाक चिन्ह समान रूपसँ नहि जनैत; तइयो ओ दुनू बरखाक बात बुझैत अछि। भाषिक साझेदारी लेल सभ वक्ताक ज्ञान-सूचीक पूर्ण समानता जरूरी नहि—एही साधारण दृश्यसँ कविताक प्रश्न उठैत अछि। ‘ज्ञानक थाक भिन्न रहितहुँ / बोलक साझा ठाम बचैत’ पाँति व्यक्तिगत अनुभवक अन्तर आ सामाजिक अर्थक स्थिरता बीचक सूक्ष्म सम्बन्ध देखबैत अछि।

‘नव परखक बाट खुललासँ / हरेक बेर अर्थ नहि बदलैत’ संशोधनशील ज्ञान आ अर्थक निरन्तरताक भेद अछि। काल्हि नव संकेत भेटलासँ आइक शब्द तुरन्त निःस्वर नहि होइत। एहि कथनकेँ अर्थ सदा अपरिवर्तनीय अछि एहन मानबो गलतः कविता साझा प्रयोगक निरन्तरता बचबैत अछि, ज्ञानक अन्तिम पूर्णता नहि। अन्तमे अज्ञातक ठाम बचाओल गेल अछि; अनिश्चितता स्वीकार करितहुँ संवाद चलैत अछि।

‘सभक चौक’मे निजी चिह्नक अर्थ जाँचबाक सामाजिक कसौटी प्रमुख छल; एहि रचनामे साझा शब्दक प्रयोग एहन व्यक्तिसभक बीचो सम्भव अछि जकर पास भिन्न-भिन्न साक्ष्य अछि। ई संग्रहक भाषावैचारिक पड़ाव अछि: भाषिक अर्थक सार्वजनिकता बिनु समान अनुभवक अनिवार्यता। साँझक मेघक अन्तिम रूपक रचनाक अमूर्त निष्कर्षकेँ पुनः दृश्य संसारमे राखैत अछि।

२०२. सभ उजासक अपन दिशा — मापनक पर्याप्तता आ करुणाक पृथक् कसौटी

आकाशक ताराक दूरी यन्त्र नापैत अछि, मुदा लगक मनुष्यक अकेलापन नापबाक ओ यन्त्र उपयुक्त नहि। उद्घाटनमे आँखि, यन्त्र, मोन आ हाथक अलग-अलग क्रिया अछि। कवि ताराक वास्तविक दूरीक मापनकेँ अस्वीकार नहि करैत; ओ प्रश्न करैत अछि जे ‘दूरी नापबाक नीक कसौटी / एकान्तक मान कोना नापत?’ एहि विरोधमे साधनक वैधता ओकर विषयक अनुसार सीमित होइत अछि।

‘हम जाँचक दीप सम्हारि रखलहुँ, / ओकर उजास बहुत जरूरी’ कहि रचना विज्ञान-विरोधी सहज भावुकताक जोखिमसँ बचैत अछि। तकर बाद ‘सभ खिड़की खुलल’ रहबाक आग्रह मानवीय अनुभवक बहुविध आयाम सुनबाक आवश्यकता जनबैत अछि। नेह, उचितक चाह आ परीक्षण अलग-अलग जीवनगत प्रश्न अछि; किन्तु दूनूकेँ पूर्णतः असम्बद्ध करबो उपयुक्त नहि, किएक तँ मनुष्यक पीड़ाक उपचारक जाँचो आवश्यक भऽ सकैत अछि।

तारा चमकैत रहैत अछि, मुदा लगक व्यक्ति ‘एकल नहि रहल’। एहि अन्तमे अमूर्त सिद्धान्तक सत्यापन नहि, देखल परिवर्तन सामाजिक क्रियाक अछि। ‘अनगिन ढङ्गक फूल’मे कलामाध्यमक विविधता छल; ‘सभ चाबी एक नहि’मे विधिक कार्यानुकूलता; एहि रचनामे ओहि बहुलताक नैतिक परिणति सामने अबैत अछि। खण्ड ४क अन्तिम पद्य रूपमे ज्ञानक सङ्ग करुणाकेँ बैठाओल विशेष सार्थक संरचनात्मक समापन अछि।

२०३. भाषा जे भीतर घर करैत अछि — बहुभाषिक भारत, विचारक स्वाधीनता आ भाषिक न्याय

‘देशक देह पर खिंचल रेखा बदलि सकैत अछि’ सँ रचना राजनीतिक सीमा आ मनुष्यक भीतरी भाषिक स्मृतिक भेद खोलैत अछि। राजचिह्न अथवा सिंहासनक भाषा समयक संग बदलैत अछि; माय-दादीक कथा, खेतिहरक बरखाक आशा आ नेनाक माटिक गन्धक नाम सभ भाषाकेँ मात्र शासकीय साधन होयबासँ बाहर आनैत अछि। एहि शुरुआतिमे मातृभाषा जन्मजात रहस्य नहि, पीढ़ीसभक अर्जित जीवनानुभवक घर अछि। काव्यक ‘घर’ आ ‘देशक देह’ दू पैमानाक स्थान-रूपक अछि, जकर तनाव सम्पूर्ण पद्यकेँ धारण करैत अछि।

‘ओहि भाषामे प्रश्न किएक नहि जन्मत? / ओहि भाषामे दर्शन किएक नहि फुलत?’—ई युग्म प्रश्न भाषिक योग्यता सम्बन्धी सामाजिक पूर्वाग्रहकेँ चुनौती दैत अछि। उत्तर प्रत्यक्ष प्रयोगक रूपमे रचना स्वयं प्रस्तुत करैत अछि: मैथिलीमे ज्ञान, इतिहास, तर्क आ दर्शनक भाषण। ई बात प्रमाणित नहि करैत जे सभ भाषा सभ ऐतिहासिक अवधारणाक लेल समान तैयार शब्दावली पहिनेसँ रखैत अछि; बल्कि ई भाषा-निर्माणक सम्भावना आ दायित्व उद्घाटित करैत अछि। शब्द रचबाक कठिन श्रमकेँ कवि नहि नकारैत।

संस्कृत, पाली, प्राकृत, तमिल, बाङ्ला, मराठी, कन्नड़, तेलुगु आ अन्य भाषासभक उल्लेख एकरस राष्ट्र-वर्णन बनबाक बदला करघाक सूतक बिम्बमे जुड़ैत अछि। ‘एक सूत काटि देब करघाकेँ गरीब बनौनाइ’क उपमा भाषिक बहुलताकेँ सामूहिक सृजनक शर्त बनबैत अछि। एहि विचारक ऐतिहासिक विस्तार अनेक भारतीय भाषाक संस्थागत असमानता पर जटिल प्रश्न उठा सकैत छल; मूल कविता ओहि सब प्रश्नक आँकड़ागत विवरण नहि दैत, बल्कि बहिष्करणक नैतिक दोषपर बल दैत अछि।

पद्यक उत्तरार्धमे भाषा ‘जीवित औजार’, विज्ञानक नव पदक कार्यशाला, विचारक मंच आ असहमतिक माध्यम बनैत अछि। एहि बिम्ब-विकासमे भाषा केवल घरेक भावुक बोली नहि, सार्वजनिक आलोचनाक क्षमता बनि उठैत अछि। ‘अधिक प्रश्नशील’ होयबाक आकांक्षा रचनाकेँ सांस्कृतिक आत्मस्तुतिसँ अलग करैत अछि। ‘अर्थक खुलल वन’मे विविध भाषा-प्रयोगक मान छल, एहिठाम ओ विविधता बहुभाषिक राष्ट्रक ज्ञान-राजनीति धरि विस्तार पबैत अछि।

कविताक विशिष्टता भावनात्मक स्मृति आ संस्थागत प्रश्नकेँ विरोधी मानबाक बदला एक-
दोसरक आधार बनबैत अछि।

२०४. मैथिलीक नव खेत — व्यावहारिक ज्ञान-सृजन, शब्दनिर्माण आ पड़ोसी भाषाक संग संवाद

‘उन्नयनक अर्थ केवल ऊँच मंच पर नाम लिखब नहि’—पद्यक पहिल निषेध भाषिक गौरवक घोषणा आ भाषिक जीवनक वास्तविक विस्तार अलग करैत अछि। भाषा तखन बढ़ैत अछि जखन लोकक दैनिक कार्यक संग ओकर सम्बन्ध गाढ़ होइत अछि। खेतक ‘नव बीआ’, ‘पुरान बीआक स्मृति’ आ पड़ोसी खेतक हवा रूपक नवाचार, परम्परा आ आदान-प्रदानक तीन स्रोत एकै संग उपस्थित करैत अछि। गाछक निसर्गिक वृद्धि सांस्कृतिक प्रयत्नक कठिनाई कम देखबा सकैत अछि, मुदा कवि तकर पाछाँ कार्यक्रमगत क्रियासभ देबैत अछि।

न्यायालय, प्रयोगशाला, विद्यालय, कारखाना, अस्पताल, समाचार आ साहित्यक गणना केवल संस्थाक सूची नहि। प्रत्येक ठाम भाषाक अलग व्यवहार अपेक्षित अछि: निर्देशमे सुस्पष्टता, चिकित्सा-विवरणमे भरोस, विज्ञानमे नव परिभाषा, उपन्यासमे संवेदनाक जटिलता। ‘भाषा बढ़ेबाक पहिल उपाय / ओकरा जीवनक कठिन काज देब’ सूत्रात्मक आह्वान एहि अनेक प्रसंगसँ समर्थित अछि। ई प्रस्ताव भाषाक स्वाभाविक श्रेष्ठताक दावा नहि, योजनाबद्ध सृजनात्मक श्रमक माँग अछि।

‘जतय शब्द नहि भेटय, नव शब्द रचू’क संग दोसर भाषासँ सम्मानपूर्वक ग्रहण आ पुरान शब्दमे नव अर्थ जगायब तीन भाषिक रणनीति अछि। भाषिक शुद्धता एतय बन्दीकरण नहि; अर्थक उपयुक्तता, सामाजिक पहुँच आ भाषागत स्वाभाविकता आवश्यक कसौटी बनैत अछि। अनुवादक नावक बिम्ब मूलक मर्यादा आ गन्तव्यक भाषाक प्रवाह दूनूक उत्तरदायित्व देखबैत अछि। अनुवाद द्वारा ज्ञानक यात्रा मौलिक विचारक प्रतिस्थापन नहि, ओकर सम्भव पूर्वाधार अछि।

रचनाक उत्तरार्धमे विद्यार्थी, आधुनिक विषय आ नव पीढ़ीक संकेत संस्थागत परिवर्तनक प्रश्न जगबैत अछि। ‘साँच उन्नयन पड़ोसीक दीप निबा अपन दीया तेज करब नहि जानैत’क नकार भाषिक राष्ट्रवादक प्रतिस्पर्धी ढाँचासँ बचबाक नैतिक उपाय अछि। ‘भाषा जे भीतर घर करैत अछि’क सर्वभारतीय बहुलता एतय मैथिलीक विशिष्ट कार्ययोजनामे परिणत होइत अछि। कविता स्वप्नक रूपकमे ठमकैत नहि, शब्दनिर्माण आ प्रयोगस्थलक ठोस दिशासँ आगाँ बढ़ैत

अछि; तथापि वास्तविक संस्थागत उपलब्धिक प्रमाणक आवश्यकता कविता सँ बाहर रहैत अछि।

२०५. विचार जखन अपन बोली पबैत अछि — अनुवाद, बौद्धिक प्रसार आ मूल प्रश्नक जन्म

‘विचारक यात्रा केवल पोथीक जिल्द बदलनाइ नहि’ कथनसँ पद्य अनुवादक सतही परिभाषाक खण्डन करैत अछि। सूत्र, भाष्य, मठ, पथिकक गीत, साधुक उलटबाँसी आ लोकक सहज कथा — एहि शृंखलामे विचार संस्थागत आ लोकस्मृतिगत मार्गसँ चलैत अछि। मैथिलीक दुआरिपर आएल दार्शनिक प्रश्न कोनो विदेशी पाहुन मात्र नहि; नव पाठकक अनुभव ओकर ग्रहणक अर्थ बदलैत अछि। ‘भाषा बदलल तँ प्रश्नक गरिमा नहि घटल’ मानवीय पहुँचक विस्तारक आश्वासन अछि, मुदा अनुवादक अर्थगत जोखिम स्वतः मेटल नहि मानल जा सकैत।

न्याय, वेदान्त, जैन, बौद्ध, नाथ, सन्त, भक्ति आ सूफी प्रवाहक नाम कवितामे एकरूप सिद्धान्तक प्रमाण नहि। परम्परासभ आत्मा, ईश्वर, दुःख, प्रमाण आ मुक्ति विषयमे परस्पर असहमत भऽ सकैत अछि। पद्य हुनकर संवादक साझा स्थल चिन्हैत अछि। ई स्थल भाषिक अछि: कठिन परिभाषा सार्वजनिक प्रश्न बनि ओहि पाठकक समीप जाइत अछि जे पूर्व शास्त्रीय विद्यालयक सदस्य नहि छल। एहि स्तरपर लोक-अनुभवकें प्रमाणक विषय बनाओल विदेह समानान्तर ऐतिहासिक पद्धतिक संग आलोचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करैत अछि।

गाँधीवादी साधन-साध्य, समाजवादी श्रम-समानता आ वैज्ञानिक परीक्षणक प्रसंग जोड़ि रचना पुरान दार्शनिक प्रवाहकें आधुनिक सामाजिक संघर्षसँ मिलबैत अछि। मुदा एक पाँतिमे नाम आबि गेलासँ कोनो विचारक अपन सन्दर्भमे पूर्णतः समीक्षित नहि भेल; ई पद्य अनेक विषयक मानचित्र अछि। कविक प्रश्न अछि केना विविध विचार सार्वजनिक विवेकमे प्रवेश करय आ केना ‘नव दर्शन’ जन्मय। ‘पाठ्यपुस्तक बाट खोलैत अछि, शब्दकोश औजार दैत अछि, अनुवाद पुल बनबैत अछि’ — तथापि केवल एहि साधनसँ मूल चिन्तन सम्भव नहि।

अन्तिम ‘आगाँक बाट अहाँ स्वयं बनाउ’ भाषाक श्रेय केवल अतीतक संग्रहमे निहित नहि रखैत। पाठकक प्रश्न पूछबाक स्वाधीनता रचनाक निर्णायक मूल्य अछि। ‘मैथिलीक नव खेत’ भाषिक प्रयोगक व्यावहारिक कार्यक्रम छल; एहि कविता ज्ञानक उत्तराधिकार आ सृजनात्मक असहमतिरूप फल तकैत अछि। विवेचनात्मक दीर्घवाक्य आ अनेक सम्प्रदायक क्रम शुद्ध गीतात्मक लयकें कखनो दबा दैत अछि, मुदा दुआर, पुल, औजार आ बाटक आवर्तक बिम्ब रचनाकें वैचारिक गद्य बनि बिलायबासँ बचबैत अछि।

२०६. पुरान अक्षरमे नव प्रश्न — संस्कृतक पुनर्पाठ, तर्कपरम्परा आ बौद्धिक निरन्तरता

संस्कृतक ऐतिहासिक देहकेँ कवि ‘दीर्घ श्वास’ कहैत छथि, जाहिमे सूत्रक संकोच आ भाष्यक विस्तार एक संग अछि। एहि विरोधमे दार्शनिक संस्कृतक दू अभिव्यक्तिपद्धति—संक्षिप्त शास्त्रसूत्र आ विस्तृत विवाद-विवेचन—स्मरण होइत अछि। ‘ओहि पोथीक आँखि सँ नव दिन केँ कोना देखी?’क प्रश्न पारम्परिक ग्रन्थकेँ संग्रहालयक वस्तु मानबाक बदला जीवित व्याख्याक अवसर बनबैत अछि। मुदा ऐतिहासिक निरन्तरताक ई काव्यात्मक स्थापना कोनो विशिष्ट शास्त्रक वर्तमान प्रयोगक अलग प्रमाण प्रस्तुत नहि करैत; तकर परीक्षण मूल ग्रन्थ आ आधुनिक शोधमे आवश्यक होयत।

प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, अभाव, कारण, कार्य आ मुक्तिक सूचीक अर्थ केवल दार्शनिक पारिभाषिक शब्दक सजावट नहि। ‘हम जे जानैत छी से सचमुच कोना जानैत छी?’क पुनर्प्रश्न ई पदसभकेँ समकालीन सन्देहक धरातलपर रखैत अछि। न्याय, वेदान्त, सांख्य आ योगक प्रस्ताव अलग होयबाक कारणेँ हुनकर नामकेँ एकहि सिद्धान्तक रूपमे समाहित करब उचित नहि। कविता सामान्य परिचयक क्षेत्रमे रहि हुनकर आलोचनात्मक उपयोगक नव सम्भावना खोलैत अछि।

‘पुरान नाम नव छाया लऽ कऽ आयल’क रूपक शब्दक ऐतिहासिक पहचान आ बदलैत प्रयोगक बीचक सम्बन्ध देखबैत अछि। संस्कृतक सामर्थ्य केवल प्राचीनता नहि, सूक्ष्म भेद व्यक्त करबाक शब्द-रचनात्मक क्षमता मानल गेल अछि। मुदा भाषिक सामर्थ्य स्वतः समता अथवा सार्वजनिक पहुँच नहि सुनिश्चित करैत; सामाजिक प्रयोग, अनुवाद आ संस्थागत व्यवस्था ओकर आवश्यक शर्त अछि। पद्य एहि सम्भावित आक्षेपकेँ ‘वर्तमानक चौक’क चित्रसँ अप्रत्यक्ष स्वीकार करैत अछि।

अन्तिम ‘प्रत्येक पुरान सूत्रक लग एकटा खाली पन्ना’ स्मृति आ स्वाधीन संशोधनक समन्वित प्रतीक अछि। ई खाली पन्ना ग्रन्थक असम्मान नहि, नवीकृत पाठकक भागीदारीक चिह्न अछि। ‘विचार जखन अपन बोली पबैत अछि’मे विचार मैथिली दिस चलल छल; एहि पद्यमे मूल शास्त्रीय भाषा स्वतः नव प्रश्नक पात्र बनैत अछि। दूनू प्रयासकेँ प्रतियोगिता नहि बनाकऽ भाषा-अन्तरक जीवित संवादक रूपमे देखब एहि कविताक आलोचनात्मक बल अछि।

२०७. जड़िसँ क्षितिज धरि — दार्शनिक बहुवचन, परम्पराक आत्मसमीक्षा आ आगत प्रश्न

बरगदक जड़ि, रस आ डारिक लम्बा बिम्ब भारतीय दर्शनक आन्तरिक बहुलताकेँ चिन्हबैत अछि। जड़ि धरती पढ़ैत अछि, डारि आकाशक समाचार सुनैत अछि—एहि क्रिया-वितरणमे अतीतक अध्ययन आ वर्तमानक प्रति खुलल संवेदना अलग काज करैत अछि। ‘एकटा बाट नहि, अनेक पगडण्डी’क कथन विभिन्न परम्परासभक ऐतिहासिक मतभेद बुझबाक आग्रह करैत अछि। जँ ई सब एकहि पूर्वनियत सत्यक सहमति कहल जाए तँ कविताक असहमतिपर देल बल कमजोर पड़त।

‘जे केवल प्रशंसा करैत अछि, ओ इतिहासक आधा पन्ना पढ़ैत अछि; जे केवल उपहास करैत अछि, ओहो आधा पन्ना पढ़ैत अछि’—ई द्विपक्षीय आलोचना विधिगत महत्त्व राखैत अछि। परम्पराक महानताक अन्धस्वीकृति आ समस्त परम्पराक उपहास, दुनू पाठक दृश्य सामग्री सीमित करैत अछि। एहि वाक्यक मूल्य इतिहासक बहुस्रोतयुक्त अध्ययन लेल विशेष अछि, जखन ग्रन्थक वाद-विवादक संग लोकक पहुँच आ संस्थागत शक्तिक सन्दर्भ जाँचल जाए। कविता ई कार्यक्रम सुझबैत अछि, ओकर विस्तृत ऐतिहासिक सर्वेक्षण स्वयं नहि बनैत।

यन्त्रक बुद्धि, विज्ञानक सीमा, पर्यावरणक पीड़ा, असमानता, पहिचान आ विश्वग्रामक एकान्तक प्रसंग दीर्घ परम्पराक निकट नव समस्यासभ रखैत अछि। विषयक ई छलाँग मूल रचनाक महत्वाकांक्षा देखबैत अछि, मुदा सभ विषय एकहि पद्यमे विस्तारसँ आलोचित नहि भऽ सकैत। विश्वविद्यालयकेँ ‘प्रश्नशाला’ बनयबाक कथन शिक्षा-व्यवस्थाक परीक्षामुखीकरण पर प्रतिवाद अछि। विद्यार्थी केँ विचारक सहभागी मानबाक आग्रह दर्शनकेँ संस्थासँ अलग नहि, ओकर स्वरूप सुधारबाक कार्यक्रम बनबैत अछि।

‘जड़ि केँ काटि वृक्ष ऊँच नहि होइत अछि; केवल जड़िमे समाइ वृक्ष आकाशो नहि छूबैत’क परस्पर उलट पाँति सम्पूर्ण कविताक संरचनात्मक सूत्र अछि। ‘पुरान अक्षरमे नव प्रश्न’ संस्कृतक वर्तमानक क्षमता पर केन्द्रित छल; एहि कविता अनेक भाषिक आ दार्शनिक वंशक बीच पीढ़ीगत पुनर्पाठक आवश्यकता देखबैत अछि। अन्तिम नव पात अतीतक सजावटी स्मृति नहि, भविष्यक हवा केँ नाम देबाक स्वाधीन सामर्थ्य अछि।

२०८. स्वराजक भीतर विचारक स्वराज — स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय चिन्तन आ सामाजिक उत्तरदायित्व

पन्द्रह अगस्तक भोरसँ प्रारम्भ भेल दीर्घ पद्यमे राजनीतिक स्वाधीनता आ बौद्धिक स्वराजक सम्बन्ध प्रश्न बनैत अछि। ‘स्वतन्त्रता दरबज्जा खोलि दैत अछि, बाट अपने नहि चलैत’ सूत्र केवल उत्सवी राष्ट्रवर्णन नहि: ओकरा पाछाँ विभाजन, भूख, विज्ञान, उद्योग, लोकतन्त्र आ नव कानूनी संस्थाक जटिल प्रश्न अछि। कवि राजनीतिक परिवर्तनकेँ सामाजिक न्याय अथवा ज्ञानक स्वतन्त्रता प्राप्त भऽ गेलाक प्रमाण नहि मानैत छथि। इतिहासक घटना प्रसंग आ कविता भीतरक नैतिक मूल्यांकन भिन्न स्तर पर स्थित अछि।

मोक्ष आ आत्माक चर्चासँ भूख आ अन्यायक प्रश्न दिस घुसब, परम्परागत दर्शनकेँ खारिज करब नहि। पद्य पूछैत अछि—‘दर्शन जँ केवल मोक्षक दूर आकाश देखत, तँ धरती पर पड़ल मनुष्यक छाया के देखत?’ एहि शर्तात्मक वाक्यक भीतर चिन्तनक उत्तरदायित्व अछि: वर्तमानक दुःखक सामना बिनु स्वाधीन मनक दावामे अपूर्णता रहत। कवि दार्शनिककेँ राजनैतिक प्रचारक मात्र नहि बनबैत, बल्कि प्रमाण, नैतिकता आ जीवन-अनुभवक बीच सक्रिय विवेक चाहैत अछि।

कवितामे गांधीवादी स्वर, विनोबाक भूमि-सम्बन्धी विचार आ लोकनायकक जनसहभागिताक उल्लेख ऐतिहासिक चिन्ह रूपमे अबैत अछि। एहि उल्लेखकेँ संस्थागत इतिहासक सम्पूर्ण प्रामाणिक चित्रण नहि मानल जाए; विशिष्ट विचारकक अवधारणा आ कालक्रमक निष्पक्ष सत्यापन अलग अध्ययनक विषय अछि। ‘पच्चीस बरख’क समय-सीमा लेखकक स्वातन्त्र्योत्तर चिन्तनक एक आलोचनात्मक खण्डीकरण अछि, स्वतः भारतीय दर्शनक सर्वमान्य युग-विभाजन नहि।

‘ज्ञानक स्वराज केवल ई नहि जे पुस्तक अपन भाषामे हो; ज्ञानक स्वराज तखन जखन प्रश्नो अपन हो’क कथन भाषान्तरण आ मौलिक अनुसंधानक भेद स्पष्ट करैत अछि। बाहरक प्रकाशकेँ ‘अपन अनुभवक आगिमे’ परखबाक रूपक आत्मनिर्भर चिन्तनकेँ पृथक् शास्त्रीय एकान्तवास नहि बनबैत। कविता समयकेँ ‘बीज रोपबाक काल’ मानैत अछि, जाहिमे सफलता आ अपूर्णता दुनू अछि। ई आत्मालोचनात्मक दृष्टि राष्ट्रगौरवक अतिशयोक्ति सँ दूर राखैत अछि।

‘हरेक पीढ़ी केँ अपन समयक प्रश्न अपन विवेकसँ लिखबाक’ अन्तिम आग्रह दीर्घ वैचारिक रचनाकेँ खुलल निष्कर्ष दैत अछि। ‘जड़िसँ क्षितिज धरि’क वृक्ष-बिम्ब एतय स्वाधीनताक आरम्भक बरखसँ ऐतिहासिक रूपमे जुड़ैत अछि। रचनाक साहित्यिक उपलब्धि विस्तृत ऐतिहासिक पृष्ठभूमिक बीच कुछ पुनरावर्तित बिम्ब—भोर, दुआर, बीज, दर्पण—सँ एक संगति बनौनाइ अछि; सीमा ई जे अनेक विचारधाराक नाम-जप समकालीन विवादक मूल पाठक स्थान नहि लऽ सकैत।

२०९. अपन धरती, खुलल आकाश — विश्वचिन्तनक संवाद आ आत्मनिर्णयक विधि

स्वतन्त्रताक बाद अपन धरतीक ठोस अनुभव आ विश्वक खुलल विचार-आकाशक बीच ठाढ़ भारतीय मन कविता केँ प्रश्नात्मक केन्द्र दैत अछि। धर्म, कर्म, मोक्ष आ ब्रह्मक परम्परा एक दिस; विज्ञान, उद्योग, लोकतन्त्र, अधिकार आ सामाजिक न्याय दोसर दिस। रचना एहि दुनू वृत्तकेँ शत्रु मानि चुनाव करबाक पक्षधर नहि; ओ विवेकपूर्वक दुनूक समीक्षा करबाक आग्रह रखैत अछि। ‘ककरा संग चलब, आ चलैत-चलैत अपन चेहरा केना बचाएब?’—ई पहिचानक प्रश्न नकल आ अलगाव दुनूसँ दूरे राखबाक चिन्ता अछि।

‘दर्शनक पहिचान पोथीक जिल्दसँ नहि बनैत’क बाद भूख, अन्याय, विज्ञानक शक्ति, मशीन आ करुणा विषयक प्रश्न दर्शनकेँ जीवित जीवन लग आनैत अछि। एहि अंशमे काव्यक नैतिक केन्द्र व्यक्ति मात्र नहि, समष्टिक बदलैत दशा अछि। ‘श्रद्धा प्रश्नक शत्रु नहि’ कथनक सार्थकता तखने अछि जखन श्रद्धाक दावाओ प्रमाणक परीक्षण स्वीकारय। कविता ई शर्तक महत्त्व स्वीकृत करैत अछि, यद्यपि आस्तिक आ अनास्तिक दार्शनिक परम्पराक वास्तविक अन्तर पूरा विस्तारसँ नहि खोलैत।

विश्वविद्यालयक कक्षमे सुसंगत असहमतिक मान, शिक्षकक प्रश्नसँ नहि डरबाक साहस आ अनेक पद्धतिक व्यावहारिक उपयोग—ई सभ रचनाकेँ शिक्षा-आलोचनाक रूप दैत अछि। ‘एकहि औजारसँ सभ समस्या नहि खुलैत’क कथन पूर्व ‘सभ चाबी एक नहि’क घरेलू उपमाक दीर्घ दार्शनिक विस्तार अछि। एतय विविध साधनक औचित्य केवल काम-भेदसँ नहि, धार्मिक, सामाजिक आ ऐतिहासिक तथ्यक अलग प्रकृतिसँ जुड़ैत अछि।

‘लौकिकता धर्म-विरोध नहि, धर्म विवेक-विरोध नहि’ सन घोषणासभक आलोचनात्मक मूल्य ओकर शर्त पर निर्भर अछि: वास्तविक सामाजिक संस्थासभमे ई आदर्श साध्य अछि, पहिनेसँ सिद्ध इतिहास नहि। कविताक दीर्घ प्रश्नाकुल गद्यलय एहि अन्तरकेँ आंशिक सुरक्षित रखैत अछि। ‘ठीक दिशा एकटा तीरक निशान जकाँ सदैव तैयार नहि भेटैत’—ई पाँति दिशा केँ प्रक्रिया बनबैत अछि: प्रश्न, परीक्षण, असफलता, पुनर्विचार आ संवाद।

‘तर्कमे कठोर, करुणामे नम्र, इतिहाससँ परिचित’क अन्तिम विशेषण-क्रम नारा बनि सकैत छल, मुदा पूर्वक भूख, कक्षा, विश्वग्रन्थ आ परम्पराक प्रसंग ओकरा स्पष्ट आशय दैत अछि। ‘स्वराजक

भीतर विचारक स्वराज' कालक्रमक समग्र विश्लेषण छल, एहि कविता जीवनोन्मुख दार्शनिक व्यवहारक कसौटी सुझबैत अछि। मूल काव्यक सीमा—अत्यधिक विषयविस्तारसँ विशिष्ट मतक ऐतिहासिक जटिलता संक्षिप्त रहब—एकर वैचारिक महत्व घटबैत नहि, बलुक शोध लेल अगिला प्रश्न खोलैत अछि।

‘इतिहासक पाछाँ एकटा परिसर बचैत अछि’क आरम्भ विश्वविद्यालयकें भवन अथवा डिग्रीक मशीन नहि, पीढ़ीक संवादक स्थल बनबैत अछि। पाठ्यक्रममे पुरान ग्रन्थ, मेजपर विदेशी पुस्तक आ विद्यार्थीक मनमे समयक अनुत्तरित प्रश्न—ई त्रिसंयोग शिक्षाक वास्तविक चुनौती प्रस्तुत करैत अछि। ‘दर्शनक आरम्भ उत्तर सँ नहि, आश्चर्य सँ होइत अछि’क कथन जिज्ञासाकें केवल प्रारम्भिक मनोदशा नहि, अध्ययनक निरन्तर आधार मानैत अछि।

प्लेटो, अरस्तू, कान्त, हेगेल, रसेल आ विट्गेन्स्टाइनक संग न्याय, वेदान्त, बौद्ध, जैन आ मीमांसाक उल्लेख विविध पाठपरम्पराक संगत अध्ययनक आवश्यकता जनबैत अछि। मुदा नामक उपस्थितिमात्रसँ एहि सम्प्रदायसभक वास्तविक तुलनात्मक अध्ययन सम्पन्न नहि मानल जाएत। ‘विदेशी पुस्तक खिड़की बनय, दीवार नहि; अपन परम्परा जड़ि बनय, बेड़ी नहि’क सममित रचना ग्रहणशीलता आ आलोचनात्मक स्वाधीनताक दोहरा अनुशासन प्रस्तुत करैत अछि।

संस्थान प्रश्नसँ बेसी पाठ्यक्रम बचबैत हो तँ ज्ञान परीक्षाक वस्तु बनि सकैत अछि। कवि शिक्षक, विद्यार्थी आ शोधक संस्थागत भूमिकापर एतय स्पष्ट ध्यान दैत छथि। ‘मौलिकता आकाशसँ खसैत बिजली नहि’—ई पाँति मौलिक अनुसन्धानकें केवल अनोखापन नहि, दीर्घ अध्ययन, ठीक प्रश्न आ धैर्यवान संशयक क्रम कहैत अछि। शोधक लेल ई नैतिक पद्धति अछि; परन्तु मौलिकताक प्रमाण वास्तविक अनुसंधान-फल आ स्रोत-परीक्षण सँ स्थापित होयत, घोषणा मात्रसँ नहि।

‘भाषा बदललासँ सत्य नहि बदलैत, मुदा सत्य धरि पहुँचबाक रास्ता बदलि जाइत अछि’—ई रचनाक महत्त्वपूर्ण भाषा-दर्शन अछि। मातृभाषाक पक्षधरता एतय सत्यक अलग जातीय संकल्पना बनबैत नहि, ज्ञानधरि पहुँचबाक समान अवसर पर बल दैत अछि। ‘ककर विकास? ककर मूल्य पर? ककरा लेल?’ तीन प्रश्न संस्थागत प्रगति-रिपोर्टक अमूर्त सफलताकें वर्ग, श्रम, भूगोल आ असमानताक अनुभवसँ जाँचबाक निर्देश बनैत अछि। समानान्तर ऐतिहासिक दृष्टि लेल ई प्रश्न विशेष कार्यकारी अछि।

उत्तरार्धमे अनुकरण, गुटबाजी, भाषिक दूरी आ मौलिकताक कमीक चिन्ता संस्थागत आदर्शक सङ्ग एक आलोचनात्मक तनाव बनबैत अछि। मूल रचना एहि सभ समस्याक प्रमाणित आँकड़ा नहि देबैत; ओ हुनकर सम्भावित उपस्थितिक प्रश्न उठबैत अछि। ‘परिसर केवल डिग्री देबाक स्थान नहि’क समापन पुनः आरम्भक सभा-बिम्बसँ जुड़ैत अछि। ‘अपन धरती, खुलल आकाश’क व्यापक दिशा एतय शिक्षकक नैतिकता, विद्यार्थीक जिज्ञासा, प्रकाशनक गुणवत्ता आ समाजसँ संवाद सन ठोस शर्त पबैत अछि। एहि कारण आठौं लघु समूहक अंतिम अध्ययन संस्थागत परिप्रेक्ष्य रूपमे महत्त्वपूर्ण अछि।

२११. जे प्रश्न अखनो उत्तर माँगैत अछि — अनुत्तरित वर्तमान, सार्वजनिक दर्शन आ संस्थागत उत्तरदायित्व

‘दर्शनक मेज पर किछु खाली कुर्सी’क आरम्भिक बिम्ब विश्वविद्यालयीय उपलब्धि आ समाजक अनसुना अनुभवक बीचक दूरी देखबैत अछि। स्वतन्त्रताक बाद संस्थाक विस्तार, पाठ्यक्रम आ शोध-पत्रक उपस्थितिक बावजूद भूख, असमानता, प्रविधि आ निर्णयक न्यायसंगतता जकाँ प्रश्न अखनो उत्तर माँगैत अछि। ‘खाली कुर्सी’ केवल अभावक वस्तु नहि, अनुपस्थित व्यक्तिक सम्भावित आवाज अछि। कविता एहि रूपकसँ ज्ञानक औपचारिक केन्द्रक आसपासक लोककें फेर प्रवेश देबय चाहैत अछि।

‘ई सम्भव अछि’, ‘ई लाभकारी अछि’ आ ‘ई उचित अछि कि नहि?’—एहि तीन परस्पर भिन्न निर्णयक माध्यमसँ वैज्ञानिक सम्भावना, आर्थिक फल आ नैतिक औचित्य अलग भेल अछि। ई भेद उपयोगी अछि, मुदा विज्ञान आ अर्थशास्त्रकें नीतिविहीन विषय मानबाक निष्कर्ष एहि सँ नहि निकलैत। कविता विषयसभक संवादक पक्षधर अछि। ‘समस्या ककर लेल?’ प्रश्न समानान्तर ऐतिहासिक पद्धतिक हेतु महत्त्वपूर्ण अछि, किएक तँ सामान्यीकृत समाधानक अन्तर्गत अलग-अलग समूहक वास्तविक कष्ट छिपि सकैत अछि।

शिक्षक विद्यार्थीसँ पहिने प्रश्न बनयबाक कला सिखाबय—ई आग्रह ‘प्रश्नक परिसर’क पूर्व स्थापना कें आगू लऽ जाइत अछि। फेर यन्त्रबुद्धि, जलवायु, सार्वजनिक जीवनक मौन पीड़ा, नियम आ अधिकार सन विषयक आगमन पाठ्यविषयक बहुविस्तार बनबैत अछि। अनेक विषय एकत्र भेलासँ तिनकर विशिष्ट इतिहास वा समाधान स्वतः सिद्ध नहि होइत; रचना एहिमे एक शोध-कार्यक्रमक मानचित्र अछि। उत्तरार्धमे बारम्बार पूछल गेल ‘ककर’ सर्वनाम सर्वसामान्य मनुष्यक एकरूप छविक परीक्षण करैत अछि।

अन्तक ‘खाली पन्ना’ स्मृति-सम्पन्न भूत आ अपूर्ण वर्तमानक बीच भविष्यक सृजनात्मक अवकाश अछि। रचनाक वैचारिक गद्यलय दीर्घ सूचीसभमे कखनो गीतात्मक एकाग्रता हरबैत अछि; तथापि खाली कुर्सी, व्यायामशाला आ अनलिखल पन्नाक तीन बिम्ब पाठकक सामने विचारकें दृश्य बनबैत अछि। एकर साहित्यिक उपलब्धि उत्तरक संकलन नहि, जिज्ञासाक संस्थागत आ नैतिक स्वाधीनता स्थापित करबाक प्रयास अछि।

२१२. अनुभवक कसौटी — इन्द्रियज्ञान, आत्मनिरीक्षण आ सामाजिक अनुभवक प्रमाण

आँखि, कान आ हाथक क्रमसँ प्रारम्भ भेल रचना ज्ञानकेँ इन्द्रियक प्रत्यक्ष अनुभवमे रोपैत अछि, मुदा ‘जे देखलहुँ, से सत्यक सम्पूर्ण देह अछि?’ पूछिते प्रत्यक्षक सीमापर ध्यान दैत अछि। रंग, ध्वनि आ तापक बाद स्मृति, दुःख आ संकोचक आगमन बाह्य वस्तु आ आन्तरिक अनुभवक भिन्न साक्ष्य खोलैत अछि। अनुभवक उपस्थिति आ ओकर व्याख्याक सत्यता समान नहि; कवि एहि अन्तरकेँ तुरन्त स्पष्ट करैत छथि।

‘हम अनुभव कएलहुँ’ आ ‘ई वस्तुतः एहनहि अछि’क बीचक भेद रचनाक प्रमाणमीमांसक केन्द्र अछि। आत्मनिरीक्षण व्यक्तिक दशाक सूचना दैत अछि, मुदा क्रोधक नैतिक औचित्य, स्मृतिक ऐतिहासिक विश्वसनीयता वा भावनाक वस्तुपरक निर्णय स्वतः प्रमाणित नहि करैत। न्यायपरम्पराक प्रत्यक्ष आ अनुमानक प्रश्नसँ तुलना एतय प्रासंगिक अछि, यद्यपि पद्य औपचारिक प्रमाणलक्षण नहि लिखैत। ‘दर्पणक काँचो साफ राखबाक’ रूपक आत्मविवेचनक स्वयं-संशोधनीयता देखबैत अछि।

पत्थर मूर्ति बनलापर आ शब्द सामाजिक अपमान वा प्रतिरोधक चिह्न बनलापर वस्तुक सांस्कृतिक अर्थक परिवर्तन देखाइत अछि। एहिसँ स्पष्ट होइत अछि जे अनुभव केवल निजी मानसिक चलचित्र नहि; ओकरा ऐतिहासिक भाषा, शिल्प आ सामुदायिक सम्बन्ध आकार दैत अछि। तथापि परिवर्तित अर्थसँ पत्थरक भौतिक गुण स्वतः बदलैत नहि, एहन सन्तुलन पाठक बनौने रहय। सामाजिक पीड़ाक साक्ष्य सामने आनबाक आग्रह सामान्य अनुभूतिवादकेँ लोकक प्रमाणात्मक उपस्थितिसँ जोड़ैत अछि।

अन्तक घर, खुलल खिड़की, दुआर आ तर्कक दीप मूल ‘अनुभवक कसौटी’केँ बन्द सिद्धान्त नहि बनय दैत अछि। ‘ज्ञानक तलघरमे दीप’मे जे जटिल ज्ञानाधारक प्रश्न विकसित होयत, ओकर प्रवेशद्वार एहि पद्यमे अनुभवक विनय अछि। लम्बा विवेचन कखनो उदाहरणक अन्तर बिनु समान निष्कर्ष दोहरबैत अछि; मुदा इन्द्रिय, आत्मनिरीक्षण आ सामाजिक अनुभवक क्रमबद्ध विस्तार रचनाकेँ एक संगत बौद्धिक यात्रा बनबैत अछि।

२१३. पाँच दशकक देहरी — स्वातन्त्र्योत्तर दार्शनिक इतिहासक आत्मपरीक्षण आ भाषागत अधिकार

‘स्वतन्त्रताक भोर एक दिनमे समाप्त नहि भेल’—कालकें दीर्घ प्रभात बनयबाक बिम्ब राजनीतिक घटना आ ज्ञानपरम्पराक धीमा परिवर्तनक अन्तर आरम्भे स्पष्ट करैत अछि। परभाषामे अध्ययन, मातृभाषामे प्रश्नक कठिनाई आ संस्थागत निर्माणक प्रसंगसँ कविता चिन्तनक स्वाधीनताकें केवल राष्ट्रसीमाक प्रश्न नहि मानैत। भाषाक घर, विश्वविद्यालयक कार्यालय आ लोकक दैनिक जीवन एकहि बौद्धिक इतिहासक भिन्न स्थल अछि।

‘भवन प्रश्न नहि पूछैत; पाठ्यक्रम स्वयं मौलिकता नहि लिखैत’ पाँति गनल संस्थागत विकास आ वास्तविक बौद्धिक सृजनक बीच कसौटी रखैत अछि। सम्मलेन, पत्रिका, विभाग आ पुस्तकक संख्या उपयोगी साक्ष्य भऽ सकैत अछि, मुदा मूल प्रश्न—कुन समस्याक विवेचन भेल, ककर आवाज पहुँचल, कोन मत परखल गेल—तकरा सँ बचल नहि जा सकैत। कविता कोनो प्रमाणित पाँच-दशकीय ग्रन्थ-सूची प्रस्तुत नहि करैत; ओ स्वातन्त्र्योत्तर चिन्तनक आलोचनात्मक मूल्यांकनक रूपरेखा प्रस्तावित करैत अछि।

रचनाक ‘एक सोझ रेखा नहि’ वाला इतिहासबोध उपनिवेशोत्तर प्रगतिक अनिवार्य आरोहणक कथासँ दूरी रखैत अछि। अनुकरण, मौलिक प्रयास, ठहराव आ पुनरारम्भक अवस्थासभ साथ-साथ उपस्थित अछि। ‘स्वराजक भीतर विचारक स्वराज’ राजनीतिक मुक्ति आ वैचारिक स्वाधीनताक भेद विस्तृत करैत छल; एहि कविता ओहिये सम्बन्धकें दीर्घ कालक्रम आ पीढ़ीगत उत्तराधिकारक छवि दैत अछि।

पाँच दशकक देहरीपर अगिला पाँच दशक दिस प्रश्न स्थानान्तरित करब रचनाक खुलल समापन अछि। समय-विभाजनक वास्तविक आरम्भ-अन्त आ चिन्तकसभक योगदानक विस्तृत प्रमाणक आवश्यकता काव्यसँ अलग ऐतिहासिक अध्ययनमे रहत। साहित्यिक दृष्टिसँ भोर, देहरी आ पगडण्डीक आवर्तन व्यापक विषयकें एक भावात्मक एकता दैत अछि; तथापि साक्ष्य-समर्थित दार्शनिक इतिहास बनबाक बदला ई इतिहासक जाँच लेल लिखल वैचारिक कविता अछि।

२१४. दृश्यक पाछाँ जे प्रश्न अछि — तत्त्वमीमांसाक पुनर्विचार, अस्तित्वक भाषा आ आलोचनात्मक संयम

आरम्भक ‘ई वस्तु अछि, मुदा “अछि” केर अर्थ की?’ प्रश्न साधारण देखनाइकेँ अस्तित्वक दार्शनिक परीक्षामे बदलैत अछि। इन्द्रियग्राह्य रूप, मापन आ प्रयोगक महत्त्व स्वीकार करितहुँ कविता ओहि अवधारणासभपर प्रश्न करैत अछि जाहिपर ई साधनसभ निर्भर अछि। मेजकेँ दृष्टिसँ हटला पर ओकर रहनाइ मानब प्रत्यक्ष अनुभूतिसँ बेसी अस्तित्वक स्थायित्वक धारणा अछि। एहि छोट उदाहरणमे तत्त्वमीमांसा दैनिक व्यवहारक पृष्ठभूमिसँ निकलैत अछि।

रचनामे यज्ञदेव शुक्लक उल्लेख एक विशिष्ट दार्शनिक सन्दर्भ रूपमे अछि। लेखक हुनकर नामक माध्यमसँ अवधारणात्मक विवेक आ तत्त्वमीमांसाकेँ सर्वथा निषिद्ध घोषित करबाक प्रवृत्तिक आलोचना करैत छथि; मुदा एहि कविता सँ हुनकर प्रत्येक सिद्धान्तक मूल-ग्रन्थाधारित प्रमाण प्राप्त नहि होइत। स्रोत-समालोचनामे उल्लेखित व्यक्तिक कथन आ कविक विवेचनात्मक पुनर्रचनाकेँ अलग राखब आवश्यक अछि। ‘संसार वास्तविक अछि’ जकाँ वाक्यमे ‘वास्तविक’क तुलना-विषय पूछब भाषिक सतर्कताक परिचय अछि।

यदि विज्ञानक कथन साक्ष्य माँगैत अछि, तत्त्वमीमांसाको निराधार कल्पनाक छूट नहि। ई रचनाक महत्त्वपूर्ण आत्मसंयम अछि। अस्तित्वक प्रश्न नहि उठायब आ बिना परीक्षणक अस्तित्व-सिद्धान्त स्वीकारब—दुनू अतिशयपक्षसँ कविता बचबय चाहैत अछि। ‘अनुभवक कसौटी’ बाह्य आ आन्तरिक अनुभवक भेद खोलैत छल; एहिठाम ओहि अनुभवक सम्भावना, स्थायित्व आ परिभाषाक पृष्ठभूमि प्रश्न बनैत अछि।

पद्यक भाषा बहुत ठाम दार्शनिक निबन्धक लय लैत अछि, मुदा दृश्य मेज आ अदृश्य आधारक विरोध ओकर भावबिन्दु बनैत अछि। तत्त्वमीमांसाक न तो सर्वस्वीकार, न सम्पूर्ण निषेध—ई विधिगत निष्कर्ष अछि; कोनो विशेष सत्ता-सिद्धान्तक निर्णय नहि। यथार्थवाद, प्रत्ययवाद अथवा अन्य मतक उल्लेख भेलापर हुनकर भिन्न तर्कसभक सत्यापन स्वतंत्र ग्रन्थाधारसँ जरूरी रहत। एहि मर्यादा-सह आलोचनात्मक तत्त्वजिज्ञासा रचनाक मुख्य उपलब्धि अछि।

२१५. सृजनक भीतर मनुष्य — स्वतन्त्र कर्तृत्व, सांस्कृतिक उत्पादन आ लोकतान्त्रिक मूल्य

‘धरती पहिने सँ छल, मुदा खेत मनुष्य बनौलक; ध्वनि पहिने सँ छल, मुदा गीत मनुष्य रचलक’क समानान्तर उदाहरण प्रकृतिक उपलब्ध सामग्री आ सांस्कृतिक निर्माणक अन्तर स्पष्ट करैत अछि। खेत, मूर्ति, गीत, घर आ स्मारक सभ मनुष्यक क्रिया-द्वारा नव अर्थ पबैत अछि। कविता मनुष्यकै केवल बनल व्यवस्था भोगनिहार प्राणी नहि, अर्थ निर्माण करनिहार कर्ता रूपमे देखबैत अछि। मुदा एहि कथनमे प्रकृतिक स्वतन्त्र गतिशीलता मेटल नहि रहय—रचनाक सृजनक अवधारणाकै मनुष्यक सर्वशक्तिमत्ता मानब उचित नहि।

समाज व्यक्तिक भाषा आ संस्कार बनबैत अछि, व्यक्ति ओहि समाजक मान्यता प्रश्न करैत अछि। एहि परस्परता सँ स्वतंत्रता आ सामाजिक निर्माणक द्वैत रचनाक केन्द्रीय तनाव बनैत अछि। सृजनशीलता केवळ कलामे नहि, नैतिक नियम सुधारबाक आ सार्वजनिक संस्था बदलबाक काजमे सेहो उपस्थित अछि। ‘की ई व्यवस्था मनुष्यक स्वतन्त्र सृजनात्मकता बढ़बैत अछि, कि ओकरा चुप करैत?’—ई प्रश्न कलाशास्त्रसँ राजनीति धरि एक कसौटी बनि जाइत अछि।

एकमात्र विचारक आधिकारिक एकाधिकारक विरुद्ध असहमतिक स्वतंत्रता पर बल दैत पद्य लोकतन्त्रकै मतदानसँ व्यापक मानैत अछि। विवेक आ संवेदनाक सहकार्यक आग्रह एहि स्वतंत्रताकै केवल निजी इच्छाक मनमानी नहि बनय दैत। मूल्यक निर्माणमे अन्य व्यक्तिक सहभागिता आ पीड़ाक मान आवश्यक रहैत अछि। एहि अर्थमे ‘सृजन’ संस्था-विरोधी छूट नहि, परस्पर उत्तरदायी नवीकरणक क्षमता अछि।

दीर्घ रचनाक अन्तिम अनलिखल पुस्तक भविष्यक सम्भावना रूपमे उभरैत अछि। ‘मूल्यक भीतर संस्कृति’ एहि सृजनात्मक आधारपर सांस्कृतिक मानदण्डक अगिला प्रश्न उठबैत अछि। ई कविताक गुण अछि जे गीत, खेत आ पुस्तक सन परिचित दृश्यसँ अमूर्त आत्मनिर्माणक चर्चा आरम्भ करैत अछि। शिल्पक सीमा अनेक उदाहरणक लम्बा विस्तारसँ केन्द्रीय तर्कक पुनरावृत्ति अछि; तथापि मानव-सृजनकै नैतिक तथा सार्वजनिक प्रकरण बनयबाक प्रयास विशिष्ट अछि।

२१६. मूल्यक भीतर संस्कृति — जीवन-मूल्य, बहुधार्मिक सहजीवन आ प्रकृति-सापेक्ष नैतिकता

‘संस्कृति केवल पुरान भवनक छाया नहि’ कहि आरम्भे दृश्य धरोहर आ जीवित मूल्य-निर्णय अलग कएल गेल अछि। भोजन बाँटबाक रीति, भाषा, स्मृति, श्रमक सम्मान आ दैनन्दिन आचारक माध्यमसँ संस्कृति जीवनक सम्बन्धात्मक प्रक्रिया बनैत अछि। ‘हम केना जीबू?’क छोट प्रश्न सम्पूर्ण पद्यक नैतिक धुरी अछि। भौतिक उन्नति वा उत्सवी गौरव मात्र एहि प्रश्नक उत्तर नहि दऽ सकैत, किएक तँ सामाजिक सम्बन्धक उचितता तकरा सँ भिन्न कसौटी माँगैत अछि।

प्रकृतिक वस्तुकरण आ पर्यावरणीय संकटक प्रसंग सांस्कृतिक मूल्यकें मानवेतर जीवनसँ जोड़ैत अछि। नदी मोड़ब, पर्वत काटब आ वायु बदलबाक सम्भावना मात्र शक्तिक चिह्न नहि; दीर्घकालीन परिणामक उत्तरदायित्वक प्रश्न सेहो अछि। वैदिक, श्रमण, भक्ति, सूफी, लोक आ आधुनिक लोकतान्त्रिक प्रवाहक उल्लेख संस्कृति भीतर भिन्न-भिन्न स्वरक उपस्थितिक संकेत अछि। ई सूची हुनकर परस्पर ऐतिहासिक सम्बन्धक सम्पूर्ण प्रमाणीकरण नहि; काव्यक लक्ष्य एकरूपता आ सहजीवनक अन्तर स्पष्ट करब अछि।

‘एकता सभकेँ एक रंगमे रंगब नहि’क कथन बहुलताक शर्तपर सामूहिकताक समर्थन अछि। समुदाय सुरक्षा दैतहुँ भिन्न मतकेँ दबा सकैत अछि; परम्परा स्मृति दैतहुँ जड़ता बनि सकैत अछि — एहि द्विविधा सँ रचना प्रशंसा-प्रधान संस्कृतिचर्चा सँ अलग होइत अछि। समानान्तर ऐतिहासिक दृष्टिसँ लोकभाषा, श्रम आ उपेक्षित समूहक इतिहासकेँ संस्कृति बाहिर नहि, भीतर देखबाक आग्रह निकलैत अछि।

‘सृजनक भीतर मनुष्य’मे मनुष्य संस्कृति रचैत छल; एहिठाम ओ अपन रचल संरचनाक नैतिक जाँच करैत अछि। दीर्घ पद्यक परिशिष्ट-जकाँ फैलैत उदाहरण काव्यात्मक संकेन्द्रणकेँ कखनो कम करैत अछि, मुदा आचरण, स्मृति आ प्रकृतिक विविध बिम्ब आरम्भक मूल्य-प्रश्न दिस लौटबैत रहैत अछि। अन्तक पीढ़ीगत उत्तरदायित्व संस्कृति केँ निष्क्रिय विरासत नहि, परिवर्तनशील साधना बनबैत अछि।

२१७. व्यक्ति आ समाजक बीच खुलल प्रश्न — अधिकार, समानता आ संस्थागत कारणक बहुस्तरीय परीक्षण

‘समाज कोनो एहन घर नहि जतय मनुष्य जन्मैतहि अपन कमरा निश्चित पबैत’ आ ‘व्यक्ति एहन अकेला द्वीप’ नहि—ई दू निषेध व्यक्तिवाद आ समाजनियतिवादक अतिशय रूपकेँ समान रूपसँ चुनौती दैत अछि। नाम, भाषा, आदत आ नियम समाजसँ भेटैत अछि; मुदा व्यक्ति ओहि नियमक उचिततापर प्रतिप्रश्न करैत अछि। एहि परस्पर गठनमे कविता व्यक्तिस्वातंत्र्यकेँ समाजक शत्रु नहि, सामाजिक परिवर्तनक वास्तविक साधन बनबैत अछि।

‘सभकेँ समान व्यवहार’ पर्याप्त नहि—परिस्थिति, वंचना आ आवश्यकता भिन्न रहला पर एकरूप व्यवहार अन्याय बढ़ा सकैत अछि। एहि सूक्ष्म अंतरमे औपचारिक समानता आ सार्थक अवसरक प्रश्न खुलैत अछि। काव्यक न्यायधारणा कठोर सूत्रक यान्त्रिक प्रयोगसँ बचि विशिष्ट परिस्थिति देखबाक विवेक चाहैत अछि। तथापि भिन्न व्यवहार कखन न्यायसंगत आ कखन पक्षपात होयत, तकर ठोस परीक्षण सार्वभौम घोषणा बिनु आवश्यक अछि; कविता ई कठिनाई खुलल छोड़ैत अछि।

लोकतन्त्रक व्याख्यामे मतदान, अल्पमतक अधिकार, असहमतिक स्वतंत्रता आ सार्वजनिक सत्ता पर प्रश्नक काज एक संग अछि। ‘जतय प्रश्न देशद्रोह कहल जाए’ वाला चेतावनी राजनीतिक संस्थाक आलोचनात्मक नैतिक कसौटी अछि। भीड़-हिंसा सम्बन्धी प्रसंगमे व्यक्तिगत कर्तृत्वक संग प्रचार, भय, सामाजिक पूर्वग्रह आ लाभक बहुस्तरीय कारण देखल गेल अछि। एहि कारण दोषक सरल आरोपक स्थानपर कारणक विभिन्न श्रेणी चिन्हबाक आवश्यकता प्रकट होइत अछि।

‘मूल्यक भीतर संस्कृति’ सामूहिक आचारक मान खोजैत छल, एहि पद्यमे व्यक्ति ओहि आचारकेँ फेर परखैत अछि। घर, द्वीप, भीड़ आ विधानक दृश्य विस्तृत नीतिचर्चाकेँ बोधगम्य बनबैत अछि, मुदा कतेक प्रसंगमे कविता विश्लेषणसँ उपदेशक लम्बा गद्यलेखन दिस झुकैत अछि। एहि सीमा बीच रचनाक आधारभूत उपलब्धि सामाजिक न्यायकेँ निष्क्रिय नीति नहि, जीवित संस्थागत आत्मसमीक्षाक अभ्यास बनबैत अछि।

२१८. ज्ञानक तलघरमे दीप — ज्ञानक आधार, आत्मप्रकाशक सीमा आ प्रमाण-समीक्षा

फूलक रंग आ गन्ध देखलापर ‘हमरा कोना विश्वास जे देखल बात ज्ञान कहल जाए?’—ई प्रतिप्रश्न इन्द्रियज्ञानसँ प्रमाणमीमांसामे प्रवेश करबैत अछि। ‘ज्ञानक तलघर’क रूपक बाहरक प्रकाशित वस्तुसँ भीतरक आधार-दरारक जाँचक ओर ध्यान मोड़ैत अछि। रचना बाहरी प्रत्यक्ष, आन्तरिक स्मृति, व्यवहारक सफलता आ ज्ञानक स्वयं-विषय बनबाक सम्भावनाक अनेक बात खोलैत अछि। ई समग्र विवेचनक अवधि बड़ विस्तृत अछि, तथापि तकर मूल प्रश्न ज्ञानक अधिकार आ तकर उचित आधारक सम्बन्ध अछि।

‘हमरा क्रोध अछि’ आ ‘हमर क्रोध उचित अछि’क अन्तर आन्तरिक दशाक आत्मज्ञान आ बाह्य नैतिक मूल्यांकन अलग करैत अछि। एहिमे आत्मप्रकाशक सम्भावना स्वतः आत्मनैतिकता प्रमाणित नहि करैत। न्याय आ अन्य प्रमाणपरम्परासँ तुलना करबाक समय प्रमाणफल, दोष, संशय आ निर्णयक अर्थ अलग देखबाक आवश्यकता अछि; कविता अपन स्तरपर एहि विषयसभक जीवित प्रश्न प्रस्तुत करैत अछि, मूल सूत्रविवरण नहि।

‘पूर्ण’ आ ‘शेष’ ज्ञानक चर्चा, आधार पर निर्भरता आ प्रमाणक आवर्तक परीक्षणक बीच रचना किछु ठाम सम्भावित अति-सैद्धान्तिकीकरणसँ जूझैत अछि। ‘देखल बातक अर्थ सामाजिक परिस्थिति बनबैत अछि’ जकाँ आशयकेँ निजी अनुभवक सम्पूर्ण अमान्यता कहब ठीक नहि; सामाजिक भाषा ज्ञानक अर्थ प्रभावित करैत अछि, किन्तु विशेष तथ्यक साक्ष्य अलग रहैत अछि। कवि ज्ञानक विनयकेँ सर्वसन्देह बनयबासँ बचबैत छथि: सीमित ज्ञानो तर्कसहित सार्वजनिक निर्णयक आधार भऽ सकैत अछि।

अन्तक निर्देश—जे जानल, ओकर आधार पूछू; आधारक सीमा देखू—समीक्षात्मक प्रवृत्तिक एक क्रमबद्ध सूत्र अछि। ‘अनुभवक कसौटी’ अनुभवक बहुरूपता देखबैत छल; एहि पद्यमे स्वयं कसौटीक प्रमाणिकता, तर्कक पृष्ठभूमि आ आत्मसमीक्षाक विधि दीर्घ विस्तार पबैत अछि। शिल्पमे दीप, देहरी, दर्पण आ तलघरक ध्वन्यात्मक पुनरावर्तन अछि, मुदा दीर्घता कारणेँ पृथक् वैचारिक उपखंडक सीमा कखनो धुँधल होइत अछि। कविता सिद्धान्तक निर्णय सुनयबाक बदला प्रमाण-प्रश्न जागृत करबाक पाठशाला रूपमे अधिक समर्थ अछि।

२१९. देहक भीतर “हम” — शरीर, आत्मबोध आ प्रथमपुरुषक व्याकरणक दार्शनिक परीक्षा

‘ई हमर शरीर’क सहज वाक्यक भीतर ‘हमर’ कहनिहार कोन सत्ता अछि—एहि प्रश्नसँ देह आ आत्मक दीर्घ विवाद आरम्भ होइत अछि। हाथ, श्वास, थकान आ आँखिक विवरण शरीरकेँ केवल निष्क्रिय पदार्थ नहि, अनुभवक सन्निकट स्थल बनबैत अछि। प्रश्नक रूपमे आत्माक अलग सत्ता, देहक जाग्रत अनुभव आ व्यक्ति-परिचयक सम्भावित दृष्टिसभ एकहि भूमिपर उपस्थित अछि; कविता पहिलहि पाँतिमे कोनो एक सिद्धान्तकेँ अन्तिम प्रमाण मानि नहि लैत।

‘हमर शरीर’ व्याकरणसँ देहसँ बाहर स्वतंत्र आत्मा स्वतः सिद्ध नहि होइत—ई रचनाक महत्वपूर्ण भाषादार्शनिक सतर्कता अछि। स्वत्ववाचक शब्दक व्यवहार आ अस्तित्वगत द्वैतक तर्कसिद्धि अलग श्रेणी अछि। एहि तर्कक संग बिम्बात्मक शारीरिकता चलैत अछि: मायक स्पर्श, श्रमक पसीना, भोजनक स्वाद, आँसू आ नृत्यक लय। देहकेँ केवल निम्न कारागार मानबाक विरुद्ध ई लोकानुभव साक्ष्यक नैतिक दबाव उत्पन्न करैत अछि।

देहात्मवादक चर्चा शरीरक भीतर ज्ञान, कला, न्यायबोध आ प्रेमक क्षमता पहिचानबाक दिशा खोलैत अछि। मुदा व्यक्ति-परिचय, स्मृति, चेतना आ देहक बीच वास्तविक सम्बन्धक समस्त दार्शनिक कठिनाई एहि एक काव्यसँ निराकृत नहि भऽ जाइत। प्रथमपुरुषक भावनात्मक विश्वसनीयता आ वस्तुपरक तर्कक प्रमाण अलग राखब आवश्यक अछि। एहि विधिगत भेदक कारण रचना देहक प्रतिष्ठाक पक्षधर रहितहुँ विचार-विरोधी भौतिकवादक प्रचार मात्र नहि बनैत।

‘सृजनक भीतर मनुष्य’ सृजनशील व्यक्तिक सांस्कृतिक सत्ता प्रस्तुत करैत छल; ‘देहक भीतर “हम”’ ओहि सृजनशीलताक शारीरिक आधार पूछैत अछि। आरम्भ आ अन्तमे ‘हम’क पुनरागमन पात्रक आत्म-पहिचानकेँ शिल्पगत धुरी बनबैत अछि। दीर्घ उदाहरणक बीच जे प्रश्न बचल रहैत अछि—‘हम के?’—से पद्यक खुलल दार्शनिक अन्त अछि। एहिमे निश्चित मतसँ बेसी प्रश्नक स्तर स्पष्ट करब काव्यक उपलब्धि अछि।

२२०. सुन्दरक सीमा सँ पार कला — सौन्दर्यबोध, रुचिक इतिहास आ सृजनक सार्वजनिक रूप

‘फूल सुन्दर अछि’—एहि सहज निर्णयक भीतर वस्तुक रूप, मनक प्रतिक्रिया आ सामाजिक शिक्षाक सम्भावित हिस्सेदारीक प्रश्न अछि। रचना आरम्भे सौन्दर्यकें केवल रंगक बाह्य गुण वा मनक क्षणिक पसिन्नगीमे समेटबाक विरुद्ध अछि। सन्ध्या, गीत, चित्र आ कविता एकहि ‘सुन्दर’ पदक अन्तर्गत आएतहुँ एकहि संवेदन-माध्यम आ कालिक अनुभव नहि रखैत अछि; भिन्न माध्यममे सौन्दर्यक शर्तों भिन्न होइत अछि।

पुरान राग आ नव प्रयोगक सम्बन्धमे ‘कलाकार उत्तराधिकारी सेहो, विद्रोही सेहो’क आशय दीर्घ परम्परा आ व्यक्तिगत मौलिकताक तनाव देखबैत अछि। नव कृति पुरान अनुकरण मात्र नहि, मुदा पूर्वक भाषा, लय आ कलागत प्रशिक्षण बिनु सदा शून्यसँ सेहो जन्मैत नहि। ‘एक राग रात्रि मे एक अर्थ, दोपहरि मे दोसर’क बिम्ब ग्रहणक परिस्थिति बदललासँ अर्थक नवीकरण दर्शबैत अछि। ई भिन्नता मनमाना सौन्दर्यवाद नहि; वस्तु, प्रशिक्षित दर्शक आ प्रसंगक सक्रिय सम्बन्ध अछि।

कलाकार निजी अनुभूतिमे बन्द रहलासँ कला सार्वजनिक साझा रूप नहि बनैत। व्यक्तिगत दुःखक कविता बनलापर पाठक ओकर भाषा, लय आ बिम्बक माध्यमसँ अलग अनुभवमे प्रवेश करि सकैत अछि। एतय सौन्दर्यशास्त्र सामाजिकता सँ कटैत नहि; कलाक सहानुभूति उत्पन्न करबाक सम्भावना अछि, किन्तु सहानुभूतिक वास्तविक परिणाम हर पाठकपर एकहि नहि। पद्य स्वयं रूप, सामग्री आ ग्रहणक बीचक प्रक्रिया बारम्बार देखबैत अछि।

अन्तमे वस्तु न बदलितहुँ ‘देखनिहार’ बदलि जाइत अछि—ई रूपक ‘समयक पायल’क स्थिर मूर्ति आ बदलैत आँखिक पूर्व छविक विस्तृत रूप अछि। काव्यक दीर्घ व्याख्यात्मकता सुगठित अल्पगीतक तीव्रताकें कखनो कम करैत अछि; मुदा मनुष्यक सृजन, सृजित वस्तुक रूप आ ग्रहणकर्ताक दृष्टि बीच कला-सम्बन्धक त्रिकोण स्पष्ट बनैत अछि। एहि कारण सौन्दर्यकें उपभोगक क्षण नहि, विचार आ सामाजिक अनुभवक परिवर्तनकारी अवसर रूपमे पढ़ब उचित अछि।

‘नन्हि चिंगारी’सँ ‘सम्पूर्ण आकाश’ धरि बढ़ैत प्रश्नक रूपक व्यक्तिगत जिज्ञासाक विस्तार देखबैत अछि। देहक थकान, मनक भटकन, बुद्धिक संशय आ हृदयक पुकार—ई चारि अनुभूतिसँ मनुष्यक जीवन बहुस्तरीय रूपमे राखल गेल अछि। कविता अखण्डता केँ विभेदक हिंसक उन्मूलन नहि, परस्पर-सुनवाइक क्षमता कहैत अछि। ‘अखंडता भिन्नता मिटाएब नहि’क कथन एही कारण जाँचब योग्य सूत्र अछि।

आध्यात्मिक साधनाक मूल्यांकनमे पद्य किछु कठोर प्रश्न उठबैत अछि: ‘यदि हमर मुक्ति केवल हमर, तँ “हम” केर घेरे अखनो टूटल नहि’। एहि पाँतिमे व्यक्तिगत मुक्तिक आदर्श सामाजिक उत्तरदायित्वक संग संवाद करैत अछि। यद्यपि प्रत्येक आध्यात्मिक परम्पराक मोक्षक अर्थ एकरूप नहि, कविता ओहि मतसभक विस्तृत शास्त्रीय भेद प्रस्तुत नहि करैत। तकरा बदला मुक्तिचिन्तनक नैतिक परिणाम—करुणा, संयम आ साझा जीवन—देखैत अछि।

प्रार्थना, मन्त्र आ गीतक भिन्न क्रियापरस्परता संग्रहक भाषिक बहुलताक प्रश्नसँ जुड़ैत अछि। जँ भिन्न साधनक अनुभव समान कहि मेटा देल जाए तँ जीवित परम्पराक विशिष्टता घटत; जँ सभ अनुभव पूर्णतः असम्बद्ध मानल जाए तँ सार्वजनिक संवाद कठिन होयत। पद्य एहि दुनू अतिशयक बीच ‘एक-दोसरक स्पन्दन सुनब’क काव्यात्मक उपाय सुझबैत अछि।

शक्ति आ मर्यादा, चिन्तन आ कर्म, बीज आ समयक बिम्ब प्रयोगसँ कविता आत्मसाधनाकेँ दीर्घ श्रमक रूप दैत अछि। ‘एक वृद्ध केँ जल देब, एक दुखी मित्र केँ सुनब’ सन दृश्यमे अमूर्त आध्यात्मिक लक्ष्यक प्रत्यक्ष नैतिक कसौटी भेटैत अछि। ई कृपा व्यक्तिगत अनुभूतिक दावा पर सार्वजनिक परिणामक प्रश्न उठबैत अछि। एहि ठाम काव्यक सामाजिक अर्थ सुस्पष्ट अछि।

‘जगतक सङ्ग जागब’मे सम्बन्धक भार स्वीकारब जागरण छल; एहि पद्यमे सम्बन्ध ध्यान, शक्ति, दया आ नैतिक निर्णायक व्यापक अभ्यास बनैत अछि। उधार लीहल आध्यात्मिक शब्दावलीमे कखनो अत्यधिक समन्वयक प्रवृत्ति देखाइ पड़ैत अछि, मुदा अन्त ‘खंड अपन अस्तित्व गुमबैत नहि’ कहि मुख्य संकटकेँ स्पष्ट रूपसँ पहचानैत अछि। स्वत्वक मान बचल रहि व्यापकता अर्जित करब रचनाक मुख्य आलोचनात्मक उपलब्धि अछि।

२२२. ध्वनिक पार अर्थक उजास — क्षणिक उच्चारण, अर्थनिर्माण आ भाषिक समुदाय

ओठसँ निकलल एक अक्षर हवा मे काँपैत कान धरि पहुँचैत अछि आ तकर बाद मौनमे बिलाइत अछि। उच्चारणक क्षणिकता सँ रचना आरम्भ करैत अछि, मुदा वाक्यक अर्थ कइसे अपेक्षाकृत स्थायी अथवा साझा बनैत अछि, ई प्रश्न क्रमशः प्रमुख होइत अछि। शब्द ध्वनिक समयगत क्रम अछि; तइयो वाक्यक अर्थ प्रत्येक अक्षरक अलग-अलग संवेदनाक सरल जोड़ मात्र नहि। कवि बिजलीक चमकमे पूरा आँगन देखाइ पड़बाक रूपकसँ अर्थक संकेन्द्रित अनुभव देखबैत छथि।

सुनल ध्वनि क्षणमे समाप्त भऽ सकैत अछि, मुदा स्मृतिक ‘हलुक छाप’ अर्थग्रहणक प्रक्रियामे बचल रहैत अछि। शब्दसमूहक क्रम, सन्दर्भ आ श्रोता-विशेषक पूर्वज्ञान एक संग काम करैत अछि। एहि प्रसंगमे भाषिक नित्यता आ ध्वनिक अनित्यता सम्बन्धी भारतीय व्याकरणपरम्पराक बहस स्मरण होइत अछि; तथापि कविताक उपमाकेँ कोनो विशेष स्फोटसिद्धान्तक शब्दशः प्रतिपादन मानल नहि जा सकैत। तकर लेल मूल शास्त्रीय प्रतिज्ञा अलग पढ़ब आवश्यक होयत।

कविता पुछैत अछि अर्थ ध्वनिमे, बोलनिहारक आशयमे, सामाजिक प्रयोगमे अथवा श्रोताक ग्रहणमे कतय टिकैत अछि। एहि संभावित उत्तरसभक बीच संवाद अछि, एकल तुरन्त निर्णय नहि। ‘शब्द अपन शब्दकोश सँ अधिक लऽ चलैत अछि’क कथन प्रयोगक ऐतिहासिक स्मृति आ वर्तमान प्रसंगक भूमिका चिन्हबैत अछि। मुदा शब्दकोशक सामान्य अर्थ पूर्ण अनुपयोगी नहि; ओ अर्थसंगतिक एक आवश्यक सन्दर्भ दऽ सकैत अछि।

विशाल शब्दक कारण ‘बड़ धुँआओ’ उठबाक चेतावनी भाषिक अस्पष्टता आ अधिकारपूर्ण वचनक सम्मोहन पर प्रहार अछि। पाठमे वैज्ञानिक सूचना, नैतिक आग्रह, आत्मानुभूति आ काव्यात्मक रूपकक भिन्न कार्य उठैत अछि। एतय प्रत्येक प्रसंगक सत्यमूल्यांकन लेल बराबर एकहि कसौटी पर्याप्त नहि; तथापि सुस्पष्टता आ सार्वजनिक उत्तरदायित्व सभमे अपेक्षित भऽ सकैत अछि।

‘प्रश्नकेँ खोलू’, ‘धीरे सुलझल डोर’ आ ‘अर्थक खुलल वन’ सन पूर्व पद्यसभमे अर्थक व्यवहार-आधारित प्रश्न छल। एहि दीर्घ रचनामे ध्वनिक भौतिक घटना सँ अर्थक सामूहिकता धरि पूरा मार्ग विस्तृत होइत अछि। एतय भाषा महज संकेतनक यन्त्र नहि, लोकक बीच संबंध बनबैत आ

पुनः विच्छेदित होइत राह अछि। कविता स्वयं बहुत लम्बा विवेचनात्मक मुक्तलय अपनबैत अछि, जकरा कारण लयक कसावट कखनो कम भऽ जाइत अछि।

अन्तिम ‘भाषा केवल बोलनाइ नहि, एक-दोसर धरि मनुष्यक सभसँ पुरान आ अखनो अधूर यात्रा’क ध्वनि संग्रहक भाषाविचारकें मानवीय सम्बन्धमे समेटैत अछि। वास्तविक भाषिक विभिन्नताक उदाहरण आ मूल स्रोतक ऐतिहासिक पाठान्तर एहि कवितामे व्यवस्थित प्रमाणसहित नहि अछि; ई काव्य-दार्शनिक चिन्तन अछि। ओहि सीमा स्वीकारने पर सेहो ध्वनि, स्मृति आ परस्परसम्बोधनक क्रम एक सुसंगत आलोचनात्मक संरचना प्रस्तुत करैत अछि।

२२३. भीतरक दरबज्जा पर उजास — स्वर-शोध, आत्मस्वाधीनता आ सामाजिक सजगता

‘कतेक आवाज हमर भीतर हमर अपन नहि’क पहिल वाक्य सामाजिक आग्रह आ आत्मानुभूतिक अन्तर उठबैत अछि। व्यक्ति बहुत कथन परिवार, परम्परा, राजसत्ता आ समुदायसँ ग्रहण करैत अछि; मुदा ग्रहण कएल बातक सत्यक जाँच स्वयं करब आवश्यक अछि। ‘सत्य कोनो सम्प्रदायक एकाधिकार नहि’क वाक्य धार्मिक विविधताकेँ पारस्परिक आलोचनासँ जोड़ैत अछि। ई कथन सभ धार्मिक मत समान अछि एहन निष्कर्ष नहि, बल्कि कुनै एक समूहक अनधिकृत एकाधिकारक विरोध अछि।

राजसत्ता बदलितहुँ सत्ताक भूख बनल रहबाक चित्र संस्थागत परिवर्तन आ चरित्रगत परिवर्तनक अन्तर देखबैत अछि। ‘भूख मिटाउ, मुदा मनुष्य केँ केवल पेट नहि बनाउ’क समतोल वाक्य शरीरक आवश्यकता आ आत्मगरिमाक प्रश्न दुनूकेँ स्थान दैत अछि। एहिसँ कविताक अध्यात्म सामाजिक अभावक उपेक्षा नहि, मनुष्यक अनेक आवश्यकता सुनबाक अभ्यास बनि सकैत अछि।

‘सन्देह यदि केवल नकार, तँ ओहो एक बंद दरबज्जा’—एहि पाँतिक महत्त्व ई जे आलोचनात्मक तर्क अपनेमे नकारात्मक प्रवृत्तिक अन्धरूप ग्रहण करि सकैत अछि। सत्यक परीक्षण परम्पराक विरुद्ध होब आवश्यक नहि, जँ परम्पराक दावा सेहो जाँच सहैत अछि। वनमे बरगद, बाँस, घास आ लताक भिन्न उपस्थितिक बिम्ब बहुवचनकेँ प्रकृतिक सादृश्य दैत अछि। परन्तु ई प्राकृतिक उपमा मतभेदक तार्किक निर्णयक विकल्प नहि।

रचनाक मध्य आ उत्तरार्धमे निकट प्रेम आ स्वामित्वक हिंसक आग्रहक अन्तर, करुणा आ दिखावाक भेद, स्तब्ध मौन आ जीवित नैतिक प्रत्युत्तरक भेद बारम्बार अबैत अछि। ‘साँच प्रेम निकटता, मुदा पंख काटब नहि’क रूपक स्वतन्त्रताक साझा शर्त अछि। ‘सम्बन्धमे रहू, मुदा स्वामित्व आत्मा पर नहि’क आग्रह व्यक्तिक गरिमा बचबैत अछि। एहि रूपमे काव्य आत्मज्ञानक निजी यात्रा लोकसम्बन्धमे लऽ जाइत अछि।

‘अध्यात्म जतय मनुष्यक सामाजिक घाव देखय नहि, ओतय धरती खोइत अछि’क विधान शास्त्रार्थक आन्तरिक विस्तारक सामाजिक कसौटी अछि। ई विधान अपनहि रूपमे सिद्धान्तक नाम नहि, कविताक नैतिक मूल्यांकन अछि। श्रम, भूख आ गरिमाक ठोस ऐतिहासिक विषमता

अलग प्रमाण चाहैत अछि। पद्यक सफलता एतय अछि जे ध्यान आ मुक्तिक शब्दकें सामाजिक परिणामसँ प्रश्न करबाक शर्त बनबैत अछि।

‘जागरण दोसरक नाम याद रखब नहि’क उत्तरार्धीय भावकें व्यक्तिक पूर्ण पहचान सुनबाक बिम्ब रूपमे पढ़ल जा सकैत अछि। ‘अखंड आकाशक बाट’मे व्यक्ति-समाजक अनेक आयामक मेल छल; एतय अपन भीतर प्रतिध्वनित परभाषित स्वरक आलोचनात्मक पहिचान विशेष विषय अछि। दीर्घ प्रश्नोत्तर आ घोषणाक आवर्तन गीतात्मक उत्कर्षक सघनता घटबैत अछि, मुदा आत्मस्वाधीनता आ करुणाक मूल सूत्र रचनाकें संगठित करैत अछि।

कविता अपनहि भीतर जमा ‘घरक, समाजक, शास्त्रक, भीड़क, भयक’ आवाजसँ आरम्भ करैत अछि। ई सूची मात्र परम्पराक विरोध नहि, मानल सत्य आ जीअल सत्यक अन्तर परीक्षणक आरम्भ अछि। पाठक प्रश्न—सुनल बातकें प्रत्यक्ष अनुभवक कसौटीपर रखल गेल कि नहि—विश्वासक निष्क्रिय उत्तराधिकारपर चोट करैत अछि। ‘नाव नदी नहि’ आ ‘नक्शा धरती नहि’क भेद प्रतिनिधित्व आ वस्तुक एकरूपता अस्वीकार करैत अछि; मुदा एहिसँ सभ शब्द अथवा साक्ष्य निष्फल सिद्ध नहि होइत। प्रतीक आ अनुभवक सम्बन्ध नब व्याख्याक ठाम खोलैत अछि।

आन्तरिक जागरणक आग्रह केवल निजी मनोविज्ञान नहि। पद्य स्पष्ट करैत अछि जे सिंहासन अथवा झण्डा बदलितहुँ अहंकार आ भय बचि सकैत अछि। राजनीतिक संस्थाक नवीकरण आ व्यक्तिगत प्रवृत्तिक शोधनक कार्य भिन्न अछि; एक-दोसरक विकल्प नहि। कविताक सार्थक सावधानी ई अछि जे ध्यान अर्थशास्त्रक स्थान नहि लेत, आ अर्थशास्त्र ध्यानक। एहि विरोध-युग्ममे भौतिक भूखक सच्चाइ आ अन्तर्मनक अस्थिरताकें अपन-अपन स्थान भेटैत अछि।

पूरब-पश्चिमक बीच खिड़की खोलबाक रूपक ज्ञानक आदान-प्रदानक पक्षधर अछि। घरक दीवार सम्पूर्ण गिरा देबासँ आश्रय समाप्त होयबाक चेतावनी तथाकथित सार्वभौमिकताक भीतर भाषिक-ऐतिहासिक विशेषताक हानि देखबैत अछि। एकहि साँसमें ‘नकल संवाद नहि’ आ ‘अस्वीकार स्वाभिमान नहि’ कहि रचना उधारक अन्धानुरण तथा आत्ममुग्ध अस्वीकार दूनूकें चुनौती दैत अछि। ई संग्रहक भाषिक स्वराज-विषयक विस्तृत चिन्तनसँ जुड़ैत अछि।

शिल्पक मूल उपकरण विपरीत पदक आवर्तक युग्म अछि—रोटी-मौन, देह-चेतना, दिन-राति, जन्म-मृत्यु। किछु विरोध वास्तवमे पूरक भऽ सकैत अछि, मुदा सभ नैतिक भेदकें निस्तेज करि

समान ठहरा देबाक जोखिम सेहो एहि पद्धतिमे छैक। पाठ स्वयं स्पष्ट करैत अछि जे अच्छा-बुराक भेद मिटेनाइ उद्देश्य नहि। अन्तक दृश्य बाहरी संसार तुरन्त न बदलितहुँ देखनिहारक परिवर्तन सम्भव कहैत अछि। एहिमे प्रबोधात्मक विस्तार अधिक अछि, तथापि भीतरक दरबज्जा आ खुलल आकाशक समानान्तर बिम्ब दीर्घ रचनाकेँ रूपात्मक एकता दैत अछि।

२२४. मनुखताक आँगनमे नव भोर — सामाजिक न्याय, अहिंसा आ लोकजीवनक पुनर्निर्माण

भोर आकाशसँ पहिने मनुष्यक भीतर उगैत अछि—रचनाक आरम्भ भोरक सामान्य प्रकृतिक दृश्यकेँ नैतिक जागरणक प्रतीक बनबैत अछि। ‘आँगन’ घरक निजी सीमा नहि, मानवीय सम्बन्धक सार्वजनिक उपस्थिति अछि। भूख, श्रम, जाति, स्त्रीक गरिमा, शिक्षा आ लोकतन्त्रक अनेक प्रसंग एहि विस्तृत आँगनमे प्रवेश करैत अछि। एहि कारण ‘मनुखता’ केवल मनक उदार भावना नहि, सामाजिक व्यवहारक जाँचब योग्य आदर्श अछि।

‘जन्म अवसरक दरबज्जा बन्द करय, ई अन्याय’क विधान जन्माधारित वंचनाक विरुद्ध मूल्य-निर्णय अछि। मजदूरक थाकल हथेली आ विद्वानक स्याही लागल आँठाक भिन्नता श्रमक काज अलग रहितहुँ मानवीय गरिमाक समानता सुझबैत अछि। ‘गरीबी पवित्रता नहि’क वाक्य अभावक महिमामण्डन पर प्रश्न उठबैत अछि। एहि दृष्टिसँ काव्य दयादर्शनकेँ संरचनागत न्यायसँ जोड़ैत अछि, खाली व्यक्तिगत दानपर नहि रुकैत।

‘लोकतन्त्र एक दिनक मतदान नहि’क कथन जनता, प्रतिपक्ष आ सत्ता बीचक निरन्तर सम्बन्धक प्रश्न अछि। नेता समाजसँ अलग आकाशीय व्यक्तित्व नहि; हुनकर आलोचनात्मक मूल्यांकन जनभागीदारीक अविभाज्य काज अछि। पद्य असहमतिपर भय आ नैतिक उदासीनताक विरोध करैत अछि। मुदा विशिष्ट शासन-व्यवस्था वा कानूनक प्रभावक तथ्य कवितामे शोधसहित नहि; आलोचनात्मक अध्ययनमे आदर्शक घोषणा आ ऐतिहासिक परिणाम अलग राखब आवश्यक अछि।

‘भूख बनाकऽ रखब हिंसा’क प्रश्न अहिंसाकेँ केवल देहपर प्रत्यक्ष चोट नहि, संरचनागत वंचनासँ सेहो जोड़ैत अछि। ई नैतिक विस्तार करुणा आ अधिकारक अन्तर्सम्बन्ध खोलैत अछि। तथापि गरीबीक प्रत्येक घटना जानबूझि कएल हिंसक कर्मक समान अर्थ नहि—कारण, संस्था आ नीतिक विश्लेषण अलग आवश्यक अछि। कविताक मूल्य न्यायपरक प्रश्नक आरम्भ करब अछि, सभ सामाजिक परिघटनाक प्रमाणित वर्गीकरण नहि।

परम्पराक पुरान होयब सत्यक स्वतः प्रमाण नहि, पूजा करब दैनिक जीवनमे गरिमा देबाक विकल्प नहि, आ आध्यात्मिकता समाजसँ भागब नहि—ई दृष्टान्त काव्यक व्यावहारिक नैतिकता

बुनैत अछि। ‘एतबा सँ की होएत?’क संशयकेँ छोट कर्मक सम्भावनासँ उत्तर देल गेल अछि। व्यक्तिगत निर्णय आ संस्थागत सुधारक दूरी बुझबाक लेल ई प्रश्न महत्वपूर्ण अछि।

‘हम अकेला नहि, मुदा हम मिटायलो नहि’क अन्तिम स्वर व्यक्तिक स्वतन्त्रता आ सामूहिक उत्तरदायित्वक जोड अछि। ‘व्यक्ति आ समाजक बीच खुलल प्रश्न’क विस्तृत सामाजिक विवाद एतय लोकजीवनक दृश्यात्मक नैतिक आह्वान बनैत अछि। पद्य बहुत प्रसंग समेटैत अछि; प्रत्येक सामाजिक इतिहासक अन्वेषण गहन नहि भऽ पबैत, मुदा आँगनक रूपक विस्तारक बीच मानवीय निकटता अक्षुण्ण रखैत अछि।

‘भोर पहिने आकाशमे नहि, मनुष्यक भीतर उगैत अछि’ सँ सामाजिक रूपान्तरणक निजी नीतिगत आरम्भ निर्धारित होइत अछि। अन्न, सड़क, भाषा आ श्रमक अदृश्य सम्बन्ध गिनबैत पद्य व्यक्तिक पूर्ण आत्मनिर्भर होयबाक मिथकपर प्रश्न उठबैत अछि। समाजकेँ धागासँ बुनल कपड़ा कहलासँ पारस्परिक आश्रय काव्यात्मक रूप पबैत अछि; मुदा व्यक्तिक अपन स्वर निगलि लेनिहार सामूहिक दबावकेँ सेहो स्पष्ट रूपसँ कारागार कहल गेल अछि। ई दूधारी परीक्षण सहकार आ व्यक्तिस्वातन्त्र्य दुनूक गरिमा राखैत अछि।

घरक दैनिक व्यवहार—रोटी बाँटब, बुजुर्गसँ बाजब, स्त्रीक श्रमक सम्मान, काम करनिहारक नाम लऽ सम्बोधन—द्वारा समाजक नैतिक शिक्षा प्रत्यक्ष होइत अछि। औपचारिक उपदेशक बदला मामूली दिनचर्याक पुनर्पाठ एहि कविताक सर्जनात्मक उपलब्धि अछि। जन्मक आधारपर ऊँच-नीचक विरोधमे माटि, बरखा आ सूर्यक उपमा अछि; ई उपमा स्वयं सामाजिक न्याय-व्यवस्थाक पर्याप्त विधिक प्रमाण नहि, मुदा मनुष्यनिर्मित श्रेणीक सहज स्वाभाविकीकरणकेँ चुनौती दैत अछि।

भ्रष्टाचारकेँ ‘विश्वासक चोरी’क रूप देल गेल अछि; अधिकारी, व्यापारी आ शिक्षकक अलग व्यवहारक उल्लेखसँ संस्थागत उत्तरदायित्वक भिन्न ठाम देखाइ पड़ैत अछि। एकल सदाचार सामाजिक संरचनाक सभ दोष सुधारि देत, एहन सरलीकरणसँ रचना बचैत अछि, किएक तँ कानून, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, परिवार आ संस्कृतिक परस्पर सम्बन्ध स्वीकार कएल गेल अछि। व्यक्तिक ‘चरित्र’ आ संस्थाक सार्वजनिक परीक्षणक द्वैत एहि संग्रहक दीर्घ सामाजिक विमर्शकेँ आधार दैत अछि।

अन्तिम छोट बीआसभ—बेटी लेल समान अवसर, जातिगत पाँतिक उल्लंघन, बिनु जाँच अफवाह नहि फैलाएब—बड़ सामाजिक उद्धोषणाकें स्थानीय कर्मक बिम्बमे बदलैत अछि। तरु, बीआ आ भोरक पुनरागमन आशावादकें क्रमिक परिवर्तनक रूप दैत अछि। सीमा ई जे समाजशास्त्रीय व्यापक प्रस्तावसभक विशिष्ट ऐतिहासिक आँकड़ा एहि पद्यमे उपलब्ध नहि; ताहि हेतु एकरा प्रमाणित सर्वेक्षण नहि, मूल्य-प्रधान काव्यात्मक सामाजिक तर्क रूपमे पढ़ब युक्तिसंगत अछि।

२२५. जतय मनुख मनुखक उजास — गरिमा, सार्वजनिक पहुँच आ दैनन्दिन न्याय

‘एकटा घर दीवार सँ नहि, आवाज सँ बनैत अछि’क प्रारम्भ समाजक संस्थागत रूपकें जीवित सम्बोधनक आधार देबैत अछि। रचनाक दीर्घ विस्तारमे असपृश्यता, बीमारी, बाजार, शिक्षाक अधिकार, स्त्रीक स्वतन्त्रता, सार्वजनिक सुविधा आ स्वास्थ्यसेवाक पहुँच क्रमशः अबैत अछि। शीर्षकक ‘उजास’ आत्मस्तुतिक उज्जर छवि नहि, एहन सम्बन्धक मान अछि जतय एक मनुष्य दोसराक जीवनकें अपमानक वस्तु नहि बनबैत।

‘अस्पृश्य मनुष्य नहि’क स्पष्ट कथन जाति आधारित अवमाननाक नकार अछि। ‘नग्न पयर ककरो नैतिक ऊँचाईक प्रमाण नहि’ गरीबीक काव्यात्मक रोमानीकरणक विरुद्ध प्रतिवाद। ई दू उदाहरण सामाजिक यथार्थक अलग बीमारी चिन्हबैत अछि: एकमे जन्माधारित बहिष्कार, दोसरमे अभावकें गुण बनाकऽ असमानता ढकबाक प्रवृत्ति। रचनाक न्यायबोध भावुक परोपकारसँ आगाँ समाजक दृष्टिक आलोचना माँगैत अछि।

व्यापारीक कम मापन आ बाजारक नैतिकताक कमी बीच सम्बन्ध बाजारकें केवल विनिमयक तथ्य न मानि भरोसक सार्वजनिक स्थल बनबैत अछि। उद्योग बढ़ला पर नदी मरब विकासक अपूर्णता उजागर करैत अछि। ‘रास्ता एहन हो जे सभ पयर, सभ चक्का, सभ गति सम्मान पाबय’ शहरक रचना आ दिव्यांग पहुँचक प्रश्न धरि समाजक नैतिक कसौटी बढ़बैत अछि। एहि प्रसंगसभमे कविता विधान देबैत अछि, विस्तृत आर्थिक आँकड़ा नहि।

‘स्त्री कें देवी कहि मनुष्यक स्वतन्त्रता न छीनू’क पाँति सांस्कृतिक आदर्शीकरण आ वास्तविक अधिकारक अन्तर खोलैत अछि। युवा कें समस्या कहलासँ हुनकर आकांक्षा, शिक्षा आ सहभागिता न बुझल जा सकैत। बालककें अपमानित करि आज्ञाकारिता भेटि सकैत अछि, जिम्मेदार नागरिक नहि। एहि भिन्न वाक्यसभक साझा सूत्र अछि मानवीय गरिमाकें दोसरक नामपर नियन्त्रण करबाक साधन नहि बनाओल जाए।

रचनामे सञ्चार माध्यमक छोट डिजिटल क्रिया, सार्वजनिक स्वास्थ्यसेवाक वास्तविक पहुँच आ पड़ोसीक प्रति निकट करुणाक प्रश्न सेहो अछि। ‘दूरक मानवता सहज, पड़ोसी कठिन’क उलटाव नैतिक घोषणाक वास्तविक परीक्षा दैनिक व्यवहारमे रखैत अछि। ‘अस्पताल बढ़ल—

मुदा पहुँच?’ प्रश्न संस्थाक संख्या आ सेवा-प्राप्तिक अन्तर जनबैत अछि। ई भेद शोधक लेल एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक इतिहासक संकेत अछि।

‘कृतज्ञता आ आलोचना एक संग रहू’क आग्रह रचनाक पद्धतिगत केन्द्र अछि। साझा जीवनक उपकार मानल जाए, मुदा ओहि कारण अन्याय पर प्रश्न बन्द नहि हो। एहि सन्तुलनमे रचना संस्कृति, परम्परा आ विकासक सबै सकारात्मक कार्यक स्थान राखैत, तकर अपूर्णता देखैत अछि। अन्तिम ‘जतय मनुख मनुखक अन्हार नहि, उजास होएत’क अर्थ समाजक दोष केवल नकारब नहि, सहकार्यक सम्भावना बचबैत भविष्य बनायब अछि।

सङ्ग्रहक ‘मनुखताक आँगनमे नव भोर’क आदर्श एतय विस्तृत स्थानीय-वैश्विक प्रश्नसभसँ जाँचल जाइत अछि। बहुत दीर्घता, घोषणामूलक पुनरावृत्ति आ दृश्यान्तरक तीव्र गति एतय शिल्पगत चुनौती अछि; पाठककेँ अनेक उपविषयक बीच ठमकि बुझबाक अवकाश सदिखन नहि भेटैत। मुदा बालक, स्त्री, श्रमिक, रोगी आ मार्गचारीक पृथक उपस्थिति समेकित नैतिक भाषा केँ जीवित मानव-आकार दैत अछि।

आरम्भक बच्चाक हँसी, वृद्धक खाँसी आ थाकल हाथक ताप घरकेँ निर्जीव भवनसँ सम्बन्धक स्थान बनबैत अछि। एहि घरक विस्तार वृक्ष, अन्न, पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलैत भाषा धरि होइत अछि; मनुष्य एकल कथा नहि, साझा जीवनक बीच लिखल पाँति अछि। जाति, धन, लिंग, पेशा, भाषा आ विश्वासक नामपर उठल दीवारसभक विरोध मूल बिम्बक उलट अर्थ अछि: जे घर आवाजसँ बनल, ओहि घरक भीतर प्रवेश-प्रतिबन्ध मनुखताकेँ खण्डित करैत अछि।

‘स्त्री केँ देवी कहि मनुष्यक स्वतन्त्रता न छीनू’ पाँति स्तुतिपरक सम्मान आ वास्तविक अधिकारक कठोर भेद करैत अछि। पूजा आ बराबर निर्णयक अधिकार, घरक अदृश्य श्रम आ सार्वजनिक मान्यता, बालकक वर्तमान गरिमा आ केवल भविष्यक नागरिकक उपमा—ई सभ ठोस प्रतिपक्ष रचनाक मूल्यदृष्टिक गहिर स्तर अछि। पुरुषपर थोपल कठोरताक साँचा सेहो प्रश्नक घेरेमे अछि; एतय समता एक लिंगक विरुद्ध दोसर लिंगक पक्षधरता नहि, पूर्वनिर्मित भूमिकासँ मुक्ति अछि।

भिन्न देहक व्यक्तिक लेल बनल सङ्क, विद्यालय आ कार्यालयक प्रश्न विशेष उल्लेखनीय अछि। बाधाकेँ केवल व्यक्तिक देहक दोष मानबाक बदला सार्वजनिक रचनाक संरचनागत

अनुपयुक्तता देखल गेल अछि। मानसिक पीड़ासँ जुड़ल अपमानजनक सम्बोधन सेहो नैतिक कर्मक रूपमे जाँचल गेल अछि। एतय भाषाक सामाजिक शक्ति पर कविक पूर्व चिन्तन, ‘ध्वनिक पार अर्थक उजास’क अर्थ-निर्माणसँ, अधिक प्रत्यक्ष विधिक आ सामाजिक परिणाम धरि बढ़ैत अछि।

कविता समाजप्रेमक अर्थ अन्ध गौरव नहि मानैत: छत टपकल कहि देब घरक अपमान नहि, ओकर मरम्मतक आरम्भ अछि। अधिकार, स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवेश आ वृद्ध-सम्मानक विस्तृत बहस मे आलोचनात्मक स्वर स्पष्ट अछि। तथापि अत्यधिक विषय-विस्तारक कारण पहिल घर-बिम्बसँ कुछ दूरक सामाजिक प्रसंग कखनो एक स्वतंत्र निबन्ध जकाँ देखाइत अछि; ई दीर्घ पद्यक रचनात्मक सीमा अछि। अन्तक चारि कथन—अकेला नहि, मिटायलो नहि; भिन्न मुदा कम नहि; स्वतन्त्र मुदा उत्तरदायी—समावेशक नैतिक शर्तसभ केन्द्रीय रूपमे समेटैत अछि।

२२६. अदृश्य तराजूक उजास — मूल्यक्रम, न्याय आ अन्तरात्माक प्रश्नात्मक तौल

मनक भीतर दिनराति हिलैत ‘अदृश्य तराजू’क उद्घाटन नैतिक मूल्यांकनकेँ भौतिक मापनक उपकरणक रूपक दैत अछि। ई तराजू रूपया वा अनाज तौलयवला नहि, व्यक्तिगत चुनावक तात्पर्य आ परिणाम जाँचबाक चिन्ह अछि। प्रशंसा बिना बीमार पड़ोसी लेल औषधि पहुँचायब, निज लाभ छोड़ि सत्यक पक्ष लयब सन उदाहरण मूल्यकेँ प्रत्यक्ष कर्मसँ जोड़ैत अछि।

‘धन सँ विश्वास? नहि’क प्रश्न आर्थिक सम्पत्ति आ सम्बन्धगत आस्था बीचक भेद स्पष्ट करैत अछि। धनक उपयोग महत्त्वपूर्ण भऽ सकैत अछि, मुदा ओकर मात्रा विश्वास, स्नेह अथवा नैतिक उचितताक पर्याप्त कसौटी नहि। ‘ककरो लेल धर्म’, ‘ककरो लेल सत्य’ सन पदक कारण कविता मानवीय निर्णयक भिन्न लक्ष्य देखबैत अछि; तइयो सभ घोषित मूल्य स्वतः नैतिक रूपसँ समान स्वीकार्य नहि। ई अन्तर मूल्य-आधारित सामाजिक आलोचनाक आवश्यक पक्ष अछि।

‘जे धन सभसँ ऊपर, ओकर जीवन धनक दिशामे मुड़त’ मूल्यक्रम आ व्यवहार बीचक सम्बन्ध अछि। मनुष्यक घोषित सर्वोच्च आदर्शक मूल्यांकन ओकर जीवनक निर्णयक अनुकूलता सँ करबाक काव्यक आग्रह अछि। आदर्शकेँ केवल दीवारक चित्र नहि, कर्मक पथनिर्देशक मानल गेल अछि। अतः कथन आ व्यवहार बीचक फाँक रचनामे नैतिक परीक्षा बनैत अछि।

न्याय आ प्रतिशोधक भेद, करुणा आ घृणाक भेद, स्वतन्त्रता आ स्वार्थक भेद रचनाक विस्तृत मध्यभागमे बारम्बार उठैत अछि। ‘न्याय प्रतिशोध न हो’क विधान दोषक उत्तरदायित्व नकारैत नहि, दण्डक उद्देश्यक समीक्षा करैत अछि। ‘मूल्य समाप्त अवस्था नहि, विकासक आह्वान’ कहि कवि परिपूर्ण नैतिक व्यक्तिक स्थिर प्रतिमासँ दूर रहैत छथि। मूल्यक अभ्यास सामाजिक सम्बन्धक भीतर संशोधनीय रहैत अछि।

तराजूक रूपकक एक सीमा अछि: वास्तविक नैतिक संघर्षमे सभ मूल्य एकहि मापदण्डपर संख्यात्मक रूपसँ तौलल नहि जा सकैत। न्याय, करुणा, स्वाधीनता आ सुरक्षा कखनो एक-दोसरसँ प्रतिस्पर्धा करैत अछि। कविता एहि कठिनाईकेँ स्वीकारि अलग दृष्टिकोणसँ निर्णय परखबाक आग्रह रखैत अछि। एकरे गणनात्मक नैतिक सिद्धान्तक अकाट्य स्थापना कहब अनुचित।

‘हरेक नीति तराजू’क सूत्र नीति-निर्धारणक सार्वजनिक परिणामक मूल्यांकनक सन्दर्भ खोलैत अछि। एतय केवल व्यक्तिक अन्तरात्मा नहि, संस्थागत वितरणक न्याय प्रश्नमे अछि। ‘व्यक्ति आ समाजक बीच खुलल प्रश्न’मे समाजक बजटक उदाहरण छल; एहि ठाम ओहि कठिन निर्णयक नैतिक भारक अमूर्त प्रतिमा विस्तार पबैत अछि। ‘मूल्यक भीतर संस्कृति’क तथ्य-मूल्य भेद सेहो एतय जीवनगत क्रियासँ अधिक जुड़ैत अछि।

अन्तिम उजास घृणाहीन न्याय, भयकें कम करबाक काज आ कष्टक प्रति उत्तरदायित्वक मध्य देखाइत अछि। ई सुखान्त पूर्ण नैतिक सिद्धावस्था नहि: तराजू निरन्तर हिलैत रहबाक कारण निर्णय फेर जाँचक विषय बनैत अछि। असाधारण लम्बाइ आ आदर्श-वाक्यसभक पुनरावृत्ति काव्यक लयमे असमानता अनैत अछि, मुदा ताराजूक आवर्तक प्रतिमा एहि विशाल विवेचनकें एक केन्द्र दैत अछि।

मनक भीतर हिलैत अदृश्य तराजू पद्यक केन्द्रीय बिम्ब अछि। भौतिक भार आ नैतिक वजनक अन्तर—सोना आ सत्य वचन, महल आ छोट घरक विश्वास—मूल्यकें बजारक मापसँ पृथक् करैत अछि। रोटी आ श्वासकें पहिल सीढ़ी मानल गेल अछि; तखन सम्मान, न्याय, प्रेम आ सौन्दर्यक चर्चा प्रारम्भ होइत अछि। एहिमे देहक आवश्यकता हेला कऽ आत्मोन्नतिक कल्पना नहि, बल्कि भौतिक परिस्थितिक स्वीकारसँ मूल्यबोधक आरम्भ अछि।

‘हमरा नीक लगैत अछि’ आ ‘ई नीक अछि’क भेद व्यक्तिगत रुचि आ तर्कसाध्य नैतिक निर्णयक अन्तर खोलैत अछि। शिशुक ‘हमर’ सँ ‘तोहर’ आ फेर न्यायपर प्रश्न धरि बढ़ैत यात्रा विकासक विवेचनात्मक रूपक अछि। ई सर्वत्र लागू मनोवैज्ञानिक नियमक प्रमाण नहि, मुदा नैतिक आत्मकेन्द्रिततासँ अन्तरव्यक्तिक उत्तरदायित्व धरि खुलैत संभावित मार्ग अछि। स्वीकृत परम्पराक मूल्य जाँचि सकबाक अधिकार रचना स्पष्ट रूपसँ सुरक्षित रखैत अछि।

अपने लेल चाहल स्वतन्त्रता दोसर लेल स्वीकारब, अपने सन्तानक विद्यालयक सुरक्षा दोसर सन्तान लेल चाहब—एहि उलटा दृष्टिक कसौटी सार्वजनिक नैतिक तर्ककें ठोस बनबैत अछि। तराजूक पल्ला भावनात्मक पक्षपातसँ हिलि सकैत अछि; ताहि कारण प्रेम आ करुणा न्यायक सम्पूर्ण विकल्प नहि। ई भेद ‘मनुखताक आँगनमे नव भोर’क भरोसामूलक सामाजिक कल्पनाकें प्रमाण, नियम आ समतामूलक निर्णय दिस लऽ जाइत अछि।

दीर्घ पद्यक शिल्प प्रेरक वाक्य, प्रश्नमाला आ वृक्षक बिम्बसँ बनल अछि। जड़ि, पात, फूल, फल आ छायाक क्रम जीवनरक्षा सँ अरुआ मानवीय मूल्य धरि गति दैत अछि। कतेक वाक्य प्रतिज्ञात्मक घोषणा जकाँ पुनरावृत्त होइत अछि; विस्तृत नैतिक प्रस्तावसभक बीच व्यक्तिगत घटना अथवा ऐतिहासिक संघर्षक विशेषता सीमित अछि। मुदा अन्तमे तराजूक काँटा स्थिर नहि, ‘मानवता दिस’ मुड़बाक सम्भावना अछि—ई निश्चित नैतिक गणितक बदला विवेकपूर्ण प्रक्रिया प्रस्तुत करैत अछि।

२२७. टूटल आइना मे अनेक आकाश — बहु-दृष्टिक इतिहास, सत्ताक भाषा आ आलोचनात्मक विघटन

एक केन्द्र, एक सत्य, एक इतिहासक कल्पनासँ पद्य आरम्भ होइत अछि; आइना टूटलापर विभिन्न टुकड़ामे एकहि अनुहारक भिन्न कोण देखाइत अछि। टूटब एतय केवल नाश नहि, एकचक्षु अधिकारक संकट अछि। ‘इतिहास के कहलक?’क प्रश्न राजाक विजयक प्रसंगमे सैनिकक विधवा, महलक प्रसंगमे ईंट ढोएनिहार आ युद्धक वर्षक प्रसंगमे खेत जोतनिहारक अनुपस्थितिसँ अधिक स्पष्ट होइत अछि। इतिहासक लेखनमे चयन आ मौनक भूमिका पर ई प्रश्न विदेह समानान्तर ऐतिहासिक पद्धतिक महत्त्वपूर्ण मूल चिन्ता अछि।

एक दंगाक पुलिस प्रतिवेदन, मायक स्मृति, पत्रकारक कथा आ बालकक भयक भिन्न प्रसंगसँ साक्ष्यक बहुस्तर निर्माण होइत अछि। मुदा बहु-दृष्टि अपनहि आपमे सभ कथन समान सत्य अछि, ई निष्कर्ष नहि। घटना, साक्ष्य, स्मृति, वर्गीकरण आ व्याख्याक अन्तर जाँचब आवश्यक। कवितामे साझा प्रमाण समझबाक अधिकार सार्वजनिक ज्ञानक शर्त अछि; ‘लोकप्रियता सत्यक माप नहि’क सावधानी लोकवृत्तकेँ अफवाहक एकाधिकारसँ अलग रखैत अछि।

परिभाषाक सत्ता—सामान्य, रोगी, अपराधी, योग्य, अयोग्य—ककरा दुआर खोलैत अथवा बन्द करैत अछि, एहि प्रश्नसँ भाषा-विचार सामाजिक संस्थामे प्रवेश करैत अछि। विद्यालयक पाठ्यक्रममे केवल एक समुदायक महिमा, भवनक सीढ़ीपर चक्का नहि चढ़ि सकबाक बाधा आ विशेषज्ञक दुरूह भाषा-प्रधानता, सभक उदाहरणमे ‘केन्द्र’क चुनाव राजनीति बनैत अछि। तथापि पद्य हरेक संस्थाक विघटनकेँ स्वतः न्याय नहि मानैत; प्रश्न विघटनक बाद ककरा लेल नब दुआर बनत सेहो अछि।

अन्तमे आइना टुकड़ा-टुकड़ा रहैत अछि, मुदा मेजपर सभ टुकड़ा संग रखल जाइत अछि। ई बिम्ब विरोधी व्याख्याकेँ जबरदस्ती एकरूप करबाक बदला सम्बन्धित करबाक आग्रह अछि। शिल्पमे घोषणात्मक द्वन्द्व आ विस्तारित उदाहरणक अधिकता पाठकेँ कखनो दार्शनिक निबन्धक समीप लऽ जाइत अछि; तथापि आरम्भ-अन्तक आइना-बिम्ब सुस्पष्ट काव्यात्मक आवर्तन रचैत अछि। ‘आओर देखू, आओर सुनू, फेर जाँचू, फेर रचू’ निष्कर्ष नहि, अनुसन्धानक नवीकरण अछि।

२२८. निर्णयक धधकैत देहरी — चिकित्सा, जैवनीति, स्त्री-अधिकार आ निर्णयक अनिश्चितता

अस्पतालक मशीन, गर्भक अदेखल स्थिति, जंगलक किनार कुल्हाड़ी आ घरक अदृश्य स्त्रीश्रम —चारि दृश्य नैतिक प्रश्नकेँ शास्त्रीय कक्षासँ जीवनक तत्कालिक निर्णयमे उतारैत अछि। ‘अखन बताउ’क आग्रह बतबैत अछि जे सिद्धान्त अनन्त सोचबक छूट देतहुँ जीवन निरन्तर निर्णय माँगैत अछि। कर्तव्य, फल, करुणा, न्याय, व्यक्तिस्वातन्त्र्य आ जीवनरक्षाक पल्ला सभ बेर बराबर नहि रहैत। ‘धधकैत देहरी’ एहि असमाधेय दबावक प्रभावी रूपक अछि।

एक नियम सभकेँ समान मानय, मुदा परिस्थिति सभक समान नहि—एहि आपत्ति पर पद्य बारम्बार लौटैत अछि। नियमक अन्ध पालन क्रूर होएबाक आशंका आ प्रत्येक अपवादकेँ करुणा कहि न्याय बिगाड़बाक खतरा दूनू चिन्हल गेल अछि। अपन प्रिय व्यक्तिक स्थानपर अपरिचित व्यक्ति राखिकऽ फेर निर्णय जाँचबाक उपाय पक्षपात देखबाक उपयोगी नैतिक परीक्षा अछि। मुदा ई आत्मपरीक्षण वास्तविक उपचार, सहमति आ सार्वजनिक अधिकारसम्बन्धी नियमनक पूर्ण विकल्प नहि।

स्त्रीक दोहरी कार्यपारी, रसोईक अवैतनिक श्रम, सड़कपर भय आ कागजपर समानताक अन्तर एतय संस्थागत न्यायक ठोस कसौटी बनैत अछि। गर्भसम्बन्धी विवेचनमे अजन्मा जीवनक सम्भावना आ माताक जीवन/स्वायत्तताक विभिन्न दावी सुनबाक आग्रह अछि; एको पक्षकेँ वाक्चातुरीसँ मेटा देबाक स्थान नहि। एहि नीतिगत जटिलताक परिणाम विशिष्ट कानूनी अथवा चिकित्सकीय निर्देश रूपमे प्रस्तुत करब कविताक उद्देश्यसँ बाहर होयत।

‘अदृश्य तराजूक उजास’ मूल्यसभक परस्पर तौलनाइ छल, एहि कवितामे तौलनाइ निर्णयक संकट बनि जाइत अछि। अंतिम प्रश्न—एहि चयनमे ककर जीवन छिपल अछि—वस्तुनिष्ठ तथ्यक संग सम्बन्धित व्यक्तिक उपस्थिति जाँचबैत अछि। बहुविषयक विस्तारक कारण कविता कखनो नैतिक निबन्धक विस्तृत सूची देखाइत अछि, मुदा धधकैत देहरी आ अन्तिम श्वासक बिम्ब ओकरा सामाजिक दार्शनिक पद्यक सन्दर्भमे एकता दैत अछि।

२२९. माटिक नाड़ीमे हमर श्वास — पारिस्थितिक अन्योन्याश्रय आ अगिला पीढ़ीक न्याय

भोरक हवा फेफड़ा मे उतरिते रचना ‘ई हमर श्वास’क स्वामित्वपर प्रश्न करैत अछि। वन, जल, माटि, सूर्य आ जीवसमुदायक दीर्घ सम्बन्ध देहक प्रत्येक साँसकें सामूहिक पर्यावरणीय चक्रसँ जोड़ैत अछि। ‘एक वृक्ष काटलासँ केवल एक तना नहि गिरैत’क विचार प्रकृति मे सम्बन्धक सूक्ष्म जाल देखबैत अछि; माटि, कीटक, पक्षी, बीआ आ बरखाक विवरण एहि नेटवर्ककें मूर्त रूप दैत अछि।

नदीकें पर्वत, माछ, किसान, स्त्रीक घड़ा, बालकक खेल आ शहरक प्यासक एकहि प्राणधारामे रखला सँ पर्यावरण-नाश केवल प्राकृतिक सम्पत्तिक हानि नहि, सामाजिक स्मृति आ जीविकाक क्षति ठहरैत अछि। कवि चेतबैत छथि जे रूपक आ नैतिक तर्ककें एक नहि मानू: जंगल कानून नहि बनबैत, मनुष्य बनबैत अछि। एहिसँ प्राकृतिक पारिस्थितिकी सँ सामाजिक न्यायपर सोझ निष्कर्ष काढ़बाक सरलीकरणसँ रचना स्वयं बचैत अछि।

‘प्रकृति हमर लेल’ आ ‘हम प्रकृतिक भीतर’क पद-परिवर्तन अहंकेन्द्रित उपयोगितावाद सँ सहजीवनक व्यापक दृष्टिक संक्रमण अछि। जैविक उपयोगिताक कारण वन बचायब उचित अछि, मुदा वनक अपन जीवनक मूल्य मानलासँ नैतिक वृत्त बढ़ैत अछि। कविता दलदल, काँटेदार झाड़ी, कीचड़ आ कीट मे सेहो मूल्य देखैत अछि—मनुष्यक रमणीय दृश्यबोध प्रकृतिक सम्पूर्ण मूल्याङ्कनक एकमात्र कसौटी नहि। ई सूक्ष्म भेद रचनाक सौन्दर्यबोधकें पर्यावरणीय नैतिकतासँ जोड़ैत अछि।

रचना तकनीक-विरोध नहि करैत; ओ विकासक दिशा, उद्योगक प्रदूषण, स्थानीय उत्पादन, जलसंरक्षण आ अगिला पीढ़ीक अधिकारक प्रश्न पूछैत अछि। एतय व्यक्तिगत सादगी आ संस्थागत नियमन एक-दोसरक आवश्यक पूरक अछि। ऊष्मागत अन्त मे मृत्यु पाछाँ देहक माटि मे लौटबाक रूपक आरम्भक श्वासकें विशाल प्रकृति-चक्रमे समेटैत अछि। विस्तृत निर्देशात्मक अंशक कारण लय कखनो शिथिल अछि, मुदा श्वासक आवर्ती बिम्ब सुदृढ़ संरचनात्मक आधार अछि।

२३०. अपन आँखिसँ भोर — भाषिक स्वराज, उपनिवेशित दृष्टि आ विवेकपूर्ण आत्मसम्मान

सूर्यसँ पहिने आँखिमे भोर होयबाक बिम्ब दृष्टिक स्वाधीनताक रूपक अछि। गाम, माटि आ भाषा ओएह रहितहुँ ‘उधारक चश्मा’ उतारलापर ओकर अर्थ बदलैत अछि। पराधीनता हाथक जंजीरक अतिरिक्त स्मृतिमे, भाषाक चयनमे, सौन्दर्यक मापदण्डमे आ विद्यालयक पाठ्यक्रममे बसि सकैत अछि। अपन भाषा नीच बुझबाक आ दोसरक प्रत्येक मापकेँ स्वयंसिद्ध मानबाक अनुभव एहि पद्यक बौद्धिक स्वराजक मूल समस्या अछि।

मुदा कविता ‘अपन’ कहि सभ प्रथाकेँ पवित्र नहि करैत। जातिभेद, स्त्री-विषमता, अस्पृश्यता, रूढ़ि आ सामन्ती अहंकारक स्पष्ट सूची आत्मगौरवक आन्तरिक आलोचनाक शर्त अछि। हीनता आ अहंकार दुनूकेँ ‘धूलि’ कहल गेल अछि; एकरा हटाबय लेल स्वाभिमान आ विवेकक अलग झाड़ू चाही। ई जोड़ी कविताकेँ अन्धानुकरणक विरुद्ध स्थानीय आत्ममुग्धता बनबासँ रोकैत अछि।

विदेशी विचारक उत्पत्ति, ऐतिहासिक समस्या आ सार्वभौम सम्भावना जाँचि अपन सन्दर्भमे पुनर्रचना करबाक आग्रह अनुवाद आ मौलिक अनुसन्धानक अन्तर रखैत अछि। विद्यार्थी केवल उत्तर याद नहि, नव प्रश्न रचय—एहि कथनमे शिक्षाक सफलताक निर्णायक कसौटी स्वाधीन विचार अछि। ‘पाँच दशकक देहरी’क ऐतिहासिक अवलोकन आ ‘जे प्रश्न अखनो उत्तर माँगैत अछि’क सार्वजनिक आग्रह एहि रचनामे व्यक्तिगत सांस्कृतिक दृष्टिक अनुशासन बनि जाएत अछि।

अन्तक चारि ‘मुदा’ भाषिक पहिचान आ विश्वसंवादक सन्तुलन बनबैत अछि: अपन माटि मुदा एकाधिकार नहि; अपन भाषा मुदा एकमात्र ज्ञान-भाषा नहि; अपन परम्परा मुदा हर पुरान ठीक नहि; अपन भविष्य मुदा दोसरसँ सीखब बन्द नहि। खुलल हाथ आ खुलल आँखिक चित्र रचनाक समापनक महत्त्वपूर्ण काव्यात्मक उपलब्धि अछि। सीमाक रूपमे उपनिवेशित मानसिकताक व्यापक इतिहासक बाह्य दस्तावेज एतय प्रस्तुत नहि, मुदा रचनामे निजी अनुभव आ शैक्षिक संस्थाक प्रश्न गहिर रूपसँ संयोजित अछि।

२३१. पुरान नदीमे नव धार — स्मृति, नव अनुसन्धान आ जीवित बौद्धिक परम्पराक अन्तरपीढ़ी संवाद

‘एक नदी बहुत पुरान, मुदा हरेक भोर ओहि मे नव जल उतरैत अछि’क आरम्भे कालगत निरन्तरता आ परिवर्तनक द्वैत बनैत अछि। घाट, नाव, यात्री आ नदीक नाम बचैत अछि, जल बदलैत अछि; एहि सरल परस्पर-विरोधमे परम्परा जीवित रहबाक शर्त भेटैत अछि। स्मृति प्रवाह रोकय तँ बाँध, परम्परा प्रश्न रोकय तँ दीवार—ई दू बिम्ब श्रद्धाक संकुचित रूप पर आलोचनात्मक चोट अछि। परम्पराक मेटायब उद्देश्य नहि; ओकरा जीवनक चालि मे पुनः प्रविष्ट कराएब ध्येय अछि।

विद्यालय, खेत, कारखाना, न्यायालय आ अस्पतालक प्रश्न दर्शनशास्त्रक आत्मसंबद्ध कक्षासँ बाहर चलबाक माँग करैत अछि। विज्ञान ‘केना’ पूछैत, दर्शन ‘किएक’ आ समाज ‘ककर हित’—एहि वाक्य-मालाक उपयोग सीमित विवेचनात्मक विभाजन अछि, विज्ञान अथवा दर्शनक सम्पूर्ण स्वभावक अन्तिम परिभाषा नहि। लेकिन सैद्धान्तिक परिणामक वितरण, औषधिक पहुँच आ तकनीकक हितग्राहीक प्रश्न ज्ञानक सार्वजनिक उत्तरदायित्व स्पष्ट करैत अछि।

‘दू सभ्यता दू ठोस पाथर नहि’ कहि पद्य पूरब-पश्चिमक सरल द्विभाजनसँ बचैत अछि। एक सभ्यताकेँ केवल आध्यात्मिक आ दोसराकेँ भौतिक कहि देनाइ ऐतिहासिक विविधताक संहार होयत। स्थानीय भाषाक शोध, अनुवाद, मौलिक प्रश्न आ नव पीढ़ीक असहमतिक स्वतंत्र स्थानपर लेखक विशेष बल दैत छथि। ई विचार ‘अपन आँखिसँ भोर’क आत्मस्वराजकेँ संस्थागत बौद्धिक अभ्यासक दिशामे विस्तार करैत अछि।

रचनाक दीर्घ प्रवाह स्वयं नदीक बिम्ब जकाँ अनेक ठाम बहैत अछि, मुदा कखनो विषय-गणनाक अधिकतासँ कविताक केन्द्रीय चित्र धुँधला पड़बाक जोखिम अछि। अन्तमे स्मृतिसँ गहराई, प्रश्नसँ दिशा आ सृजनसँ प्रवाह भेटबाक चारिभागी संरचना आरम्भक नदीक छविक पुनर्वापसी अछि। एहि वापसीक कारण दीर्घ मुक्तपद्यक व्याख्यात्मकता बीचो एक प्रभावी काव्यात्मक आकृति बचल रहैत अछि।

२३२. दीपक पाछाँक अनाम उजास — ज्ञानक अदृश्य श्रम, पुस्तकालय, अनुवाद आ संस्थाक सार्वजनिक नैतिकता

मंचपर जरैत दीप आ ओकर पाछाँक अनाम राति—एहि बिम्बमे श्रेय पबैत उपलब्धि आ ओहि सफलताक पाछाँ लगल अनगिन श्रमक भेद देखाइत अछि। एक साफ वाक्यक पाछाँ बारम्बार काटल उत्तर, अधूर प्रश्न, पुस्तकालयक श्रम आ गुरु-शिष्यक खुलल संवाद अछि। ज्ञानकें अकस्मात् प्रतिभाक चमत्कार नहि, क्रमिक सामूहिक अभ्यास रूपमे प्रस्तुत करब कविताक मूल दृष्टि अछि।

पुस्तकालय, पाण्डुलिपि, अनुवाद आ आलोचनात्मक संस्करणक दीर्घ समय रचनामे विशेष महत्व पबैत अछि। समाज यदि केवल तात्कालिक परिणामक दबाव रखय, धीमा अनुसन्धान वंचित होइत अछि। ‘एक पुस्तकालय बनाबय अर्थ भविष्यक अपरिचित पाठक लेल घर बनाबय’क प्रसंग संग्रहक ज्ञान-इतिहासकें उत्तराधिकारक नैतिकता देत अछि। एहि ठाम भावुक कृतज्ञताक पाछाँ संसाधन आ संरक्षणक वास्तविक सार्वजनिक प्रश्न उपजैत अछि।

संस्था तखन जीवित जखन असहमतिक ठाम रहय; विश्वविद्यालय, पत्रिका, कक्षा आ पुस्तकालयक निरन्तर उल्लेख विचारक लोकतन्त्रक अनेक स्थल चिन्हबैत अछि। मुदा असहमतिक महिमा स्वयं सर्वमत सत्य नहि बनबैत: पाठमे तर्क, प्रमाण आ त्रुटि स्वीकारबाक साहस पर बल अछि। अध्यापकक विनम्रता आ नव शोधार्थीक प्रश्नक सम्मान उत्तराधिकारकें रक्त वा उपाधिसँ नहि, जिज्ञासा आ विधिगत अनुशासनसँ जोड़ैत अछि।

काव्यशिल्पमे दीप, बाती, बीआ, वृक्ष आ पुलक आवर्तन अछि। ई चित्रसभ मिलि आशावादी सामूहिक ज्ञानक संसार बनबैत अछि; तथापि अनेक संस्थागत गुणक लाम सूची दीर्घ काव्यकें नैतिक प्रवचनक समीप पहुँचबैत अछि। ‘पुरान नदीमे नव धार’मे परम्पराक प्रवाह छल; एहि पद्यमे ओहि प्रवाह कें चलबयवला अनाम हाथ दृश्य होइत अछि। दुनू रचना मिलिकऽ विचारक परम्पराक काल आ श्रमक दू स्वतंत्र आयाम उजागर करैत अछि।

२३३. दिशा-दिशासँ आबैत दीप — अनेक ज्ञानमार्गक संगम आ बौद्धिक उत्तराधिकारक पुनर्निर्माण

‘एक गामसँ एक पयर उठल’, ‘दोसर शहरसँ एक प्रश्न’ सँ कविता दिशागत अनेकता रचैत अछि। एक ठाम केन्द्रक बड़ उद्घोष नहि, अलग-अलग परिवेशसँ ज्ञानक दीर्घ यात्राक शुरुआत अछि। तर्क, भाषा, सौन्दर्य, न्याय, चेतना आ लोकानुभवक भिन्न मार्ग एक साझा चौक धरि पहुँचैत अछि। ई चौक जबरदस्ती मतैक्यक स्थान नहि, मतभेदक सार्वजनिक सम्बोधनक बिम्ब अछि।

पुस्तक पढ़ब, मूल स्रोत सहेजब, अनुवाद करब, शिक्षार्थीक प्रश्न सुनब आ विद्वत्प्रतिष्ठाक अनुपयुक्त मोह छोड़ब—ई सभ काज अनुसंधानक बुनियादी श्रम बनैत अछि। ‘विद्वत्ता’क मूल्य पद आ पुरस्कारसँ नहि, परवर्ती पाठकक विचार-स्वतन्त्रता आ सामाजिक उपयोगसँ मापबाक आग्रह अछि। विशेषतः स्रोतभाषा आ लोकभाषाक बीच अनुवादक केँ पुल कहल गेल अछि, जे ज्ञानक एकाधिकार तोड़ि सकैत अछि।

आलोचनात्मक इतिहासक लेल केवल उपलब्धिक गणना अपर्याप्त अछि; सीमा, अनदेखल पक्ष आ नव संभावना एक संग लिखबाक माँग अछि। समाजक भूख, भेदभाव आ पर्यावरणीय हानिक प्रश्न ज्ञानमीमांसा सँ अलग करि सुरक्षित अकादमिक भवनमे नहि राखल जा सकैत—एहन कविताक सार्वजनिक नैतिक दावी अछि। मुदा विविध विद्वान आ परम्पराक नाम-स्थापन मात्र सँ ऐतिहासिक उपलब्धिक तुलनात्मक प्रमाण स्वयंसिद्ध नहि होइत; एतय विस्तृत अध्ययनक अपेक्षा कविता स्वयं जगबैत अछि।

दीपसभक आकार, तेल, बाती भिन्न अछि, आ ‘अन्हार जतय, ओतय जे दीप पहुँचलक’ ई अर्थपूर्ण समापनक कसौटी अछि। ‘दीपक पाछाँक अनाम उजास’ पहिने अदृश्य श्रमक महत्त्व चिन्हबैत छल; वर्तमान रचना एकाधिक दिशासँ आबैत ज्ञानक साझा रोशनी देखबैत अछि। अन्तमे छोट विद्यालयक बालकक ‘किएक?’ सम्पूर्ण दीर्घ यात्राकेँ फेर आरम्भ करबैत अछि। एकहि आरम्भक पुनर्निर्माण रचनाक वृत्ताकार काव्य-रचना अछि।

२३४. जड़ चित्रक पाछाँ बहैत प्रश्न — विरासतक स्थिर चित्र विरुद्ध पदार्थ, संशय आ प्रश्नशील परम्परा

सत्यक भीतपर टाँगल पुरान चित्रक धूलि पाठक पहिल दृश्य अछि। परम्पराकेँ स्थिर चित्र मानि माथ नवेनाइ श्रद्धाक एक अनुत्पादक रूप बनि सकैत अछि—एहि अभिप्रायकेँ पद्य छोट-छोट छन्दात्मक पाँतिमे रखैत अछि। पदार्थ, देह, तर्क आ संशयकेँ प्राचीन चिन्तनसँ बाहर ठेलबाक प्रचलित रूढ़ि पर कण-कणक ठोस प्रश्नक स्मरण कराओल गेल अछि।

दोसर आ तेसर ‘परदा’—पुरान वचनकेँ अन्तिम प्रमाण मानब आ मतकेँ अपरिवर्तनीय बरफक घर बनायब—सिद्धान्त आ इतिहासक बीच दूरी बढ़बैत अछि। एहि द्विपक्षीय आलोचनामे ग्रन्थक अन्तर्विरोध आ व्याख्याकारक समयगत परिवर्तन जाँचबाक आवश्यकता अछि। ‘इतिहास मुदा नदीक गति’क पाँतिमे पूर्ववर्ती ‘पुरान नदीमे नव धार’क दीर्घ रूपक अत्यन्त संक्षिप्त काव्यपद्धतिमे फेर प्रकट होइत अछि।

अन्तिम विनती पुरान धारणाकेँ फेर जाँचबाक अछि, ओकर अपमानक नहि। सघन छन्दात्मक भाषा दीर्घ विवेचनक तुलनामे अधिक स्मरणीय प्रभाव दैत अछि; सीमा ई जे प्राचीन पदार्थवादी आ तर्कपरम्पराक विशिष्ट ग्रन्थसभक पाठसाक्ष्य प्रस्तुत नहि अछि। कविता अन्वेषणक द्वार खोलैत अछि, कोनो प्रमाण-सम्पन्न शास्त्रीय इतिहासक स्थान नहि लैत।

२३५. मुक्तिक धुरीसँ बाहर विचारक आकाश — दर्शनक साधन-मूल्य आ स्वायत्त जिज्ञासाक सम्बन्ध

एकटा लक्ष्यक चारूकात सम्पूर्ण ज्ञान घूमय—एहि धारणापर आरम्भिक प्रश्न कविताक केन्द्र अछि। मुक्ति महत्त्वपूर्ण दार्शनिक दिशा रहितहुँ गणित, भाषा, कारण, पदार्थ आ सामाजिक प्रश्नकेँ अनिवार्यतः ओहि एक धुरीपर टकाबयबाक प्रमाण नहि। नदीक एक घाटकेँ पूरा समुद्र मानबाक उपमा एहन एकल-लक्ष्यवादी पाठक सीमा देखबैत अछि।

लेखक दर्शनक उपयोगिता अस्वीकार नहि करैत छथि: विचार जीवन बदलि सकैत अछि, प्रमाण माँगि सकैत अछि, व्यवहारक दिशा देत अछि। मुदा कखनो केवल जानबाक आनन्द, नकारात्मक परीक्षण, जिज्ञासा आ अवधारणात्मक सुस्पष्टता स्वयं पर्याप्त चिन्तन-कारण भऽ सकैत अछि। एहि भेदमे साधनक रूपमे दर्शन आ अपन अधिकारसँ जिज्ञासा करैत दर्शन बीच विवेक अछि।

मुक्ति आ दर्शनकेँ एक-दोसराक शत्रु नहि मानि परस्पर सीमित करबाक आग्रह अन्तमे स्पष्ट अछि। छन्दक लघुता आ आकाश-नदीक रूपक विचारकेँ उच्छृंखल नारा बनबासँ बचबैत अछि। मुदा विशेष मतक ऐतिहासिक विवेचन एतय नहि; ई प्रश्नात्मक काव्य-प्रतिज्ञा अछि, शास्त्रसम्प्रदायक पूर्ण वर्गीकरण नहि।

२३६. मुक्ति एक प्रश्न, चिन्तन अनेक बाट — सत्तासम्बन्धी प्रश्न आ साधनागत लक्ष्यक प्रमाणिक अन्तर

‘मुक्ति’क भीतरक बन्द केवाड़ी रूपक मनुष्यक आकांक्षाकें दृश्य करैत अछि, मुदा कवि तुरन्त पूछैत छथि जे सभ विचारक यात्रा एही एक दुआरक पहरेदार किएक हो। आत्मा-जगतक सत्ता, कर्मक उत्तरदायित्व, ज्ञानक स्वरूप, न्याय आ भाषाक सीमा—ई सभ अलग प्रश्न अछि। ‘केहन जग अछि’ आ ‘की चाही जीवन’क साफ विभाजन तत्त्वमीमांसा आ मूल्यगत लक्ष्यक भ्रम रोकैत अछि।

आध्यात्मिक पदक अर्थ पदार्थ-निषेध अथवा केवल चेतनाक सर्वोच्चतामे सीमित करबाक जोखिम रचना पहचानैत अछि। मुक्तिक बारेमे यदि ओ नित्य सत्यरूप, तखन बन्धन कइसे; जँ कर्मसँ नहि उपजैत, प्रयासक औचित्य कतय—ई आन्तरिक प्रश्न दार्शनिक वाक्यक तर्कगत संगति जाँचबाक सूत्र अछि। उत्तर गढ़बाक बदला विवेचनक संशय खुलल राखल गेल अछि।

निर्वाण, सर्वज्ञता, आत्मबोध आ सम्बन्धक नव अनन्तक भिन्न बिम्ब ‘एके शब्द’ भीतर अनेक सिद्धान्तक उपस्थिति सूचित करैत अछि। ई शब्द-साम्यपर सिद्धान्तगत समता थोपबाक विरुद्ध चेतावनी अछि। मूल कविता सुस्पष्ट प्रश्न-संरचनाक कारण ‘मुक्तिक धुरीसँ बाहर विचारक आकाश’क अगिला तार्किक विस्तार बनैत अछि, जखन कि विशिष्ट दार्शनिक पाठक प्रत्यक्ष ग्रन्थ-सन्दर्भक विस्तार एखन नहि अछि।

२३७. श्रुतिक वनमे ककर स्वर मूल — पाठक क्रम, अनेक श्रुति-स्तर आ मूलत्वक इतिहासपरक प्रश्न

मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक आ उपनिषदकेँ वनक भिन्न-भिन्न स्वर रूपमे रखल गेल अछि। वृक्षक शाखासभ एकहि बीआसँ अथवा अलग बीआसँ आबि मिलल—ई प्रश्न एकरे संहिताबद्ध अथवा रैखिक व्युत्पत्तिक अनिवार्यता पर संशय जगबैत अछि। ‘ककरा कहब मूल स्वर’ कहबक माने केवल कालक्रम नहि, मूल घोषित करबाक अधिकारक कसौटीक अनुसन्धान सेहो अछि।

एकहि नामक अन्तर्गत अनेक शाखा आ व्याख्या रहला पर किछु पाठ केन्द्रमे, किछु उपेक्षित किनारमे किएक ठाढ़—एहि प्रश्नमे वाचन-परम्पराक चयनशास्त्र अछि। ग्रन्थक देहपर समयक छाप देखब धार्मिक अपमान नहि, ऐतिहासिक पाठपरीक्षणक औचित्य अछि। परम्पराक हजार बरखक गतिशीलता एक क्षणमे बनल निर्विवाद विधान नहि भऽ सकैत।

छन्दबद्ध प्रश्नसँ पद्य विवेचनात्मक कोमलता पबैत अछि। मुदा विशिष्ट शाखाक पाण्डुलिपि आ प्रमाण-सूची नहि रहला कारण एहि आलोचनात्मक कार्यक्रमकेँ पहिले सँ सिद्ध पाठइतिहास कहि स्वीकारब अनुचित होयत। एक-एक गाछक अलग रूप देखबाक आग्रह साहित्यिक आ पद्धतिगत दुनू दृष्टिसँ मूल्यवान अछि।

२३८. सीमाहीन कथनक भीतर मौन प्रश्न — उपनिषद-वचनक भिन्नता, चुनल 'अन्तिम शिक्षा' आ अनुपस्थितिक सावधानी

कविता एक नामक भीतर उत्पत्ति-अजन्म, आत्मक प्रधानता-प्रश्नक प्रधानता सन भिन्न दार्शनिक रंग देखबैत अछि। सभ वचनकें एक अन्तिम शिक्षा मानि देबाक प्रवृत्ति मूल बहसक बहुवचनकें व्याख्याक एकवचनमे बदलि सकैत अछि। एहि क्रममे संग्रह, चयन आ उत्तरवर्ती पुनर्व्याख्याक भूमिका साहित्यिक रूपसँ उद्घाटित होइत अछि।

'मौन सेहो साक्ष्य हो सकैत' एहि पाँतिक संग अनुपस्थित अर्थ कें बिना परीक्षण भरि देबाक विरुद्ध स्पष्ट सावधानी जुड़ल अछि। अनकहल बातक सम्भावना ऐतिहासिक अनुसन्धानमे महत्त्वपूर्ण संकेत भऽ सकैत अछि, मुदा मात्र मौनसँ कोनो विशेष मत स्वतः सिद्ध नहि। प्रमाण-मर्यादाक एहि शर्तक कारण कविता सीमाहीन कल्पनाकें शोधक विकल्प नहि बनबैत अछि।

लौह तालाक विपरीत 'संवादक आकाश'क समापन ग्रन्थक जीवित अर्थ-इतिहासक पक्षमे अछि। 'श्रुतिक वनमे ककर स्वर मूल'क शाखा-भेद एहि रचनामे वचन, मौन आ व्याख्याक भिन्न चरण बनैत अछि। एकर विशिष्ट उपलब्धि मूल पाठ आ व्याख्यात्मक अधिकारक बीच भेद पर आग्रह अछि, भले विशिष्ट संस्करणसभक सत्यापित पाठान्तर एतय उद्धृत नहि अछि।

२३९. सूत्रक देह पर समयक अनेक लेख — पाठान्तर, भाष्य-साक्ष्य आ शास्त्रीय सम्पादनक प्रमाणमीमांसा

‘एक पाठ कहय “अछि”, दोसर एक नकार जोड़ि करय भिन्न’—एहि उदाहरणसँ सूत्रक सूक्ष्म पाठभेद सम्पूर्ण तर्क बदलि सकबाक समस्या प्रकट होइत अछि। पाँतिक विभाजन-संयोजन, शब्दक फेरबदल आ उत्तरवर्ती हस्तक्षेपक कारण मूल पाठ केवल परम्पराक मुखाग्र अनुकरणसँ प्रमाणित नहि होइत। एहि लघु पद्यमे पाठालोचनाक जटिल प्रश्न असाधारण सघनता पबैत अछि।

भाष्यमे उद्धृत सूत्र एक उपयोगी साक्ष्य भऽ सकैत अछि, मुदा भाष्यक स्वयं पाठ-इतिहास सेहो जाँचब आवश्यक। ‘केवल पुरान कहि मानि लेब’क अस्वीकार प्रमाणसिद्धि आ कालक्रमक स्वतः संबंध तोड़ैत अछि। मूल सम्पादकक पाठनिर्णय, उपलब्ध पाण्डुलिपि आ अनुपलब्ध ग्रन्थक उद्धरणक विश्वसनीयता अलग-अलग प्रश्न ठहरैत अछि। ई नव्यन्यायीय प्रमाणानुशासनक साहित्यिक समरूप अछि; ग्रन्थसम्पादनक पूरा विधिशास्त्र एतय प्रस्तुत नहि।

पद्य अन्तमे प्रेम आ संशयकेँ विरोधी नहि मानैत; ग्रन्थक प्रति निष्ठा एकर शब्दक कठोर परीक्षण माँगैत अछि। ‘प्रमाण प्रति कठोर’ आ ‘नम्रता संग संशय’क द्विपद संग्रहक ऐतिहासिक आलोचनाक केन्द्रीय नैतिकता अछि। छन्दक सूक्ष्मता आ क्रमागत उदाहरण एकरा पूर्व दीर्घ रचनासँ अलग लघु पाठपरीक्षण-काव्य बनबैत अछि।

२४०. साक्षी आ प्रकृतिक बीच अन्तिम दूरी — सांख्यिक कैवल्य आ मुक्तिपश्चात् दृश्यिक अस्तित्व

मौन साक्षी आ गतिशील प्रकृतिक प्रतिरोधी बिम्बसँ पद्य द्रष्टा-दृश्यिक भेद आरम्भ करैत अछि। गुण, सुख-दुःख आ परिवर्तनशील रूपकेँ प्रकृतिक पक्षमे राखल गेल अछि; साक्षी जखन अपनाकेँ दृश्यसँ एक मानैत अछि, तखन बन्धनक शर्त बनैत अछि। मुदा कवि विवेकक प्राप्ति मात्र घोषित नहि करैत, कैवल्यिक अन्तिम दशामे दृश्यिक स्मृति आ ज्ञानिक अस्तित्व की रहत—ई अधिक कठिन प्रश्न उठबैत छथि।

देह रहिते भेदक बोध आ देहक गति थमलाक पाछाँक सम्भावना अलग करब रचनाक तार्किक सूक्ष्मता अछि। चाकक पुरान गति चलैत रहबाक बिम्ब पूर्वसंस्कारक कार्यशीलता देखबैत अछि, मुदा कैवल्यकेँ एकान्त शून्यता कहब कि स्वच्छ दृष्टि—एकरा निर्णयपर बाध्य नहि कएल गेल। लघु छन्दमे प्रश्नक पुनरावर्तन तर्कक अनिर्णीतता प्रदर्शित करैत अछि; ई सांख्यिक समस्त भाष्यपरम्पराक निश्चित मत होइन, कविताक जिज्ञासा अछि।

२४१. भ्रमक गाँठिसँ अभेदक निस्तब्धता — अद्वैतक अज्ञान-सिद्धान्त आ ज्ञाता-ज्ञेय लोपक कठिनाई

‘हम’ आ ‘ई’क प्रारम्भिक विभाजनसँ पद्य सम्बन्ध-निर्माणक सूक्ष्म गाँठि देखबैत अछि। यदि भेद भ्रम अछि आ सत्य सर्वथा अभिन्न, तखन भ्रमक जन्म-स्थानक प्रश्न उठैत अछि। दू सत्ता मानल गेल तँ अद्वैतक दाबी पर प्रश्न, एके सत्ता मानल गेल तँ भेदक प्रतीति कोन आधार पर? ई द्विधा मात्र शब्दक खेल नहि, सिद्धान्तक आन्तरिक औचित्य-परीक्षण अछि।

ज्ञाता-ज्ञेयक द्वैत गलिते भाषा आ मूल्यभेदक काम केना चलत—एहि प्रश्नक कारण शुद्ध निस्तब्धताक रोमानी प्रशंसा रुकैत अछि। अभेदकेँ संख्यात्मक ‘एक’ न मानल गेल अछि; तइयो अनुभूत जगतकेँ केवल छाया कहि टारबाक आधार माँगल गेल अछि। अन्तक ‘मौन स्वयं भ्रम बनि जाय’क चेतावनी आलोचनात्मक संशयक सशक्त सूत्र अछि। एहि कविता आ ‘साक्षी आ प्रकृतिक बीच अन्तिम दूरी’मे मुक्तिक अन्तिम स्थितिपर प्रश्न समान, मुदा द्रष्टा-दृश्यक सत्ता-प्रतिज्ञा भिन्न अछि।

२४२. एक नामक भीतर अनेक विपरीत दिशा — दार्शनिक पहिचान, ग्रन्थाधिकार आ मत-बहुलताक सीमा

एक विशाल नामक भीतर भेद-अभेद, जगतक सत्य-अन्तिमता आ जीव-परमक सम्बन्धपर परस्परविरोधी दावी पद्य एकठाम रखैत अछि। साझा ग्रन्थ-पाठ मानलापर सेहो दार्शनिक सिद्धान्त एकहि होएबाक गारण्टी नहि। ‘पहिचान चाही तँ माप चाही’क आग्रह परम्परागत नामकें भावनात्मक गौरव मात्र बनि रहबासँ रोकैत अछि।

मुदा पहिचानक अत्यन्त कठोर परिभाषा विविध ऐतिहासिक धाराकें बाहर ठेलि सकैत अछि— कविता एहि दोहरा कठिनाईकें सेहो चिन्हैत अछि। नामकें केवल श्रद्धा-सम्बन्धी मानब पर्याप्त नहि, आ मतभिन्नताकें आपसैं दोष मानब सेहो नहि। सघन लघुपद्यक सीमा ई जे विशेष ग्रन्थक प्रतिज्ञा-सूची न देल गेल; तथापि अवधारणा आ वर्गीकरणक विधिगत प्रश्न सुस्पष्ट बनल अछि।

२४३. अग्निक अर्घ्य आ कर्मक एकल लेखा — साझा कर्म-सम्बन्ध आ व्यक्तिगत नैतिक उत्तरदायित्व

अग्नि समक्षक आदान-प्रदानक बिम्बमे वृष्टि, अन्न, श्रम आ समुदाय परस्पर जुड़ल अछि। एकर सामने कर्मक फल केवल एक कर्ताक व्यक्तिगत लेखामे दर्ज होयबाक धारणा रखल गेल अछि। ‘हमर हाथक चोट जँ तोरा लागय’क प्रतिप्रश्न व्यक्तिगत नैतिक उत्तरदायित्व आ परिणामक सामाजिक वितरणक अन्तर अनदेखा नहि करबय चाहैत अछि।

कविता कारणगत प्रभाव आ नैतिक मोलकेँ एकहि वस्तु नहि मानैत; इच्छा, परिस्थिति, क्रिया आ फल अलग सन्दर्भ अछि। यदि सभ फल साझा अछि तँ व्यक्तिगत दोष कहाँ, जँ सभ निज अछि तँ पीड़ितक न्याय कहाँ—ई प्रश्न खुलल रखल गेल। ‘अनासक्ति जिम्मेदारी नहि मेटय’क अन्तिम सावधानी साधनाक नामपर सामाजिक परिणामसँ पलायनक विरोध अछि। आगि आ लेखाक ठोस बिम्ब जटिल नैतिक अन्तरकेँ लघु रूपमे संयोजित करैत अछि।

२४४. चारि लक्ष्यक चौखटिसँ बाहर जीवन — पुरुषार्थ-व्यवस्थाक उपयोगिता आ सृजनक स्वतन्त्र मूल्य

नीति, सम्पत्ति, चाह आ मुक्ति रूपमे चारि जीवन-लक्ष्यक मानचित्र राखि कविता कलाकारक रंगक भूख, खेलक आनन्द आ निष्काम जिज्ञासाक ठाम पूछैत अछि। पुरान सूची उपयोगी मानचित्र भऽ सकैत अछि, मुदा ओकरा सम्पूर्ण धरती कहि देलापर नव मानवीय अनुभव अदृश्य होइत अछि। ‘चारि’क संख्यात्मक प्रणाली आ जीवनक बहु-आकांक्षा बीच आलोचनात्मक तनाव स्थापित होइत अछि।

सङ्गे कवि लक्ष्यसभक क्रम अथवा एक-दोसर पर निर्भरता सेहो जाँचैत छथि। मुक्ति सर्वोच्च भए बाँकी लक्ष्य मात्र सीढ़ी भऽ जायत कि नहि, ई प्रश्न प्रेम, श्रम, न्याय आ कलाक स्वायत्त मूल्यक पक्षमे अछि। अभिव्यक्तिक सघनताक बावजूद उदाहरणसभ कालविशेषक सामाजिक दस्तावेज नहि; ई चारि-लक्ष्यीय मानचित्रक दार्शनिक पर्याप्ततापर साहित्यिक प्रतिप्रश्न अछि।

२४५. सूचीक भीत नहि, प्रश्नक जीवित नदी — वर्गीकृत दर्शन-इतिहाससँ अन्तर्द्वन्द्वात्मक बौद्धिक इतिहास दिस

मतक नाम आ ग्रन्थक गिनतीमे इतिहासक समस्त चेतना बन्द नहि होइत—एहि तर्कसँ रचना आरम्भ करैत अछि। एक प्रश्न दोसर युगमे नव भाषा लैत अछि; विरोधी उत्तर नव प्रश्नक बीआ बनैत अछि। एतय दार्शनिक इतिहास व्यक्ति-क्रमक सूची नहि, समस्या, तर्क आ प्रतिवादक यात्रा अछि।

तइयो सभ धर्म, कला, भाषा आ राजनीति केँ एके नाम ‘दर्शन’ देलापर विधागत भेद मेटबाक खतरा कविता स्पष्ट चिन्हैत अछि। तर्कक साझा भूगोल आ अनुशासनक सीमाबोध एक संग चाही। हरायल पाठक अभावमे अनुमानक सीमा मानब आवश्यक अछि। ‘मतक भीत’ आ ‘प्रश्नक नदी’क विरोध संग्रहक पूर्व इतिहास-विमर्शक संक्षिप्त पद्धतिगत संकल्प बनैत अछि।

२४६. यज्ञक धुँआसँ तर्कक पहिल उजास — विधि, शब्दार्थ, लोककौशल आ प्रमाणक जन्मतर्क

अग्निक चारुकात अन्न, ऋतु, ग्राम आ विधिक साझा व्यवस्था प्रारम्भिक दृश्य अछि। ‘करू’ कहल आज्ञाक पाछाँ ‘किएक’क प्रश्न उठिते आदेशक अधिकार आ भाषाक अर्थ दुनू परीक्षणक विषय बनैत अछि। धातु, वाक्यक संगति आ शब्दगठनक उल्लेख काव्यमे भाषा-दर्शनक प्रवेश करबैत अछि।

कारीगर, नट, वैद्य आ कृषकक कौशलकेँ मौन प्रयोगशाला कहलासँ शास्त्रीय ज्ञानक बाहरक साक्ष्य-क्षेत्र ससम्मान प्रवेश पबैत अछि। स्थिर आत्मा, शाश्वत वस्तु आ सार्वत्रिक सामान्यक बारेमे संदेहक उल्लेख एकहि सांस्कृतिक धरातलमे परस्पर विरोधी दावीक सह-अस्तित्व देखबैत अछि। एतय ऐतिहासिक कालक्रमक प्रमाण विस्तृत नहि; धुँआ पार करैत उजासक रूपक विचारक क्रमिक विमर्शक कल्पना रचैत अछि।

२४७. वस्तुका सात दुआर, साक्षीक एक नेत्र — पदार्थ-वर्गीकरण आ चेतनाक दृष्टिस्थानक द्वैत

द्रव्य, गुण, गति, सामान्य, विशेष, सम्बन्ध आ अभावक क्रम वस्तुविश्लेषणक बहु-दुआर खोलैत अछि। गुलाब आ लालिमाक सम्बन्ध तथा अनेक फूलमे सामान्य रूपक प्रश्न मूर्त वस्तुसँ अमूर्त वर्गीकरण धरि बढ़ैत अछि। अभाव केँ सेहो ज्ञानयोग्य मानलासँ अनुपस्थितिक ज्ञानक समस्या प्रमुख बनैत अछि।

पद्य अचानक बाहरी वर्गीकरणसँ ज्ञाताक स्वरूप दिस घु्रैत अछि: जे देखैत अछि, ओकरा फेर कोन वर्गमे राखब? दृश्यक अन्तर्गत साक्षीकेँ पूर्ण वस्तु बना देलापर अनन्त दर्शक-श्रृंखलाक सम्भावना उठैत अछि। एहि ठाम पदार्थमीमांसा आ साक्षीचिन्तनक दूनू मॉडल एक होइत नहि, बल्कि एक-दोसराकेँ कठिन प्रश्न दैत अछि। सात दुआर-एक नेत्रक विसंगति रचनाक प्रभावी शिल्प अछि।

२४८. इन्द्रियक पवन थमलापर अन्तर आकाश — चित्तवृत्तिक निरीक्षण आ सजगताक स्वतन्त्र अनुशासन

आँखि, कान, स्पर्श आ इच्छाक दौड़सँ आरम्भ होइत पद्य बाहरी बन्धनक बदला प्रतिक्रियात्मक आदतकेँ मानसक जाल कहैत अछि। देह, श्वास आ ध्यानक क्रम साधनाक अनुशासन दर्शबैत अछि; उठैत इच्छा, स्मृति आ कल्पना देखब मुदा ओकर संग बहि नहि जाएब—एहि भेदमे सक्रिय सजगता निहित अछि।

स्वप्नक सत्याभास आ जागरणक निश्चितताक तुलना साक्षीचेतनाक प्रश्न जगबैत अछि। किन्तु मौन केँ निष्क्रियता अथवा संसारघृणा मानल नहि गेल; ओ प्रत्यक्ष प्रतिक्रियापर अपन नियन्त्रणक अभ्यास अछि। ‘भीतरक आकाश’क रूपक पहिनुक शीर्षक-कविताक जागरण-प्रश्नसँ सम्बन्ध बनबैत अछि, मुदा रचना योगक दार्शनिक पूर्ण प्रणाली नहि, ध्यानक जीवनगत बोध प्रस्तुत करैत अछि।

२४९. शब्दक बीजसँ कल्पनाक वन — शब्दार्थक समग्रता आ कलात्मक सम्भावनाक सृजन

धातु, शब्दरूप आ वाक्यक्रमक बदलैत अर्थ पद्यक प्रारम्भिक भाषिक तह अछि। वाक्यक अर्थ केवल अलग-अलग शब्दक योग नहि; प्रसंग, लय आ अनकहल संकेत मनमे नव सम्बन्ध बनबैत अछि। बीआसँ वन धरि बढ़ैत मुख्य रूपक भाषा केँ वस्तुक निष्क्रिय छायासँ अधिक सृजनशील प्रक्रियाक रूप दैत अछि।

नट मंचपर रोइत अछि आ दर्शक जानते नाटक देखैत अछि, तैयो ओकर नोर वास्तविक—एहि उदाहरणसँ कल्पित घटना आ अनुभूत भावक भिन्न सत्ता स्पष्ट होइत अछि। काव्यक एक पाँति पाठक भीतर अनदेखल संसार बनाबय सकैत अछि। ‘ध्वनिक पार अर्थक उजास’मे अर्थग्रहणक सामाजिक प्रक्रिया छल; एतय अर्थक रचनात्मक विस्तार अछि।

२५०. राजदण्ड, श्रम आ साझा घर — कार्यविभाजन, राजसत्ताक मर्यादा आ समान मानवीय दर्जा

समाजक विविध काज परस्पर आवश्यक अछि, मुदा जन्मक नामपर पेशा निश्चित करबाक कठोरता प्रतिभाक स्वतन्त्रता रोकी सकैत अछि। कौशल, जोखिम आ श्रम-मूल्यक अन्तर मानल गेल अछि, मुदा ओहि सँ व्यक्तिक मानवीय दर्जा घटय-बढ़य, एहि असंगति पर पद्य आलोचनात्मक अछि।

राज्यकें राजाक निजी देह नहि मानि जन, मन्त्री, कोष, भूमि, सुरक्षा आ मित्रक संयुक्त व्यवस्था मानल गेल अछि। बाहरी भू-राजनीति परिस्थितिसापेक्ष होइतहुँ जनकल्याण शक्तिक अन्तिम परीक्षण बनैत अछि। ‘साझा घर’क खुलल दुआर ई स्पष्ट करैत अछि जे शासनक शक्ति भय-उत्पादन नहि, न्यायक संरक्षणक साधन हो।

२५१. क्षणक धार आ अनेक दृष्टिक किनार — क्षणवाद आ बहु-दृष्टिक अनुमानक अलग कसौटी

क्षणिक वस्तुक प्रवाह आ स्थायी आत्मक प्रमाणक प्रश्न प्रथम विचारधारा बनैत अछि। घटना-क्रमक कारणबोध, सामान्य रूपक अवधारणात्मक निर्माण आ व्यक्तिक स्मृतिक समस्या एहि क्षणगत चिन्तनसँ जुड़ैत अछि। दोसर विचारधारा वस्तुक अनेक गुण, सम्बन्ध आ काल-देशगत निरूपणक शर्तपर जोर दैत अछि।

कविता दुनू दृष्टि केँ एकहि मतक नाम नहि दैत: पहिलक चुनौती स्थिरताकेँ, दोसरक चुनौती दृष्टिक एकाधिकारकेँ अछि। शून्यताकेँ मात्र रिक्ति, अनेक दृष्टिकेँ मात्र अराजकता बुझबाक विरोध एहि अन्तरसँ निकलैत अछि। ‘एक खिड़की पर्याप्त नहि’क उपमा ज्ञानक नम्रता सिखबैत अछि, मुदा सभ परस्परविरोधी कथन तर्कगत रूपसँ एक सङ्ग सत्य अछि—एहन दावा नहि।

२५२. मतक भीत पारि प्रश्नक भूगोल — मत-नामसँ प्रभाव, प्रत्युत्तर आ बहु-अनुशासनिक इतिहास दिस

परम्परासभक नाम मात्र गिनलासँ ककर तर्क ककर प्रश्नक उत्तर बनल, ई सम्बन्ध अदृश्य रहैत अछि। कला, नीति, भाषा आ समाजक अलग क्षेत्रकेँ ‘जीवित प्रश्नक प्रदेश’ कहल गेल अछि। एहि प्रकार दार्शनिक इतिहास व्यक्ति आ ग्रन्थक वंशावलि सँ समस्या-आधारित संवादक भूगोल बनबाक प्रस्ताव करैत अछि।

कालक्रम उपयोगी होइतहुँ पर्याप्त नहि; प्रभाव, विरोध, अपनाएल विचार आ अनुपस्थित ग्रन्थक छाप सेहो जाँचबाक चाही। ‘सूचीक भीत नहि, प्रश्नक जीवित नदी’क रूपक एतय भूगोल बनि विस्तार पबैत अछि। काव्य लघु होइतहुँ कार्यविधिक स्पष्टता अछि; विशेष परम्पराक ठोस उद्धरण नहि रहला कारण एकरा अनुसन्धानक दिशा मानब, तैयार इतिहास नहि।

२५३. शब्द, शून्य आ अभेदक पूर्वराग — भाषा, क्षणिकता आ अद्वैतक ऐतिहासिक प्रतिध्वनि

शब्दमे अर्थ, अर्थमे जगत आ भाषाक आत्मबोध—एहि क्रमसँ कविता सम्भावित दार्शनिक संगम रचैत अछि। क्षणगत यथार्थ, निर्भर अस्तित्व आ अभेदक अनुभूतिक अवधारणासभक अलग जड़ि सुरक्षित राखि उत्तरवर्ती प्रभावक सम्भावना पर विचार होइत अछि। जगत नाम-रूपक जाल कि अव्यक्त आधारक प्राकट्य, एहि प्रश्नपर निश्चित निर्णय नहि देल गेल।

‘संश्लेष अर्थ मिश्रण नहि’ एहि पद्यक आवश्यक सावधानी अछि। एक परम्पराक शब्द दोसरामे भेटला मात्रसँ शास्त्रीय कारणगत प्रभाव सिद्ध नहि होइत; मूल पाठ आ तिथिक जाँच आवश्यक। ‘पूर्वराग’क संगीत-बिम्बसँ विरोधी स्वरक सम्भावित आगाँक संवाद व्यक्त होइत अछि।

२५४. सम्बन्धक सूक्ष्म जालमे ज्ञानक दीप — वस्तु-गुण-संबन्ध, अभाव आ व्याप्तिक भाषिक कसौटी

गुलाब आ लालिमा उदाहरण बनि वस्तु, गुण आ दुनूक सम्बद्धता जाँचबाक बाट खोलैत अछि। ‘ई’ सर्वनामक स्थान-काल सन्दर्भ आ अभावक ठोस आश्रयक उल्लेख ज्ञानकेँ शून्यमे स्थापित नहि करैत। ज्ञाता, विषय, ज्ञान आ सम्बन्धक पृथक् स्तर सूक्ष्म विचार-निर्माणक आधार अछि।

अनुमानमे ढीली व्याप्ति एक अपवादसँ ढहि सकैत अछि—एहि चित्रसँ पद्य प्रमाणक अनुशासनक माँग करैत अछि। नवी पारिभाषिक भाषाक प्रयोजन महीन भेद सुस्पष्ट करब अछि; मात्र कठिन शब्दक प्रदर्शन नहि। एहि कारण ‘ज्ञानक तलघरमे दीप’क प्रमाण-समीक्षा एतय सम्बद्धताक औपचारिक विश्लेषण बनैत अछि।

२५५. एक आ अनेकक अनन्त बहस — अद्वैत, भेद आ भक्ति-संबन्धक तर्कगत कठिनाई

मूल एक अछि कि भेद वास्तविक—एहि द्वन्द्वमे मायाक नाम दैतहि प्रश्न समाप्त नहि होइत।
‘अज्ञान ककर, ककर ऊपर’क प्रतिप्रश्न तत्त्वगत प्रस्थानक आन्तरिक कठिनाई खोलैत अछि।
यदि जीव-परम भिन्न, सम्बन्धक आधार की; यदि एक, अनुभवक द्वैत केना—दुनू दिशाक
विवेचन उपस्थित अछि।

भक्ति प्रेमी-प्रियक दूरीक भीतर भावात्मक निकटता देखबैत अछि; मुदा कवि भावना केँ तर्कक
प्रश्नसँ मुक्त नहि करैत। सम्बोधन लेल दू पक्ष चाही कि अभेदमे प्रेम सम्भव—ई प्रश्न
समाधानक बदला दार्शनिक संवादक सामर्थ्य देखबैत अछि। विवादक मूल्य जीत नहि, अपन
मतक गुप्त सीमा पहिचानब अछि।

२५६. प्रेमक पाँचम दिशा — पुरुषार्थक सीमासँ बाहर सम्बन्धगत मूल्य आ सौन्दर्य

चारि परम्परागत जीवन-लक्ष्यक संग प्रेमक स्वतंत्र दिशा जोड़ल गेल अछि। प्रेमकेँ केवल इच्छा अथवा लाभक सौदा नहि मानि सेवा, समर्पण, स्नेह, मित्रता आ माधुर्यक भिन्न सम्बन्ध-भाषामे देखल गेल अछि। मुक्ति एकान्तक परम लक्ष्य होएबाक बजाय सम्बन्धक चरम मूल्यक सम्भावना एहिसँ खुलैत अछि।

गीत, नृत्य, देह, ध्वनि आ मन्त्रक रूपमे प्रेमक अनुभवक काव्यात्मक विस्तारण अछि। संवेदनाकेँ स्वतः अज्ञान नहि कहल गेल, मुदा भावक दावी परीक्षणसँ बाहर राखल सेहो नहि। ‘चारि लक्ष्यक चौखटिसँ बाहर जीवन’क व्यापक प्रश्न एतय प्रेमक उदाहरणमे गहिर होइत अछि।

२५७. सूक्ष्म भेदक नोक पर अर्थ — नव्य-न्यायक सम्बन्धक स्तर आ अनन्त विश्लेषणक सीमा

लाल फूलक ज्ञानमे केवल रंग नहि, फूल-लालिमाक सम्बन्धो प्रकट होइत अछि। ‘ई’ आ ‘ओ’क सन्दर्भ, गुणक गुण, ज्ञानक ज्ञान आ अभावक विशेष आश्रयक उल्लेख अति-सूक्ष्म अवधारणा-परीक्षणक आवश्यकता देखबैत अछि। नव पारिभाषिक शब्दसभ एहि विश्लेषणक औजार बनैत अछि।

मुदा सम्बन्धपर सम्बन्ध जोड़ैत अनन्त क्रमक सम्भावना कवि पहचानैत छथि; ‘थमबाक कसौटी चाही’क वाक्य निर्विवाद शब्दविस्तारपर नियन्त्रणक आग्रह अछि। अनुभूत प्रसंगसँ कटि गेल सूक्ष्मता निरर्थक कौशल बनि सकैत अछि। ‘सम्बन्धक सूक्ष्म जालमे ज्ञानक दीप’क विश्लेषण एतय विधिगत आत्मालोचनाक नोक पबैत अछि।

२५८. पुरान श्रुति आ नव आगमक संगम — श्रुति-आगमक प्रामाण्य आ जीवित अनुभवक इतिहास

पुरान स्रोतकेँ सर्वोच्च अधिकार देनिहार नदी आ नव अनुभवसँ सिद्धान्त रचनिहार दोसर नदीक रूपक ग्रन्थाधिकारक प्रश्न बनबैत अछि। श्रुति स्वयं अनेक स्वरक, आगम स्वयं अनेक मार्गक— एहि कारण ‘पुरान’ आ ‘नव’ केँ दू एकरूप दल मानब ऐतिहासिक सरलीकरण होयत।

भक्ति, मन्त्र, देहक साधना आ पूजा-विधिक प्रसंगसमेत पवित्रताक अर्थ समयसँ बदलैत अछि। पुरान स्मृति छोड़ब आ नव अनुभव अस्वीकार करब दुनूकेँ संकीर्ण कहल गेल अछि। कविताक उपाय अधिकारक प्रश्न दबाएब नहि, ओकर प्रमाण-आधारित संवाद अछि; मुदा विशिष्ट आगमक मूल पाठ एतय उद्धृत नहि अछि।

२५९. परम्पराक भीतमे विद्रोही खिड़की — अन्तरपरम्परागत आलोचना आ विचारक स्व-संशोधन

पुरान घरक भीतर खिड़की काटनिहार प्रश्नक बिम्ब परिवर्तनकेँ केवल बाहरक आक्रमण नहि मानैत। कारण, अभाव, सामान्य, विशेष आ सम्बन्धक श्रेणी नव उदाहरणसँ फेर जाँचल जा सकैत अछि। एहि अर्थमे उत्तराधिकारी अपन परम्पराक भीतर रहिकऽ ओकर औचित्य-परीक्षण करैत अछि।

इतिहास केवल स्थापित मत नहि, हरायल विकल्प आ दबाओल असहमतियो खोजैत अछि। खिड़कीसँ हवा संग असुविधा सेहो अबैत अछि; एहि द्विपक्षीय प्रतीकमे संशोधनक आवश्यक कठिनाई अछि। ‘खिड़की खोलू, नींव जाँचू’क कथन पुरानकेँ नष्ट करबाक बेशर्त आग्रह नहि, सत्यापनक आग्रह अछि।

२६०. लोकक कण्ठमे उतरैत चिन्तन — लोकभाषाक माध्यमसँ ज्ञान-संचार आ सामाजिक परम्पराक आलोचना

मठ-पाठशालासँ बाहर गीत, कथा, कहावत, माताक स्वर, कारीगरक रूपक आ कृषकक अनुभव दर्शनक नब भाषिक स्थल बनैत अछि। सूक्ष्म शास्त्रीय सम्बन्ध लोकभाषामे उतरिते प्रेम, देह, आत्मा, समाज आ न्याय दैनिक अनुभवसँ जुड़ैत अछि। ऊपरक विद्या आ नीचाँक लोकक कठोर विभाजन एहि परस्पर संवादसँ प्रश्नित अछि।

तथापि लोकप्रचलन सत्यक अन्तिम प्रमाण नहि—कविता लोकक भीतर पूर्वाग्रह देखबाक चेतावनी दैत अछि। निर्गुण, भक्ति आ जातिगत दीवार पर प्रश्नक उल्लेख लोकचेतनाक आलोचनात्मक सम्भावना खोलैत अछि। ‘शब्दक बीजसँ कल्पनाक वन’क भाषिक सृजनशीलता एतय सार्वजनिक ज्ञानक सामाजिक रूप बनैत अछि।

२६१. दू भाषाक बीच टूटल सेतु — औपनिवेशिक ज्ञानविभाजन, पाठ्यक्रम आ बराबरीक अनुवाद

विद्यालयक दुआरपर नव भाषा अधिकार बनल आ पुरान पाठक नदी दोसर किनार चलि गेल—
एहि आरम्भमे औपनिवेशिक/आधुनिक शिक्षाक भाषिक विभाजनक रूपक अछि। पश्चिमक विज्ञान पढ़निहार विद्यार्थी आ पुरान सूत्र सहेजनिहार अध्येताक बीच आपसी अनभिज्ञता ज्ञानक वंशावली तोड़ैत अछि। एहि संकटकेँ केवल लिपि वा शब्दरूपक अन्तर नहि मानल गेल;
पाठ्यक्रम, विश्वविद्यालय आ चयनक सत्ता प्रश्नक केन्द्र अछि।

कविता मुद्रण आ आधुनिक शिक्षाक अवसर स्वीकार करैत अछि, मुदा प्रश्न उठबैत अछि ककर अनुभव प्रमाणित इतिहासक मुख्य पाठ बनल। एक दिशा दोसरपर शासन करय तँ अनुवाद सेहो पराधीनताक विस्तार भऽ सकैत अछि। बराबर सम्मानवला दू किनारक पुनःसंवाद आ अपन प्रश्न-इतिहासक पुनर्पाठ भाषिक स्वराजक सर्जनात्मक उपाय अछि। एहि ऐतिहासिक व्यापकता लेल पाठ्यक्रम आ संस्थागत तथ्यक अलग शोध आवश्यक; कविता समस्या-संरचना प्रस्तुत करैत अछि।

२६२. टूटल परम्परासँ नव संश्लेषक पथ — सृजनात्मक पुनर्पाठ आ अन्धानुकरणसँ अलग वैचारिक संश्लेष

भाषिक विभाजनक पाछाँ सेहो पुरान विचारधारा सम्पूर्ण नहि सुखायल—एहि उद्घाटनमे ‘दू भाषाक बीच टूटल सेतु’क निराशाक प्रतिपक्ष अछि। चेतना, पदार्थ, जगत आ आत्मसम्बन्धक पुरान प्रश्न आधुनिक विज्ञान आ विकासक भाषासँ पुनर्भेट करैत अछि। मुदा दुई परम्पराक शब्द जोडि देनाइ संश्लेष नहि; प्रमाण, अर्थ आ तर्कक नई परीक्षा आवश्यक अछि।

पुरानता वा आधुनिकता, दुनूमे कोनो स्वतः प्रमाण नहि—ई सममित आलोचना रचनाक मुख्य बिन्दु अछि। बाहरी विचारक अत्यधिक प्रभाव मूल प्रश्न ढाँपि सकैत अछि, आ केवल अस्मिताक कठोर आग्रह नव ज्ञानक प्रवेश रोकि सकैत अछि। ‘बीचक पथ समझौता नहि’क कथन ऐतिहासिक सृजनात्मक संघर्षक प्रतिष्ठा दैत अछि। जड़ पहचानि बाहरी पवनसँ संवादक बिम्ब रचनाकें स्पष्ट काव्यात्मक समापन देत अछि।

२६३. अजन्म मौनसँ जगक आवागमन — सृष्टि, त्रिगुण, मायाक भिन्न अर्थ आ प्रथम कारणक संशय

‘पहिने की छल—मौन कि कम्पन’क आरम्भ विश्वोत्पत्तिक प्रश्नकेँ उत्तरसँ पहिने विस्मय रूपमे उपस्थित करैत अछि। प्रकृतिक सत्त्व-रज-तमक गतिशील संतुलन, प्रकट-अप्रकटक चक्र आ नाम-रूपक उत्पत्ति समानान्तर वैचारिक प्रतिमान बनैत अछि। कविता सबटा मतकेँ एक संयुक्त भौतिक सिद्धान्त घोषित नहि करैत; प्रतीकक धरातलपर परम्परागत कल्पनासभक भिन्न तर्क देखबैत अछि।

माया कखनो आवरण आ कखनो सक्रिय सृजनशक्ति कहल गेल अछि। एकहि पदक भीतर विरोधी अर्थ रहबाक एहि चेतावनीसँ अनुवादक पारिभाषिक सावधानीक महत्त्व बढ़ैत अछि। ‘पहिल गति किएक उठल’ आ संतुलन किएक टूटल—ई प्रश्न बिना मनगढ़न्त उत्तरक खुलल रहैत अछि। लघु पद्यक प्रमुख उपलब्धि उत्तरक पूर्णताक दावा छोड़ि ब्रह्माण्डीय प्रश्नक जीवित आश्चर्य सुरक्षित रखब अछि।

२६४. दुःखक प्रश्न पर नैतिक आकाश — कर्मफल, स्मृतिहीन उत्तरदायित्व आ पीड़ितक प्रति करुणा

भिन्न घरमे जन्मल दू बालकक असमान दुःख-सुखक दृश्यसँ पद्य जगतक नैतिक व्यवस्था पर कठिन प्रश्न उठबैत अछि। कर्मफल यदि जन्मान्तरक लेखा, तखन स्मृतिहीन व्यक्तिक दण्डक न्यायिक अर्थ की? देह बदललाक पाछाँ नैतिक व्यक्ति केना बचल रहैत अछि—ई प्रश्न दर्शनक व्यक्तित्व-निरन्तरताक आधार माँगैत अछि।

यदि प्रत्येक दुःख पिछला कर्मक फल मात्र, वर्तमान सामाजिक अन्याय अदृश्य भऽ जाएत आ पीड़ितक सहायताक औचित्य बाधित भऽ सकैत अछि। कवि संयोग, प्रकृति, संरचना आ आन व्यक्तिक क्रियाक बहुकारणिकता स्वीकार करैत छथि। ‘पहिने हाथ बढ़ाउ, फेर तर्क’क प्राविधिक नहि, नैतिक प्राथमिकता एहि कविताक तीक्ष्ण कथन अछि। कर्मक उत्तरदायित्वक सम्भावना मानितहुँ करुणा बिनु न्याय कठोर पीड़ित-दोषारोपण भऽ सकैत अछि।

२६५. श्रम, शक्ति आ सीमाक नगर — जन्माधारित कार्यबन्दी, राज्यक अवयव आ जनकल्याणक शर्त

नगरक निर्माण ज्ञान, श्रम, धन आ शासनक अनेक हाथसँ होइत अछि। कार्यविभाजनक व्यवहारिक उपयोग आ जन्माधारित मानव-दर्जाक असमानता अलग मुद्दा अछि; कवि एहि भेदकेँ प्रभावी बनबैत छथि। प्रतिभाक स्वतन्त्र चलायमानता जखन जन्मक स्थिर खाँचासँ रोकी जाए, संगठन शक्तिक असमान बँटवारा मे बदलैत अछि।

राजा अकेले राज्य नहि; भूमि, जन, मन्त्री, सेना, कोष, दुर्ग आ अन्तरराज्यीय सम्बन्धक अनेक अवयव उल्लेखित अछि। बाह्य सीमाक रक्षाक संग आन्तरिक जनन्याय जरूरी अछि, नहि तँ दण्ड भयक माध्यम बनैत अछि। ‘राजदण्ड, श्रम आ साझा घर’क सामान्य तर्कक ई पद्य प्राचीन राज्यविचारक संगठित बिम्ब दैत अछि, मुदा काव्यात्मक प्रतिपादनकेँ विशिष्ट राजशास्त्रीय मूल ग्रन्थक प्रमाणित उद्धरण नहि मानल जाए।

२६६. रसक क्षणमे जगत आनन्द बनल — करुण दृश्य, साझा भाव आ कला-अनुभूतिक रूपान्तरण

मंचपर शोक देखिकऽ दर्शक किएक सौन्दर्यानुभूति पबैत छथि—ई आरम्भिक प्रश्न कलात्मक करुणाक रहस्य खोलैत अछि। दर्शक जानैत छथि जे घटना अभिनय अछि, मुदा अनुभूत भाव झूठ नहि। व्यक्तिगत पीड़ा कलात्मक रूपमे साझा अनुभव बनैत अछि; स्थायी भाव, दृश्य, शब्द, अभिनय, स्मृति आ कल्पनाक परस्परता एहि प्रक्रियाक काव्यात्मक मानचित्र अछि।

संगीत आ नृत्यक अलग अर्थवाहक क्षमता, भक्ति-स्मरण आ तान्त्रिक देह-ध्वनिक उल्लेख रसकें केवल क्षणिक मनोरंजनसँ बाहर लऽ जाइत अछि। लेकिन ऐतिहासिक शास्त्रीय सिद्धान्तसभकें एक सूत्रमे गुँथि समान ठहरब उचित नहि; पद्य भावक सम्भावित मिलनभूमि प्रस्तुत करैत अछि। ‘सुन्दरक सीमा सँ पार कला’क सौन्दर्यविवेचन एतय अनुभूतिक साझा आवेश रूपमे अधिक सघन होइत अछि।

२६७. समयक धूलिमे पदचिह्न खोजैत मन — पाण्डुलिपिक काल आ मूल रचनाक समयक प्रामाणिक अन्तर

आधा मेटल पदचिह्न आ हरायल ग्रन्थक बिम्बसँ इतिहासक अपूर्ण स्रोतस्थिति प्रस्तुत होइत अछि। एक व्यक्ति अनेक नामसँ अथवा समान नाम अनेक व्यक्तिक लेल प्रयुक्त भऽ सकैत अछि; भाष्य, वार्तिक, सूत्रक श्रेय आ तिथि एहि कारण कठोर प्रमाण माँगैत अछि। पाण्डुलिपिक लिखावट/प्रतिक तिथि मूल रचनाक जन्मतिथि नहि—ई लघु पद्यक अत्यन्त ठोस पाठालोचनात्मक सावधानी अछि।

किछु युगक विपुल बचल सामग्री आ आन युगक मौनकैँ वास्तविक बौद्धिक निष्क्रियताक सोझ प्रमाण मानब भ्रामक होयत। वंशावलिक महिमागान आ विरोधी मतक विस्मृतिक सम्भावना सेहो उठाओल गेल अछि। जतय आधार अनुमान, ओतय सम्भावनाक भाषा राखब कमजोरी नहि, अनुसंधानक ईमानदारी अछि। एहि पद्यक समापन खण्ड ६क प्रश्न-केंद्रित पद्धति पूरा करैत खण्ड ७क बहु-दर्शन-प्रवेश लेल प्रमाणानुशासनक कसौटी बनैत अछि।

२६८. अनेक दिशाक एक सत्य — अनेकान्त, प्रत्यक्ष-अनुमान आ दृष्टिक आत्मालोचना

एकटा दीपकेँ अलग दिशासँ देखलापर उजास आ छाहरिक भिन्न अनुपात बनैत अछि—एहि आरम्भिक दृश्यसँ अनेकान्तक विचार अनुभवगम्य भऽ उठैत अछि। वस्तु ‘अनेक संबंध, अनेक गुण, अनेक काल’ समेटने अछि; ताहि लेल एक दृष्टिसँ कएल कथन ओकर समग्र स्वरूपक पर्याय नहि। पद्यक महत्त्वपूर्ण भेद ई अछि जे दृष्टिभिन्नताकेँ वस्तुक सम्पूर्ण अनिश्चितता नहि बनाओल गेल अछि। अलग दृष्टिक अधिकार मानब आ परस्पर विरोधी सभ कथनकेँ एकसमान प्रमाणित मानब अलग बात अछि।

प्रत्यक्षक रंग-ध्वनि-स्पर्शसँ आरम्भ भेल ज्ञान स्मृति आ प्रत्यभिज्ञानक मार्फत समयक पार बढ़ैत अछि। काल्हिक देखल मुखकेँ आइ चिन्हबाक प्रसंग प्रत्यक्ष वर्तमान आ सुरक्षित पूर्वानुभवक सम्बन्धक काव्यात्मक उदाहरण अछि। धुँआ सँ अग्निक अनुमानमे ‘चिह्न’ आ निष्कर्षकेँ जोड़निहार सम्बन्धक दृढ़ता जरूरी मानल गेल अछि; एहि कारण बहुदृष्टिक संग प्रमाणक कठोर अनुशासन रहैत अछि। शब्दप्रमाणक विश्वसनीयताकेँ सेहो वक्ताक जिम्मेदारीसँ जोड़ल गेल अछि।

केवलज्ञानक आकाश आ सहअस्तित्वक सामाजिक आँगनक क्रममे आध्यात्मिक आदर्श लोकसम्बन्धक नैतिक आग्रह बनैत अछि। एकदम आरम्भक दीपक बाद अन्तमे ‘मतभेदो सत्यक बाट खोलैत’ कहबाक रचना-चक्र सफल अछि। मुदा एकहि पद्यमे जैन अनेकान्त, न्यायसँ साम्य रखनिहार अनुमान-उदाहरण आ सामान्य बहुलवादी नैतिकताक सन्दर्भ मिलि जाइत अछि; पाठकीय विवेक लेल एहि परम्परासभक सिद्धान्तगत स्वाधीनता बनाएब चाही।

२६९. कारणक सीढ़ी, सत्ताक ज्योति — श्रद्धा-विवेक, स्वरूप-अस्तित्व आ प्राकृतिक विधिक विवेचन

मठक निस्तब्ध देवालक भीतर ‘प्रश्नक घंटी’ आ विश्वास-बुद्धिक दू दीप रचनाक वैचारिक मंच बनबैत अछि। श्रद्धा आ तर्ककें शत्रु नहि, दू सहयात्री कहबाक बाद पद्यक मुख्य प्रयास ई दिखाएब अछि जे वस्तु ‘की अछि’ आ ओकर अस्तित्व ‘अछि’—ई दुई अलग स्तरक प्रश्न भऽ सकैत अछि। सीमित वस्तुक स्वरूप-अस्तित्वक भेद आ परम सत्तामे तकर अभेदक प्रस्तुति थॉमस एक्विनासक चिन्तनसँ सम्बन्धित अछि; मुदा ई मूल ग्रन्थक शाब्दिक उद्धरण नहि, काव्यात्मक पुनर्विन्यास अछि।

सम्भावना सँ क्रियामे परिवर्तन, चलैत वस्तुक चालक, कारणक शृंखला आ अनिवार्य सत्ताक खोज—चारि अवयव एके ‘सीढ़ी’क रूपकमे जुड़ल अछि। ‘बीजक मौन सम्भावित वन’क बिम्ब सम्भाव्यता-क्रियाक कठिन सम्बन्ध सहज करैत अछि। तथापि सीढ़ीक प्रत्येक पायदानक तार्किक वैधता केवल रूपकसँ सिद्ध नहि होइत; कारणक अनन्त शृंखला असम्भव किएक मानल जाए अथवा प्रथम कारणक स्वरूप कोना निर्धारित हो, ई स्वतंत्र दार्शनिक परीक्षण माँगैत अछि।

देह-आत्माक जीवनगत संगति, सद्गुणसँ उत्तम कल्याण आ ‘सामान्य हित’ द्वारा विधिक मूल्याङ्कनक क्रम पद्यकें धर्ममीमांसासँ सामाजिक नीतिविचार धरि लऽ जाइत अछि। राज्यक कार्य आ आत्मिक जीवनक क्षेत्र पृथक रखलाक बाद मनुष्यक अनुभवमे दुनूक संवाद कायम अछि। शिल्पमे अमूर्त अवधारणाक अधिकता कखनो शिक्षणात्मक सूची जकाँ लगैत अछि, मुदा आरम्भक दोसर-दोसर दीप अन्तमे ‘बुद्धि’ आ ‘श्रद्धा’ रूपेँ पुनः उपस्थित भऽ काव्यात्मक एकता रचैत अछि।

२७०. अपनहि उजासक प्रत्यभिज्ञा — प्रकाश-विमर्श, शिवस्वरूप आ कला-साधनाक अन्तर्सम्बन्ध

प्रथम पद्यमे ‘तर्क, व्याकरण, काव्य, तन्त्र’क सहप्रवाह अभिनवगुप्तक बहुआयामी बौद्धिक संस्कार दिस संकेत करैत अछि। स्रोत पाठ स्वयं एतय व्यक्तिनाम नहि उच्चारैत; ताहि लेल जीवनीक विशिष्ट घटना जोड़ब असंगत होयत। रचना शास्त्रसभक समाहारकें एकरूपता नहि, ‘संबंधक सेतु’ मानैत अछि। ‘जे सत्य केवल कहल नहि जाए’क पाँति अध्ययनक सूत्रकें अनुभवक कसौटीपर रखैत अछि।

प्रकाश आ विमर्शक अन्तर मूल दार्शनिक केन्द्र अछि: चेतना केवल प्रकाशित करयवाली सत्ता नहि, अपन प्रकाशित होयबाक बोधो धारण करैत अछि। सृष्टि-स्थिति-संहार-आवरण-अनुग्रहक क्रम विश्वक बहुरूप प्राकट्यकें एक चेतन आधारसँ जोड़ैत अछि। मुक्तिक कथनमे दूर ठाम पहुँचब नहि, अपन ‘भुलायल चिन्ह’ पुनः चिन्हब जरूरी अछि। परिचित मुखकें अचानक स्मृतिसँ पहचानबाक उपमा प्रत्यभिज्ञाक तकनीकी विमर्शक पूर्ण स्थानापन्न नहि, मुदा कविताक सर्वाधिक सुबोध रूपक अछि।

काव्यशास्त्रक विचारमे अलंकारक बाह्य कौशलसँ आगाँ रस, भाव आ पाठकीय अनुभवक अन्तरंग सम्बन्ध उद्घाटित होइत अछि। विशिष्ट मतपरम्पराक गहन भेदक विस्तृत विवेचन रचनामे नहि अछि; तकरा सामान्य चेतनवादक घोषणामे समेटि देनाइ सेहो अनुचित होयत। एक चेतनाक अनेक अभिव्यक्ति सम्बन्धी अन्तिम कथन काव्यक समावेशी स्वर अछि, मुदा ओहि सत्तामीमांसाक सत्यताकें प्रमाणित दार्शनिक निष्कर्ष मानि नहि सकैत छी।

२७१. माटिसँ अतिमानस धरि — आरोहण-अवतरण, देहगत रूपान्तरण आ मानव-एकताक कल्पना

‘मनुष्य एतबे धरि सीमित की?’क आरम्भ उत्क्रान्तिक प्रश्न व्यक्तिक नैतिक भविष्य बनबैत अछि। जड़ पदार्थ, जीवन आ मनक क्रमक बाद मनुष्यकेँ अन्तिम उपलब्धि नहि, ‘मध्य-दुआर’ कहल गेल अछि। आरोहणक संग ‘ऊर्ध्व उजासो नीचाँ उतरय’क पाँति साधनाक द्विदिश गति निर्माण करैत अछि: आध्यात्मिक उन्नति संसार छोड़ब नहि, धरतीक रूपान्तरण होएबाक आकांक्षा अछि। ई कल्पना श्री अरविन्दक समन्वित योग आ अतिमानस-विचारसँ साम्य रखैत अछि; कविताकेँ अनुभवजन्य विकास-विज्ञानक सत्यापित सिद्धान्त नहि मानल जाए।

सत्-चित्-आनन्दक सम्बन्धक पाछाँ मनक वर्गीकरणकारी सीमाक चर्चा अबैत अछि। ‘जे जानय, जे होय, जे करय’क तीन क्रियाक एकसाथ प्रवाह ज्ञान-कर्मक कृत्रिम विभाजन घटबैत अछि। दैनिक जीवनकेँ ‘प्रयोगशाला’ कहबाक सौन्दर्य ई जे देह, प्राण, मन आ सामाजिक कर्म साधनाक वैध क्षेत्र बनैत अछि। मुदा ‘अतिमानस’क सूक्ष्म पारिभाषिक परिभाषा छोट काव्य-परिसरमे संकेतक रूपेँ अछि; व्यापक प्रतिपादन लेल मूल दार्शनिक ग्रन्थ अपेक्षित अछि।

सामाजिक तहपर व्यक्ति आ समुदायक दूनू अधूरापन तथा एकरूपता थोपबाक विरोध रचनाकेँ नैतिक विस्तार दैत अछि। राष्ट्रकेँ आवश्यक मध्यवर्ती संरचना मानल गेल, अन्तिम मानव-लक्ष्य नहि। अन्तक माटि-नभक आवर्तन पहिल धरती-बिम्बसँ मिलैत अछि। शिल्पगत सीमा ई जे आध्यात्मिक उत्क्रान्ति सँ वैश्विक राजनीतिक एकता धरि संक्रमण शीघ्र अछि; ताहि हेतु प्रत्येक सम्बन्ध पूरा तर्कसँ स्थापित नहि, उदात्त आकांक्षाक रूपमे व्यक्त अछि।

२७२. रूप, कारण आ मध्यम मार्ग — संभाव्यता-क्रिया, सद्गुणक अभ्यास आ लोकजीवनक तर्क

पात, प्राणी, नगर आ विचारसँ शुरू भेल रचना अरस्तूक ठोस वस्तुपर आधारित जिज्ञासाकेँ रूप-पदार्थ, कारण आ परिवर्तनक क्रममे खोलैत अछि। ‘बीजमे वृक्षक नीरव संभावना’ आ ‘वृक्षमे बीजक सपना पूर्ण’क बिम्ब सम्भाव्यता आ सिद्ध क्रियाक बोध दैत अछि। ज्ञानक आरम्भ इन्द्रियसँ होइत अछि, मुदा सामान्यीकरण आ तर्क बिनु ओकर विवेचन अधूरा रहैत अछि। एतय कवि अनुभव आ अवधारणाक पूरकता दर्शबैत छथि; अनुभववाद वा विशुद्ध बुद्धिवादक संकीर्ण विभाजन नहि करैत।

नीतिक प्रसंगमे ‘अति आ न्यूनक दुनू किनार’क बीच मध्यक खोज विवेकपूर्ण सन्दर्भ-निर्णय अछि; सभ परिस्थितिमे संख्यात्मक औसत लेनाइ नहि। सद्गुणकेँ दैनिक कर्मक अभ्याससँ जोड़ि सर्वोत्तम जीवनक अर्थ क्षणिक सुख-प्राप्तिसँ अलग होइत अछि। घर-नगर-राज्यक समाज-सम्बन्ध आ कलामे भय-करुणाक अनुशासनसँ रचना ज्ञानमीमांसाकेँ नैतिकता आ सौन्दर्यपर्यन्त विस्तार दैत अछि।

‘आकाश देखू, धरती नहि छोड़ू’क आवर्तन आरम्भक पात-निरीक्षणक दृश्यकेँ अन्तिम दार्शनिक उपदेशसँ जोड़ैत अछि। सबसँ प्रभावी शिल्प ठोस बीआ, पात आ माटिक सहायता सँ अमूर्त तर्ककेँ दृश्य बनबैत अछि। मुदा कारणमीमांसा, राजनीति, नैतिकता आ नाट्य-विचार एकहि गीतमे आबि गेलासँ प्रत्येक क्षेत्रक आन्तरिक विवाद खुलि नहि पबैत अछि; एहि कविता केँ अरस्तूक विशाल तन्त्रक मानचित्र मानब अधिक ठीक, सम्पूर्ण सिद्धान्त-विवरण नहि।

२७३. सन्देहक रातिसँ विश्वासक भोर — तर्कक आत्मपरीक्षण आ साधनामे अन्वेषणक कठिन मोड़

ज्ञाननगरक अनेक दुआर आ प्रश्नक दीप कथ्यकेँ शास्त्रसँ आत्मनिरीक्षण धरि लऽ जाइत अछि। इन्द्रियक विश्वासकेँ स्वप्नक प्रतिपक्ष सामने रखब रचनाक पहिल ज्ञानमीमांसक संकट अछि। ‘सन्देह ओकर शत्रु नहि छल’—एहि कथनमे संशयक कार्य पुरान विश्वास तोड़ि निर्वात बना देनाइ नहि, आधारक परीक्षण अछि। पाँतिसभ गजालीक आत्मानुभूति आ बौद्धिक यात्राक परिचित रूपसँ सम्बद्ध पढ़ल जा सकैत अछि, मुदा स्रोत कविता जीवनीगत तिथिसभ स्थापित नहि करैत।

बाहरी प्रतिष्ठा, पद आ यशक बावजूद भीतरी अशान्तिक प्रसंग बौद्धिक जीवनक नैतिक सीमाक उद्घाटन अछि। ‘जिह्वा सत्यक चर्चा करय, मुदा कर्म विपरीत’ विरोध पाण्डित्य आ चरित्रक अन्तरकेँ तीक्ष्ण करैत अछि। साधना, संयम, स्मरण आ प्रार्थना ज्ञानक स्थानपर अन्ध कथन नहि बनैत; कथनक जीवनगत परीक्षा बनबाक आग्रह अछि। तथापि भीतरक प्रकाश स्वतन्त्र सार्वजनिक प्रमाण होएबाक दावा रचनामे स्पष्टतः सिद्ध नहि; अनुभवक सत्यापनीयता आलोचनाक खुलल प्रश्न अछि।

अन्तिम दू प्रश्न—‘कोना जानैत छी’ आ ‘कोना जीबैत छी’—रचनाक संरचनात्मक धुरी अछि। पहिल ज्ञानमीमांसा, दोसर आचारक अनुशासन। राति सँ भोरक आवर्तित रूपक साधारण सन लगि सकैत अछि, मुदा एतय अहंकारसँ विनम्रता दिसक विशिष्ट विचार-यात्रा बनि उठैत अछि। समापन निश्चित विश्वासक ऊँच भीत नहि, संशय सहबाक क्षमता बतबैत अछि।

२७४. भीतरक प्रकाश आ दू नगर — इच्छाक क्रम, अशुभक अभाव आ नैतिक इतिहासबोध

अतृप्त इच्छाक बेचैनी सँ शुरू भेल कविता ऑगस्टीनक अन्तर्मुखी दर्शनक व्यापक संरचना सँ सम्बद्ध अछि। भौतिक सुखक पुनरावृत्ति जखन ‘भीतर रिक्तता’ नहि भरि सकैत, तखन सत्यक मापदण्ड, ईश्वर आ आत्मनिरीक्षणक प्रश्न उठैत अछि। ‘सृष्टि ओकर बराबर नहि’ कहब ईश्वर-जगतक सम्बन्धमे स्पष्ट भेद सुरक्षित करैत अछि। काव्य ईश्वरक अस्तित्वक स्वतन्त्र तर्कसिद्धि नहि दैत; ओ मापक भीतर स्थिर आधारक खोजकेँ रूपात्मक भाषा दैत अछि।

अशुभक प्रश्नपर ‘अन्हार अपन स्वतन्त्र दीप नहि’क उक्ति भलाइक अभाव रूपमे अशुभक चिन्तन खोलैत अछि। स्वतंत्र इच्छाक मूल्यक पाछाँ नैतिक उत्तरदायित्व आ ‘ठीक प्रेम’क क्रम जोड़ल गेल अछि। एहि तर्कमे जँ पीड़ा केवल अव्यवस्थित इच्छा रूपेँ पढ़ल जाए तँ प्राकृतिक पीड़ा अथवा संस्थागत अन्यायक विशिष्ट कारण हेराएबाक आशंका अछि; स्रोत पद्य पीड़ाक चित्र दैत अछि, मुदा एहि प्रतिपक्षक पूरा समाधान नहि करैत।

दू नगरक विभाजन भूगोल नहि, भिन्न मूल्य-केन्द्रित जीवनपद्धति अछि। राज्य आ इतिहासक वैभवक बीच न्याय टिकबाक शर्त बनैत अछि। ‘ईंट-पाथरसँ नगर नहि बनय’ पद्यक लोक-उपयोगी बिम्ब अछि; भीतरक नैतिक निर्माण आ बाहरी राज्यव्यवस्था एक-दोसरा पर प्रश्न उठबैत अछि। काव्यक उपलब्धि व्यक्तिगत प्रेमक व्यवस्थानसँ ऐतिहासिक न्याय धरि एक सूत्र बनब अछि, सीमा ई जे इतिहासक ठोस विवरण अनुपस्थित अछि।

२७५. शब्दक पार जे स्वर जागय — अभिधा-लक्षणा-व्यञ्जना आ सहृदय अनुभव

‘कविता ओतहि समाप्त नहि’—आरम्भक ई निषेध कथन आ संकेतक अन्तर उधारैत अछि। अभिधाक सोझ अर्थ, लक्षणाक प्रसंगानुसार मोड़ आ व्यञ्जनाक अव्यक्त अनुभूतिक क्रम शब्दशक्तिक एक जटिल तन्त्रकें दृश्य बनबैत अछि। ‘साँझ उतरि गेल’ एक व्यक्तिक लेल समय, दोसरक प्रतीक्षामे विरहक छाया भऽ सकैत अछि—ई उदाहरण संकेतक प्रभावक सही पाठाभिमुख आधार अछि।

वस्तु, अलंकार आ रसक संकेतक उल्लेख भऽ रहल अछि, मुदा रचना छन्द-यमकक गणना केँ कविता-विवेचनक अन्तिम उपाय अस्वीकार करैत अछि। रसकें लेखकक निजी नोर वा पात्रक पीड़ा मात्र नहि मानि साझा कलात्मक अनुभवक परिणाम कहबाक आग्रह भारतीय ध्वनिवादक केन्द्रिय संवेदनासँ मेल खाइत अछि। किन्तु ‘पाठकमे की बदलल’ प्रश्न रस-निष्पत्तिक पूर्ण शास्त्रीय कसौटी नहि; पाठकीय विविधता आ सन्दर्भक चर्चा ओहिसँ आगाँ आवश्यक अछि।

पाँतिपर्यन्त शब्दक बाद हृदयमे ‘दोसर कविता’ जागबाक अन्तिम छवि रचनाक सबसँ सुन्दर व्यञ्जनात्मक क्षण अछि। अर्थक तीन चरण क्रमशः कथात्मक व्याख्याक रूपमे प्रस्तुत अछि; शिक्षात्मक प्रवाह प्रधान होइतहुँ ‘पाँतिक पाछाँ कम्पन’ आ ‘वाणीक देह’क बिम्ब अनुभूतिक घनत्व देत अछि। संग्रहक आन भाषा-विमर्शक तुलना मे एतय शब्द-सत्ता नहि, काव्य-पाठक सहनिर्माण पर बल अछि।

२७६. कहबो एकटा काज अछि — वचनक सामाजिक बल, प्रयोग-सन्दर्भ आ परिणाम

‘हम वचन दैत छी’ कहिते सूचना नहि, प्रतिज्ञाक सामाजिक घटना घटैत अछि—एहि सीधा उदाहरणसँ भाषिक कर्मक समस्या खुलैत अछि। ‘आकाश मेघाच्छन्न अछि’ सन वर्णनात्मक कथन सत्य-असत्यक कसौटी माँगैत अछि; प्रतिज्ञा, नामकरण आ आदेशक सफलताक कसौटी अलग होइत अछि। भाषाक ई भिन्न कार्य-संसारकें कविता बाजार, घर, अदालत आ सभाक स्थानिक बिम्बसँ जोड़ैत अछि।

कहबाक ‘सफलता’ उचित व्यक्ति, समय आ मान्य रीति पर निर्भर रहलासँ शब्दक सामाजिक संस्थागत धरातल स्पष्ट होइत अछि। वाक्यक कही देब मात्र अधिकार नहि देत। ‘दरवज्जा खुलल अछि’ खबर सेहो भऽ सकैत, अथवा ठंढा बसातमे एक अप्रत्यक्ष अनुरोध—एहि उदाहरणसँ वक्ताक मंशा आ प्रसंग बिनु अर्थनिर्धारणक जोखिम देखाइत अछि। कहल, कएल आ सुनिहारपर पड़ल प्रभावक तीन तह काव्यमे भाषिक कर्म-सिद्धान्तक सुबोध क्रम बनैत अछि।

रचना वचनक सफलता सँ नैतिक जिम्मेदारी धरि जाएत अछि: भरोसा, क्षमा आ घोषणा शब्दक अवयव नहि, मानवीय सम्बन्धक काज अछि। एहिमे जे. एल. ऑस्टिनक वचन-कर्मविषयक मुख्य परिप्रेक्ष्यक प्रतिध्वनि सुनाइत अछि, मुदा विशिष्ट सिद्धान्तक पूर्ण औपचारिक निरूपण या मूल वाक्यक उद्धरण मानब नहि चाही। काव्यात्मक सीमा ई जे अवधारणाक सूची पाँतिक बारम्बार दोहराओल उपदेशक रूप लऽ लैत अछि; तथापि ‘कहबो सँ संसार बदलायल जाए’ अन्तिम वाक्य आरम्भक प्रतिज्ञा-दृश्यकें सार्थकता दैत अछि।

२७७. एकहि उजासक अनेक दुआर — सूफी अनुभूति, प्रेमक अनुशासन आ समावेशक एकत्व

‘एकमे अनेक, अनेकमे एक’क रूपकेँ जलमे चन्द्रक प्रतिबिम्ब द्वारा बुझाओल गेल अछि। धर्मक नाम-आकार अनेक होइतहुँ प्रश्नक गहिर प्यास एक होएबाक सम्भावना पद्य व्यक्त करैत अछि। एहि रूपमे सूफी एकत्वविचारक काव्यात्मक प्रतिध्वनि भेटैत अछि; मुदा ‘एकरूप’ अन्तिम सत्य सभ ऐतिहासिक विश्वास-पद्धतिक प्रमाणित एकमत अछि, एहन दावा स्रोत नहि करैत।

‘जे हृदय बदलि दे जीवन भरि’—एहि पाँति प्रेमक अनुभवकेँ ज्ञानक महत्त्व देबऽ चाहैत अछि। प्रेम आ करुणा एतय केवल भावुकता नहि, ‘अपन आग्रह केँ पाछाँ राखि’ दोसर मनुष्यक दुआर खोलबाक अनुशासन अछि। अन्यक दुःख अपन लगबाक बोध आत्मानुभूति सँ सामाजिक व्यवहारक संक्रमण अछि। ‘दोसरा दिसक दीप बुझाय’ वाली कट्टरताक चेतावनी धार्मिक समावेशकताक स्पष्ट नैतिक सूत्र अछि।

पवन, दीप, उजास, जलक चन्द्रमा आ दरबज्जाक आवृत्ति रचनाकेँ एक विस्तृत गीतात्मक रूप देत अछि। विशिष्ट सूफी दार्शनिक शाखाक भीतर जगत-ईश्वर सम्बन्धक मतभिन्नता एतय विस्तारसँ नहि आएल; ई सामान्य एकत्ववादी भावक दीर्घ रूपान्तर अछि। ‘अनेक दिशाक एक सत्य’क अनेकान्तसँ तुलना करिते महत्त्वपूर्ण भेद ई रहत जे ओतय ज्ञाताक दृष्टि आ प्रमाणक शर्त प्रमुख, एतय प्रेमपूर्ण सहअस्तित्वक अनुभूति प्रमुख अछि।

२७८. प्रकृति नाचय, पुरुष देखय — सांख्यक द्वैत आ दुःखनिवृत्तिक विवेकज्ञान

जगतकेँ रंगमंच, प्रकृतिकेँ नृत्य आ पुरुषकेँ नीरव दर्शक बनबाक आरम्भ सांख्यक प्रकृति-पुरुष भेदकेँ दृश्य रूप दैत अछि। कार्य कारणमे पहिने निहित रहबाक तर्क दूध-दही आ बीआ-वृक्षक उदाहरणसँ खोलल गेल अछि। सत्त्व-रज-तमक असन्तुलन सँ जगतक बहुरूप विकास आ बुद्धि-अहंकार-मन-इन्द्रियक क्रम कविता परिचयात्मक ढंगसँ प्रस्तुत करैत अछि; एहि वर्गीकरणकेँ प्रत्यक्षतः सत्यापित प्राकृतिक विज्ञान नहि मानल जाए।

पुरुष ‘नहि कर्ता, नहि परिवर्तनशील’ रहितहुँ अनुभवसँ बान्हल देखाइत छथि—एहि विरोधाभासक समाधान ‘अज्ञानक कारण प्रकृतिक नाच अपनहि नाच बुझि पड़ैत’ पाँतिमे देल गेल अछि। मुक्तिक परिभाषा आनन्दमय लोकप्राप्ति नहि, स्वभावक भेदज्ञान अछि। देहक काज ज्ञानक बादो चलि सकैत अछि; बन्धनक मिथ्या आरोप नहि टिकैत। तीन प्रमाण—प्रत्यक्ष, अनुमान, विश्वासयोग्य वचन—एहि तत्त्वमीमांसक निष्कर्षक औचित्य पूछबाक पद्धति दैत अछि।

कविता दृष्टि आ गतिशीलताक आवर्ती प्रतिपक्ष सँ एक अनुशासित चित्र बनबैत अछि। कथ्यक सीमा ई जे बहुपुरुषवाद आ एक मूल प्रकृतिक सम्बन्ध, तथा प्रकृति ज्ञाताक लेल किएक कार्य करैत अछि—एहि कठिन प्रश्नक पूर्ण निराकरण नहि कएल गेल। ‘एकहि उजासक अनेक दुआर’क अभेद-झुकावसँ उलट ई पद्य मुक्ति लेल मूल द्वैत सुरक्षित राखैत अछि; संग्रहक दार्शनिक बहुलता लेल ई भेद आवश्यक अछि।

२७९. तर्कक फूलसँ सत्यक अर्घ्य — ईश्वर-सिद्धिक अनुमान आ उत्तरदायी तर्क

‘श्रद्धा सेहो माँगय समीक्षा’क उद्घोष ई पद्यकेँ भक्तिपरक निश्चिततासँ अलग करैत अछि। धुँआ-अग्निक परिचित उदाहरणसँ अनुमानक नियम आ व्याप्तिक आवश्यकता स्थापित भऽ रहल अछि। कार्य-कारण, जगतक व्यवस्था आ चिह्नक सहायतासँ ईश्वरविषयक तर्कक सम्भावना उठाओल गेल अछि; न्यायपरम्पराक ई बहस उदयनाचार्यक न्यायकुसुमाञ्जलिक विषयक्षेत्रसँ सम्बन्ध रखैत अछि, मुदा कविता मूल संस्कृत ग्रन्थक प्रामाणिक भाष्यक दावा नहि करैत।

स्मृति, इच्छा आ ‘हम’क निरन्तरतासँ आत्माक प्रश्न उठैत अछि। तथापि स्मृतिमे एकरूपताक अनुभूति स्थायी आत्माक अस्तित्वक अविवादित प्रमाण नहि; क्षणवादक प्रतिपक्ष एहि पर स्वतन्त्र प्रत्युत्तर दऽ सकैत अछि। कविता विवादक एही स्वरूपकेँ ‘विरोधी मत केँ चुप करब नहि’ कहि मान्यता दैत अछि। शब्दार्थक सार्वजनिक नियमक आधार पर उठल प्रश्न ज्ञान आ सामाजिक प्रयोगकेँ अलग-अलग धरातलपर विचारक विषय बनबैत अछि।

तर्कक पुष्पक ‘अर्घ्य’ बनब ज्ञानक पद्धति आ श्रद्धाक रूपकक सुन्दर मेल अछि। ई रूपकक क्षमता संग एक जोखिम छैक: अनुमानक निष्कर्षकेँ पूजा-जइसन समर्पणक भावसँ प्रमाणित ठहराएब सम्भव नहि। पाठ स्वयं ‘प्रमाण जतय धरि संग चलय’क मर्यादा रखैत अछि; ताहि कारण प्रश्नक दुआर खुलल रहबाक अन्तिम आग्रह रचनाक विवेकपूर्ण उपलब्धि अछि।

२८०. हेतुक दीप, आत्माक साक्षी — वार्तिकपरम्परा, लिङ्गपरामर्श आ हेत्वाभास

न्यायक पुरान सूत्र आ बौद्ध तर्कक चुनौतीक बीच ‘वार्तिक’क उत्पत्ति एहि पद्यक ऐतिहासिक धुरी अछि। स्रोत पाठमे व्यक्ति-नाम नहि अछि; ताहि कारण आलोचनामे अविचारित जीवनी वा रचनाक काल जोड़ब उचित नहि। पक्षमे हेतु, सपक्षमे अन्वय आ विपक्षमे तदभावक परीक्षा अनुमानक तार्किक ढाँचा बनबैत अछि। कविता बौद्ध प्रतिपक्षकें शत्रु नहि, अपने प्रमाणचिन्तनक सूक्ष्मताक प्रेरक मानैत अछि।

धुँआ देखलाक बाद अग्नि स्मृति आ सम्बन्धक पुनःस्मरणकें ‘लिङ्गपरामर्श’सँ जोड़ल गेल अछि। एहि स्पष्टीकरणक सौन्दर्य ई जे अनुमान केवल चिह्नक यान्त्रिक प्रतिक्रिया नहि, ज्ञात सम्बन्धक सम्यक् उपयोग अछि। अनुमानक सदृश देखाइत, मुदा साध्य तक नहि पहुँचनिहार कारणक प्रसंग हेत्वाभासक वास्तविक चिन्ता बनैत अछि। ‘भ्रमित कारण’ आ ‘असिद्ध आधार’क चर्चा उदाहरणसँ आगाँ विशद वर्गीकरण नहि करैत; ई कविता एक पद्धतिमूलक परिचय अछि।

स्मृति, भाषा आ निरन्तर ‘हम’क प्रत्ययकें आत्मतत्त्वक समर्थन रूपमे रखल गेल अछि। एहिमे आत्माक प्रमाण-विवादक कठिनाईक संकेत अछि, पर प्रतिपक्षक विस्तृत मूल युक्ति नहि भेटैत। रचनाक मूल उपलब्धि एतय अछि जे परम्पराक रक्षा कें स्थिर निष्ठा नहि, नित संशोधन मानल गेल; ‘सत्य जँ दृढ़ अछि, परीक्षणसँ ओकर उजास आरो स्पष्ट’क समापन आलोचनाकें आत्मरक्षाक बदला अनुसन्धान बनबैत अछि।

२८१. पदार्थक गति, मनुष्यक मुक्ति — श्रमक परायापन, वर्गसम्बन्ध आ भौतिक इतिहास

कारखानाक धुँआ आ श्रमिकक थाकल हथेली रचनाकें अमूर्त पदार्थमीमांसासँ जीवनक श्रम-सम्बन्धमे स्थापित करैत अछि। ‘ककर लेल ई असीम उत्पादन?’क प्रश्न उत्पादक शक्ति आ उत्पादनक स्वामित्वक अन्तर खोलैत अछि। जमीन, औजार, पूँजी आ श्रमक सम्बन्धकें इतिहासक मुख्य बुनावट कहि राजा-विजय आधारित वृत्तान्तक एकपक्षीयता पर प्रहार कएल गेल अछि। मजदूरक उत्पाद आ ओकर स्वयंकें पराया भऽ जाएबाक चित्र परायापनक भावनात्मक आ संरचनात्मक दुनू रूप देखबैत अछि।

विरोध, संघर्ष आ सामाजिक रूपान्तरणक कथनमे भौतिक परिस्थितिक महत्त्व देखाओल गेल अछि, मुदा ‘विज्ञानकें मन्त्र नहि बनाउ’क चेतावनी विचारक आत्मसंशोधनक ठाम रखैत अछि। सामूहिक संगठन आ सामाजिक समान अवसर मुक्ति लेल अनिवार्य कल्पित अछि; केवल शासक बदलला सँ मानवीय क्षमता स्वतः विकसित नहि होएत। एहि पद्यक मार्क्सवादी/एंगेल्सीय पृष्ठभूमिक संग दार्शनिक अध्ययन सम्भव अछि, मुदा कविता सँ विशिष्ट ऐतिहासिक आन्दोलनक परिणाम सिद्ध नहि कएल जा सकैत अछि।

‘हाथक काज’क अन्तिम बिम्ब आरम्भक ‘हथेली’सँ सम्बद्ध भऽ इतिहासक कर्तृत्वकें श्रमिकक दिस घुर्बैत अछि। रचनाक सामर्थ्य मानवीय जीवनमे सिद्धान्तक कसौटी निर्धारित करब अछि। सीमा ई जे ‘विरोधक भीतर नूतन जन्मय’क सामान्य कथन सभ परिवर्तनक अनिवार्य ऐतिहासिक नियम प्रमाणित नहि करैत; हिंसा, प्रतिरोध आ संगठनक विशिष्ट सामाजिक शर्त अलग-अलग जाँचबाक आवश्यकता अछि।

कविता सीधा पूछैत अछि—‘ई कथनक अर्थ आखिर की?’। तार्किक सम्बन्धक भीतर मान्य विश्लेषणात्मक कथन आ अनुभवसँ परीक्ष्य तथ्य-दावाक भेद एहि प्रश्नक पहिलो उत्तर अछि। ‘सत्ता’, ‘परम’ अथवा ‘अतीन्द्रिय’ सन शब्दक गंभीरता स्वयं अनुभवजन्य अर्थक प्रमाण नहि— एहि वाक्यमे तार्किक अनुभववादी आपत्तिक कसौटी अछि। रचनाकेँ ‘कहब मात्र सँ सत्य नहि बनत’क दुहराव घोषणात्मक बनबैत अछि, मुदा वास्तविक चिन्ता भाषिक अर्थक औचित्य अछि। नीति आ सौन्दर्य-वाक्यक चर्चा एहि प्रयोगसँ जटिल बनैत अछि। ‘ई नीक’क भीतर तथ्यक शुद्ध विवरणसँ अलग स्वीकृति-अस्वीकृतिक भाव रहि सकैत अछि; तथापि एतयसँ नैतिक विचार स्वयं सर्वथा निरर्थक अछि, ई निष्कर्ष नहि निकलैत। विज्ञानक सम्भावित परीक्षणक आग्रह आ मूल्यक अन्य प्रयोजन भिन्न रहबाक कारण एउ भाषिक अनुशासनक बहुस्तर विकसित होइत अछि।

कविता परीक्षणयोग्यता-आधारित कठोर वादक सीमा स्वतन्त्र रूपसँ नहि खोलैत, यथा सत्यापनक कसौटी स्वयं कोन श्रेणीक कथन अछि। एहि प्रश्नक अभाव रचनाक दार्शनिक सीमा अछि। ‘कहू, जाँचब कोना?’ सन लगातार प्रश्न आलोचनाक दृष्टि तेज करैत अछि; ‘शब्दक पार जे स्वर जागय’क ध्वनिवादसँ तकर तुलना करिते अनुभवजन्य तथ्यदावा आ काव्यात्मक व्यञ्जनाक भिन्न व्यवहार विशेष रूपसँ चिन्हबाक चाही।

२८३. कण-कणमे भेदक व्याकरण — वैशेषिकक पदार्थ, समवाय आ अभाव-विवेचन

‘नाम भरि सँ बात नहि सुलझय’क आरम्भ वस्तुक रचना-सम्बन्धपर ध्यान केन्द्रित करैत अछि। द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष आ समवायक माध्यमसँ घट, पात, रंग, गति आ अवयवक सम्बन्धक विवेचन प्रस्तुत भेल अछि। सूक्ष्म परमाणुक उल्लेखसँ दृश्य स्थूलरूपक पाछाँ संभावित आधारक प्रश्न उठैत अछि। ई वर्गीकरण वैशेषिकक ऐतिहासिक पदार्थमीमांसाक प्रस्तुति अछि, आधुनिक भौतिक कणक प्रत्यक्ष वैज्ञानिक विवरण नहि।

समवायकँ अवयव-अवयवी वा वस्तु-गुणक सम्बन्धक रूपमे स्पष्ट कएल गेल अछि। अभावक उदाहरण ‘एतय ई नहि’ ज्ञानक सकारात्मक विषय कोना होइत, एहि कठिन प्रश्नक सरल भाषा अछि। समवायी, असमवायी आ निमित्त कारणक भेद जोड़लासँ पदार्थविश्लेषण अन्वयात्मक घटनाविचार बनैत अछि; तथापि तीन प्रकारक कारणक आवश्यकताक विस्तृत विरोध-उत्तर कविता नहि दैत।

अन्तिम ‘भेदक व्याकरण’ रूपक विचारणीय अछि: भाषा जकाँ वस्तुसभक नाम, वर्ग, सम्बन्ध आ निषेधक आन्तरिक नियम अछि। ई सम्पूर्ण पदार्थजगतकँ भाषाक उत्पाद कहबाक दावा नहि; व्यवस्थित बोधक उपमा अछि। ‘वस्तुक सात दुआर, साक्षीक एक नेत्र’मे ज्ञाताक प्रश्न एहि वर्गीकरणक बाहरसँ उठैत छल; एतय दृष्टिक केन्द्र वस्तुक विशिष्ट संरचना अछि।

२८४. अपन आचरणसँ राज्य सँवारू — रेन, शू, ली आ सार्वजनिक नैतिक उदाहरण

राजमहलसँ पहिने परिवार आ मनक आचरण बदलबाक आग्रह कन्फ्यूशियसीय सामाजिक नीतिविचारक काव्यात्मक बुनावट अछि। ‘व्यक्ति सँ परिवार, परिवार सँ राज्य’क विस्तार एतय संस्थाक एकतरफा आदेश नहि, उत्तरदायित्वक क्रम मानल गेल अछि। पाँच सम्बन्धक सूत्र परिवारक पितृक अनुशासनक सीमासँ आगाँ मित्रक समान स्नेह आ शासकक दयालु व्यवहार जोड़क प्रयत्न करैत अछि। तथापि संबंधक ऐतिहासिक श्रेणीबद्धता आ आधुनिक समान नागरिकाधिकारक बीच तनाव आलोचनाक योग्य अछि।

‘रेन’ मनुष्यता, ‘शू’ प्रतिदानशील दृष्टि आ ‘ली’ विधिसम्मत आचार रूपमे प्रस्तुत अछि। दोसरा पर ओ नहि करब जे अपनापर स्वीकार नहि—एहि परस्पर कसौटीक महत्व दैनिक सम्बन्धमे सुस्पष्ट अछि। शिक्षा केँ जन्माधारित अधिकारसँ बाहर करबाक संकेत ज्ञानक लोकतांत्रिक आशा दैत अछि, मुदा प्राचीन सामाजिक व्यवहारक सभ ऐतिहासिक सीमाक समाधान रचनामे नहि भेटैत।

‘ज्ञानी’ स्वयं अपन अज्ञान कहि सकय, ई पाँति ग्रन्थाधिकृत आचरणक जड़ता तोड़ैत अछि। नैतिक अनुकरणक प्रभाव राजकीय दण्डसँ पैघ ठहराओल गेल, मुदा उचित संस्था आ कानून बिनु आदर्श शासकक सद्गुण मात्र पर्याप्त होयत कि नहि, ई प्रश्न खुलल अछि। काव्यक अन्तिम ‘मनुष्यता नहि बिसरू’ परम्पराकेँ वर्तमान व्यवहारक कसौटीपर पुनर्चित करैत अछि।

२८५. अनुभवक साँचा, कर्तव्यक दीप — ज्ञानक पूर्वशर्त आ मानवीय गरिमाक सार्वभौमिकता

इन्द्रियक ‘बाह्य तरंग’ आ मनक ‘पूर्व-साँचा’क मेल ज्ञाननिर्माणक मुख्य कथ्य अछि। स्थान-कालक चौखट आ बुद्धिक एकता-कारण सम्बन्धी श्रेणिसभ वस्तुकेँ केवल नकल कऽ नहि, अनुभवक व्यवस्थित रूपमे प्रस्तुत करैत अछि। ‘वस्तु अपनेमे की अछि’क प्रश्नपर सीमाबोधक आग्रह कान्टक समालोचनात्मक दर्शनक काव्यात्मक संकेत अछि; प्रपञ्चक प्रत्यक्ष रूप आ वस्तु-स्वरूपक अंतर विज्ञान-विरोध नहि, ज्ञानक सीमा-निर्धारण अछि।

कविता ज्ञानमीमांसासँ नैतिक प्रश्नपर मुडैत अछि: फल, भय, लाभ हटला पर कर्तव्यक रूप कोन? ‘मनुष्य साधन मात्र नहि’क पाँति गरिमाक केन्द्र दैत अछि। अपन लेल स्वीकार्य नियम सभ लेल सार्वत्रिक रूपेँ मानब आ स्वायत्त इच्छा सँ नैतिक विधि ग्रहण करब, ई दुनू विचार अधिकारक समान मर्यादाकेँ दृढ़ करैत अछि। तथापि सार्वत्रिकीकरणक शर्त अकेले प्रत्येक कठिन सामाजिक द्वन्द्वक सर्वसम्मत निर्णय नहि दैत।

तारामय आकाश आ भीतर नैतिक स्वरक अन्तिम युग्म प्रारम्भक सीमित आँखि आ अनन्त प्रश्नक निकट लौटैत अछि। युद्धसँ स्थायी शान्तिक चिन्तन धरि विस्तार रचनाक नैतिक महत्त्व बढ़बैत अछि। सीमा ई जे ज्ञानक सीमासँ नागरिक विधि आ अंतरराष्ट्रीय शान्ति धरि विषयगति बहुत तेज अछि; एहि बीचक ऐतिहासिक/कानूनी मध्यस्थता स्वतंत्र ग्रन्थ-अध्ययन माँगैत अछि।

२८६. अर्थक नक्शा, भाषाक अनुशासन — सत्यापनसँ पुष्टियोग्यता धरि अर्थक सुधार

‘कहबाक अर्थक कोन आधार?’क प्रश्नसँ शुरू भेल पद्य विज्ञानक वाक्य आ तार्किक संरचनाक बीच भेद गढ़ैत अछि। कठोर सत्यापन-सिद्धान्तक प्रारम्भिक आकर्षणक बाद पाठ स्वीकार करैत अछि जे सभ वैज्ञानिक विधान तत्काल अनुभवमे उतरि नहि सकैत। एहि लेल ‘पुष्टियोग्यताक खुलल बाट’क प्रस्ताव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सुधार अछि: कठोर सभ-किछु-वा-किछुओ-नहि कसौटीक बदला सम्बन्धित परीक्षणक विभिन्न डिग्री पर विचार अछि।

प्रेक्षण-वाक्य, सैद्धान्तिक पदक सेतु आ आंशिक परिभाषाक सम्भावना रचनाकेँ तार्किक अनुभववादक आन्तरिक आत्मसंशोधनसँ जोड़ैत अछि। तर्क आ गणितक कथनकेँ प्रत्यक्ष अनुभवक समाचारसँ अलग मानि ओकर संरचनात्मक भूमिका राखल गेल अछि। मुदा ‘तत्त्वमीमांसा’क अनेक दावापर उठल आपत्ति सँ सभ परम्परागत विचार स्वतः निरर्थक बनि जाए—एहन निष्कर्ष स्रोत प्रमाणित नहि करैत।

‘नक्शा’क रूपक भाषाक विन्यासकेँ अनुभवक धरतीसँ जोड़ैत अछि। आदर्श भाषाक स्वप्न आ वास्तविक विज्ञानक संशोधनीय भाषा, दुनूक अन्तर स्पष्ट कएल गेल अछि। ‘अर्थक कसौटी’मे कठोर प्रमाणमूलक आरम्भ छल; एहि रचनामे परीक्षणक आंशिकता आ सिद्धान्त-विकासक कारण पद्धतिक लचक बढ़ल अछि। मूल कवितामे व्यक्तिविशेषक नाम नहि अछि, तँ विशिष्ट दार्शनिकक कृतित्वक पूरा दावा एतयसँ नहि कएल जाए।

२८७. प्रतीकक जग, मनुष्यक अर्थ — भाषा-मिथक-कला आ मनुष्यक प्रतीकात्मक स्वातन्त्र्य

दृश्यक नकलक बदला सम्बन्धक 'बुद्धिक व्यवस्थित नक्शा' ज्ञानकेँ सक्रिय व्याख्या मानैत अछि। विज्ञानक नियम वस्तुसभक केवल नाम नहि, आपसी सम्बन्धक औपचारिक रूप होइत अछि। एहिसँ आगे कविता भाषा, मिथक, कला आ इतिहासकेँ अनुभवक अलग प्रतीकात्मक रूप स्वीकार करैत अछि। एहि विचारमे एन्स्ट कसिररक प्रतीकात्मक रूप-विचारक स्पष्ट प्रतिध्वनि अछि, मुदा पाठकेँ मूल ग्रन्थक अनुवाद नहि ठहराएब चाही।

मिथक 'अज्ञानक धूलि मात्र नहि'—ई पाँति प्राचीन भय, आशा आ प्रकृति-अनुभवक सांस्कृतिक बोधक महत्त्व बचबैत अछि। तकर अर्थ वैज्ञानिक तथ्यविषयक मिथकीय कथन सभ सही अछि, ई नहि। कला सेहो बाहरी वस्तुक फोटोग्राफिक प्रतिलिपि नहि, नब सम्बन्ध देखेबाक सृजनात्मक विधि अछि। भाषा पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्मृतिक साझा गृह रूपमे सभ प्रतीक-विधासभकेँ जोड़ैत अछि।

अन्तक राजनीतिक मिथकपर सावधानी कविता केँ सांस्कृतिक उत्सवक एकपक्षीयता सँ बचबैत अछि। प्रतीक जखन भयकेँ नारा बनबैत अछि तखन स्वतंत्रता घटबैत अछि। 'नहि विज्ञानहि एकमात्र भाषा, नहि मिथकक सम्मुख माथ झुकाउ' द्विसीमा वैचारिक संतुलनक मूल उपलब्धि अछि। 'कहबो एकटा काज अछि'मे भाषाक सामाजिक कर्म छल; एतय भाषा सम्पूर्ण सांस्कृतिक संसार-निर्माणक एक माध्यम अछि।

२८८. चुनावक क्षण, आस्थाक छलाँग — अस्तित्वक स्वतन्त्रता, चिन्ता आ व्यक्तिगत उत्तरदायित्व

भीड़क आदेश आ भीतरक धीमा प्रश्नक विरोध सँ व्यक्ति-निर्णयक कठिनाई उधारल गेल अछि। ‘चुनाव टारबो एकटा चुनाव’क विचार स्वतन्त्रताकेँ सुविधा नहि, टारि नहि सकबाक उत्तरदायित्व मानैत अछि। सम्भावित बाट हजार रहलासँ उठल चिन्ता केवळ रोग नहि, निर्णयक खुलल भविष्यक संकेत भऽ सकैत अछि। एहि संरचनामे किर्केगार्दीय अस्तित्वचिन्तनक श्रेणी— सौन्दर्यगत, नैतिक आ धार्मिक—काव्यमे गूँजल देखाइत अछि।

आस्थाक ‘छलाँग’कोण गणितीय प्रमेयक निष्कर्ष नहि, पूर्ण आश्वासनक अभावमे निजी प्रतिबद्धताक जोखिम अछि। मुदा ई जोखिम कहिते निष्प्रमाण हिंसा अथवा दोसरक अधिकारक उल्लंघनकेँ न्यायोचित ठहराओल नहि जा सकैत अछि। कविता सामान्य नैतिक नियम आ अन्तरतम व्यक्ति-सम्बन्धक तनाव देखबैत अछि, ओकर सहज समाधान नहि करैत। भीड़क भीतर हरायल नाम आ एकान्तमे स्वयं भेटबाक अन्तिम रूपक रचनाक नाटकीय उपलब्धि अछि।

२८९. प्रमाणक छह दीप — मीमांसाक ज्ञानसाधन आ अभावक सकारात्मक बोध

प्रत्यक्ष आ अनुमानसँ आरम्भ भेल ज्ञानमार्ग उपमान, शब्द, अर्थापत्ति आ अनुपलब्धिक दिस फैलैत अछि। अनदेखल वस्तुकेँ तुलना द्वारा चिन्हब आ परस्पर व्यावहारिक तथ्यसभक सामञ्जस्य लेल अर्थापत्ति करबक पृथक भूमिका स्रोत मे स्पष्ट अछि। ‘अभाव शून्यक अन्धकार नहि’क कथन अनुपस्थितिक ज्ञानकेँ विचारक वैध प्रश्न बनबैत अछि। छह दीपक समानान्तर प्रतीक संख्या-गणनाक बदला छह भिन्न प्रकारक बोधप्रक्रिया बुझबाक आग्रह अछि।

स्वतःप्रामाण्यक प्रश्नमे ज्ञान उत्पन्न होइतहि तकर विश्वसनीयताक स्थिति, आ दोष भेटलापर बादमे संशोधनक सम्भावना दर्शाओल गेल अछि। ई दावा प्रत्येक अनुभव सर्वथा अविचल सत्य अछि—से नहि। वेदविधि आ कर्मक प्रसंग ज्ञानमीमांसाकेँ कर्तव्यविचारसँ जोड़ैत अछि। ‘ज्ञानक चारि दुआर’क न्यायीय पद्धतिसँ तुलना करिते प्रमाणक सूचीपर ऐतिहासिक मतान्तर रचनाक सृजनशील विविधता अछि; दू संख्याक औपचारिक मेल कराएब पाठक उद्देश्य नहि।

२९०. अनुभवक धरती पर समाजक विज्ञान — तीन वैचारिक अवस्थासँ सामाजिक स्थैतिकी-गतिशीलता धरि

देवशक्ति, अमूर्त तत्त्व आ अनुभवाधारित विज्ञानक तीन अवस्थाक क्रम ऑगस्ट कॉम्टक प्रत्यक्षवादी इतिहास-कल्पनाक प्रतिध्वनि अछि। धार्मिक अवस्थाक भीतर बहुदेववाद सँ एकदेववादक संचरण आ मध्यक अमूर्त शब्दावलीक चित्र मनुष्यक व्याख्यात्मक संरचनाक बदलनिहार रूप दिखबैत अछि। मुदा सम्पूर्ण विश्वक सभ समाज निश्चित एकरे क्रमसँ गुजरल—एहन इतिहासवैज्ञानिक प्रमाण ई कविता उपलब्ध नहि करबैत अछि।

स्थैतिकी समाजक घटकसभकेँ एकठाम की जोड़ैत अछि पूछैत अछि; गतिशीलता परिवर्तनक दिशा चिन्हब चाहैत अछि। परिवार, भाषा, श्रमविभाजनक उल्लेखसँ समाज सिद्धान्तक शरीर पबैत अछि। ज्ञानक उद्देश्य मानव-कल्याणसँ जोड़ल गेल अछि, मुदा ‘व्यवस्था’ आ ‘प्रगति’क बीच सम्भावित सत्ता-संघर्ष निराकरणक अभाव आलोचनीय अछि। अनुभवक धरती शीर्षकक बिम्ब अमूर्त विज्ञानवादक जोखिमकेँ स्वयं संशोधित करैत अछि।

२९१. राज्यक मूल प्रजाक हित — अर्थशास्त्रीय नीति, दण्ड आ सार्वजनिक कल्याण

मुकुटक चमकक बदला खेत, बजार, सीमाक रक्षा आ न्याय-विधानक उल्लेख राज्यकेँ
व्यवहारिक बहुअवयव व्यवस्था बनबैत अछि। अर्थ, दण्ड, समय, सूचना आ सन्धि-विग्रहक सूझ
प्रजाक हितसँ शासकक हित जोड़ैत अछि। कौटिल्यीय अर्थशास्त्रीय चिन्तनक प्रतिध्वनि स्पष्ट
अछि; मुदा शासनक विशिष्ट पदक मूल संस्कृत सूत्र-पाठ एतय प्रमाणित उद्धरण रूपमे नहि
उपलब्ध।

दण्डक अधिक कठोरता रोष जन्माबय, शिथिलता अव्यवस्था—एहि द्विसीमा सँ नीतिक
विवेकसंगत माप निर्धारित भेल अछि। ‘प्रजाक दुःख ओकरा नहि छूय’ तँ सत्ता अपन आधार
गमाबैत अछि, ई नैतिक अनुच्छेद रचनाक केन्द्र अछि। रणनीतिक विजय आ सामाजिक न्याय
सदिखन समान दिशा मे नहि चलैत; कविता अपेक्षित सन्तुलन कहैत अछि, मुदा संस्थागत
नियन्त्रणक ठोस विधान विस्तृत नहि करैत। रचनाक उपलब्धि राज्यकेँ शासकक निजी वैभवसँ
हटाकऽ जनजीवनक संयोजन बनब अछि।

२९२. अनुभूतिक रूप, इतिहासक स्वतन्त्रता — कला-अभिव्यक्ति आ इतिहासक
पुनरानुभूतिक भिन्न विधि

प्रथम प्रश्न 'जीवन केवल भोग नहि' सँ कृति अनुभवक अनेक स्वरूप—ज्ञान, कला, नैतिकता आ इतिहास—केँ परखैत अछि। कलाकार बाहरी वस्तुक नकल करिते नहि रुकैत; भीतरक अनुभूतिक रूप सफल अभिव्यक्ति बनबाक संग सौन्दर्य पबैत अछि। एतय कला मूल्य केवल बाह्य अनुपात अथवा दर्शकक उपयोगितामे सीमित नहि।

बीतेल घटनाक तिथि गिननासँ आगाँ इतिहास वर्तमानक प्रश्नसँ पूर्ववर्ती सोचकेँ फेर बुझबाक कार्य बनैत अछि। स्वतन्त्रताक अर्थ केवल कानूनी पद नहि, मानवीय सृजनशील आत्मबोध अछि। कविता चारि क्रियाक स्वतन्त्र मर्यादा मानैत अछि—ज्ञानक प्रमाण, कलाक अभिव्यक्ति, कर्मक साध्य आ इतिहासक व्याख्या। क्रोचे-कॉलिंगवुड परम्परासँ तुलना सम्भव, मुदा मूल लेखकीय सम्बन्धक प्रत्यक्ष प्रमाण बिनु एक दार्शनिकक समग्र सूत्र एहि गीतपर आरोपित नहि करबाक चाही।

२९३. अनुभवक किनार पर विश्वासक जाल — समग्रवादी ज्ञानजाल आ सिद्धान्तक संशोधनीयता

ज्ञानकेँ अचल ईंटवाला किला नहि, परस्पर गाँठल जाल कहल गेल अछि। एक भविष्यवाणी गलत भेलापर कोन गाँठ बदलब—मुख्य सिद्धान्त कि सहायक धारणा—एहि प्रश्नसँ कथनक अलगावमे परीक्षणक कठिनाई देखाइत अछि। गणितक नियमन आ बाहरी अनुभवक पाँति जालक अलग हिस्सामे रहितहुँ एक-दोसरापर निर्भर अछि। क्वाइनक ज्ञानसमग्रताक संग एहि चिन्तनक साम्य अछि; कविता स्वयं समग्रताकेँ वैज्ञानिक सर्वसम्मति घोषित नहि करैत।

जालक केन्द्र मजबूत, किनार बदलनिहार—ई रूपक संशोधनक असमान लागत समझबैत अछि। जालक कोनो गाँठ स्पर्श-अयोग्य नहि, मुदा सभ मान्यता एक बेरमे गिराएब ज्ञानक व्यवहारिक पद्धति नहि। ‘जाल बिनु अनुभव बिखरल धूल’क कथन सिद्धान्तविहीन शुद्ध तथ्य-ग्रहणक आलोचना अछि। सीमाक रूपमे कवितामे साक्ष्यक आधारपर कौन संशोधन बेहतर कहल जाए, ओकर सूक्ष्म निर्णय-विधि व्याख्यात नहि अछि।

२९४. ज्ञानक चारि दुआर — न्यायीय प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान आ शब्दप्रमाण

ज्ञानक चारि दुआर—प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द—केँ अलग रखबाक प्रयास पाठक मुख्य शैक्षिक संरचना अछि। प्रत्यक्षकेँ इन्द्रिय-विषयक मिलन, अनुमानकेँ व्याप्तिसापेक्ष चिह्नक यात्रा, उपमानकेँ तुलना द्वारा अपरिचितक परिचय आ शब्दकेँ विश्वसनीय अर्थवाहक वचन रूपमे बुझाओल गेल अछि। धुँआ-अग्निक आवर्ती दृष्टान्त पूर्व पद्यसभसँ जुड़ैत अछि; एहि पुनरावृत्तिक औचित्य एतय सम्पूर्ण प्रमाण-प्रणालीक तुलनामे अछि।

‘भ्रमित अनुभूति, संशय, स्मृति’क पृथक स्थान चिन्हब ज्ञानक नया निश्चित बोधक कसौटी माँगैत अछि। शब्दप्रमाणक वाक्यसम्बन्धक प्रसंग भाषा-तत्त्व आ ज्ञानमीमांसाक एक केन्द्र छैक। ‘प्रमाणक छह दीप’सँ तुलना मे भिन्न दार्शनिक परम्पराक प्रमाणसंख्या एकरूप मानल नहि गेल। चारि दुआरक बिम्ब कृत्रिमता सँ बचैत अछि, मुदा प्रत्येक प्रमाणक ऐतिहासिक मतभेद आ आपत्तिक पूर्ण उदाहरण देब एहि गीतक सीमा बाहिर अछि।

२९५. सत्यक धागा, करुणाक करघा — अहिंसा, सत्याग्रह आ जाति-सम्बन्धी आन्तरिक विरोध

सत्यकेँ दूरक अमूर्त तारासँ हटाकऽ दैनिक बोली, काम, संचय आ सार्वजनिक साहसमे स्थापित कएल गेल अछि। ‘जकर वस्तु नहि ओकरा न छूअ’क अनुशासन आ आवश्यकता सँ अधिक संचयक आलोचना अहिंसा-सत्य-अपरिग्रहक नैतिक परिवार बनबैत अछि। एहि बिम्बक ‘करघा’ आ ‘धागा’ एक आध्यात्मिक उद्देश्यकेँ ग्रामीण हस्तशिल्पक ठोस रूप दैत अछि। गांधी-विचारक सामाजिक प्रभावक संग रचनाकेँ पढ़ब समीचीन अछि, मुदा कवितामे उल्लिखित विशिष्ट कथनक ऐतिहासिक भाषण-उद्धरण उपलब्ध नहि।

अस्पृश्यताक विरोध आ साझा भोजन-मार्गक मांगसँ समता व्यवहारिक स्तरपर उतरल अछि। मुदा जन्मसँ बान्हल कर्म-व्यवस्थाक ‘कठिन गाँठ’ अन्तर्विरोध खोलैत अछि: सामाजिक एकता चाहनिहार परम्परामे व्यक्तिक पेशागत स्वायत्तताक प्रतिबन्ध राखब न्यायसंगत नहि। कविता लोक-सम्मानक घोषित पक्ष लेतहुँ एहि जटिलताकेँ पूर्ण सुलझबैत नहि। मूल्यगत ई असमाधानक आलोचनात्मक स्वीकार रचनाकेँ महिमागान बनबासँ बचबैत अछि।

२९६. निद्राक चारि घाट पारि अजन्म उजास — जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति-तुरीय आ उत्पत्तिक निषेध

जागरण आ स्वप्न दुनूमे अनुभूत जग तत्काल सत्य लगबाक तुलनासँ मूल ज्ञानमीमांसक अस्थिरता उद्घाटित अछि। चेतनाक चारि अवस्थाक क्रम आ ‘अजन्म मूल’क विचार गौड़पादीय अजातवाद-सन्दर्भ उघारैत अछि। कारण-कार्यक पहिचानपर प्रश्न—जे अजन्म अछि ओ नव पदार्थ केना बनत—अद्वैतक काव्यात्मक तर्क अछि; एहि परम्परागत युक्तिकेँ वैज्ञानिक विश्वोत्पत्ति-अनुसन्धानक निष्कर्ष मानल नहि जाए।

घुमाओल अगिनिक गोला वास्तविक वृत्त भान देत अछि, मुदा ई दृष्टिभ्रम वस्तुक सत्ता केँ सर्वथा निरस्त करैत अछि कि नहि, ई दार्शनिक विवाद खुलल अछि। अनुभवक व्यवहारिक स्तर आ अन्तिम अजन्मक अवधारणा बीचक भेद कविता संकेत दैत अछि, पर्याप्त विश्लेषण नहि। ‘चारि घाट’क नदीबिम्ब स्वप्नसँ समाधिपर्यन्त गतिक अन्तक उलट अर्थ अछि: यात्रा वास्तविक नव जन्म नहि, पहिने सँ स्थित उजासक पहचान बनैत अछि।

२९७. संशयसँ निर्णय धरि — तर्क, हेतु, अपवाद आ उत्तरक संशोधनीयता

प्रथम पाँति प्रश्नसँ भागबाक बदला संशयक रूप चिन्हबाक आग्रह अछि। अनुभूति, भ्रम, स्मृति, तुलना आ वचनक विश्वसनीयताकेँ परखैत पद्य न्याय-पद्धतिक प्रश्नोत्तरक आधार देखबैत अछि। अनुमानक व्याप्ति लेल सपक्ष-विपक्षक विवेक आ सम्भावित अपवादक चिन्ह जरूरी अछि। केवल परिचित उदाहरणक गिनती सँ व्यापक निष्कर्षक अनिवार्यता स्वतः सिद्ध नहि होइत— एहि आलोचनासँ अनुमानक सावधानी स्पष्ट होइत अछि।

विवादक मोल विरोधीकेँ हराबय नहि, तर्कक सीमाक सुधार अछि। ‘जे मानू, ओकर कारण धरू’क अन्तिम आग्रह एहन सत्यापनकेँ जीवनविधि बनबैत अछि जाहिमे निश्चय जड़ मत नहि, पुनः परीक्षणक परिणाम अछि। ‘हेतुक दीप, आत्माक साक्षी’मे ऐतिहासिक न्याय-प्रतिवाद छल; एतय व्यापक बौद्धिक संयम प्रमुख अछि। सार्थकता पाठकीय अभ्यासमे अछि, मूल नव्य-न्यायक समस्त तकनीकी वर्गीकरणक दावामे नहि।

२९८. प्रेमक नाममे खुलैत अनन्त — भेदाभेद, ईश्वरक आश्रय आ प्रेमक सम्बन्ध

एक समुद्रक लहरिसभ अलग चाल राखैतहुँ एकहि जलसँ बनैत अछि—एहि बिम्बमे जीव-जगत-परमक भेद आ अभेदक तनाव प्रस्तुत भेल अछि। प्रेमकेँ निर्भर अस्तित्वक संग व्यक्तिक अलग पहचान टिकय देबाक माध्यम मानल गेल अछि। ‘जीव रहय जीव, जग रहय जग’क आग्रह निष्ठुर पूर्ण विलयक विकल्प खोलैत अछि; मुदा प्रत्येक ऐतिहासिक भेदाभेद-मत एकहि निष्कर्ष मानैत अछि, से मानब अनुचित अछि।

भक्ति, समर्पण, ज्ञान आ कर्मक सम्बन्ध शास्त्रक सूक्ष्म शब्दसँ अधिक दैनन्दिन स्नेहक चित्र सँ स्थापित अछि। ‘अचिन्त्य मिलन’क नाम दैतहि भेद-अभेदक तार्किक प्रश्न मिटैत नहि; ओ धारणाक सीमा स्वीकार करैत अछि। ‘एक आ अनेकक अनन्त बहस’मे सम्बन्धक विरोधी प्रश्न प्रमुख छल, एतय वही विरोध प्रेमक अनुभवमे सहबाक रचनात्मक सम्भावना बनैत अछि।

२९९. कर्मक पाछाँ अनदेखल सेतु — मीमांसाक विधि, अपूर्व आ कर्मफलसम्बन्ध

वचनक निर्देश आ कालान्तरमे कर्मफल प्रकट होयबाक अन्तर स्रोतक मुख्य दार्शनिक समस्या अछि। नित्य, नैमित्तिक, काम्य आ निषिद्ध कर्मक वर्गीकरण विधिशास्त्रीय विविधताकेँ स्पष्ट करैत अछि। क्रिया समाप्त भेलोपर फल भिन्न समयमे किएक उत्पन्न होय—एहि प्रश्नक पाछाँ ‘अदृश्य सेतु’ अपूर्व-जइसन मध्यवर्ती सिद्धान्तक संकेत अछि। मुदा ई मान्यता स्वतन्त्र अनुभवजन्य प्रमाणसँ सिद्ध मानल नहि जा सकैत।

विधिसभक आपसी टकराव, प्रधान-अपवाद आ प्रसंगक चर्चा व्याकरणात्मक शाब्दिक पालन सँ आगाँ समग्र अर्थक न्यायसंगत पाठ माँगैत अछि। ज्ञान आ कर्मकेँ पारस्परिक सहाय कहल गेल अछि; सिद्धान्त केवल उच्चारण अथवा अनुष्ठान मात्र होय तँ जीवनगत अर्थ छोड़ सकैत अछि। ‘प्रमाणक छह दीप’मे ज्ञानक संख्या प्रमुख छल, एतय दार्शनिक केन्द्र भाषिक आदेश आ कर्तव्यक कालगत सम्बन्ध अछि।

३००. समस्या सँ अनुभवक नव बिहान — प्रयोगवादी जाँच, शिक्षा आ सार्वजनिक लोकतन्त्र

जीवन आ पर्यावरणक निरन्तर क्रियामे समस्या उठैत अछि—एहि उद्घाटनसँ जॉन ड्यूईक प्रयोगवादी चिन्तनक बिम्ब उद्घाटित होइत अछि। विचार ‘नक्शा, औजार, योजना’ अछि, संसारक निष्क्रिय प्रतिबिम्ब नहि। समस्या, सम्भावित उपाय, प्रयोग, परिणाम आ पुनः परीक्षणक क्रम तर्ककें जीवनक साझा काज बनबैत अछि। समाधान सफल भेलहुँ ओकर उपयोग समय-सापेक्ष अछि; एही कारण नव परिस्थिति पुरान उत्तर फेर जाँचबाक आमन्त्रण दैत अछि।

लोकतन्त्रकें मतक गिनती मात्र नहि मानि संवाद, शिक्षा आ सहभागिताक सार्वजनिक बुद्धि कहल गेल अछि। करैत-सीखैत शिक्षाक बिम्ब बालक कें ज्ञानक भरल पात्र नहि, सक्रिय प्रश्नकर्ता मानैत अछि। परिणामक परीक्षण केवल तात्कालिक लाभपर टिकि गेलासँ अल्पसंख्यक अधिकार अथवा दीर्घकालिक न्याय उपेक्षित होएबाक सम्भावना अछि; एहि कारण रचनाक लोकतान्त्रिक मूल्य-दृष्टि ओकर प्रयोगवादक नैतिक पूरक बनैत अछि। ‘नव बिहान’क रूपक अन्तिम सिद्धान्तक घोषणा नहि, नवीकरणक प्रक्रिया अछि।

३०१. क्षणक रूप, निषेधक भाषा — निर्विकल्पक प्रत्यक्ष, त्रैरूप्य आ अपोह

‘नामक जाल एखन नहि पड़ल’—एहि क्षणक अविकल्पित अनुभवक प्रस्तुति बौद्ध प्रमाणवादक एक मूल प्रश्न खोलैत अछि। संकल्पनापूर्व प्रत्यक्ष आ नामयुक्त विचारक अन्तरक बाद अनुमानमे हेतु उपस्थित, सजातीय प्रसंगमे संगति आ विपरीत प्रसंगमे अभावक तीन कसौटी आबैत अछि। भ्रमक चर्चा एहि दावाकेँ कठिन बनबैत अछि जे सोझ अनुभव सम्पूर्ण भाषारहित अछि; कविता प्रश्न चिन्हैत अछि, समाधानक अन्तिम दावा नहि करैत।

‘अन्यक निषेध सँ एक नाम अपन सीमाक आकार पाबय’क पद्यांश अपोहक भाषिक विचारकेँ दृश्य बनबैत अछि। शब्द केवल बस्तुक अपरिवर्तनीय सारक चिह्न नहि; अर्थक सीमांकन निषेधसँ सेहो निर्मित होइत अछि। ज्ञान अपनहि प्रकाशक रूपमे उठबाक प्रसंग प्रत्यक्ष-जागरण आ आत्मबोधक जटिलता जोड़ैत अछि। एहिमे बौद्ध परम्पराक विभिन्न ज्ञानतत्त्व भिन्न रहैतहुँ काव्यमे निकट अएल अछि; ऐतिहासिक सिद्धान्तगत एकरूपता मानि नहि लेबाक चाही।

३०२. संशयक राखिमे निश्चित स्वर — विधिपूर्वक सन्देह आ आत्मचिन्तनक प्रथम निश्चय

कमजोर नींवपर बनल महलक रूपक स्थापित विश्वासक सार्वजनिक पुनरीक्षणक माँग करैत अछि। बाह्य इन्द्रिय, स्वप्न आ सम्भावित भ्रमक कारण जखन सभ मान्यता पर संशय होइत अछि, तखन ‘संशय करैत छी’ एहि वर्तमान चिन्तनक निश्चयकें नष्ट नहि कऽ सकैत। ई आधुनिक कार्तेसियसीय सन्देह-पद्धतिक काव्यात्मक सार अछि; ‘संशय लक्ष्य नहि, झाड़ू मात्र’क अन्तिम कथन एहि पद्धतिक प्रयोजन स्पष्ट करैत अछि।

स्पष्ट-पृथक बोधक महत्त्व आ अनन्त पूर्णताक धारणासँ प्रथम कारणक प्रश्न काव्यमे एकहि क्रममे आएल अछि। किन्तु विचार करबाक अस्तित्वसँ बाह्य विश्व वा ईश्वरक विशिष्ट स्वरूपक प्रत्यक्ष सिद्धि स्वतः नहि निकलैत; बीचक युक्तिक स्वतंत्र जाँच जरूरी। ‘निश्चयक निर्मल छोट बीज’क बिम्ब ज्ञानक नब भवन बनबैत अछि, मुदा आरम्भक महलक रूपकक कठोरता संग उत्तरार्द्धक आशावाद वैचारिक तनाव पैदा करैत अछि।

३०३. क्षणक उजास, हेतुक पाँखि — प्रत्यक्षक प्रकार, स्वप्रकाश ज्ञान आ अनुमानदोष

ज्ञानक क्षणक उजास आ तर्कक पाँखिक दोसर रूपक प्रारम्भसँ अंत धरि चलैत अछि।

इन्द्रियजन्य रूप, भीतरक सुख-दुःख आ एकाग्र साधनाक प्रत्यक्ष जकाँ भिन्न धरातल कविता गिनबैत अछि। किन्तु बाहरी वस्तुक प्रत्यक्ष आ निजी ध्यानमे अनुभूत निष्कर्ष समान सार्वजनिक प्रमाण नहि; स्रोतक प्रकारानुसार सावधानी जरूरी अछि।

जानल वस्तुक संग जानबाक बोधक प्रश्न आत्मप्रकाशक धारणा खोलैत अछि। हेतु, उदाहरण आ अपवादक परीक्षण अनुमानकेँ अन्यक संग बाँटि सकबाक बौद्धिक पद्धति बनबैत अछि।

‘अधूर, उलट, संदिग्ध’ हेतु उल्लेखसँ तर्कदोषक सम्भावना देखाओल गेल अछि, मुदा हेत्वाभासक समस्त तकनीकी उपविभागक निर्णायक सूची नहि। ‘हेतुक दीप, आत्माक साक्षी’क न्यायिक प्रतिपक्षसँ तुलना मे एतय साक्षी-सत्ता सिद्ध करबाक बदला ज्ञानोदयक विभिन्न क्षण प्रमुख अछि।

३०४. शून्यक बीच सम्बन्धक ज्योति — परतन्त्र उत्पत्ति, चतुष्कोटि आ करुणाक अनुषङ्ग

‘एकाकी स्वभावक कठोर किला’क पतन बौद्ध मध्यमकक सम्बन्धवादी दृष्टिक मूल आरम्भ अछि। घटना कारणपर आश्रित अछि, अतः ओकर पूर्ण स्वतःस्वभाव मानब समस्याजनक—एहि कथनकें कविता होएब, नहि-होएब, दुनू आ ने दुनूकी चारि दिशाक प्रश्नमे फैलाबैत अछि। चतुष्कोटिक उल्लेख मनमाना तर्क-विनाश नहि; धारणाक सीमा चिन्हब आ प्रतित्यसमुत्पादक बोधक बीच सम्बन्ध खोजबाक उपाय अछि।

कारण आ फल पूर्ण भिन्न वा पूर्ण अभिन्न रहिते उत्पादनक तर्क कठिन होइत अछि। ‘लहरि ओहि, जल ओहि, बस “हमर” कहबाक दीवार नहि’क चित्र संसारविमुख शून्यवादक बदला आसक्तिक शमन देखबैत अछि। ‘जँ किछु अकेले नहि बनैत, दुःखो अकेले ककरो नहि’क अन्तिम पाँति दार्शनिक निर्भरता कें सामाजिक करुणाक आधार बनबैत अछि। मुदा करुणाक नैतिक अनिवार्यता केवल अस्तित्वगत परस्परता सँ स्वतः सिद्ध नहि; एहि संक्रमणक विश्लेषण आलोचनामे आवश्यक अछि।

३०५. भेदक भीतर अभेदक राग — शक्ति-शक्तिमान आ भक्ति-सम्बन्धक विशिष्ट अभेद

समुद्र आ लहरिक बिम्ब मूल एकत्व आ अनुभवगत भेदक समस्या खोलैत अछि। ‘शक्ति आ शक्तिमानक नाता दीप आ उजासक सन’क तुलना निर्गुण-सगुण, जगत-स्रोत आ जीव-परमक सम्बन्धक क्रमिक विवेचन करैत अछि। पद्य जीवक स्वतंत्र अनुभूतिक मूल्य बचबैत अछि, मुदा ओकर सत्ता परम आश्रयसँ पृथक् आत्मनिर्भर घोषित नहि करैत; एहिमे भक्तिपरक भेदाभेद-चिन्तनक आभास अछि।

अहंकार, कर्मफल-लोभ आ समर्पणक चरण प्रेमक साधनागत अर्थ विस्तृत करैत अछि। ‘मुक्ति जग छोड़ि भागब नहि, नहि स्वत्वक पूर्ण विनाश’क पाँति रचनाक निर्णायक काव्य-तर्क अछि। तार्किक भेद-अभेदक आन्तरिक असम्भावना अन्तमे केवल ‘मधुर रहस्य’ कहि टारि देबाक खतरा रहैत अछि; कविता उपलब्ध कराओल भावात्मक उपायकेँ दार्शनिक प्रमाणक स्थान नहि देबाक चाही। एहि दृष्टिसँ ‘प्रेमक नाममे खुलैत अनन्त’क सहधर्मी, मुदा शक्ति-विवेचनमे अधिक स्पष्ट रचना अछि।

३०६. पुरान मूल्यक राखसँ नव अगिनि — जीवनस्वीकृति, मूल्य-परिवर्तन आ शाश्वत पुनरागमन

पुरान मान्यताक राखिसँ नब मूल्यक आगि उठबाक मुख्य बिम्ब नीतशेक जीवनस्वीकृति-विचारक विपरीत दिशाक बल देखबैत अछि। ‘दीनता’ आ ‘साहस’क उलट मूल्यांकनक प्रसंग मूल्यनिर्णयक सामाजिक उत्पत्तिपर संशय जगबैत अछि। बाहरी परम आदेश मौन भऽ गेलापर जीवन निरर्थक ठहरब आवश्यक नहि; स्वयं मूल्य-सृजनक उत्तरदायित्व उठाएब रचनाक सक्रिय उत्तर अछि।

प्रत्येक क्षण अनन्त बेर पुनः आबि सकबाक कल्पना वैज्ञानिक भविष्यवाणी नहि, अपन निर्णयकें सम्पूर्णतः स्वीकार करबाक कठिन नैतिक प्रयोग अछि। ‘ई पीड़ा’ सहित जीवनकें फेर चुनबाक साहस ‘नव अगिनि’कें हिंस्र विनाशसँ अलग करैत अछि। मुदा स्वाभिमानक नामपर दुर्बलक दमनक सम्भावनाक पाठ सावधान रूपसँ अस्वीकार करैत अछि; ई स्पष्ट नैतिक हस्तक्षेप ऐतिहासिक नीतशे-विचारक आ काव्यक उदात्त पाठक भेदो चिन्हबाक अवसर दैत अछि।

३०७. शब्दक देहमे अर्थक धड़कन — ध्वनिक क्षणिकता, सामान्य-बोध आ कर्मगत शब्दार्थ

क्षणमे विलीन ध्वनि सँ वाक्यक स्थिर अर्थ कोना उठैत अछि—एहि आरम्भक प्रश्नसँ भारतीय शब्दार्थचिन्तनक गहिर समस्या खुलैत अछि। अलग व्यक्ति बदलितहुँ ‘गाय’क सामान्य अर्थ चिन्हबक शक्ति, वर्ण-जाति-गुण-क्रियाक भिन्न योग्यता तथा शब्द-सम्बन्धक पीढ़ीगत परम्परा, भाषा केँ मात्र क्षणिक उच्चारणसँ अधिक व्यापक बनबैत अछि।

प्रत्यक्ष, अनुमान आ विश्वासयोग्य वचनक मार्गक संग संस्कार-स्मृति आ कर्मक फल सम्बन्धी प्रश्न जोड़ल गेल अछि। एहिमे भाषा-ज्ञान आ जीवन-धर्मक पाँति एकठाम आबि जाइत अछि, मुदा स्थायी शब्दसत्ता, सामान्यक वस्तुगत स्वरूप आ मनोवैज्ञानिक आदतक आचारगत फल—एहि तिहरा दावाकेँ पृथक प्रमाण चाही। ‘शब्दक देहमे अर्थक धड़कन’क उपमा रचनाक एकता दैत अछि; शिल्पक सीमा विविध मतक तेजी सँ क्रमबद्ध सूचीमे बदलनाइ अछि।

३०८. चित्तक तरंग थमल तखन — योगक पाँच वृत्ति आ ध्यानक क्रमबद्ध अनुशासन

प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा आ स्मृतिक पाँच वृत्तिक उल्लेख मनक चञ्चलताकेँ एकरूप रोग नहि मानैत। योगक अभ्यास मन केँ पाथर बनबैत नहि, वृत्तिक पहचान आ तिनका संग सहज असंगताक अनुशासन अछि। श्वास, इन्द्रियसँ प्रत्याहार, एकाग्र धारणा, प्रवाहित ध्यान आ समाधिक क्रम बाह्य-आन्तरिकक पुल बनबैत अछि।

मेघ आ आकाशक बिम्ब चित्तक परिवर्तनशील दशा आ द्रष्टाक भिन्न अवस्थाकेँ दिखबैत अछि। समर्पणक अर्थ निष्क्रिय हार नहि, अहंकारक अनिवार्य अधिकार छोड़ब। तथापि ध्यानक व्यक्तिगत अनुभूतिसँ दार्शनिक स्थिर पुरुषक अस्तित्व स्वतः प्रमाणित नहि; योगदर्शनक एहि प्रश्नक चर्चा सांख्यक ‘प्रकृति नाचय, पुरुष देखय’सँ जोड़ि तुलना चाहैत अछि। कविता साधनाक मानसिक अनुभव चित्रित करैत अछि, चिकित्सकीय परिणामक प्रमाणपत्र नहि।

३०९. संशयक चुभन, कर्मक अर्थ — विश्वासक स्थिरीकरण, व्यवहारिक परिणाम आ अनुमानक तीन रूप

प्रथम पद्यांश विचारक अर्थकें सम्भावित जीवनगत परिणामसँ जोड़ैत अछि। संशयक चुभन बौद्धिक निष्क्रियता तोड़ैत अछि; विश्वास केवल मनमे कैद निजी रोशनी नहि, सार्वजनिक कर्ममे दिशा लऽ सकैत अछि। पुरान भरोसाक रक्षा लेल कान बन्द करब आ जिद्दक किला बनायब अनुसन्धानक दोसर बाटक विपरीत अछि। एहि चिन्तनमे चार्ल्स पीर्सक व्यवहारिक अर्थ-विचार आ संशयसँ विश्वासक समस्या स्पष्ट झलकैत अछि।

नियम सँ परिणाम, अनेक घटना सँ सामान्य नियम आ अनपेक्षित संकेतसँ सम्भावित कारणक तीन तर्कगत गतिक उल्लेख परीक्षणक बौद्धिक अनुशासन देखबैत अछि। तेसर अनुमान कल्पना मात्र नहि: सम्भावित कारणकें पुनः निरीक्षण सँ जाँचबाक चाही। ‘जगत अपन प्रतिरोध राखय’क पाँति निजी उपयोगिताक आधारपर सत्यकें मनमाना बनबासँ बचबैत अछि। ‘समस्या सँ अनुभवक नव बिहान’क सामाजिक प्रयोगवादसँ तुलना करिते एतय विश्वासनिर्माणक तार्किक पद्धति अधिक केन्द्रित अछि।

३१०. सूत्रक दाना, भाषाक अनन्त वन — व्याकरण, लौकिक प्रयोग आ शब्दार्थक परिवर्तन

‘भाषा एकहि घाटक जल नहि’क बिम्ब शास्त्रीय सूत्रक कठोरता आ जीवित वाणीक परिवर्तनशीलताक बीच संवाद बनबैत अछि। लोकप्रयोग, उच्चारण, पुरान मन्त्र आ भाषिक अपवादक उल्लेखसँ नियमक प्रयोजन व्यवहार बुझब होइत अछि, व्यवहारकें निरर्थक करब नहि। ‘घरक मुख’ आ ‘नदीक मुख’क उदाहरण शब्दक मुख्य-गौण अर्थक वास्तविक भाषिक विस्तार दर्शबैत अछि।

अनेक अर्थवला एक शब्द आ एक अर्थ लेल अनेक पद, व्यक्ति-जाती-गुण-क्रिया तथा प्रसंगक भेद मिलि भाषाक अनन्त वन बनैत अछि। सामान्य सूत्रक संग विशिष्ट अपवादक स्थान स्वीकृत अछि; एहि कारण अनुशासन आ लचीलापन परस्पर शत्रु नहि। पद्यक ताकत मिथिलाक लोकबोलीक महत्त्वक समांतर एक भाषावैज्ञानिक प्रतिज्ञा निर्मित करब अछि। मुदा किसी विशिष्ट व्याकरणाचार्यक प्रमाणित उद्धरण वा कालक्रम कविता भीतर नहि भेटैत; ऐतिहासिक स्रोत-समीक्षा अलग आवश्यक अछि।

३११. एक प्रतिवादक दीप — खण्डनीयता, साहसिक परिकल्पना आ खुलल समाज

हजार पुष्पक एके रंग भेटलो एक विरोधी पुष्प एक व्यापक दावाकेँ समस्या बनाबैत अछि—ई प्रतिवादक चित्र परीक्षणयोग्य सिद्धान्तक अर्थ खोलैत अछि। जँ कियो अपन कथन एना गढ़य जे कखनो बेठीक होइये नहि सकय, तँ कथन आलोचनाक जोखिमसँ बाहर अछि। कार्ल पॉपरक खण्डनीयता-दृष्टिक प्रतिध्वनि एतय स्पष्ट अछि, मुदा एक खण्डनक व्यावहारिक अर्थ वैज्ञानिक उपकरण, सहायक मान्यता आ मापनदोषक जाँच पर सेहो निर्भर होइत अछि।

‘आँखिमे प्रश्नक रंग’क स्वीकारसँ वैज्ञानिक अवलोकन पूर्वधारणारहित नहि, मुदा वस्तु ‘अपन प्रतिरोध’ राखैत अछि—एहि द्वैतमे यथार्थवाद सुरक्षित अछि। अन्तिम सामाजिक विस्तार इतिहासक निश्चित भविष्यवाणी आ मानवीय स्वतन्त्रताक पूर्वनियत दमनक आलोचना करैत अछि। ‘विश्वासक जाल’क समग्रवादसँ तुलना मे खण्डनीयताक सरल उदाहरण सँ जटिल सिद्धान्तसमूह तकको संक्रमण कतेक कठिन, से प्रश्न रचनाक बाहिर रहैत अछि।

३१२. कणसँ ध्वनि धरि जगक जाल — वैशेषिक परमाणु, गुण आ ध्वनितरंगक कारणबोध

सूक्ष्म कणक संयोगसँ स्थूल वस्तुक उत्पत्ति आ सामान्य-विशेषक भेद एतय वैशेषिक वस्तु-विचारक प्रारम्भ अछि। गुणक सूचीमे रूप, गन्ध, संख्या सँ सुख-दुःख, इच्छा आ प्रयत्न धरि विस्तार द्रव्यक वर्गीकरणक गहिराई देखबैत अछि। एकक बोधक पाछाँ द्वित्वक विचार अंकगणितक सम्पूर्ण तत्त्वमीमांसा नहि, बहुलता-संज्ञानक एक वैचारिक प्रस्ताव अछि।

ध्वनि कान धरि कोना पहुँचैत अछि, एहि प्रश्नक उत्तरमे एक तरंग दोसरक उत्पत्ति करयवाला रूपक अछि; जलवृत्तक उपमा उपयोगी अछि। मुदा पारम्परिक ध्वनितत्त्वक व्याख्या आधुनिक ध्वनिविज्ञानक प्रत्यक्ष प्रमाण नहि। अनुमानक पक्ष-सम्बन्ध आ विपरीत उदाहरणक कठोरता वस्तुक सूक्ष्म कारणक चर्चाकेँ अनियन्त्रित कल्पनासँ पृथक करैत अछि। ‘कण-कणमे भेदक व्याकरण’सँ भिन्न, एहि पद्यमे गुणक विस्तार आ शब्दश्रवण विशेष गहन अछि।

३१३. वाक्यक संगति, ज्ञानक अपन उजास — स्वतःप्रामाण्य, भ्रम-स्मृति आ विधिवाक्य

शुक्तिक चमक आ चाँदीक स्मृतिक अलग ठीक अनुभवक असंगत मिश्रणसँ भ्रम बनबाक उदाहरण प्राभाकर मीमांसाक अख्याति-विमर्शक काव्यात्मक आधार अछि। प्रथम बोधक प्रामाण्य स्वीकार करितहुँ पाछाँक बोध द्वारा दोष चिन्हबाक सम्भावना रखल गेल अछि। ‘गलत प्रत्यक्ष’ कहि समाप्त करबाक बदला अनुभवक भिन्न स्रोतक सम्बन्ध पूछब एहि पद्यक सूक्ष्म उपलब्धि अछि।

विधिवाक्यक प्रेरक अर्थ आ वाक्यक परस्पर अपेक्षा ज्ञानकें कर्मसँ जोड़ैत अछि। ज्ञानक अपन उजास द्वारा ज्ञाता प्रकट होयबाक रूपकक संग आत्माक स्थायी आश्रयक दावी उपस्थित अछि; एहि विभिन्न मीमांसक विचारक ऐतिहासिक रूपभेद पहचानब जरूरी। ‘प्रमाणक छह दीप’क सामान्य सूचीसँ अलग ई पद्य एक विशिष्ट भ्रम-समस्या कें खुलैत अछि, मुदा मूल मतभेदक सम्पूर्ण ग्रन्थीय विवेचन प्रदान नहि करैत।

३१४. छायाक गुफासँ रूपक सूर्य — प्लेटोनिक रूप, आत्मिक न्याय आ दार्शनिक शासक

गुफाक भीतपर पड़ल छाया सँ बाहरक सूर्य धरि गतिक दृश्य प्लेटोक ज्ञान-परिवर्तनक रूपक अछि। क्षणिक सुन्दर फूल आ सुन्दरता केर रूपक अन्तर संवेदी वस्तु आ अमूर्त आदर्शक भिन्न ज्ञानस्थिति बनबैत अछि। मुदा गुफासँ बाहर पहुँचल एक निरीक्षकक अनुभव सर्वजन-स्वीकृत सत्यक पूर्ण प्रमाण बनैत अछि कि नहि, ई दार्शनिक प्रश्न खुलल रहैत अछि।

विवेक, साहस आ इच्छाक त्रिधारा सँ आत्मिक न्यायक कल्पना राज्यक श्रेणीविभाजनक आधार बनैत अछि। ‘शासनक सर्वोच्च आसन लेल लोभ नहि’क पाँति दार्शनिक शासकक आकांक्षाक उत्तम पक्ष देखबैत अछि। मुदा सर्वोत्तम सत्य जानबाक दावी आ नागरिकक समान आलोचनात्मक अधिकारक बीच तनाव कविता पर्याप्त नहि सुलझबैत। गुफा-रूपकक बिम्बमय सघनता रचनाक गुण, जबकि आदर्श शासकक संस्थागत सीमा अनुत्तरित रहब ओकर आलोचनीय पक्ष अछि।

३१५. देखल जगक मौन उजास — अनुभूति-आधारित वस्तु आ सामान्यधारणाक आलोचना

रंग, गन्ध, ताप आ दूरीक अनुभूतिसँ वस्तुक अर्थक गठन बर्कलीय आदर्शवादक प्रश्नजाल बनबैत अछि। प्राथमिक-गौण गुणक कठोर पृथक्करणकेँ चुनौती दैत कविता पूछैत अछि: अनुभूति बिनु ‘रंग’ या ‘आकार’केँ कोना अर्थ देब? ‘मन चाहिते लाल रंग नहि बनय’क पाँति निजी कल्पनाक मनमानी आ नियमित अनुभूतिजगतक भेद सुरक्षित रखैत अछि।

जगतक नियमित क्रमकेँ व्यापक चेतन आधारसँ जोड़बाक प्रयास कविता कएलक अछि, मुदा नियमितता सँ विशिष्ट दिव्य चित्तक सत्ता सीधा सिद्ध नहि होइत। स्पर्श-शिक्षासँ दूरीबोध विकसित होयबाक उदाहरण देखबाक सीधा अनुभवक भीतर अनुभवजन्य सीखक स्थान खोलैत अछि। ‘प्रतीकक जग, मनुष्यक अर्थ’मे सांस्कृतिक निर्मिति प्रमुख छल; एतय भौतिक वस्तुक अनुभूतिगत अर्थ-शर्त प्रश्नक केन्द्र अछि।

३१६. सूत्रक गाँठिमे अनन्तक स्वर — ब्रह्मसूत्रीय जगतकारण आ विरोधी भाष्यक स्थान

बीआ-अंकुर-फल, तरंग-जल आ अनेक सूत्रक अल्प देह एक परम आधारक प्रश्नतक पहुँचबैत अछि। ‘कारण केवल पहिल धक्का नहि, ओ आधारो, अन्तो, थाम’—एहि पाँति कार्यकारणक भिन्न दार्शनिक भूमिका अपनाइत अछि। वाणी विविध भाषा आ अनुशासनमे फेर बनि सकैत अछि; एहि कारण एक सूत्रसँ एक मात्र सिद्धान्त स्वतः नहि निर्धारित होइत।

व्याख्याकारक एकत्व, गुणयुक्त आधार आ भेद-विचारक परस्पर विरोधी स्वर स्वयं कवितामे उपस्थित अछि। पूर्वपक्षक प्रश्नकेँ दबाकऽ तथाकथित सर्वसम्मति नहि बनाओल गेल। ‘भुलायल स्वर’क पहचानक उपमा काव्यात्मक उपलब्धि अछि; तथापि आत्माक अपरिवर्तनशीलताक दावा बालपन-यौवनक अनुभवसँ निर्विवाद सिद्ध नहि। मूल सूत्रपाठ आ प्रत्येक भाष्यकारक पाठ अलग जाँचि समालोचनात्मक तुलना करबाक आवश्यकता एहि पद्यक आन्तरिक बहुवचन बतबैत अछि।

३१७. सुखक तराजू, समाजक प्रश्न — उपयोगितावाद, दण्डनीति आ अल्पसंख्यकक गरिमा

एक व्यक्तिक लाभ दोसरा मनुष्यक रोदनसँ बनल हो तँ नैतिक गणना अधूरी—एहि प्रश्नसँ सुखक सामूहिक मूल्याङ्कन आरम्भ होइत अछि। सुखक तीव्रता, अवधि, व्यापकता जकाँ मापदण्ड सामाजिक निर्णयपर लागू कएल गेल अछि। कानून आ दण्डकेँ बदला लेल नहि, सुरक्षा-सुधारक साधन कहबाक दृष्टि बेन्थमीय उपयोगितावादक तर्क याद करबैत अछि।

‘मनुष्य संख्या मात्र नहि’क अन्तिम चेतावनी स्वयम् उपयोगितावादी गणनाक सीमा पर प्रश्न अछि। बहुमतक सुख लेल एक दुर्बल व्यक्तिक गरिमा नष्ट करब न्याय नहि—एहि नैतिक प्रतिवाद केँ रचना स्पष्ट राखैत अछि। ‘अदृश्य तराजूक उजास’क मूल्यविमर्शसँ भिन्न एतय परिणामक सार्वजनिक लेखा केन्द्र अछि, मुदा नैतिक गरिमा केँ परिमाणमे अनुवाद करबाक कठिनाई पाठ स्वीकृत करैत अछि। तराजूक दोहराओल बिम्ब एहि अन्तर्विरोधकेँ प्रभावी बनबैत अछि।

३१८. घड़ीक पारि बहैत जीवन — अवधि, सृजनशील उत्क्रान्ति आ जीवनक अन्तरकाल

घड़ीक टिक-टिक सँ अलग जीवनक अनुभव केँ गीतक लगातार स्वरक उपमा देल गेल अछि। प्रत्येक क्षण अलग दाना नहि, पूर्वक स्मृति आ आगामी सम्भावना भीतर लऽ चलनिहार अवधि अछि। समयकेँ मापल खण्ड आ जीअल प्रवाहक भेद बर्गसाँक काल-चिन्तनसँ मेल खाइत अछि; काव्य ई भेदकेँ कानसँ गीत सुनबाक अनुभवमे उतारैत अछि।

भविष्य भूतक नकल नहि, सृजनशील गति नया रूप निकालि सकैत अछि—एहि कथनमे यान्त्रिक निर्धारणवादपर संशय अछि। स्वतन्त्र कर्म सम्पूर्ण व्यक्तित्वक स्रोतसँ उठैत अछि, बाह्य आदतक अन्ध अनुसरण नहि। नैतिक नियमक आवश्यक स्थिर परिधि आ प्रेमक सृजनात्मक खुलापनक द्वैत रचनाकेँ सामाजिक अर्थ दैत अछि। ‘माटिसँ अतिमानस धरि’क उत्क्रान्तिसँ तुलना करिते ओतय आध्यात्मिक रूपान्तरणक ऊर्ध्वगति, एतय अनुभूत समयक नूतनता केन्द्रित अछि।

३१९. टुकड़ाक पारि अखण्ड उजास — सम्बन्धक अनन्त क्रम आ समष्टिगत आदर्शवाद

वस्तु, गुण आ सम्बन्धक अलग-अलग वर्ग बनबैतहि फेर तेसर सम्बन्धक आवश्यकता पड़बाक आलोचना विश्लेषणक अनन्त शृंखलाकेँ प्रश्नित करैत अछि। अनुभव पहिने सँ एक जीवित समग्र होएबाक विचार ‘टुकड़ाक पारि अखण्ड’क मुख्य अर्थ अछि। मानवीय ‘हम’ भाषा, स्मृति आ समाजबिनु नहि बनैत, ताहि लेल व्यक्तिक आत्मपूर्ति साझा सामाजिक कर्तव्यसँ जोड़ल गेल अछि।

सत्यकेँ ‘हाँ’ अथवा ‘नहि’क अकेल निषेध सँ अधिक व्यापक सम्बन्धपूर्ण विवेचन मानल गेल अछि। एहि विचारमे ब्रैडलीय समष्टिगत आदर्शवादक स्वर सुनाइत अछि, मुदा सम्पूर्ण भेद अन्तिम सत्यमे विलीन होएबाक दार्शनिक दावी रचनाक सामाजिकीकरणसँ स्वतः प्रमाणित नहि। ‘एक आ अनेकक अनन्त बहस’सँ तुलना करिते एतय प्रेम नहि, अवयव-सम्बन्धक अनन्त विश्लेषणक सीमा बोधक केन्द्र अछि।

३२०. नकारक सीढ़ी सँ स्वतन्त्र आत्मबोध — सीमा-भेदन, स्वनिर्धारण आ दार्शनिक स्वातन्त्र्य

नियत वस्तुकेँ पूर्ण पकड़बाक प्रयासपर ज्ञाता फेर नब प्रश्नक दूरी खोलैत अछि—एहि गतिसँ ‘नकार’ केवल अस्वीकार नहि, आगेक विचारक सृजनात्मक शर्त बनैत अछि। प्रत्येक परिभाषाक पाछाँ बचल अर्थ अगिला निर्धारणक बाट बनबैत अछि। ज्ञानकेँ बाह्य छविक अनुगमन नहि, निरन्तर नब अर्थ रचबाक विवेकपूर्ण प्रक्रिया मानबाक स्वर फिष्टे-परम्पराक आत्मगत स्वतन्त्रता-विचारसँ साम्य रखैत अछि।

आत्मनिर्धारणक अर्थ मनमानी निजी मत नहि; अन्ध पुनरावृत्ति छोड़ि ग्रहण कएल बातकेँ अपन अनुभव आ कारणसँ परखब आवश्यक अछि। ‘अभाव’ एतय अशुभ निस्तब्ध शून्य नहि, नवी सम्भावनाक ठाम अछि। ‘संशयक राखिमे निश्चित स्वर’मे पूर्वविश्वास साफ करबाक संशय छल, एतय निश्चित निर्णयक भीतर पुनः नकार आ निर्माणक गतिक अधिक महत्त्व अछि। मात्र नकारसँ सकारात्मक सामाजिक विवेक कोना उत्पन्न होय, से प्रश्न खुलल छैक।

३२१. शब्दक भीतर अखण्ड ज्योति — ध्वनि, स्फोट आ वाक्यक एकात्म बोध

ध्वनिक क्षणिक उच्चारण आ वाक्यक एक बेरमे उघड़ैत बोधक अन्तर रचनाक धुरी अछि। वर्णसभ क्रमसँ सुनाइत अछि, मुदा वाक्यार्थक सघनता मात्र तिनकर ध्वनिसमुच्चय नहि—एहि विचारमे भर्तृहरिक वाक्य-स्फोट चिन्तनक प्रतिध्वनि अछि। ‘दीप पड़िते घरक वस्तु’ स्पष्ट होयबाक उपमा शब्दक अर्थप्रकाशक शक्ति उद्घाटित करैत अछि, तथापि शब्दक शाश्वत सत्ताक दार्शनिक प्रमेय एहि चित्रसँ स्वतः सिद्ध नहि होइत।

साधु-असाधु प्रयोग आ लोकबोलीक प्रश्न जोड़लासँ परम्परागत भाषिक मानकक संग जीअल प्रयोगक तनाव उत्पन्न होइत अछि। शुद्ध रूपक आग्रह आ लोकमे प्रयुक्त सार्थक रूपकें समान धरातलपर नहि रखबाक कारणसँ भाषा-सामाजिक पदानुक्रमक प्रश्न खुलैत अछि। ‘शब्दक देहमे अर्थक धड़कन’मे सामान्य-विशेषक निर्देश छल; एतय वाक्यबोधक अखण्डता आ शब्द-चेतनाक अन्तर्सम्बन्ध विशिष्ट अछि।

३२२. पाँच भेदक बीच समर्पणक दीप — द्वैतक यथार्थवाद आ भक्ति-आश्रय

‘जगत नहि सपना’क आरम्भ वस्तुक सत्यता, जीवक अनुभव आ ईश्वरक अलग अस्तित्व स्वीकारबाक स्पष्ट प्रतिज्ञा अछि। पाँच प्रकारक वास्तविक भेदक रूपमे ईश्वर-जीव, जीव-जीव, जीव-जड़, जड़-जड़ तथा ईश्वर-जड़क भिन्नता द्वैतवादी प्रश्नक केन्द्र बनैत अछि। आश्रित जीवक स्वत्व मिलनमे सेहो बचबाक कथन पूर्ण अभेदवादक प्रतिपक्ष अछि।

भिन्न जीवक ज्ञान-शक्ति आ पात्रताक अन्तर वर्णित अछि; एहि दार्शनिक असमानताकें सामाजिक मानव-गरिमाक असमान अधिकारक औचित्य नहि बनाउ। श्रवण, स्मरण, सेवा आ अहंकार-त्यागक क्रम भक्ति कें नैतिक कर्मसँ जोड़ैत अछि। ‘पाँच भेद’क संख्यात्मक संरचना गीतमे शिक्षात्मक स्पष्टता दैत अछि, मुदा तत्त्वमीमांसक पाँच भेदक न्याय हेतु आवश्यक मूल युक्ति एतय पूर्ण नहि उपस्थित।

३२३. देहक आँखिसँ खुलैत संसार — देहगत प्रत्यक्ष आ अनुभवक अदृश्य क्षितिज

पाँवक भार, आँखिक रंग आ स्पर्शक अनुभवसँ आरम्भ भेल कविता ज्ञाताकेँ जगतसँ पृथक चुप दर्शक मानबाक विरोध करैत अछि। दृष्टि, स्पर्श, ध्वनि आ ताप अलग-अलग बन्द कोठली नहि, एक जीवित देहक संगठित अनुभव अछि। दृश्य वस्तुक जे पक्ष तत्काल नहि देखाइत, ओकर उपस्थित क्षितिज अनुभूति सम्भव करैत अछि। ई मलों-पोंतीक देहाधारित घटनाविज्ञानक सन्दर्भसँ आलोचनीय अछि।

भाषा विचारक तैयार वस्त्र मात्र नहि, बाजिते विचारक निर्माणक प्रक्रिया बनि सकैत अछि। कोनो दृष्टिकोण वस्तुक सम्पूर्णता एक बेरमे नहि समेटैत; एहि कारण अनुभवक अनिश्चित शेष न केवल अज्ञान, नवी खोजक शर्त अछि। ‘देखल जगक मौन उजास’क अनुभूतिवादसँ एहि रचनाक अन्तर देहक व्यवहार आ जगतक पूर्ववैचारिक सम्बन्धक विशेष महत्त्व अछि।

३२४. ज्ञानक दर्पण, हेतुक डोरी — ज्ञानक स्वप्रकाश आ प्रमाण-पद्धतिक बहुविधता

‘ज्ञान अपने कैं जानय’क आरम्भ ज्ञाता-विषयक सम्बन्धकें सुस्पष्ट बनबैत अछि। प्रत्यक्षक व्यवहारिक इन्द्रियमार्ग आ अन्तरक निर्मल चेतना भिन्न अनुभव-श्रेणी अछि; एहिमे प्रमाणक समान दर्जाक दावा कएल जाए तँ एकर औचित्य पूछब आवश्यक। हेतु द्वारा निष्कर्षक पाँखि बनबक उपमा अनुमानक कड़ी सँ ज्ञानक विस्तार देखबैत अछि।

सामान्य आ विशेषकें अलग-अलग पकड़ने वस्तुक सम्पूर्णता नष्ट होएबाक चेतावनी दैत अछि। प्रमाणक फल केवल सूचना जुटाएब नहि, अज्ञान-आवरण हटेबाक अनुभवो अछि। स्रोत अनेक दार्शनिक परम्पराक प्रतिध्वनि एकठाम आनैत अछि; मूल विशिष्ट मतक पारिभाषिक क्रमक पूर्ण पुनर्निर्माणक दावा उचित नहि। एहि पद्यक शक्ति स्वतःप्रकाशक प्रश्नकें हेतु-परीक्षणक सार्वजनिक विधिसँ टकराएब अछि।

३२५. श्रमक हाथ, बदलैत जग — भौतिक सम्बन्ध, श्रमक विमुखीकरण आ समान अवसर

चलायमान जगतक बिम्ब तुरन्त श्रम आ उत्पादनक स्वामित्वक व्यावहारिक प्रश्नमे बदलैत अछि। जे हाथ वस्तु बनबैत अछि, ओहि हाथसँ उत्पाद आ साधनक अधिकार किएक दूर अछि—एहि प्रश्नमे विमुखीकरणक अनुभव स्पष्ट अछि। आर्थिक ढाँचा विचारक एकमात्र यान्त्रिक कारण मानल नहि गेल, मुदा सामाजिक शक्ति-बँटवाराक आधार समझबाक प्रयत्न अछि।

भूख आ भयक बीच कागजपर लिखल स्वतन्त्रता अपूर्ण होएबाक आलोचना राजनीतिक अधिकार आ आर्थिक परिस्थिति सम्बन्धित करैत अछि। ‘सभकेँ एकहि साँचा’ देबाक बदला क्षमता विकसित करबाक समान अवसरक आग्रह समताक सूक्ष्म अर्थ दैत अछि। ‘पदार्थक गति, मनुष्यक मुक्ति’क आरम्भिक कारखानाबिम्ब एतय उत्पादनक अधिकार आ सामाजिक परायापनक ठोस प्रश्नरूपेँ पुनरावृत्त भेल; पुनरुक्ति विषयगत गहनताक मौका दैत अछि, मुदा बिम्बक मौलिक विविधता सीमित करैत अछि।

३२६. रहस्यक दुआर पर खुलल हाथ — स्वामित्व-त्याग, अस्तित्वगत आशा आ अनिर्णीत प्रश्न

जीवनक किछु प्रश्न तराजू पर उतरैत अछि, किछु नहि—एहि आरम्भमे नाप सकबाक विज्ञान आ जीअल अस्तित्वक अर्थक भेद अछि। ‘हमर’क कठोर पकड़सँ भय पैदा होएबाक कथन सम्पत्तिक वैधानिक व्यवस्थासँ अधिक मनोवैज्ञानिक आसक्तिपर प्रश्न अछि। ‘हम छी’क अनुभव केँ निजी वस्तु बनायब कठिन—ई कथन अस्तित्वकेँ नियंत्रणक बदला खुलापनक रूप दैत अछि।

आशा ‘सभ ठीक होयत’क असत्य आश्वासन नहि, अनिश्चित स्थितिमे संग रहबाक सक्रिय निष्ठा अछि। एहि कारण रहस्य छलक आधार नहि, उत्तरदायी उपस्थिति अछि। तथापि परम उपस्थितिक धारणा केँ ‘तर्कक वस्तु नहि’ कहिते तर्क-विरोधक भय सँ मुक्त मानि लेब उचित नहि: आस्थाक दावी लोकजीवनक नुकसान पहुँचाबय तँ परीक्षण आवश्यक। खुलल हाथक रूपक आसक्ति सँ सम्बन्ध दिस मूल परिवर्तनक सफल छवि अछि।

३२७. स्वतन्त्र स्वर, सुखक गहिर माप — उच्चतर सुख, विचारस्वातन्त्र्य आ हानिक सीमा

अनुभवक आधार पर ज्ञानक सीमाक चर्चा सँ जॉन स्टुअर्ट मिलक उपयोगितावादक विशिष्ट भेद खुलैत अछि: सुखक मात्रा जकाँ ओकर गुणात्मक स्वरूपो विचारणीय अछि। कला, मैत्री, ज्ञान आ आत्मसम्मानक गहिर आनन्दक तुलना केवल क्षणिक अनुभूतिक गिनतीसँ सम्भव नहि। ‘जे दुनू चखलक’ ओकर निर्णयक पात्रता देबक मान्यतासँ अनुभवक तुलना केँ कसौटी भेटैत अछि, मुदा पात्रताक सामाजिक पूर्वाग्रहक प्रश्नो उठैत अछि।

विचारस्वातन्त्र्य किछु विद्वानक सुविधा नहि, सभ मनुष्यक अधिकार बनैत अछि। भिन्न जीवन-पद्धतिक प्रयोग ज्ञान बढ़बैत अछि, पर व्यवहारक स्वतन्त्रता दोसराक हानिसँ मर्यादित होएबाक नीति स्रोतमे अछि। राज्यक शक्ति सीमित आ उत्तरदायी रखबाक आग्रह ‘सुखक तराजू, समाजक प्रश्न’क मात्रात्मक गणना सँ विशिष्ट अछि; एतय गुणवत्तापूर्ण मानवीय विकास आ वैचारिक बहुलता केन्द्रीय मूल्य अछि।

३२८. ‘नीक’ केर अनिर्वचनीय उजास — खुलल प्रश्न आ मूल्यक अपरिभाषेयता

‘सुख नीक अछि?’क प्रश्न ‘नीक’ शब्दकेँ ‘सुख’क समानार्थी कहबाक दावाक भितर सँ जाँचैत अछि। जँ दुनू पूर्ण पर्याय होइत, प्रश्न अर्थगत रूपसँ खुलल नहि बचित—एहि पद्धतिमे जी. ई. मूरक खुलल प्रश्नक तर्कक प्रतिध्वनि अछि। मूल्यकेँ प्राकृतिक गुणमे पूर्ण विलीन नहि करब रचनाक केन्द्र, मुदा एहि तर्ककेँ सभ नैतिक सिद्धान्तक अन्तिम खण्डन कहल जाए तँ दार्शनिक अतिविस्तार होयत।

पीयर रंगक सरल गुणक उपमा अमूर्त मूल्यकेँ चिन्हबाक साहस दैत अछि, मुदा रंगो अनुभूतिगत-अन्योन्याश्रित प्रश्न अछि—ई तुलना स्वयं विवादसँ परे नहि। मूल्यवर्णन आ मूल्याङ्कनक दूरी देखबैत कविता ‘अर्थक कसौटी’क अनुभववादी कठोरताकेँ चुनौती दैत अछि। भाषा-विश्लेषणक स्वच्छ दर्पण आ ‘अनिर्वचनीय उजास’क बिम्बक तनाव रचनाक कलात्मक बल अछि।

३२९. करुणाक अंकुर, जनक राज — मानवीय नैतिक अंकुर आ अन्नाधारित शासन

खतरामे पड़ल बालककेँ देखिते हाथ आगाँ बढबाक दृश्य मनुष्यक स्वाभाविक करुणाक सम्भावना उघारैत अछि। एहि मूल नैतिक अंकुरकेँ शिक्षा, संगति आ अभ्याससँ विकसित करबाक आग्रह मेन्शियसीय नैतिक मानसकेँ याद करबैत अछि। किन्तु मनुष्य जन्मसँ सार्वभौमिक रूपेँ करुणामय होइते अछि, एक जीवन-दृश्यसँ एहन मनोवैज्ञानिक नियम सिद्ध नहि होइत; कविता नैतिक सम्भावनाक रूपक दैत अछि।

भूखल प्रजाक सोझाँ कानूनक गंभीर शब्द असफल रहैत अछि—एहि पाँतिमे राज्यक वैधता अन्न, सुरक्षा, न्याय आ समान परिश्रमक परिणामसँ जोड़ल अछि। भूमि आ करक उल्लेख जनहित केँ वस्तुगत आर्थिक आधार दैत अछि। ‘अपन आचरणसँ राज्य सँवारू’क नैतिक उदाहरण एतय लोककल्याणक संस्थागत रचनामे विस्तार पबैत अछि। राज्यकार्यक्षमता आ नैतिक मानदण्डक वास्तविक ऐतिहासिक परीक्षण लेल पृथक तथ्य जरूरी।

३३०. नेति-नेतिक पारि अन्तरतम साक्षी — आत्मसाक्षी, अवस्था-विवेचन आ भेदक सापेक्षता

धन, नाम, रूपसँ प्रिय वस्तुक कारण खोजैत कविता प्रश्नकेँ ज्ञाता दिस घुरबैत अछि। जाग्रत, स्वप्न आ निद्राक बदलैत अवस्था मे निरन्तर साक्षीक बोधक कल्पना उपनिषदात्मक अन्तर्मुखी चिन्तनक मूल उपकरण अछि। ‘नेति-नेति’क रूपक ज्ञेय वस्तुक प्रत्येक सीमित विशेषणकेँ हटाएबाक प्रयत्न अछि; मात्र नकार दोहराएब साक्षी-सत्ताक स्वतन्त्र प्रमाण नहि बनैत।

‘दोसरा केँ वस्तु नहि बुझू’क सामाजिक विस्तार अद्वैतभावकेँ नैतिक सम्बन्धक पक्षमे रखैत अछि। किन्तु आत्मा अपरिवर्तनशील होएबाक तथ्य पर दार्शनिक प्रतिपक्ष—स्मृतिक विच्छेद, चेतन-अवस्थाक भिन्नता—अखनो खुलल छैक। ‘निद्राक चारि घाट पारि अजन्म उजास’क अवस्थाविवेचनसँ एहि पद्यक मेल छैक, मुदा एतय अन्तरतम नियामकक कल्पना विशिष्ट अछि।

३३१. सीमारेखाक आगिमे आत्मक उजास — मापनीय ज्ञानक सीमा आ निर्णयमे स्वतन्त्र अस्तित्व

तारा, पदार्थ आ नियम मापबक मानवीय क्षमता केँ स्वीकार करितहुँ कविता व्यक्ति-जीवनक सम्पूर्ण अर्थ आंकड़ा नहि मानैत अछि। ‘आत्म कोनो तैयार वस्तु नहि’क कथन निर्णय आ संकटमे स्वयं गढ़बाक अस्तित्ववादी आग्रह अछि। अपूर्ण जानकारीक अँधेरेमे चुनल कर्म आ दोष स्वीकारब स्वतंत्रताक मूर्त उदाहरण होइत अछि।

पीड़ाकेँ केवल कमजोरी अथवा शीघ्र मेटा देबाक दोष मानब रचनाकेँ स्वीकार नहि। सहनशील जागरण द्वारा किछु घावक भीतर अर्थ खोजबाक दिशा खोलैत अछि, मुदा एहि भावकेँ सामाजिक अन्याय सहि लेबाक आदेश नहि बनाउ। वैज्ञानिक मापन आ व्यक्ति-अस्तित्वक प्रश्नक भेद जास्पर्सिय सीमास्थिति-विचारक निकट अछि। ‘चुनावक क्षण, आस्थाक छलाँग’सँ एहि रचनाक फर्क जीवनक अनिवार्य सीमास्थिति आ जिम्मेदारीक विशेष बल अछि।

३३२. तर्कक कण, भाषाक पारदर्शी आकाश — तार्किक संरचना आ सरल तथ्यक सम्बन्ध

शब्दक घन बेलि केँ तर्कक ‘चाकू’ सँ अलग करबाक बिम्ब विश्लेषणात्मक दर्शनक केन्द्र अभिप्राय अछि। जटिल वाक्यक भीतर सरल कथन आ सम्बन्धक संरचना खोजब, सतही व्याकरण आ अन्तर्निहित तार्किक रूपक अन्तर चिन्हब—ई रसेलीय विश्लेषणक प्रतिध्वनि दैत अछि। तथापि वास्तविक जग सरल तथ्यक निर्विवाद कणमे विभाजित अछि—एहन तत्त्वमीमांसक दावा स्वयं स्वतन्त्र परीक्षण माँगैत अछि।

‘नहि-होएबो स्पष्ट कहल जा सकय’क विचार नकारात्मक कथनक तर्कगत रूप पर बल दैत अछि। विज्ञानक तथ्यवाक्य, सामान्य सम्बन्ध आ नीतिक कथनक भिन्न प्रयोग एकहि सूत्रमे बन्द नहि कएल गेल; ई सावधानी एतय महत्त्वपूर्ण अछि। ‘अर्थक नक्शा, भाषाक अनुशासन’मे सत्यापन-पुष्टि प्रमुख छल, एतय तार्किक रूप आ विश्लेषणक औजार अलग चिन्तनक्षेत्र अछि।

३३३. भाषाक गाँठि, मनक अदृश्य चाल — श्रेणीगत भ्रम आ मानसिक शब्दक सार्वजनिक व्यवहार

हँसीक पाछाँ ‘हँसीक भूत’ वा चलबाक पाछाँ अदृश्य चालक खोजबाक विडम्बनासँ मन-देहक द्वैती वर्गीकरणक आलोचना स्पष्ट होइत अछि। मानसिक क्रियासभकेँ अलग छिपल वस्तु मानबाक बदला व्यवहारक कौशल, प्रवृत्ति, निर्णय आ प्रसंग सँ अर्थ बुझबाक आग्रह गिल्बर्ट राइलक श्रेणीदोष-विवेचनसँ साम्य रखैत अछि।

लोकबोलीक ‘हँसी, डर, आशा’ जकाँ परिचित शब्दक अर्थकेँ तकनीकी व्याख्या द्वारा निरर्थक करबाक आवश्यकता नहि—ई भाषिक सावधानी अछि। तथापि ककरो भीतरी अनुभूति केवल देखल व्यवहारहि मे पूर्ण समाप्य अछि, ई दावा पद्य सिद्ध नहि करैत। दार्शनिक गाँठ बहुधा शब्दक बेठीक जोड़ि सँ बनैत अछि—एहि कथनक बिम्बक एकता प्रशंसनीय अछि; ‘कहबो एकटा काज अछि’क भाषा-कर्मविचारसँ तुलना करब उपयोगी।

३३४. पूब-पश्चिमक बीच एकहि उजास — वैज्ञानिक निरीक्षण आ अनुभूतिक संवाद

‘दिशा दू, आकाश एकहि’क उद्घाटन तुलनात्मक दर्शनक आकर्षक रूपक अछि। तथ्यक माप आ अन्तरानुभूतिक गहिराई केँ एक-दोसराक शत्रु नहि मानल गेल अछि। गतिशील वास्तविकता आ चेतनाक निरन्तर नव रूपक विचार समन्वयक आकांक्षा बनबैत अछि, मुदा ‘पूब’ आ ‘पश्चिम’क एकरूप सांस्कृतिक खाँचा ऐतिहासिक विविधताकेँ लुकाबय सकैत अछि।

तर्क आवश्यक साफ-सफाईक औजार अछि; प्रज्ञा तकर प्रतिपक्ष नहि, व्यापक सन्दर्भक अनुभवक सम्भावना अछि। धर्मक मोल बाह्य चिन्हमे नहि, मानवीय मर्यादामे रखल गेल अछि। एक व्यापक विश्वसंगीतक अन्तक आकांक्षा साहित्यिक रूपसँ सघन, मुदा विशिष्ट दार्शनिक असहमति वा साक्ष्य-मानदण्डक विवादकेँ केवल ‘मिलन’क उपमा सँ समाप्त नहि मानब चाही।

३३५. अनेक रूपमे एकहि आश्रय — विशिष्टताक सत्यता आ निर्भर स्वत्वक भक्ति

‘जगत नहि धुँधल छलना मात्र’क कथन वस्तु, गुण आ व्यक्तित्वक वास्तविकता स्वीकार करैत अछि। सामान्य आधारक संग ओकर विशेष रूप सुरक्षित रखबाक आग्रह विशिष्टाद्वैतीय दृष्टिसँ मेल खाइत अछि। निर्गुणक निरपेक्ष निर्विशेषताको अन्तिम ज्ञान मानबाक बदला गुणयुक्त एकत्वकें अर्थवान ठहराओल गेल अछि।

जीवक आत्मपरिचय मुक्ति मे नष्ट नहि, आश्रय-सम्बन्धमे निर्मल होएबाक कथन भक्ति कें दार्शनिक रूप दैत अछि। ज्ञान, कर्म आ प्रेमक संगतिक प्रश्न उठल अछि, मुदा एहिसँ ऐतिहासिक समस्त विशिष्टाद्वैत व्याख्याकारक एकमत सिद्ध नहि होइत। ‘भेदक भीतर अभेदक राग’सँ तुलना करिते एहि रचनामे ‘विशेष’क सत्यताक स्वीकार अधिक स्पष्ट अछि।

३३६. मनुष्यक हाथमे स्वतन्त्र भोर — मानवतावादी मूल्य आ विश्वनैतिकताक शर्त

प्रकृति केँ छोट अथवा मनुष्य केँ देवता बनबासँ रोकेनिहार प्रारम्भ अतिशयोक्तिक दू अन्तक आलोचना अछि। सत्य, सहकार आ नागरिक जिम्मेदारी केँ परलोकक भयक व्यापारसँ स्वतंत्र नैतिक आधार देल गेल अछि। विज्ञानक तथ्यप्रश्न आ नैतिक अर्थप्रश्न परस्पर सम्बन्धित भऽ सकैत अछि, मुदा एक-दोसराक पूर्ण विकल्प नहि।

राष्ट्रक सीमा उपयोगी रहितहुँ पड़ोसीक पीड़ाक प्रति अनदेखा रहबाक औचित्य नहि—एहि कथनसँ विश्वमानवताक नैतिक आग्रह स्पष्ट होइत अछि। युद्धक विजय रक्तपातक कारण अन्तिम हार बनबाक तीक्ष्ण कथन प्रभावी, मुदा ऐतिहासिक युद्धक सर्वप्रसंगपर यान्त्रिक रूपेँ लागू नहि करबाक चाही। काव्य मानवीय विवेकक आत्मनिर्माणक आशावाद दैत अछि, समसामयिक अंतरराष्ट्रीय विधिक सिद्धान्तक पूर्ण विश्लेषण नहि।

३३७. वनक स्वतन्त्र साँससँ जन-इच्छाक नगर — प्राकृतिक स्वतन्त्रता आ सामाजिक समान नियम

वनक सहज श्वास आ नगरक संस्थागत व्यवस्था बीचक दूरी रूसोवादी सामाजिक अनुबन्धक प्रश्न उधारैत अछि। प्राकृतिक असमानता सीमित रहितहुँ सम्पत्ति, पद आ जन्मक व्यवस्था सामाजिक विषमता पैघ करैत अछि। पुरान वनमे फेर लौटबाक असम्भावना स्वीकार कऽ प्रश्न उठाओल गेल अछि—एहन सामाजिक बन्धन कोना बनय जतय स्वतन्त्रता सुरक्षित रहय?

व्यक्ति अपन सामर्थ्य साझा देहमे देलापर केवल दास नहि बनय, जँ कानून सभपर समान लागू हो—ई जन-इच्छाक केन्द्रीय आदर्श अछि। मुदा सामूहिक इच्छा केँ बहुमतक तत्काल आदेश मानि व्यक्ति-अधिकार मेटब खतरनाक अछि; रचनामे एहि सम्भावनाक विस्तृत संस्थागत नियन्त्रण नहि। वन सँ नगर धरि मुख्य रूपकक गति मनुष्यक नैसर्गिक सामर्थ्यकेँ नागरिक न्यायमे रूपान्तरित करबाक भावनात्मक बाट अछि।

३३८. निःशब्द धाराक सहज बाट — नामक सीमा, विपरीतक पूरकता आ अकर्मकर्म

नाम देलासँ बनैत सीमा आ नामक पार बहैत धारा ताओवादी विचारक प्रारम्भिक बिम्ब अछि। विपरीत स्वर एक-दोसरा केँ केवल नष्ट नहि, परस्पर अर्थ प्रदान करैत अछि। ‘प्रकृति जोर सँ फूल नहि खोलय’क दृश्य सहज विकास आ अनावश्यक हस्तक्षेपक अन्तर बुझबैत अछि; ई प्रयासहीनता कर्तव्यहीन जड़ता नहि, परिस्थितिक अनुकूल बुद्धिमत्ता अछि।

रिक्त पात्रक उपयोग, लोभ सँ जन्मल भय आ कममे सन्तोषक स्वादक बिम्ब सत्ता-संचयक आलोचना बनैत अछि। निःशब्द धाराक गतिक संग पाठमे नैतिक सरलता आ हिंसा-त्याग जोड़ल गेल अछि। प्रकृतिक क्रमकेँ मनुष्यक न्यायक निर्विवाद नियम ठहराएब खतरनाक भऽ सकैत अछि; ताहि लेल ताओवादी सहजताक बिम्बसँ मानवाधिकारक सूक्ष्म विधान अलग पहचानबाक चाही।

३३९. अदृश्य केन्द्रसभक एक सुर — सूक्ष्म सत्ता, पर्याप्त कारण आ दार्शनिक सामञ्जस्य

वस्तुक टुकड़ा नहि, भीतर-भीतर सक्रिय केन्द्रक कल्पना लायबनित्जीय मोनाड-विचारक प्रतिध्वनि अछि। स्मृति, अनुभूति आ आत्मबोधक अलग तह जड़, वनस्पति, पशु आ मनुष्यक निरन्तरता रूपमे प्रस्तुत भेल अछि। मात्र सूक्ष्म भौतिक कणक वैज्ञानिक विवेचन एहि पद्यमे नहि; ‘अदृश्य केन्द्र’ सत्ता-विचारक दार्शनिक प्रतिज्ञा अछि।

‘किएक किछु अछि, शून्य नहि’क प्रश्न पर्याप्त कारणक अन्वेषणक मूल सूत्र अछि। अनन्त कारणक्रमक पाछाँ समग्र संगतिक आधार खोजल गेल अछि; मुदा एहि आधारक एकमात्र अनिवार्य स्वरूप कविता स्वतंत्र प्रमाणसँ तय नहि करैत। ‘कणसँ ध्वनि धरि जगक जाल’क भौतिक परमाणुचिन्तनसँ तुलना करिते सूक्ष्म केन्द्रक आन्तरिक अनुभवक्षमता एतय मुख्य अन्तर अछि।

३४०. अनुभवक कोरा पात पर स्वतन्त्र हस्ताक्षर — अनुभवजन्य ज्ञान आ सहिष्णु नागरिक स्वातन्त्र्य

मन जन्मैत 'तैयार पोथी' नहि, अनुभवे अक्षर रचैत अछि—ई लोकक अनुभववादक काव्यात्मक प्रस्ताव अछि। बाह्य संवेदना आ मानसिक प्रतिबिम्बक सहायतासँ सामान्य विचारक निर्माण, प्राथमिक गुण आ अनुभवगत गौण गुणक भेद तथा ज्ञानक सीमाक प्रश्न उपस्थित अछि। कोरा पातक रूपक जटिल जन्मजात मानसिक क्षमताक प्रश्न समाप्त नहि करैत; एतय दावाक ऐतिहासिक अनुभववादी अर्थ बुझब जरूरी।

सुख-दुःख, नागरिक नियम, धार्मिक सहिष्णुता आ व्यक्ति-अधिकारक सूत्र ज्ञानमीमांसासँ सामाजिक नीतिक दिस बढ़ैत अछि। सीमित बुद्धिक स्वीकार अन्ध निश्चयक विरोध अछि। 'मनुष्यक हाथमे स्वतन्त्र भोर'क स्वतन्त्र नागरिकता-विमर्शसँ भिन्न एतय अनुभवसँ अवधारणा बनबाक प्रक्रिया पहिले, कानून आ अधिकारक प्रतिज्ञा तकर बाद। रचनाक काव्य-बल 'कोरा पात' आ 'हस्ताक्षर'क स्पष्ट सम्बन्ध अछि।

३४१. विश्वासक आगि, अन्तरात्माक मुक्त स्वर — कृपाक व्यापार-विरोध, मातृभाषा आ अन्तरात्माक विवेक

पद्यक पहिल दृश्य धार्मिक दुआरपर ‘पाप-मोचनक मोल’ तय करबाक अछि। सिक्का आ अन्तरात्माक एही टकराहटमे धार्मिक संस्थाक अर्थव्यवस्था आ व्यक्तिगत पश्चात्तापक अन्तर उभरैत अछि। कृपा ‘बजारमे बिकि’ सकबाक प्रश्न मात्र व्यंग्य नहि; विश्वासक प्रामाणिकताक कसौटी अछि। बाहरी दानसँ मनक घाव स्वयं नीक नहि होएबाक कथन व्यक्ति केँ कर्मक उत्तरदायित्वसँ जोड़ैत अछि, मुदा एही आधारपर सामुदायिक धार्मिक कर्मक सभ रूपकेँ व्यर्थ मानबाक निर्णय पाठ नहि दैत अछि।

‘साधारण जन सेहो पढ़ि सकय’क माँग एहि धार्मिक विरोधकेँ भाषिक न्यायसँ जोड़ैत अछि। ज्ञानकेँ बन्द कोठलीसँ निकालि लोकभाषामे पहुँचाएब एकहि कालमे शिक्षा आ स्वाधीन व्याख्याक अधिकार अछि। ई तर्क धर्मसुधारक ऐतिहासिक प्रवृत्तिसँ संवाद करैत अछि, मुदा कोनो एक ऐतिहासिक आन्दोलनक घटनावृत्तक पूरा साक्ष्य एहि पद्यमे नहि। समाजमे निष्ठापूर्वक रहबाक साधना संसार-त्यागसँ अलग अछि। अन्तक ‘भीतरक ई निर्मल स्वतन्त्रता’ आरम्भक बिकाऊ मोक्षक प्रतिलोम बनैत अछि।

लयमे आवर्तित प्रश्नवाक्य आ दुआर, आगि, उजासक बिम्ब रचनाकेँ स्पष्ट लोकाभिमुख प्रबोधात्मक स्वर दैत अछि। ‘स्वतन्त्र स्वर, सुखक गहिर माप’मे विचारक स्वातन्त्र्य नागरिक अधिकार छल; एतय धर्मक भीतर प्रश्न करबाक साहस निजी विवेकक आधार अछि। सीमा ई जे धार्मिक संस्था, दानक नैतिक प्रयोग आ व्यावसायीकरणक भीतरक ऐतिहासिक भेदसभ विस्तारसँ नहि खुलैत; तथापि निजी पश्चात्ताप आ सार्वजनिक ज्ञानक सम्बन्ध काव्यक केन्द्रीय उपलब्धि अछि।

३४२. श्रमक मुक्ति, बदलैत धरतीक गीत — द्वन्द्वात्मक परिवर्तन आ उत्पादनक न्याय

‘धरती चलैत, रूप बदलैत’क उद्घाटन स्थिर व्यवस्था केँ प्राकृतिक नियति मानबाक निषेध अछि। विरोधक भीतर नव रूपक सम्भावना देखनाइ एतय दार्शनिक द्वन्द्वात्मक गतिसँ सामाजिक इतिहास दिस उतरैत अछि। उत्पादन मात्र व्यक्तिक लाभक सँकुचित घाट नहि—एहि पाँतिसँ काव्यक मुख्य विषय उत्पादनक नियन्त्रण, श्रमक सम्मान आ फल-वितरण बनि जाएत अछि। परिवर्तनक सार्वभौमिक रूपक आ ऐतिहासिक भौतिक सम्बन्धक ठोस प्रश्न एके नहि; कविताक शक्ति दुनूक बीच सेतु बनायब अछि।

‘कामक अधिकार, जीवनक सुरक्षा, साझा साधनक न्यायपूर्ण भाग’ घोषणाक क्रम श्रमिकक अधिकार केँ केवल सहानुभूति नहि, संस्थागत व्यवस्था मानैत अछि। शिक्षा आ अवसरसभ समान रूपेँ उपलब्ध भेनाइ कागजी स्वतन्त्रताकेँ वास्तविक सामाजिक क्षमता दिस घुरबैत अछि। तथापि सम्पत्तिक रूप, श्रमिक प्रतिनिधित्व वा नीतिगत साधनक विस्तार पद्यमे नहि भेटैत; तें सम्पूर्ण अर्थशास्त्रीय कार्यक्रम रचनापर आरोपित नहि करब चाही।

पुरान ढाँचासँ नव निर्माण धरि गतिक आवर्तन पाठमे सामूहिक गीतक आरोह रचैत अछि। ‘श्रमक हाथ, बदलैत जग’क व्यक्तिक विमुखीकरणक प्रश्न एतय सामूहिक फल आ इतिहासक परिवर्तनक स्वर लैत अछि। शिल्पगत सीमा उपदेशात्मक अभिव्यक्तिक बढ़ल मात्रा अछि; किन्तु श्रमक अधिकारकेँ मनुष्यक गरिमासँ जोड़ि भविष्यक आशा बनाबयमे काव्य प्रासंगिक अछि।

३४३. सत्य जगत पर कृपाक मधुर धारा — यथार्थ जगत, ईश्वराश्रित भेद आ भक्तिक व्यवहार

‘जगत कोनो झूठक परदा नहि’ उद्धोष जगतक यथार्थताक प्रतिज्ञा अछि। अनेक रूपमे एकहि मूलक शक्ति प्रकट होएबाक बिम्ब समुद्र आ लहरिक सम्बन्धसँ बनैत अछि। मूल आ जगत एक-दोसरासँ कोना भिन्न आ अविभिन्न—ई प्रश्न काव्यक भीतर रहैत अछि; रूपक मात्रसँ कोनो दार्शनिक मतक सूक्ष्म परिभाषा सम्पूर्ण नहि सिद्ध होइत। जगतकेँ अज्ञानक अवास्तविक रेखा नहि मानबाक आग्रह दुःख, कर्म आ सामाजिक उत्तरदायित्वक वास्तविक धरातल सुरक्षित रखैत अछि।

ज्ञान भ्रमक गाँठि ढीला करैत अछि, मुदा सत्य जगत मेटब नहि चाहैत। ‘प्रेम जखन व्यवहारमे उतरय’क पाँति भक्तिक मूल्यकेँ संबंध, सेवा आ आचरणक कसौटीपर धरैत अछि। गुरु-सम्मान आ सज्जन-संगति आत्मिक साधनाक प्रसंग अछि; ओकरा सार्वजनिक आलोचनासँ छूटल निरंकुश अधिकार बुझल जाए तँ पाठक कर्ममूलक तर्क कमजोर पड़त।

समुद्र-लहरि आ कृपाक धारामे जलक लाक्षणिक पुनरावृत्ति भक्ति-विषयक रचनाकेँ लयात्मक संगति दैत अछि। ‘अनेक रूपमे एकहि आश्रय’सँ एहि पाठक तुलनामे वास्तविक बहुलता आ मूलाधारक आश्रय एकहि साझा प्रश्न अछि; एतय कृपा आ समर्पण प्रमुख भावक रूप लैत अछि। दर्शनक मतभेदक विस्तृत तर्कक तुलनामे काव्य भावात्मक आश्वासन दिशि अधिक झुकल अछि—ई ओकर विधागत सीमा आ सामर्थ्य दुनू अछि।

३४४. चेतनाक धारामे रूपक स्वप्न — क्षणिकता, नित्य आत्माक अस्वीकार आ निर्भर उत्पत्ति

‘क्षण-क्षण रूप बदलैत जग’क आरम्भमे स्थिर आत्माक कल्पना प्रश्नक घेरे अछि। कर्मक निरन्तरता रहितहुँ अपरिवर्तनीय कर्ता कतय ठाढ़—ई प्रश्न बौद्ध क्षणिकतावादक गहिर दार्शनिक कठिनार्क एक रूप अछि। प्रवाहक रूपक व्यवहारी ‘हम’ आ स्थायी स्वामित्वक मिथ्याक आग्रहमे अन्तर करैत अछि; मुदा अनुभवक क्रम रहबाक प्रमाण नित्य चेतनाक सत्ता अपने-आप नहि सिद्ध करैत, ने ओकर नितान्त निषेध।

जन्मल वस्तुक कारण-सम्बन्ध आ मनक अलग-अलग अवस्थाक विवेचन परस्पर आश्रित संसारक विचार उघारैत अछि। रचना आत्मग्रहणकें पीड़ाक एक कारण रूपमे देखैत, चिन्तनकें आत्मक ‘नाम’क पाछाँ अपन निर्णयक प्रक्रिया परखबाक निमन्त्रण दैत अछि। ‘रूपक तीन धरातल’क उल्लेखकें विशिष्ट बौद्ध परम्पराक पारिभाषिक सिद्धान्तसँ सोझ एकरूप कऽ लेब अनुचित; मूल पद्यक अपन शब्द-विन्यास पर ध्यान आवश्यक।

धारा आ रथक रूपक रचनाकें गतिक चित्र दैत अछि; आत्मक रूप बदलनाइ काव्यात्मक रूपसँ मूर्त अछि। ‘नेति-नेतिक पारि अन्तरतम साक्षी’क अपरिवर्तनीय साक्षीक विपरीत ई पद्य स्थायित्वकें आशंका सँ देखैत अछि। संग्रहमे मत-विरोधक ई सहअस्तित्व महत्त्वपूर्ण अछि: एके ग्रन्थमे दार्शनिक परम्परासभक विरोध केना सुरक्षित रहैत अछि, ओकरा केवल कृत्रिम समन्वयक नामपर मेटा नहि देबाक चाही।

३४५. अनेक बाटक बीच विवेकक सेतु — दार्शनिक बहुलता, अनुमानक व्याप्ति आ मतभेदक मर्यादा

‘ज्ञानक वनमे बाट अनेक’क कथन विभिन्न ज्ञान-पद्धतिक बीच संवादक रूपक गढ़ैत अछि। ‘कोनो तर्कक दीप’, ‘कोनो ध्यानक मौन’—एहि दू चित्रमे सार्वजनिक कारण-परीक्षण आ अन्तर्मुखी अनुभवक भिन्नता स्वीकारल गेल अछि। एक परम्पराकेँ दोसरक विसर्जन करबाक नामपर विजयी घोषित नहि करब काव्यक मूल नैतिक आग्रह अछि; मुदा अनेक मत होएब सर्व मत समप्रमाण अछि, ई तर्क नहि।

अनुमानक विश्वसनीयता लेल व्याप्तिक संशय, प्रमाणक अन्तहीन अनुसरण आ आत्म-अज्ञानक प्रश्न पद्यमे स्पष्ट उठैत अछि। एहि प्रश्नसभसँ दर्शनकेँ सामान्य सद्भावक ऊपर राखि ज्ञानमीमांसक कठिनाई बाँचल रहैत अछि। एखनो ‘पहिने अज्ञान कतय समाय’ अथवा मूल उजासपर आवरण किएक—एहन प्रतिप्रश्न मूल मतसभक वास्तविक असहमति देखबैत अछि। ई विचारक अनिर्णीतता समीक्षामे तथ्यात्मक असफलता नहि, प्रमाणिक मतभेदक स्वीकार अछि।

वन, बाट, सेतु आ खुलल आकाशक बिम्ब एहि दुरूह सामग्रीकेँ पठनयोग्य बनबैत अछि। ‘अनेक दिशाक एक सत्य’क अपेक्षा एहि पद्यमे समन्वयक समाधान कम, विरोधी मतक मूल प्रतिप्रश्न अधिक अछि। विचार-गणनाक अधिकता कखनो कविताक भावलय शिथिल करैत अछि, मुदा विवादक ठोस उदाहरण बहुलताकेँ रिक्त नारा बनबासँ रोकैत अछि।

३४६. प्रमाणक चारि दुआर, मुक्तिक एक बाट — न्यायप्रमाण, अभावबोध आ दुःखक ज्ञानमूलक उपचार

ज्ञानकेँ केवल शब्दक स्मृति नहि, भ्रमक गाँठि खोलबाक साधन मानल गेल अछि। दुःखक कारणकेँ चिन्हबाक प्रयत्न मुक्ति आ प्रमाणमीमांसाकेँ एक-दोसरसँ जोड़ैत अछि। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान आ शब्द—चारि दुआरक रूपक न्यायपरम्पराक प्रमाणचतुष्टयक काव्यात्मक प्रस्तुति अछि; तथापि प्रमाणसभक बीच सम्भावित टकराव, हेतु-दोष आ विश्वासक मर्यादाक प्रश्नक स्वतन्त्र परीक्षण रहिते अछि।

अभावक अनुभव—‘जे अपेक्षित छल, नहि भेटल’—केँ स्पष्ट करिते अनुपलब्धिकेँ स्वतंत्र ज्ञानसाधन मानब कि स्थापित प्रमाणक भीतर बुझब, ई मतभेद उपस्थित अछि। रचना हर नब भेद लेल अलग प्रमाण अनिवार्य मानबाक विरोध करैत अछि। न्यायीय सीमित प्रमाणसंख्या आ आन परम्पराक विस्तृत प्रमाणविचारक भेद एहि पद्यक मुख्य विवेकात्मक बल अछि।

दुआर आ उजासक पुनरावृत्ति तर्क-शास्त्रक वर्गीकरणकेँ यात्राक लय दैत अछि। ‘ज्ञानक चारि दुआर’मे प्रमाणक वर्गीकरण मुख्य छल; एतय लक्ष्य-दृष्टि—दुःखमूलक अज्ञानक निवारण—ओहि वर्गीकरणक नैतिक अर्थ बनबैत अछि। जँ मुक्ति-सिद्धान्त अलग आध्यात्मिक प्रतिज्ञा अछि, तँ तकर स्वतन्त्र प्रमाण पर विचार आवश्यक; कविता एहि सीमाकेँ पूर्णतः समाप्त नहि करैत।

३४७. शब्दक खेलमे जगक सीमा — चित्रात्मक वाक्यसँ जीवित भाषा-प्रयोग धरि

जगत केँ घटनाक सम्बन्धक तान रूपमे देखबाक आरम्भ वाक्य आ वस्तुस्थितिक मेलक चित्रात्मक धारणा प्रस्तुत करैत अछि। मुदा आदेश, प्रश्न, हँसी, सौदा, गीत आ प्रार्थना सभक अलग उपयोग देखबैत काव्य भाषाक एकहि तार्किक साँचेपर टिकबाक कठिनाई उघारैत अछि। एहि परिवर्तनमे आरम्भिक चित्र-सिद्धान्तसँ उत्तरकालीन भाषा-खेलक दिस बढ़ैत चिन्तनक स्पष्ट प्रतिध्वनि अछि।

एकहि शब्दक प्रयोग अवसरानुसार बदलैत अछि; नियमक पालन निजी मनक बन्द कोठलीमे मात्र जाँचल नहि जा सकैत। साझा व्यवहारक कसौटी बिनु ठीक आ बेठीकक भेद केना टिकत —एहि प्रश्नमे भाषा-विचार समाजक साझा जीवनसँ जुड़ैत अछि। तथापि लोकप्रयोग आवश्यक होएबाक अर्थ ई नहि जे तर्कगत भेद वा सत्य-असत्यक जाँच अनावश्यक भऽ गेल।

‘शब्दक खेल’क उपमा प्रबोधात्मक अछि, मुदा काव्य विभिन्न प्रयोगक सूचीकरणकेँ कखनो विस्तार देइत संरचनात्मक गीतत्व कम करैत अछि। ‘कहबो एकटा काज अछि’ आ ‘भाषाक गाँठि, मनक अदृश्य चाल’क संग तुलनामे एहि रचनामे प्रारम्भिक भाषा-दर्शनक संशोधन खास विषय अछि। विविध काजमे चलैत भाषा असल जीवनसँ अलग साफ यन्त्र नहि—ई निष्कर्षक पाठाधारित औचित्य सुदृढ़ अछि।

३४८. नियमक जालमे अर्थ खोजैत मनुष्य — समाजक अर्थबोध, वैध सत्ता आ तर्कीकरणक द्वैध

‘समाज केवल भीड़क गणना नहि’क उद्धाटन सामाजिक तथ्यक संग कर्ताक आशय बुझबाक आवश्यकता धरैत अछि। बाहरक एके व्यवहारक भीतर अलग अभिप्राय हो सकैत अछि; तें क्रियाकें अर्थपूर्ण सामाजिक सम्बन्धमे राखि पढ़बाक विधि कविता सुझबैत अछि। लाभक पुरान चाह आ समय, हिसाब, नियमित श्रम तथा योजनाबद्ध संचयक नब अनुशासनक भेद आर्थिक जीवनक तर्कीकरणक प्रसंग खोलैत अछि।

परम्परागत, व्यक्तिक आकर्षणपर निर्भर आ नियमाधारित अधिकारक अलग आधारक उल्लेख समाजशास्त्रीय वैधताक वर्गीकरणसँ संवाद करैत अछि। संस्थाक सुचारु नियम मनुष्यकें सुरक्षा दैत, मुदा ओही नियम जीवनकें लौह-जालसँ बाँधि सकैत अछि। ‘नियम देखू’क आग्रह आ नियमक अमानवीकरणक आलोचना—एहि द्वन्द्वमे पाठक गंभीरता छैक।

कारण, आशय आ मूल्यक स्वरसभकें एक रेखामे नहि जोड़ि वास्तविक जीवनक जटिलता स्वीकारल गेल अछि। ‘अनुभवक धरती पर समाजक विज्ञान’क वर्गीकरणमूलक समाजविज्ञानसँ तुलना करिते एतय कर्ताक अर्थबोध आ प्रशासनिक तर्कीकरणक सम्बन्ध विशिष्ट अछि। कतेक सामाजिक अवधारणा एक कविता भीतर सघन भेलासँ रसक प्रवाह किछु निबन्ध-जकाँ होइत अछि, मुदा बहुकारणवादी सावधानी ओकर आलोचनात्मक गुण अछि।

३४९. क्षणक गर्भमे सृष्टिक अनन्त बहाव — प्रक्रियात्मक सत्ता, सम्भावना आ क्षणक नूतन जन्म

वस्तु केँ स्थिर ढेर नहि, घटनाक निरन्तर जन्म मानबाक प्रतिज्ञा एतय दार्शनिक आधार अछि। बीतल अनुभवक प्रभाव वर्तमानमे बचैत, वर्तमान भविष्यक सम्भावना खोलैत अछि। घटनाक पृथक क्षण मात्र नहि, सम्बन्धक जीवित जाल—एहि रूपमे विश्वक प्रक्रिया-विचार काव्यात्मक बनैत अछि। रंग, अनुपात आ सम्भावित रूपक उल्लेख परिवर्तनकेँ अराजक बहाव नहि, आकार-ग्रहणक क्रम मानैत अछि।

विविध रूपक बीच समन्वय सँ ‘व्यापक संगीत’ बनबाक चित्र मूल मतक सौन्दर्यबोध अछि। मुदा अशुभकेँ व्यापक समग्रक भीतर अर्थ देबाक दार्शनिक प्रयास पीड़ितक वास्तविक हानि कम करि देखबाक बहाना नहि बनय। प्रत्येक नव क्षणमे सृजनशीलताक सम्भावना अछि, तइयो इतिहासक कारणसम्बन्ध आ सामाजिक बन्धन समाप्त नहि। एहि प्रतिपक्षकेँ ध्यानमे राखिते रचना आशावादक सीमासभ देखबैत अछि।

बीआ, क्षण आ संगीतक संगति रचनाक लयकेँ चलायमान रखैत अछि। ‘घड़ीक पारि बहैत जीवन’मे कालक अनुभवक आन्तरिक अवधि प्रमुख छल, एहि पद्यमे वस्तु-विश्वक मूल रचना घटना-सम्बन्ध पर निर्भर अछि। प्रक्रिया-दर्शनक सूक्ष्म पारिभाषिक तर्क पद्यमे संक्षेपित अछि; काव्यक अधिक ठोस योगदान परिवर्तनशील जगतक सम्बन्धात्मक दृश्य अछि।

३५०. तीन परत पारि एकहि उजास — अवस्थात्रय, साक्षीबोध आ अभ्यासजन्य विवेक

नाम-रूपक उदय-विलय आ शाश्वत साक्षीक अन्तर एहिमे मूल दार्शनिक प्रतिज्ञा अछि।

जागरणक जग, स्वप्नक दोसर दृश्य आ गहिर निद्राक भिन्न अनुभव पर प्रश्न उठैत अछि—की किछु एहन अछि जे अवस्थाक परिवर्तनक बोध देत? अवस्थात्रयक उल्लेख आत्मा अपरिवर्तनीय होएबाक विचारक मार्ग अछि, मुदा अनुभवक अनुपस्थितिक स्मृति सँ अनिवार्य साक्षी सिद्ध भऽ जाइत अछि, ई निष्कर्ष अलग तर्क माँगैत अछि।

‘कर्म मन शुद्ध करय, ज्ञान मुक्त’ कथन नैतिक अभ्यास आ ज्ञानक प्रयोजनकें अलग करैत अछि। निरन्तर मननक आग्रह बौद्धिक सहमतिक बदला जीवनक परिवर्तनक परीक्षा मानैत अछि। एतय ज्ञानक विचारपर आचरणक प्रभाव प्रत्यक्ष रूपसँ सामने अछि; मुदा जगतक सम्बन्धित सत्यकें निरर्थक मानि सामाजिक दायित्व अस्वीकार करबाक आग्रह नहि।

समुद्र-लहरि, भोर आ उजासक पुनरागमन संग्रहक अनेक रचनासँ जुड़ैत अछि। ‘नेति-नेतिक पारि अन्तरतम साक्षी’ आ ‘निद्राक चारि घाट पारि अजन्म उजास’क तुलनामे एतय तीन परिचित अवस्थाक आधारसँ एक साक्षीबोध धरि यात्रा विशेष अछि। काव्यक सीमा दार्शनिक प्रतिज्ञाक आवर्तक घोष अछि; उपलब्धि अनुभवक बहुलताकें आत्मज्ञानक कठोर प्रश्न बनायब अछि।

३५१. वचनक विधिमे कर्तव्यक अदृश्य बीज — आज्ञार्थक वाक्य, विधि-निषेध आ कर्मफलसम्बन्ध

जीवनक प्रश्न 'की करबाक अछि' इन्द्रियसँ देखल वस्तुक प्रश्नसँ अलग अछि। 'करू' आ 'नहि करू'क वाक्यरूप केवल घटनाक वर्णन नहि, आचरणक दिशाबोध दैत अछि। एहि भेदसँ पद्य मीमांसाक विधि-वाक्यविचारकेँ जीवनक प्रत्यक्ष कर्ममे उतारैत अछि। कथन, संकेत, स्तुति आ निषेध एक-दोसरक प्रसंग बनि कर्तव्यक अर्थ निर्धारित करैत अछि।

कर्म आ दूर फलक बीच प्रश्न उठैत अछि जे देहगत वर्तमान कार्य भविष्यमे फलदायी कोना होइत; एहि सन्दर्भमे अदृश्य सम्बन्धक दार्शनिक प्रतिज्ञा जाँचय योग्य अछि। केवल कर्तव्यवचन होएब ओकर नैतिक औचित्यक स्वतन्त्र प्रमाण नहि। फललोभसँ ऊपर उठबाक नैतिक आग्रह अपन सन्दर्भमे महत्त्वपूर्ण अछि, मुदा लोककल्याण अथवा अन्यायपूर्ण आदेशक परीक्षण छोड़ब अनुचित।

बीआ आ पथक रूपक अत्यन्त अमूर्त विधिशास्त्रीय चिन्तनकेँ दृश्यता दैत अछि। 'कर्मक पाछाँ अनदेखल सेतु'क तुलना करिते एतय आगमवाक्यक प्रकार आ प्रयोजनक भाषिक संरचना अधिक स्पष्ट अछि। विधिवाक्यकेँ अन्तिम निर्विवाद आदेश बनाबयक बदला ओकर अर्थ-निर्माणक शर्तसभ जाँचबाक अवसर एहि रचनाक विशेष आलोचनात्मक उपलब्धि अछि।

३५२. भेदक सूक्ष्म रेखा, सम्बन्धक मौन सूत्र — सत्ताक मितव्ययिता आ सम्बन्धक अस्थायित्व

‘वस्तु अनेक, जग एकहि तान’क आरम्भ दार्शनिक वर्गीकरणक सीमा पूछैत अछि। जँ कोनो भेदक व्याख्या पहिनेसँ स्वीकारल सम्बन्धसँ सम्भव अछि, तकरा लेल अतिरिक्त स्वतंत्र सत्ता किएक मानल जाय—ई सत्तामीमांसक मितव्ययिताक तर्क अछि। भेदक नाम बढ़िते सत्य सेहो बढ़ैत अछि, ई सरल धारणा पाठ अस्वीकार करैत अछि।

समवाय-जकाँ अविभाज्य सम्बन्धक लेल अलग ‘गोंद’ कल्पित कएलासँ फेर ओहि गोंदक सम्बन्धक प्रश्न उठैत अछि। एहि अनन्त प्रतिगमनक सम्भावनाक कारण कवि सम्बन्धक बिना अलग सत्ता बनौने ओकर व्यावहारिक ज्ञान पर ध्यान दैत अछि। तथापि पदार्थ-गुण अथवा सामान्य-विशेषक समस्याकेँ मात्र नाम हटबासँ समाधान भेटि गेल—एहन दावा पद्यमे सिद्ध नहि।

सूक्ष्म रेखा आ मौन सूत्रक बिम्ब विवादकेँ भावनात्मक एकता दैत अछि। ‘कण-कणमे भेदक व्याकरण’मे वैशेषिकक वर्गीकरण मूल उपकरण छल; एतय ओही वर्गीकरणक सत्तात्मक मूल्यपर प्रश्न अछि। पाठमे दार्शनिक मतभिन्नताक ई पहिचान महत्वपूर्ण अछि, यद्यपि सम्बन्धक औपचारिक तर्कक विस्तार पद्यरूपमे सीमित।

३५३. सन्देहक पारि विश्वासक चारि आकाश — संशय, देह-मन सम्बन्ध आ नैतिक जीवन-स्वीकृति

कविता अनुभूति आ स्मृति पर संशय करैत आरम्भ होइत अछि, मुदा अनन्त संशयमे जीवन ठहरि नहि सकबाक व्यावहारिक कठिनाई चिन्हैत अछि। देहक संगठनमे जीवनक विशिष्ट क्रिया उभरब, चेतनाक अलग देहहीन शासक नहि मानब—ई विचार मन-देहक द्वैतक प्रतिपक्ष उपस्थित करैत अछि। शंका आ विश्वासी जीवनक बीचक भेदक कारण रचना निर्बुद्धि आस्था नहि, परीक्षा-पश्चात् भरोस खोजैत अछि।

मानवीय अर्थ केवल इन्द्रियक वस्तुसंग्रहमे नहि, कला, नीति आ आदर्शक निर्माणमे सेहो अछि। पाठ आदर्शक स्मृतिसँ जीवनक अर्थ गहिर होएबाक सम्भावना राखैत अछि, मुदा एहन स्मृतिसँ आध्यात्मिक सत्ताक अस्तित्व स्वतः प्रमाणित नहि होइत। अलग आकाशक छवि अनिर्णीत विकल्पसभक संग जीबाक साहस दैत अछि।

आरम्भक तीख प्रश्न सँ अन्तक अर्थ-विस्तार धरि रचनाक लय प्रबोधात्मक अछि। ‘संशयसँ निर्णय धरि’मे प्रश्नक पद्धति मुख्य छल; एहि पद्यमे संशयक मानवीय सीमा आ विश्वासक सामाजिक-नैतिक स्थान मुख्य होइत अछि। चित्रक संख्या आ विषयविस्तारक कारण काव्यक एकाग्रता किछु कम होइत अछि, मुदा परीक्षण-विहीन अन्धविश्वासक निषेध सुस्पष्ट अछि।

३५४. अपनेक निर्माणक खुलल आकाश — अस्तित्व पहिने, स्वनिर्माण आ स्वातन्त्र्यक भार

‘जन्मक पहिने लिखल रूप नहि’क उद्धोष पूर्वनिर्धारित मानवीय स्वभावक आलोचना अछि। कर्म, निर्णय आ सम्बन्धक माध्यमसँ पहिचान बनैत अछि; एहि विचारमे अस्तित्ववादी स्वनिर्माणक तर्क काव्यात्मक रूप पबैत अछि। स्वतन्त्रता सुखक निरबाध सुविधा नहि, ‘चक्कर देत गहिर आकाश’ बनि उत्तरदायित्वक बेचैनी उत्पन्न करैत अछि।

ककरो ‘सेवक’, ‘छात्र’ वा एक पदक नाममे समेटि देब ओकर मानवीय सम्भावनाकेँ नकारब अछि। भूमिका आ व्यक्तित्वक अन्तर समाजक श्रेणीबद्ध भाषाक आलोचना बनैत अछि। मुदा एही सँ सामाजिक आर्थिक बाधासभकेँ व्यक्तिक ‘बहाना’ कहि समाप्त नहि मानल जाय: कविता स्वतन्त्र निर्णयक संग सीमा बुझबाक आग्रह रखैत अछि, तें परिस्थितिजन्य असमानताक विश्लेषण आवश्यक रहैत अछि।

खाली पात, अक्षर, हस्ताक्षर आ खुलल आकाशक एकहि रूपक-परिवार निर्णयक प्रक्रिया केँ सघन बनबैत अछि। ‘सीमारेखाक आगिमे आत्मक उजास’मे अनिवार्य संकटक बीच आत्मनिर्माण छल; एतय दिन-दिनक चुनाव द्वारा व्यक्तिक बननाइ अधिक प्रमुख अछि। परिणामक नैतिक मापनक स्पष्ट नियम नहि देनाइ दार्शनिक अपूर्णता अछि, मुदा प्रश्न स्वयं काव्यक सार्थक केन्द्र।

३५५. इन्द्रियक शोर आ अन्तरक दीप — संस्कृतिक मानदण्ड, बाह्य अनुभव आ नैतिक सन्तुलन

एक युगमे भीतरक सत्य आ दोसरमे स्पर्श वस्तुक लाभक प्राथमिकता—एहि विपरीत मूल्यदृष्टिसँ कविता संस्कृतिक परिवर्तन पढ़ैत अछि। नियमक सूची मात्र नैतिकता नहि; ओकर आधार समाजक समेकित अर्थ-बोधमे खोजल गेल अछि। भोगक अन्ध प्रवृत्ति आ जगत्यागक कठोरता दुनूक सीमाक उल्लेख एक सन्तुलित मूल्यदृष्टिक अपेक्षा उत्पन्न करैत अछि।

विज्ञान ‘की सम्भव’ बताबैत अछि, नैतिक निर्णय ‘की उचित’ पूछैत अछि—एहि भेदक बल स्पष्ट अछि, यद्यपि विज्ञानक व्यवहारो मूल्य आ संस्थागत सन्दर्भसँ पूर्णतः अलग नहि। इन्द्रिय अनुभवकेँ निन्दा कऽ उच्चतर चेतना स्थापित करबाक सरल पद्धति नहि; कविता अनुभवक क्षेत्र आ अन्तर्मूल्यक प्रश्नकेँ परस्पर संशोधित करब चाहैत अछि।

दीप आ शोरक विरोध रचनाक मुख्य ध्वन्यात्मक सूत्र अछि। ‘स्वतन्त्र स्वर, सुखक गहिर माप’मे सुखक गुणवत्ताक अन्तर छल; एहि पद्यमे संस्कृतिक सामूहिक संवेदना आ शाश्वत मूल्यक दावाक आलोचना अधिक अछि। रचनाक सीमा सभ्यताक पैघ परिप्रेक्ष्यकेँ कम विशिष्ट दृश्यसभमे समेटब अछि; तथापि मूल्यक जाँच लेल दोसर प्रश्न खुलैत अछि।

३५६. पहिचानक धरती, वाक्यक मौन पूर्वशर्त — वर्णनात्मक तत्त्वमीमांसा आ दैनिक भाषाक रूपरेखा

एक विचार प्रणाली जगतक नव नक्शा बनबय, दोसर पहिनेसँ चलैत अवधारणाक ढाँचा स्पष्ट करय—ई भेद काव्यक मूल दार्शनिक समस्या अछि। दैनिक बोलचालमे ‘वस्तु’, ‘व्यक्ति’, ‘घटना’ आ ‘ठाम’ जकाँ श्रेणी पहिनेसँ कार्यरत रहैत अछि। विचारक काज कखनो एही मौन शर्तकेँ देखाएब होइत अछि, ने केवल एक नव आदर्श जगतक निर्माण।

कृत्रिम तार्किक साँचा सभ जीवनगत वाक्यक प्रयोग नहि समेटैत। भाषाक अर्थ ककरा द्वारा, कहिया आ ककरा लेल कहल गेल—एहि प्रसंगक प्रश्नसँ व्याकरण सजीव व्यवहारमे बदलैत अछि। तथापि प्रसंगक स्वीकार औपचारिक तर्कक उपयोगिताकेँ समाप्त नहि करैत; अलग स्तरक वर्णनात्मक औजारसभक सीमा स्पष्ट करैत अछि।

घरक कोठली गिनबाक उपमा विद्यमान ढाँचाक आत्मपरीक्षणक सरल रचनात्मक रूप अछि। ‘तर्कक कण, भाषाक पारदर्शी आकाश’क आधारगत विश्लेषणसँ तुलना करिते एतय दैनिक अनुभूतिक श्रेणीकेँ प्राथमिक दर्जा भेटैत अछि। शीर्षकक ‘पूर्वशर्त’क दार्शनिक अर्थ पाठमे निहित अछि; विशिष्ट तत्त्वमीमांसक निष्कर्षक सर्वमान्यता एहि गीतसँ तय नहि होइत।

३५७. एकहि अनन्त धारा, अनिवार्य जग — एकमात्र सत्ता, अनिवार्य कारणक्रम आ भावक ज्ञान

‘एक मूल, अपने कारण’क चित्र स्वतन्त्र सत्ताक एहन प्रतिज्ञा अछि जकर बाहरी आधार नहि। अन्य वस्तु आ मनक भिन्नता ओकर अनेक रूप मानल गेल अछि। जे किछु होइत अछि ओ कारणसम्बन्धक अनिवार्य क्रममे—एहि तर्कमे मानवीय स्वतन्त्र इच्छा आ जगतक नियतत्वक विरोध उभरैत अछि। व्यक्तिगत चुनावक अनुभवकेँ तर्क-विहीन भ्रम घोषित करबाक बदला कारण-बोधसँ सक्रिय भावक सम्भावना पूछब चाही।

दुःख, इच्छा आ प्रसन्नताक भावसभ कारणक जालमे रखिते नैतिकता अदृश्य पुरस्कार-व्यवस्थाक बदला जीवनक बुझाई पर निर्भर होइत अछि। ‘कारण बुझि भाव सँ मुक्त’क कथन भावना मिटा देबाक आदेश नहि, तकर उत्पत्तिक प्रभाव पर अधिकार बढ़ेबाक दृष्टि अछि। मुदा एहि मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाक अनुभवजन्य पुष्टिक अलग प्रश्न रहैत अछि।

एक धारा आ अनन्त आकाशक व्यापक बिम्ब एकसत्तावादक काव्यगत रूप प्रस्तुत करैत अछि। ‘अनेक रूपमे एकहि आश्रय’क ईश्वर-जीव भेदसँ तुलना करिते एतय स्वतंत्र दोसर सत्ताक कल्पना अधिक सीमित अछि। नियतत्व आ नैतिक उत्तरदायित्वक तनाव पूर्णतः समाधान नहि भेटैत; एहि खुलल विरोधकेँ स्पष्ट रखनाइ आलोचनाक जरूरत अछि।

३५८. सरल बीजसँ बहुरंगी जग — विकासक जटिलता, विज्ञानक सीमा आ वैयक्तिक स्वतन्त्रता

सरल रूपसँ जटिल संरचना धरि बढ़ैत संसारक चित्रमें परिवर्तन एक सामान्य प्रक्रिया रूपेँ रखल गेल अछि। पदार्थ, जीवन, समाज आ ज्ञानक अनेक क्षेत्रमे जटिलता उभरबाक प्रस्तुति विकासक व्यापक दार्शनिक कल्पना अछि, मुदा सभ क्षेत्रक विकास एकहि रैखिक नियमसँ सिद्ध भऽ जाइत अछि, ई मानब युक्तिसंगत नहि। कविता स्वयं वैज्ञानिक नियम-खोज आ दार्शनिक विनम्रताक संगति पर बल दैत अछि।

धर्म आ विज्ञानक प्रश्न अलग रहला परो संवाद सम्भव मानल गेल अछि। ‘शासनक काज हरेक पग पकड़ब नहि’क वाक्य सामाजिक स्वतन्त्रता आ व्यक्तिक नव प्रयत्नक समर्थन करैत अछि। एहि तरह प्राकृतिक विकासक विचार सहज सामाजिक न्यायक नियम बनि नहि जाए, ताहि लेल समाजमे अधिकार आ उत्तरदायित्वक अलग कसौटी जरूरी।

बीआ, पात आ बहुरंगक आवर्ती बिम्ब विकासकेँ जीवित कल्पना दैत अछि। ‘माटिसँ अतिमानस धरि’क आध्यात्मिक आरोहक तुलना करिते एहि पद्यमे विज्ञानक सिद्धान्त, सामाजिक जटिलता आ शासनक सीमाक मिश्रित विवेचन विशेष अछि। प्रकरण-बदलावक तीव्रतासँ काव्यलय कखनो शिथिल, मुदा विस्तारक प्रश्न जीवन्त रहैत अछि।

३५९. फेंकल क्षणसँ मृत्यु-दिशि खुलल समय — जगतमे-होएब, चिन्ता आ निज मृत्युक सचेतना

‘हम तऽ पहिनेसँ जगमे छी’क पाँतिमे जागृत चेतनाकेँ अलग दर्शक मानब अस्वीकारल गेल अछि। जगतक वस्तु केवल निहारबाक साधन नहि, बल्कि श्रम, भय, नेह आ अपन सम्भावनाक व्यवहारिक सम्बन्धमे भेटैत अछि। एही कारण ‘देखब पहिने, जीबनाइ पाछाँ’क रूढ़ क्रम उलटैत कविता अस्तित्वक पूर्वस्थित बन्धन देखबैत अछि।

चिन्ता साधारण कामक बोझ मात्र नहि; मनुष्यक अपन अस्तित्व, सम्बन्ध आ भविष्यक प्रति मूल आकुलता अछि। मृत्यु दोसराक समाचार नहि, जकरा प्रत्येक जन अकेले सामना करैत अछि—ई भान समयक क्षणक मोल बदलबाक आधार बनैत अछि। मुदा निज मृत्युक स्वीकार सामाजिक हानि आ मरनिहारक सार्वजनिक सम्बन्धकेँ निरर्थक नहि ठहरबैत।

‘फेंकल क्षण’क रूपक अस्तित्व अनचुनल स्थिति सँ शुरू होएबाक भाव दैत अछि। ‘सीमारेखाक आगिमे आत्मक उजास’क सीमास्थिति-चिन्तनक तुलनामे एतय दैनिक जगतमे डूबल अवस्था आ निज मृत्युक ओर खुलल समयक विशिष्टता अछि। औपचारिक दार्शनिक पदक घनत्वक कारण कविता कखनो व्याख्यानक निकट, मुदा काल-चेतनाक बिम्ब प्रभावी।

३६०. भयक मैदान सँ अनुबन्धक नगर — इन्द्रियज्ञान, इच्छाक संघर्ष आ सार्वजनिक सुरक्षा

इन्द्रियक छापसँ चेतनामे कल्पनाक क्षीण प्रतिरूप बनबाक वर्णन ज्ञानक अनुभववादी आधार रखैत अछि। रंग, स्पर्श आ ध्वनिक प्रत्यक्ष प्रभावक बाद व्यक्ति स्मृति आ इच्छा सँ संसारक सम्भावित रूप गढ़ैत अछि। सुखक एकमात्र सार्वभौम माप न होएबाक कारण संघर्ष केवल नैतिक दुष्टतासँ नहि, परस्पर चाह आ असुरक्षासँ सेहो जन्मैत अछि।

भयक मैदानमे प्रत्येक अपन रक्षा लेल प्रयास करैत, मुदा साझा नियम बिना भरोस टिकैत नहि —एहि अस्थिरतासँ सामाजिक अनुबन्धक आवश्यकता बनैत अछि। किछु स्वेच्छाचारिताक त्याग सार्वजनिक सुरक्षाक मूल्य रूपमे प्रस्तुत अछि। तथापि एक दृढ़ केन्द्रीय व्यवस्थाक औचित्य निर्दोष व्यक्तिक अपराजेय अधिकार मेटा देत, ई निष्कर्ष पद्यमे स्वतः स्थापित नहि; सार्वभौम शक्ति आ नागरिक स्वतन्त्रताक सीमा खुलल प्रश्न अछि।

अनुभूतिक आगि, भयक आँधी आ सुरक्षाक घरक बिम्ब संवेदना सँ राजशासन धरि रूपान्तरकें मूर्त करैत अछि। ‘वनक स्वतन्त्र साँससँ जन-इच्छाक नगर’मे सामूहिक इच्छा द्वारा स्वतन्त्रता सुरक्षित रखबाक दुसर अनुबन्ध-धारणा छल; एतय परस्पर भय सँ शान्तिक आवश्यकता प्राथमिक अछि। एहि दू रचनाक विरोध संग्रहक तुलनात्मक दर्शनक प्रामाणिक उपलब्धि अछि।

३६१. छापक आगिसँ आदतक कारण — अनुभूतिक प्राथमिकता, कारणक अनिवार्यता आ सीमित संशय

‘जे पहिने तीख रूपमे छूबय’क दृश्य प्रत्यक्ष अनुभूतिसँ विचारक फीका प्रतिरूप बनबाक प्रक्रिया देखबैत अछि। सुख, पीड़ा, रंग आ ध्वनिक तीव्रता आ स्मृतिमे ओकर बादक क्षीण चित्रक भेद अनुभववादी ज्ञानमीमांसाक मुख्य साधन अछि। मुदा अनुभवक समयगत प्राथमिकतासँ सभ तार्किक अवधारणाक उत्पत्ति पूरा सिद्ध भऽ जाइत अछि—एहन दावा अलग प्रमाण माँगैत अछि।

क्रमसँ एक घटना पाछाँ दोसर होएबाक अनुभव आ पहिलमे दोसराकेँ अनिवार्य करबाक शक्ति देखबाक भेद काव्य स्पष्ट करैत अछि। कारणक विश्वास पुनरावृत्ति आ आदतक परिणाम रूपेँ उभरैत अछि; ई सार्वजनिक विज्ञानकेँ निष्फल करबाक निष्कर्ष नहि, पर ओकर दावाक औचित्य जाँचबाक चुनौती अछि। ‘सूर्य फेर उगत’क जकाँ सहज भरोस अनुक्रमणिक नियम नहि, अतीतक आधारपर भविष्यक अनुमान अछि।

छाप, आगि, धुँआ आ बसातक बिम्ब ज्ञानक जन्मसँ आदतक जटिल कार्य धरि गतिक एकता दैत अछि। ‘अनुभवक कोरा पात पर स्वतन्त्र हस्ताक्षर’क तुलनामे एतय कारणक आवश्यक सम्बन्धपर विशिष्ट संशय केन्द्रमे अछि। रचनाक मूल्य अनिश्चितताक स्वीकृति अछि, न सत्यक पूर्ण त्याग; कतेक उदाहरण पुनरावृत्त भेला परो कारणक प्रश्नक तीखापन बनल रहैत अछि।

३६२. चेतनाक दुआर पर वस्तुक उजास — पूर्वमान्यताक विराम आ अन्तरविषयक जग

‘जे किछु समक्ष आबि ठाढ़’क आरम्भ रोजमर्रा अनुभवकेँ बनल-बनाओल नामसँ अलग देखबाक आग्रह करैत अछि। पूर्वधारणाकेँ अस्थायी कोष्ठकमे राखनाइ जगतक अस्तित्व नकारब नहि, अनुभवमे वस्तुक उभरबाक विधि जाँचब अछि। एक वस्तुक देखल पहलू अन्य अदेखल सम्भावित पक्षक संकेत दैत अछि—एहिमे चेतनाक अर्थनिर्माण एक क्षणक इन्द्रियचित्रसँ अधिक व्यापक अछि।

कल्पनामे रंग वा आकार फेरि वस्तुक आवश्यक गुणक प्रश्न उठबैत पाठ सार-निर्धारण आ रूपान्तरणक पद्धति देखबैत अछि। देहक हावभाव, दुःखक स्वर आ संग जीअल जगत दोसर व्यक्तिक उपस्थितिक संकेत बनैत अछि। मुदा ‘दोसर मन’क निजी अनुभूति हमरा लेल पूर्ण पारदर्शी बनि गेल—एहन निर्णय नहि। एकहि जगमे अनेक चेतनाक अनुभवक सहसम्बन्ध ज्ञानक सामाजिक आधार अछि।

दुआर, प्रत्यक्ष आलोक आ शान्त निहारक बिम्ब दार्शनिक संयमक भाव दैत अछि। ‘देहक आँखिसँ खुलैत संसार’क अनुभवगत देहक तुलनामे एतय चेतनाक पद्धतिगत विराम अधिक विस्तारसँ उपस्थित अछि। भाषा कखनो तकनीकी वर्गीकरणक बोझ सँ गीतत्व घटबैत अछि; तथापि जगतकेँ पूर्वाग्रहक वस्तु बनायब टारबाक आग्रह मौलिक उपयोगिता रखैत अछि।

३६३. सात भंगीक खिड़की सँ अहिंसक सत्य — स्याद्वाद, प्रमाणक प्रसंग आ विचारक अहिंसा

‘सत्यक घर एक दुआर नहि’क पाँति सत्यकेँ अनिवार्य रूपसँ कई प्रकारक सन्दर्भमे जाँचबाक उद्घोष अछि। ‘अछि’ आ ‘नहि अछि’क कथन जँ अलग काल, पदार्थ, क्षेत्र वा दृष्टिसँ कहल गेल, तँ हरेकक यथार्थ शर्त स्पष्ट करब आवश्यक। सातभंगी संरचना निरपेक्ष अराजकताक नाम नहि; कथनक प्रसंग, सीमा आ संयुक्त सम्भावनाक अनुशासन अछि।

अनेक दृष्टि स्वीकारने अनुमानक विरोध स्वतः समाप्त नहि होइत। एकहि प्रसंगमे एके अर्थक परस्पर निषेधी कथन केना संग सत्य होएत—ई प्रश्न बचैत अछि; तें प्रसंग निर्दिष्ट करब आवश्यक। पाठ अहिंसाकेँ मानसिक नम्रता आ प्रतिपक्षक सुनबाक सामाजिक आचारसँ जोड़ैत अछि। विचारकेँ हिंसाक उपकरण नहि बनाबयक आग्रह ज्ञानमीमांसासँ नैतिक व्यवहार दिस प्रस्थान अछि।

खिड़की आ सात दिशाक उजासक रूपक मतबहुलताकेँ दृश्य रूप दैत अछि। ‘अनेक बाटक बीच विवेकक सेतु’मे पद्धतिसभक सहअस्तित्व मुख्य छल, एतय सात शर्तयुक्त कथनक तार्किक उपकरण विशिष्ट अछि। ‘सभ मत सही’ सन सरलीकरणसँ बचब एहि पद्यक विवेचनात्मक उपलब्धि अछि।

३६४. विरोधक गर्भसँ पूर्णताक यात्रा — निषेध, मान्यता आ इतिहासमे स्वतन्त्रताक विकास

‘अछि’क भेदहीन आरम्भसँ ‘नहि’ आ फेर गतिशील बननेक विचार पाठक आरम्भिक दार्शनिक मार्ग अछि। विरोध केवल तोड़नाइ नहि, पहिल निर्धारणक सीमा देखबैत उच्चतर सम्बन्ध खोलबाक प्रक्रिया अछि। तर्कक गति केँ जगतक इतिहासक यान्त्रिक भविष्यवाणी मानि लेब ठीक नहि; विचारक नियमन आ ऐतिहासिक तथ्य अलग जाँच माँगैत अछि।

आत्मबोध मात्र निजी अँतरमे पूर्ण नहि, दोसर चेतनाक मान्यता आवश्यक—एहि प्रश्नसँ व्यक्तिगत अहंकार सामाजिक सम्बन्धमे प्रवेश करैत अछि। अधिकारक इतिहासकेँ केवल राजाक जीत नहि, संस्थागत स्वतन्त्रताक विकसित समझब पाठक विशेष आग्रह अछि। किन्तु समाजक समस्त परिवर्तन अनिवार्य प्रगतिमार्गे चलल अछि, ई दावाक समर्थन कविता नहि देत।

‘शून्य’, ‘अछि’, ‘नहि’, ‘बनैत’क पदगत आवर्तन काव्यकेँ दार्शनिक गतिक अनुकरण करबैत अछि। ‘टुकड़ाक पारि अखण्ड उजास’मे सम्बन्धक समग्रता अधिक स्थिर रूपमे छल; एतय विरोध, परस्पर मान्यता आ इतिहासक विकास प्रधान। अमूर्त तर्कक अधिकता गीतक भावप्रवाहक सीमा अछि, मुदा नकार आ निर्माणक द्वंद्व सघन रहैत अछि।

३६५. सन्देहक दीप सँ निश्चयक आकाश धरि — पद्धतिगत संशय, स्पष्ट विचार आ द्वैतक कठिनाई

पुरान विश्वासक देहरीपर प्रश्नक दीप जरबाक दृश्य बिनु परीक्षण मानल कथनसँ सुस्पष्ट ज्ञान दिस प्रस्थान अछि। जटिल समस्याकेँ छोट-छोट चरणमे खोलब, सरलसँ कठिन दिस बढ़ब आ प्रत्येक कड़ीक पुनर्जाँच करब पद्धतिगत विवेकक साधन रूपमे प्रस्तुत अछि। एतय संशय लक्ष्य नहि; निश्चय लेल अपन पूर्वधारणाकेँ कठोर परीक्षामे राखबाक विधि अछि।

अपूर्ण आत्मा भीतर अनन्तताक अवधारणा कतयसँ अबैत, मन आ देहक सम्बन्ध कतेक स्पष्ट— एहि प्रश्नसभसँ प्रारम्भिक आत्मनिश्चयक बादक दार्शनिक कठिनाई खुलैत अछि। विचारक अस्तित्वक बोधसँ बाह्य जगतक पूरा संरचना स्वतः प्रमाणित नहि होइत; ई तर्कगत छलाँग चिन्हब समीक्षाक केन्द्र अछि। त्रुटिक स्रोत मनक निर्णयमे कहाँ पड़ैत अछि, रचना ईहो पूछैत अछि।

देहरी, दीप, ईंट, नींव आ निर्मित घरक बिम्ब जाँचक क्रमबद्ध पद्धति स्पष्ट करैत अछि। ‘संशयक राखिमे निश्चित स्वर’क सापेक्ष संक्षिप्तताक तुलनामे ई दीर्घ पद्य विवेकक नियम आ मतभेदक मुश्किल सामग्री विस्तृत करैत अछि। बीच-बीचमे पाठ इतिहासक सामान्य गद्य जकाँ होइत अछि, मुदा अन्वेषणक वास्तु-बिम्ब संरचनात्मक सौन्दर्य बना रखैत अछि।

३६६. अनुभवक धार पर कारणक प्रश्न — प्रत्यक्ष छाप, पुनरावृत्ति आ भविष्यक अनुमान

मनक पहिल उजास प्रत्यक्ष अनुभव सँ उठैत अछि—ई पाँति अनुभूति आ ओकर फीका विचार-प्रतिरूपक अन्तरपर आधारित अछि। सहसम्बद्ध घटनाक नियमित क्रम मनक कारणक विश्वास दैत अछि, मुदा अनिवार्य उत्पत्तिशक्तिक प्रत्यक्ष दर्शन नहि। ‘सूर्य उगैत रहल’क रोजमर्रा विश्वास आ तर्कपूर्ण अनिवार्यता बीचक दूरी कविताक महत्त्वपूर्ण जाँच अछि।

चेतनाक धारमे स्थिर आत्माक खोजो कठिन ठहरैत अछि: स्मृति आ अनुभूतिसभ बदलैत, ‘हम’क पहचान सम्बन्धित रहैत अछि। एतय सामान्य व्यवहारक विश्वास नष्ट नहि; ओकर दार्शनिक आधारक सीमा स्वीकारल गेल अछि। कारणजाँचक प्रश्न विज्ञानक सिद्धान्तक सुधारक कारण भऽ सकैत अछि, जँ तकरा वैध प्रमाणक कठोर समीक्षा बना राखल जाय।

धारा, रंगमंच आ छापक बिम्ब आवर्तन रचना केँ अनुभूतिक पाठशाला बनबैत अछि। ‘छापक आगिसँ आदतक कारण’क तुलनामे समान दार्शनिक विचारक पुनरावृत्ति स्पष्ट अछि; दीर्घ पद्यमे कारणक समस्या, आत्मपरिचय आ नैतिक स्वतन्त्रताक नूतन सम्बन्ध जोड़ल गेल अछि, मुदा कलात्मक नवीनताक सीमा चिन्हायब जरूरी।

३६७. रूपक परदा सँ अखण्ड यथार्थ धरि — अनुभूतिक एकत्व आ सम्बन्धात्मक समग्रताक खोज

जे देखाइत अछि, ओहि जगतकेँ छल कहि मेटबाक बदला ओकर रूपक पाछाँ सम्बन्धक मूल खोजबाक आग्रह अछि। वस्तु, गुण आ सम्बन्धक अलग नाम बोधक औजार छी, मुदा जीवनक प्रत्यक्ष अनुभव अकसर एहि वर्गीकरणसँ पहिने एक समग्र छाप दैत अछि। खण्ड-खण्ड ज्ञान आ अनुभवक एकत्वक द्वन्द्व काव्यक मुख्य दार्शनिक प्रश्न अछि।

दुःख-सुख आ विरोधी अनुभव व्यापक संरचनामे अर्थ पाबि सकैत अछि—एहि सम्भावनाक संग विशेष सावधानी आवश्यक अछि। पीड़ाक प्रत्यक्ष तथ्यकेँ समग्रताक आवरणमे लुकाएब नहि चाही। ‘विषय-विषयी भेद’क पहलेक अनुभवक कल्पना रुचिकर अछि, किन्तु एहि आधारपर वस्तुक स्वतन्त्र सत्ता अथवा सम्पूर्ण दार्शनिक एकत्व निर्णीत नहि होइत।

परदा, उजास, सूत आ मोतीक बिम्ब अनुभवक विखण्डन आ सम्बन्धित रूपक अन्तर स्पष्ट करैत अछि। ‘टुकड़ाक पारि अखण्ड उजास’क तुलनामे एहि पद्यमे प्रत्यक्ष अनुभूतिक अखण्डता आ विविध केन्द्रक मिलन प्रमुख। अमूर्त समग्रताक अनिर्धारित अर्थ काव्यक सीमा, मुदा संबंधहीन वस्तुसूची पर आलोचना तर्कसंगत।

३६८. शब्दक गाँठ सँ तथ्यक उजास धरि — तार्किक विश्लेषण, विवरण आ दैनिक भाषाक प्रतिरोध

दर्शनकेँ दुरूह गाठिसभक गाँठ खोलबाक अभ्यास बनबैत कविता शब्द, तथ्य आ विचारक सीमा अलग करैत अछि। परिचय, विवरण आ तर्कगत प्रतिज्ञाप्तिक भेद पर ध्यानसँ वाक्यक सतही रूप आ विश्लेषणक असल संरचना बुझबाक प्रयास अछि। विश्लेषण केवल शब्दक टुकड़ा करब नहि, जटिल तर्कक छिपल शर्तकेँ स्पष्ट करबाक औजार बनैत अछि।

मुदा दैनिक भाषा प्रयोगशालाक चिह्नसँ पैघ अछि—एहि चेतावनीसँ अति कठोर तार्किक निर्मितिक सीमा सामने अछि। तथ्य आ वाक्यक मेलक प्रश्न सहज प्रतिबिम्बक समानता नहि; सत्य जाँचब लेल जगतसँ सम्बन्धक स्पष्ट आधार चाही। औपचारिक तर्क महत्त्वपूर्ण होएबाक अर्थ सभ दार्शनिक समस्या ओतहि समाप्त नहि।

गाँठ, सूत आ दीपक दोहराव तर्कक आवेगमे काव्यात्मक लय जीवित रखैत अछि। ‘तर्कक कण, भाषाक पारदर्शी आकाश’क विश्लेषणसँ तुलना करिते एतय सामान्य बोलचालक प्रतिवाद अधिक स्पष्ट अछि। दार्शनिक उदाहरणक विस्तार गीतसँ निबन्धक दिस झुका दैत अछि, तथापि जाँचक तह परस्पर भिन्न करबाक उपलब्धि प्रमाणित अछि।

३६९. हाथक प्रमाण सँ विश्लेषणक सीमा धरि — सामान्यबुद्धिक प्रतिपक्ष आ अमूर्त अवधारणाक जाँच

विश्लेषणक शक्ति मापन लेल हाथक ठोस उपस्थिति आ बाहरी वस्तुक विश्वास मूल धरातल बनैत अछि। ‘मनुष्य, शरीर, पशु, पर्वत’ जकाँ रोजक जगतँ तर्क-विवाद चलैत अछि; एहि जगतक सम्पूर्ण निषेध दार्शनिक मतक ऊपर अतिरिक्त प्रमाण-भार धरैत अछि। सामान्यबुद्धि स्वतः अचूक नहि, मुदा प्रत्येक साधारण विश्वासकेँ एकहि झटके भ्रम घोषित करबो समान कठोर प्रतिज्ञा अछि।

सामान्य पदक सत्ताक प्रश्न—समानता, सदस्यता, समूहक सम्बन्ध—तार्किक विश्लेषणकेँ अमूर्त स्तरपर लऽ जाइत अछि। एक प्रतिज्ञा आ ओकर तथ्यक सम्बन्ध, वस्तुक अस्तित्व आ अनुभवक अर्थकेँ एकहि सरल परिभाषामे समेटब कठिन अछि। ‘हाथक प्रमाण’ समस्त ज्ञानमीमांसा समाप्त करबाक सिद्धान्त नहि, अतिसंशयक उपर एक विशेष प्रतिपक्ष अछि।

ठोस हाथ आ दुरूह अमूर्त वर्गक तुलनात्मक दृश्य रचनाकेँ आलोचनात्मक धार दैत अछि। ‘सन्देहक दीप सँ निश्चयक आकाश धरि’क व्यापक संशयसँ तुलना करिते ई पद्य दैनिक जगतक पूर्वमान्य विश्वसनीयताकेँ तर्कक आधार बनबैत अछि। विवादक सूचीकरणक कारण संवेग किछु कम अछि, मुदा उदाहरण-सापेक्ष विवेक मूल्यवान।

३७०. प्रयोगक बाट पर अर्थक नगर — चित्र-सिद्धान्त, भाषिक प्रयोग आ परिवार-सादृश्य

भाषाकें वस्तुस्थितिक चित्र मानबाक प्रारम्भिक धारणा पाछाँ ‘पुरान नगर’क उपमा आबैत अछि। नव गली आ पुरान पथक जोड़िसँ भाषा स्थिर नक्शा नहि, सामाजिक व्यवहारक विकासशील स्थान बनैत अछि। एकहि शब्दक अर्थ अनेक प्रसंगमे विभिन्न रूप लैत अछि; कोनो एक साझा गुण ढूँढ़ल बिना परिवार-सादृश्यक जाल नामक प्रयोग बनाए रखि सकैत अछि।

बोलबाक काज आदेश, दावा, प्रश्न, विनोद आ सामाजिक नियम अनुसार बदलैत अछि। ‘ठीक’ आ ‘बेठीक’क सार्वजनिक कसौटी बिनु भाषाक निजी स्वनियमक दावामे समस्या अछि। मुदा भाषा-खेलक बहुलता सत्यक असम्भवता नहि; उलटे कथनक उपयुक्त जाँच ओकर विशेष काममे निर्धारित होइत अछि।

नगर, गल्ली आ खेलक बिम्ब जटिल भाषाविचारकें जीवित बनबैत अछि। ‘शब्दक खेलमे जगक सीमा’क संग मूल विषयक पुनरावृत्ति स्पष्ट अछि; एहि विस्तृत रचनामे नगरक रूपक आ परिवार-सादृश्यक उदाहरण अधिक व्यवस्थित अछि। पुनरुक्तिक कारण संग्रहक रचनात्मक विविधता सीमित भेने सेहो भाषिक बदलावक दृश्य सुस्पष्ट अछि।

३७१. एकाकी संकेत सँ साझा कसौटी धरि — निजी भाषा, नियमपालन आ दोसर मनक अर्थ

दर्द वा स्वाद जकाँ भीतरक अनुभूतिक लेल एकदमे निजी चिन्ह बनायल जाए तँ ओकर उपयोग ‘ठीक’ अथवा ‘बेठीक’ कहबाक आधार कतय रहत—ई प्रश्न पद्यक केन्द्र अछि। निजी स्मृतिक आधारपर नियम जाँचब गोल तर्क बनि सकैत अछि। व्यवहारक साझा भाषा एहि चिन्हसभक सार्वजनिक उपयोगक उपयुक्तता बनबैत अछि, मुदा निजी अनुभूतिक वास्तविकता एकरा कारण समाप्त नहि मानल गेल अछि।

‘दोसरक मन’ देखबाक प्रश्नमे देहक भाव, शब्द आ सांझा परिस्थिति सहायता करैत अछि; ई मात्र पर्दाक पाछाँ अनुमान नहि, जीअल मानवीय सम्बन्धक जटिल अनुभव अछि। मानसिक पदसभक सामाजिक अर्थ रहितहुँ प्रत्येक व्यक्तिक अनुभूतिक निजता सुरक्षित रहल चाही। ई भेद व्यवहारवादक सरलीकरण सँ पाठकेँ अलग रखैत अछि।

काँच, संकेत आ माटिक रूपक व्यक्तिगत मन आ सामाजिक भाषाक सम्बन्ध बुनैत अछि।

‘भाषाक गाँठि, मनक अदृश्य चाल’क मानसिक शब्द-विवेचन एतय निजी नियमपालनक परीक्षण धरि विस्तृत भेल अछि। पाठ विचारक ठोस प्रश्न प्रस्तुत करैत अछि; तथापि निजी अनुभूति आ सार्वजनिक सत्यापनक बीच सीमाकेँ अन्तिम सार्वभौम नियम रूपमे तय नहि करैत।

३७२. अनुभवक धरती सँ नियमक कसौटी धरि — वैज्ञानिक व्याख्या, सिद्धान्त-परीक्षण आ बहुकसौटी चयन

‘विज्ञान केवल तथ्यक गठरी नहि’क उद्घाटन अवलोकन आ व्याख्याक अन्तर उठबैत अछि। ग्रहक गति, तापक बदलाव आ जलक रचना बुझबाक लेल परिस्थितिक तथ्यक संग कारणात्मक, नियमात्मक वा कार्यात्मक सम्बन्ध खोजब आवश्यक। एके व्याख्यात्मक ढाँचा सभ विज्ञानपर यान्त्रिक रूपेँ लागू नहि—ई पाठक महत्त्वपूर्ण पद्धतिगत चेतावनी अछि।

सिद्धान्तकेँ एक बेर ‘सत्य’क ठप्पा देब पर्याप्त नहि; ओकर व्यापकता, फलप्रदता, संगति, सरलता आ नूतन घटनाक समझब पर निर्णय जाँचल जाए। एहि मूल्यसभक भार सभ परिस्थितिमे समान नहि, तें वैज्ञानिक चुनावक सामाजिक व्यवहारमे विवादक सम्भावना बचल रहैत अछि। तथापि बहुकसौटी मूल्यांकनक स्वीकृति साक्ष्यक शिथिलता अथवा मनमानी नहि।

धरतीसँ गणितक आकाश धरि बिम्ब वैज्ञानिक अमूर्तनक यात्रा प्रभावशाली बनबैत अछि। ‘एक प्रतिवादक दीप’क खण्डनीयताक एक निर्णायक कसौटीसँ एहि कविताक तुलना करिते एतय विस्तृत व्याख्या आ सिद्धान्तचयनक जटिल विवेचन अछि। रचना प्रश्नमूलक शिक्षा बनैत अछि; काव्य-स्पन्दन उदाहरणक बोझमे शिथिल होइत अछि, मुदा प्रामाणिक पद्धतिगत भेद जीवित।

३७३. वस्तुक आभास सँ चेतनाक अन्तराल धरि — अनुभवक अभिमुखता, सारग्रहण आ अन्तरविषयकता

वस्तुक देखा पड़ल एक पक्ष सम्पूर्ण वस्तु नहि—ई अनुभवक संरचनागत अधूरापनक पहचान अछि। पूर्वमान्यता निलम्बित करि वस्तु जेना प्रकट होइत अछि तेना देखबाक विधि चेतनाक ध्यानकें वस्तुक सत्ताक निर्णयसँ पृथक करैत अछि। सारकें अनुभवसँ बाहर बसल स्थिर अमूर्त सत्ता नहि, विविध सम्भावित रूपमे पहिचानल स्थायी विशेषता मानल गेल अछि।

एक अनुभवमे चेतनाक कर्म आ ओकर अर्थक भिन्न दिशा तथा दोसर व्यक्तिक देह-हावभावसँ जगत साझा होएबाक प्रक्रिया रचनाकें निजदर्शन सँ बहुजन संसार दिस लऽ जाइत अछि। दोसर मन हमर भीतर पूर्ण पहुँचयोग्य नहि; तइयो अन्तरविषयक अनुभव वस्तुनिष्ठ जगतक आधार निर्मित करैत अछि। एहि भेदकें नक्कली निश्चितताक बिना अपनाएब पाठक शक्ति अछि।

‘आभास’ आ ‘अन्तराल’क बिम्ब विश्लेषणकें क्रमबद्ध कऽ कविता बनबैत अछि। ‘चेतनाक दुआर पर वस्तुक उजास’क संग पद्धतिगत सामग्रीक दोहराव अछि, मुदा एतय सारग्रहण आ अन्तरविषयकताक बौद्धिक विस्तार विशिष्ट। दुरुह पदक प्राधान्य लयकें कम करैत अछि, पर अवधारणाक सम्बन्ध स्पष्ट राखैत अछि।

३७४. अभिमुख चेतना सँ स्वतन्त्र अस्तित्व धरि — विषयाभिमुखता, कल्पना आ देहगत सम्बन्ध

चेतनाक क्रिया ‘किछु’क ओर उन्मुख होइत अछि—ई आरम्भिक बोध मानसिक क्रियाकेँ बन्द पात्र नहि, अर्थपूर्ण सम्बन्ध मानैत अछि। यूनिकॉर्नक कल्पना आ वास्तवमे उपस्थित घोड़ाक उदाहरणसँ विषयाभिमुखता आ बाह्य अस्तित्वक अन्तर उभरैत अछि। विषय विचारमे उपस्थित होएब तकर बाहरी सत्ताक पर्याप्त प्रमाण नहि—ई सीमा पाठ स्पष्ट करैत अछि।

भाषा, देह, इतिहास आ व्यवहारक संग जोड़ल अनुभूति मनुष्यकेँ एकान्त अन्दरूनी मनक धारणा सँ मुक्त करैत अछि। जगतमे मनुष्यक उपस्थितिक व्याख्या करतहुँ चेतनाक सक्रिय अर्थनिर्माणक भूमिका मेटल नहि गेल अछि। ‘अनुभवक धरती सँ नियमक कसौटी धरि’क वैज्ञानिक विषयसँ एहि पाठक फासला बुझब आवश्यक: एतय प्रमुख प्रश्न अनुभवक अभिमुखता, न प्राकृतिक नियमक परीक्षण।

‘दिशा’ आ ‘घर’क बिम्ब अनुभव आ अस्तित्वक परस्परता ठोस करैत अछि। ‘देहक आँखिसँ खुलैत संसार’क तुलनामे एतय काल्पनिक विषयक अनुपस्थित अस्तित्व आ अनुभवक वास्तविक सम्बन्धक भेद अधिक स्पष्ट अछि। व्यापक मतसभक एकठाम उपस्थितिसँ दार्शनिक असहमति पूर्ण मिटैत नहि; रचना ओकरा संवादक रूपमे राखैत अछि।

३७५. वाक्यक अर्थ सँ तार्किक सत्य धरि — प्रतिज्ञप्ति, अधिभाषा आ अर्थनिर्धारणक शर्त

अर्थकेँ अलग अमूर्त वस्तु मानबाक विरुद्ध पहिल प्रश्न वाक्य, सत्य आ संदर्भक प्रेक्षण करैत अछि। ‘हिम उज्जर अछि’क उदाहरण तथ्यवाक्य आ ओकर सत्य-शर्तक सम्बन्ध सोचबाक साधन बनैत अछि। तथापि वाक्यक सत्यक नियम आ समस्त अर्थक व्याख्या एकहि वस्तु नहि; ई अंतर पाठक भीतर उपयोगी दार्शनिक संकोच अछि।

वस्तुभाषा आ ओकर विषयमे बाजैत अधिभाषाक भेद राखला बिना स्वसन्दर्भक विरोधाभास उत्पन्न भऽ सकैत अछि। परिभाषा केवल दू समानार्थक शब्द जोड़ब नहि, कखनो पुरान अवधारणाकेँ नव अनुशासनक अनुसार पुनर्रचित करबाक कर्म अछि। वैकल्पिक तर्क चुनलासँ नकार अथवा निष्कर्षक नियमक मूल्य बदलैत अछि—ई मूल्यक तर्कगत हिसाब जरूरी।

भाषाक ‘घर’ आ सत्यक ‘दुआर’क बिम्ब प्रणालीगत भेदकेँ पढ़बाक योग्य बनबैत अछि। ‘तर्कक कण, भाषाक पारदर्शी आकाश’क आलोचनासँ तुलना करिते एतय अधिभाषा, विरोधाभास आ अर्थनिर्धारणक औपचारिक नियन्त्रण नब विषय अछि। तकनीकी प्रसंगक अधिकता पढ़केँ शिक्षणात्मक बनबैत अछि; मुदा परिभाषागत सावधानीक योगदान स्पष्ट।

३७६. विश्वासक प्रश्न सँ अशुभक अन्हार धरि — धार्मिक कथनक भिन्न प्रयोग आ दुःखक चुनौती

धर्मक देहरीपर जगतक आधारक प्रश्न उठैत अछि; कविता आस्थाकेँ न अन्धविश्वासक पर्याय, न अचूक ज्ञानक स्थिति दैत अछि। धार्मिक वाक्य कखन वर्णन, प्रतिज्ञा, प्रार्थना वा नैतिक संकल्प होइत अछि, ओकरा उपयोगानुसार बुझब आवश्यक। विज्ञानक प्रत्येक तथ्य-परीक्षण पर धार्मिक अर्थक सभ अंशकेँ नापब अनुचित होएबाक अर्थ ई नहि जे सार्वजनिक हानि करनिहार कथन आलोचनासँ मुक्त।

अशुभक अनुभव—दुःख, अन्याय आ निर्दोष पीड़ा—ईश्वरक सर्वशक्ति आ करुणाक दावापर जटिल प्रश्न अछि। पाठमे एहि विरोधक अंतिम तर्कसिद्ध समाधान नहि; एकरा धार्मिक जीवनक अनुत्तरित आलोचनात्मक घावक रूपमे राखब अधिक युक्त। भोजन, प्रेम, प्रार्थना आ इतिहासक बीच एक मनुष्यक जीवन केना सम्बन्धित, एहि आधारपर धर्मकेँ एकमात्र निजी अनुभूतिक कोठलीमे बन्द नहि करल गेल अछि।

दुआर आ अन्हारक प्रतीक आरम्भक विश्वास आ अन्तक संशयक समन्वय नहि, तनाव दर्शबैत अछि। ‘विश्वासक आगि, अन्तरात्माक मुक्त स्वर’क सामाजिक धर्मसुधारसँ एहि पद्यक अन्तर ज्ञान, भाषिक अर्थ आ अशुभक तत्त्वमीमांसक प्रश्न अछि। धर्मदर्शनक बहुते आयामक सूची गीतक सौन्दर्य घटबैत अछि, मुदा विनम्र प्रश्नोत्तरक स्वर सजग रहैत अछि।

३७७. कालक धार सँ धर्मक सत्य धरि — समय, धार्मिक अनुभव आ इतिहासगत मूल्य

‘काल की केवल घड़ियाक माप’क प्रश्न समयकेँ भौतिक क्रम आ जीअल अनुभूतिक भिन्न स्तरमे बुझबाक प्रस्ताव दैत अछि। वर्तमान, भूत आ भविष्यक सम्बन्धसँ आत्मपहिचान आ परिवर्तनक विचार उभरैत अछि। धर्मक स्वरूपकेँ केवल स्थिर विधान मानबाक बदला मानवक बदलैत मूल्यचेतना आ इतिहासमे देखबाक आग्रह एहि पद्यमे अछि।

धार्मिक अनुभूति निजी होयबाक कारण एहन अनुभवक सार्वजनिकीकरणमे प्रमाणक सवाल बनल रहैत अछि। मिथक, अनुष्ठान आ सामूहिक स्मृति संस्कृति जोड़ैत अछि, मुदा साधनकेँ नैतिक लक्ष्य मानि लेब समस्या अछि। मूल्यक अन्तर्मुखी जागरण सामाजिक अधिकारक जाँचकेँ विस्थापित नहि करैत; दोसरक कष्टक प्रति उत्तरदायित्व एक निर्णायक कसौटी बनैत अछि।

कालक धारा आ ऐतिहासिक देहरीक पुनरावृत्ति विभिन्न उपविषयकेँ एक यात्राक रूप दैत अछि। ‘घड़ीक पारि बहैत जीवन’क अनुभूत समयसँ तुलना करिते एतय धर्मक आत्मसमीक्षा आ सामाजिक बदलनाइ प्रमुख अछि। बहुविषयक फैलाव मूल कालबिम्बसँ कखनो दूर जाएत अछि; मुदा धार्मिक सत्य केँ इतिहाससँ बहिरा न मानबाक साहस रचनाक उपलब्धि।

३७८. पवित्रताक आकाश सँ लौकिक जीवन धरि — नवजागरण, ऐहिकता आ धर्मक आत्मसमीक्षा

‘इतिहासक चाक घुमल’क आरम्भ धार्मिक दृष्टिक समयानुकूल पुनर्विन्यास देखबैत अछि। वैज्ञानिक अन्वेषण, शिक्षाक नव विस्तार आ सामाजिक आन्दोलनक बाद धार्मिक कथनक अर्थ फेर जाँचबाक आवश्यकता बढ़ैत अछि। ऐहिकता केँ केवल ईश्वरक निषेध कहब संकुचित अछि; ओ मनुष्यक अपन सामाजिक क्षमता आ लौकिक उत्तरदायित्व पर भरोस सेहो बनि सकैत अछि।

सत्यापनक कसौटी धार्मिक अनुभवपर लागू करतहुँ एक प्रार्थना आ एक प्रयोगशालाक प्रतिज्ञाक भाषा-कार्य अलग अछि। धार्मिक रूपान्तरण केना सम्भव होएत—एहि प्रश्नमे परम्परा, सामाजिक न्याय आ नव अर्थनिर्माणक वास्तविक तनाव अछि। विज्ञान द्वारा ईश्वरक सर्वथा निषेध अथवा प्रमाणन, दुनू निष्कर्ष पद्यक आधारसँ आगाँक छलाँग होएत।

चाक, सड़क आ देहरीक बिम्ब धार्मिक जगतकेँ सामाजिक घटनासँ जोड़ैत अछि। ‘कालक धार सँ धर्मक सत्य धरि’क व्यापक अनुभव-विवेचनक सापेक्ष एतय बदलैत युगक संस्थागत प्रभाव तथा धर्मक भाषागत पुनर्व्याख्या विशेष अछि। समाजसुधारक पैघ ऐतिहासिक उदाहरणक दस्तावेज एतय पूर्ण नहि, मुदा आलोचनात्मक प्रश्न गहिर।

३७९. अनेक पथक संगममे एक सत्यक खोज — धार्मिक बहुलता, परम्परागत भेद आ न्यायपूर्ण सहअस्तित्व

‘धर्म अनेक पथ जकाँ’क उपमा सामान्य मानवीय दुःख, सत्य आ मुक्तिक प्रश्नक भीतर विभिन्न आस्थाक सहअस्तित्व देखबैत अछि। भक्ति, ध्यान, रहस्य, शून्यता आ अद्वैतक भाषा एके अनुभूतिक सरल पर्याय नहि; तकर भिन्न दार्शनिक प्रतिज्ञा सुरक्षित राखब जरूरी। ‘एक सत्य’क खोज बहुलताक दमन नहि, सम्मिलित जाँचक प्रश्न रूपमे प्रस्तुत होइत अछि।

अपन धर्मसँ प्रेम कएलासँ दोसर धर्मक आवाज बन्द करबाक अधिकार नहि भेटैत। धार्मिक स्वतन्त्रताक सार्वजनिक मर्यादा परस्पर सम्मानसँ जुड़ैत अछि, मुदा सम्मानक अर्थ आलोचनाक निषेध नहि। अनुभवक निष्ठा आ सामाजिक न्यायक सम्बन्ध एतय महत्वपूर्ण अछि: पड़ोसीक पीड़ासँ उदासीन साधना नैतिक रूपसँ अधूर अछि।

पथ, संगम आ नदीक बिम्ब परम्परासभक सम्बन्ध मे एक लय दैत अछि। ‘अनेक बाटक बीच विवेकक सेतु’क दार्शनिक बहुलताक तुलना करिते एहि पद्यमे धार्मिक सहअस्तित्व, लोकअनुभव आ आन्तरिक रूपान्तरण मुख्य होइत अछि। ‘एकहि सत्य’क अमूर्त स्वरूप नहि निर्धारित करबाक कारण संवाद सम्भव रहैत अछि, मुदा तर्कक अन्तिम निर्णय अनिर्णीत।

३८०. ‘शुभ’क अर्थ सँ कर्तव्यक कसौटी धरि — वर्णन, मूल्यनिर्णय आ साधन-लक्षक नैतिक अन्तर

‘भल कहिते हम की कहैत छी’क प्रश्न नैतिक भाषाकेँ वस्तुक सामान्य वर्णनसँ अलग करैत अछि। ‘ई उचित’क वाक्यमे तथ्यक संग कर्तव्यक आह्वान सेहो अछि। समान परिस्थितिमे समान कसौटी चाही, मुदा वास्तवमे भिन्न प्रसंगमे निर्णय बदलि सकैत अछि—एहि द्वैधसँ नीतिविचारक सामाजिक यथार्थ सामने अछि।

कर्मक उचितता परिणाम मात्र पर निर्भर नहि; साधनक नैतिकता सेहो जाँचल जाए। कर्तव्यक ‘चाही’क दबाव निजी इच्छा वा पुरस्कारलाभक आकर्षणसँ भिन्न होइत अछि। चरित्रविकासक प्रश्न नियम आ परिणामक जाँचकेँ पूर्ण करैत अछि। एहि ढंगसँ नीतिशास्त्रक तीन प्रसंग—कर्तव्य, परिणाम, गुण—एक-दोसराक प्रतिपक्ष रूपेँ उपस्थित अछि, यद्यपि पूर्ण सिद्धान्तक न्यायसंगत निर्णय पद्यमे नहि।

देहरी आ दर्पणक रूपक चुनावक आधार लऽ कऽ स्वयंकेँ फेर प्रश्न करबाक विधि दैत अछि। ‘अदृश्य तराजूक उजास’मे मूल्यक तौलनाइ मूल छल; एहि पद्यमे नैतिक वाक्यक कार्य आ औचित्यक श्रेणी अधिक व्यवस्थित अछि। निर्णायक नैतिक प्रश्नसभकेँ खुलल राखब रचनाक बौद्धिक सामर्थ्य अछि।

३८१. घटनाक क्रम सँ ऐतिहासिक बोध धरि — कारणसम्बन्ध, व्यक्ति-समाज आ इतिहासक अनेक स्तर

इतिहास केँ तिथिक सूखा पज्जी नहि, मानवीय क्रियाक आशय, परिस्थिति आ परिवर्तनक व्याख्या मानल गेल अछि। एक घटना बुझबाक लेल समयक्रम पर्याप्त कि नहि—एहि प्रश्नसँ ऐतिहासिक कारणबोधक जटिलता उद्घाटित होइत अछि। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक आ वैयक्तिक कारण एकहि घटित प्रसंगमे मिलि सकैत अछि; कोनो एक व्याख्या सम्पूर्ण सत्यक एकमात्र अधिकार नहि पबैत।

व्यक्तिक चुनाव अथवा समाजक सामूहिक नियमकेँ अलग-अलग सर्वशक्तिमान कारण बनायब दुर्निष्कर्ष अछि। संस्था आ व्यक्तिक सम्बन्धक जाँचसँ इतिहास लेखनक निष्ठा अधिक स्पष्ट होइत अछि। विभिन्न साक्ष्यक विश्वसनीयता, मौन स्रोतक अर्थ आ अभिलेखक सीमासभ इतिहासकारक उत्तरदायित्वक अंग छी; कविता एही समस्याकेँ प्रश्न रूपमे खोलैत अछि।

धूलि, चाक आ समयक बाटक बिम्ब ऐतिहासिक गतिलाई रूपात्मक बनबैत अछि। ‘टूटल आइना मे अनेक आकाश’क बहु-स्मृति विवेचनसँ तुलनामे एतय कारण, विधि आ व्याख्याक पद्धतिगत सीमा पर अधिक ध्यान अछि। बहुविषयक गद्यांशक तरह लंबी पाँतिसभक बावजूद इतिहासक अनेक स्वरकेँ एकमात्र राजकथा नहि मानबाक आग्रह मूल्यवान।

३८२. कानूनक अक्षर सँ न्यायबोधक अन्तःस्वर धरि — अधिकार, वितरण आ सार्वजनिक औचित्य

‘न्याय’क एक शब्दक अनेक अर्थ—सत्य, ऋण, उचित भाग आ सार्वजनिक नियम—रचना आरम्भमे खोलैत अछि। व्यक्तिगत सद्गुण आ मनुष्य-मनुष्यक बीच अधिकारक सम्बन्ध एकहि नहि; न्याय दोसरा व्यक्तिक जीवनपर अपन कर्मक प्रभाव सँ प्रश्न करैत अछि। एहि कारण कानूनक लिखा अक्षर न्यायबोधक पूर्ण पर्याय नहि।

समाजहितक अनुबन्ध, अधिकारक ऐतिहासिक विस्तार आ संसाधन-वितरणक नियमसभ बीच सम्बन्ध अछि, मुदा सभी के एकहि तर्कमे समेटब कठिन। दानक प्रशंसा आ समान वितरणक अधिकारक दावी स्पष्ट रूपेँ अलग अछि। सीमित साधन आ विविध चाहक बीच सार्वजनिक निर्णयक औचित्य देब, विशेषतः कमजोर व्यक्तिक हितकेँ समान वजन देब, न्यायक मुख्य कसौटी अछि।

कानूनक अक्षर आ अन्तःस्वरक ध्वनि-भेद पाठमे नैतिक अनुकूलनक बिम्ब अछि। ‘निर्णयक धधकैत देहरी’क तत्काल संकटसँ तुलना करिते एतय अधिकार-वितरण आ विधिसम्मत विवेचन मूल। रचनाक विस्तृत सूची कखनो काव्यलय हलुक करैत अछि, मुदा न्यायकेँ मनमानी करुणा वा रूढ़ नियमक एकल विकल्प मानबासँ बचबाक विवेक महत्त्वपूर्ण।

३८३. अक्षरक पार जे उजास — विधिक अक्षर, विवेक आ सामाजिक न्याय

अन्तिम मुख्य पद्य कागजपर लिखल शब्द जीवनमे उतरिते ककरो छत बचबैत आ ककरो बाट रोकैत अछि—एहि ठोस चित्रसँ शुरू होइत अछि। न्याय-विवेचन एतय नियमक शाब्दिक अर्थक सीमासँ आगाँ बढ़ि कानूनक मानवीय परिणाम जाँचैत अछि। खिड़कीबला नियमक घर समाजक खुलापनक रूपक अछि; हेरफेर होइत परिस्थिति सब पर एकहि उपायक यान्त्रिक प्रयोग कखनो अन्याय बनि सकैत अछि। समानता सभ व्यक्तिक एके पहिरन नहि: खाली हाथ आ पहिनेसँ भरल मुट्ठीक भेद न्यायिक निर्णयमे सम्बन्धित होएब चाही।

अधिकारक सुगन्ध दोसरक दायित्व धरि पहुँचबाक बिम्ब अधिकार-कर्तव्यक पारस्परिकता बतबैत अछि। मुदा अधिकारक औचित्य मात्र समाजक सुविधा नहि; अकेला असहमत व्यक्तिक गरिमा बहुमतक गणनासँ बाहर सेहो मूल्य रखैत अछि। न्यायालयक देहरी पर करुणा आ क्रोध दुनू अपर्याप्त हो सकैत अछि; सार्वजनिक कारण देबाक प्रक्रिया जरूरी। रचना मिसालकें मार्गदर्शक मानैत अछि, अचूक साँचा नहि। पछिला न्यायिक निर्णय आ वर्तमान परिस्थितिक अन्तर स्पष्ट कऽ परखब एहि सोचक संस्थागत बल अछि।

‘कखनो अक्षर ठीक, मुदा परिणाम अन्हार’ वाक्य विधिक वैधता आ नैतिक औचित्यक तनाव स्पष्ट करैत अछि। अन्तरात्माकें सभ नियमक ऊपर निरंकुश राजा नहि, मुदा अन्यायमे मौन दासो नहि मानल गेल अछि। सार्वजनिक अवज्ञाक प्रश्नमे दण्ड स्वीकार करबाक साहसक उल्लेख निजी मनमानिक बदला उत्तरदायी प्रतिरोध प्रस्तुत करैत अछि। समता लेल खुलल द्वारक संग वास्तविक पयरक शक्ति आ अवसर आवश्यक—एहि चित्रसँ अमूर्त स्वातन्त्र्यक सामाजिक शर्त सामने अछि।

तराजू, दरवज्जा, खिड़की, दीप आ दर्पण सम्पूर्ण रचनामे फेर-फेर आबि नैतिक विचारकें दृश्यात्मक बनबैत अछि। ‘कानूनक अक्षर सँ न्यायबोधक अन्तःस्वर धरि’मे अधिकारक परिभाषा आ वितरण अधिक महत्त्वपूर्ण छल; एहि अन्तिम रचनामे दैनिक संस्थागत निर्णय, अपवाद, अवज्ञा आ पीड़ितक स्वरक ठोस उपस्थिति प्रमुख अछि। समानता आ न्यायकें एक करबाक लोभसँ बचितहुँ काव्य नैतिक गद्यक समीप पहुँचैत अछि; मुदा ‘अक्षरक पार’ उजासक अन्तिम प्रश्न एहि वृहत पद्यसंग्रहक नैतिक समापन बनैत अछि।

अनुलग्नक १ : त्वञ्चाहञ्च — महाभारतक अतिसंक्षिप्त मैथिली गीत-प्रबन्धक समीक्षा

मूल पुस्तकक परिचय-पाँतिमे एकरा वेदव्यासक अठारह पर्ववला संस्कृत महाभारतक अतिसंक्षिप्त मैथिली अनुवाद कहल गेल अछि। अतएव मूल महाभारतक लेखकीय परम्परा आ मैथिली संक्षेप-रचनाकारक कार्य एक नहि। ई अनुवाद-आधारित काव्यरूप अछि, श्लोकशः मूल-संस्कृतक समरूप प्रतिलिपि नहि। शीर्षक ‘त्वञ्चाहञ्च’ कथा-विपत्तिक ‘तोहर-हमर’ संघर्ष, वंश, जाति आ राजधर्मक आधुनिक अर्थबोधक संकेत बनैत अछि।

रचनाक आरम्भ महाकाव्यकें स्थिर धार्मिक पवित्रता प्रदान करबाक प्रयासपर प्रश्न उठैत अछि— व्यासक कथाक कल्पना, गणेशक लेखन, श्लोकक जटिलता आ क्षेपक-विषयक उल्लेख पाठक आलोचनात्मक दृष्टि उधारैत अछि। महाभारतक आख्यान, युद्ध आ शोकक बहुस्तर त्वरित लयक संक्षेपमे उतरैत अछि; एहि चयनमे कथा-तन्तुक शीघ्र गति लाभ अछि, मुदा विशद पात्रमनोविज्ञान, उपाख्यानसभक भिन्न पाठ आ वैदिक-उपरान्त इतिहासक प्रमाणित जटिलता अनिवार्य रूपसँ घटैत अछि।

महाभारतकें पाठांतरवाला विशाल काव्य मानि प्रत्येक घटना कें ऐतिहासिक प्रतिवेदन न मानब उचित। गीतमे भीष्मक प्रतिज्ञा, द्रौपदीक अपमान, अभिमन्युक मृत्यु, रातिक हत्याकाण्ड, स्त्री-विलाप आ युद्धोत्तर राज्यधर्मक प्रसंगक चयन नैतिक न्यायप्रश्नकें विशेष महत्त्व दैत अछि। असमानताक इतिहासक आलोचना करिते संक्षिप्त कथासंरचना मूल महाकाव्यक सभ अन्तर्विरोधक पूर्ण समाधानक दावा नहि करैत।

आन-आन पर्व (आदिपर्वक आरम्भिक कथा-समूह)

शांतनु-गंगा-देवव्रतक प्रतिज्ञासँ वंशक आरम्भ, व्यासक कथा-संरचना, पात्रक जन्म आ पूर्वानुमानक लम्बा जाल एहि सभसँ बनैत अछि। अनुवादक आरम्भमे गणेश-लेखनक आ क्षेपकक प्रश्न उठाकऽ पाठकें पवित्रता मात्रक दृष्टिसँ मुक्त करैत छथि। प्रारम्भिक वंशावलीक संक्षेप पाठकें आगाँक उत्तराधिकार-संघर्षक शर्त बुझबैत अछि, मुदा मूल महाकाव्यक व्यापक उपाख्यानक अनेक तह एतय सङ्कुचित अछि।

सभा पर्व

मयदानवक आश्चर्यजनक सभा-निर्माण, पासाक खेल आ पाण्डवसभक अधिकार-हरण एकहि संकटसूत्रमे आबैत अछि। रत्न आ राजकीय सम्पत्तिक बाजी सँ स्त्रीक गरिमाक प्रश्न धरि निरन्तर पतनक लय काव्यमे द्यूतक हिंसात्मक रूप खोलैत अछि। संक्षेपक कारण कानूनी धर्मविवादक विस्तार कम अछि, मुदा जुआक एक घटना राजसत्ताक नैतिक दिवालियापन उद्घाटित करैत अछि।

वन पर्व

राज्य हारलाक बाद वनवासमे पाण्डवक नब जीवन, यक्षप्रश्न सन धर्म-संकट आ बहुत संगीसँ भेंटक प्रसंग जुड़ैत अछि। वन केवल दण्ड नहि, नैतिक आत्म-परीक्षणक स्थल बनैत अछि। विशाल यात्राक चयन अनेक छोट कथा छोड़ि देतहुँ अलग संसाधनविहीन जीवनक कठिनाई आ प्रत्यावर्तनक आकांक्षा सुरक्षित रखैत अछि।

विराट पर्व

बारह वर्षक वनवासक बाद अज्ञातवासक वेश, परिचय लुकाएबाक संकट आ उत्तराक विवाहक प्रसंग राजनीतिक संक्रमण देखबैत अछि। पात्रक छिपल परिचय सामर्थ्य आ सार्वजनिक मान्यताक अन्तर पर प्रश्न अछि। युद्धपूर्व उजासक एहि अल्पविराममे सांकेतिक लय अछि, मुदा राज्यक व्यापक कूटनीतिक परिवर्तन संक्षेपित भऽ जाइत अछि।

उद्योग पर्व

सन्धिक प्रयास, कृष्णक शान्तिप्रस्ताव, पाँच गामक माँग आ दुर्योधनक अनमनापन युद्धक टारि सकबाक अवसर समाप्त होयबाक कथा अछि। नैतिक दोषक हिसाब एकपक्षीय नहि: शक्तिक दावी आ सार्वजनिक कर्तव्यक संघर्ष एक-दोसरापर दबाव बनबैत अछि। संवादक संक्षिप्तता चरित्र-विरोध केँ स्पष्ट बनबैत, मुदा मूल शान्तिपर्वपूर्व कूटनीतिक विस्तृत प्रतिपक्ष कम उपस्थित अछि।

भीष्म पर्व

कुरुक्षेत्रक आरम्भ, अर्जुनक संशय आ भीष्मक नेतृत्वक बीच जीवन-मृत्युक तात्कालिक प्रश्न उमड़ैत अछि। युद्ध किएक उचित वा अनुचित—ई गीत-कथानकक बीच खुलल नैतिक संघर्ष अछि। धनुष, रथ आ प्रतिज्ञाक आवर्तन गतिक लय बनबैत अछि; गीतोपदेशक सम्पूर्ण दार्शनिक विन्यास एहि संक्षेपमे समा नहि सकैत।

द्रोण पर्व

द्रोणक सेनापतित्व, अभिमन्युक घेराव आ अश्वत्थामाक उग्र युद्धाध्यायमे विजयक साधनक मर्यादा दरकैत अछि। अभिमन्युक अव्यवस्थित हत्या सँ युद्धधर्मक विफलताक बोध अधिक गहिर होइत अछि। अनुवादक व्यक्तिविशेषक शौर्यक अपेक्षा सामूहिक नैतिक दुष्परिणाम पर अधिक तीव्र लय राखैत छथि।

कर्ण पर्व

कर्ण आ अर्जुनक संघर्ष, सारथिक भूमिका आ रणभूमिक संकट व्यक्तिक स्वाभिमान-संबन्धी विरोध प्रस्तुत करैत अछि। कर्णक चरित्रकेँ केवल शौर्य अथवा केवल दोषमे समेटनाइ उचित नहि; संक्षेप हुनकर इतिहासक जटिलता सीमित करैत अछि। शल्यक आगमन अगले युद्धक अनिवार्यता उद्घाटित करैत अछि।

शल्य पर्व

अन्तिम सैन्य संघर्ष, दुर्योधनक लुकेब आ भीमक ललकार हिंसाक अन्तिम रूप अछि। विजयक बाद बचल देह आ पराजितक असहायता युद्धक नैतिक कीमत सामने आनैत अछि। वीरताक उद्घोषक पाछाँ दुर्योधनकेँ असहाय छोड़ि देबाक दृश्य युद्धोत्तर ग्लानिक बीआ अछि।

सौप्तिक पर्व

अश्वत्थामाक रातिक हत्याकाण्ड आ द्रौपदीक पुत्रसभक वध युद्धसमाप्तिक बादो हिंसा जीवित रहबाक ठोस प्रमाण अछि। दिनक घोषित युद्धनियम रातिक प्रतिशोधमे विफल होइत अछि।

पाठकें केवल रोमांचक प्रतिशोधगाथा बनाकऽ नहि पढ़ि निर्दोषक हानि आ उत्तरदायित्वक प्रश्न बनायब चाही।

स्त्री पर्व

भानुमती, गांधारी, धृतराष्ट्रक शोक आ गांधारीक कृष्णकें शाप स्त्रीक अनुभवसँ युद्ध देखबाक मार्ग अछि। वीरसभक मृत्यु-संख्या पाछाँ व्यक्तिगत परिवारक चोट उभरैत अछि। गीत-पंक्तिन न्यूनता मूल स्त्री-विलापक विस्तृत संवेदनाकें कम करैत अछि, मुदा युद्धविजयक आवरणक भीतर शोकक सार्वजनिक स्थान बना दैत अछि।

शान्ति पर्व

युधिष्ठिरक राज्यत्यागक इच्छा आ व्यास-भीष्मक उपदेश राजधर्म, प्रजापालन आ मोक्षधर्मक प्रश्न खोलैत अछि। युद्धमे हार-जीत निपटलाक बाद न्यायसंगत शासन कठिनतर काज अछि। अल्प पाँतिमे विस्तृत शान्तिपर्वक दार्शनिक विस्तार नहि आ सकैत, मुदा 'राजा के प्रति कर्तव्य'क मूल विवाद स्पष्ट अछि।

अनुशासन पर्व

उत्तरायण आ भीष्मक शरशय्याक अन्तिम उपदेश मृत्युकें राज्यधर्मक पाठसँ जोड़ैत अछि। भीष्मकें दाह देबाक दृश्य नीति-उपदेशक मानवीय नश्वरता याद दिअबैत अछि। मूल ग्रन्थक बहुते उपदेश-विषय संक्षेपमे अनुपस्थित रहला पर घटना-संयोजन भावपूर्ण अछि।

आश्वमेधिक पर्व

युधिष्ठिरक राजव्यवस्था, परीक्षितक पुनर्जीवन आ अश्वमेधक आख्यान युद्धोत्तर सत्ता-स्थिरीकरणक काव्यात्मक दृश्य बनैत अछि। जीवित बालक आगामी पीढ़ीक राजनीतिक आशा अछि। यज्ञक औचित्य, अधिकारक भूगोल आ मूल पाठक दीर्घ तर्क संक्षेपक कारण कम खुलैत अछि।

आश्रमवासिक पर्व

धृतराष्ट्र, गांधारी, कुन्ती आ विदुरक वनप्रस्थान तथा दावाग्निमे मृत्यु राजदरबारक कथा सँ विरक्त जीवनक आखिरी संक्रमण अछि। एक शासकीय युगक समाप्तिकेँ व्यक्तिगत मृत्यु आ वनक नश्वरता संग जोड़ि देल गेल अछि। दावाग्नि तीव्र बिम्ब सघन अछि, यद्यपि तपस्या आ आश्रमक मूल वर्णन अत्यन्त अल्प।

मौसल पर्व

यादववंशक विनाश, कृष्णक अन्त आ द्वारकाक संकट विजयपाछाँ भी राजवंश नश्वर होएबाक विडम्बना देखबैत अछि। युद्धक बाहरी समापन स्थायी सामाजिक शान्तिक गारंटी नहि—एहि प्रश्नसँ काव्य मूल शीर्षकक ‘त्वञ्चाहञ्च’ संघर्ष फेर खोलैत अछि।

महाप्रास्थानिक पर्व

राजसत्ता परीक्षितकेँ सौँपि पाण्डवक अन्तिम यात्रा, क्रमशः द्रौपदी आ भाइसभक पतन, आ निष्ठावान कुरुरक संग युधिष्ठिरक गमन मूल्यक आखिरी परीक्षा अछि। अधिकार-त्याग आ संग-साथक न्याय संक्षिप्त दृश्यसभक केन्द्र। कुरुरक यमराज-रूप कथा-कल्पनाक नैतिक चिह्न, प्रत्यक्ष इतिहासक दावा नहि।

स्वर्गारोहण पर्व

स्वर्गमे विरोधी पात्रसभक उपस्थिति आ युधिष्ठिरक प्रश्न अच्छाई-बुराईकेँ एकरेखा निर्णय बनाबयसँ रोकैत अछि। अन्तमे युद्धक दोष ‘युधिष्ठिरक दोष की थोड़?’क प्रश्न बनि पुनः लौटैत अछि। एहि समापनमे विजेता-पराजितक सरल विभाजन टूटैत अछि; ‘त्वञ्चाहञ्च’ शीर्षकक संघर्ष सामाजिक वर्तमान धरि प्रतिध्वनित होइत अछि।

****समेकित परीक्षण:**** ई अठारह पर्वक सारकाव्य मूल महाभारतक विशाल पाठ, विविध संस्कृत संस्करण, ऐतिहासिक कालनिर्धारण वा धर्मशास्त्रीय प्रमाणक विकल्प नहि। तथापि जुआ, स्वामित्व, शोक, उत्तराधिकार आ अंध वंशमोह पर चयनात्मक नैतिक दृष्टि स्पष्ट अछि। आरम्भमे क्षेपकक प्रश्न आ अन्तमे युधिष्ठिरो दोषमुक्त नहि—एहि दू छोरक बीच अनुवादक आलोचनात्मक स्वायत्तता सुरक्षित राखैत छथि।

अनुलग्नक २ : असञ्जाति मन — बुद्धचरितक अट्टाईस-सर्गीय संक्षिप्त मैथिली गीत-प्रबन्ध

पुस्तकक सम्पादकीय टिप्पणी अनुसार ई अश्वघोषक बुद्धचरितक परम्परासँ सम्बन्धित, तिब्बती माध्यमसँ पुनर्निर्मित संस्कृत पाठक आधारपर रचित अति-संक्षिप्त मैथिली अनुवाद अछि। मूल अश्वघोषक रचना, तकर तिब्बती पाठ, पुनः संस्कृतक रूपान्तर आ मैथिली संक्षेप—एहि सभ पाठ-स्तरक लेखकीय अधिकार आ प्रमाण एके नहि। मूल पाण्डुलिपिक टिप्पणी एक पाठ-इतिहासक दावा दैत अछि; ओकर स्वतंत्र ऐतिहासिक पुष्टि एहि समीक्षा लेल उपलब्ध नहि, तें ग्रन्थकारक निश्चित पाठीय पुनर्निर्माण घोषित नहि कएल गेल अछि।

सर्ग-क्रम बुद्धक जन्म, चारि दृश्य, महाभिनिष्क्रमण, तपस्या, मारविजय, धर्मचक्रप्रवर्तन, लोकसम्बन्ध, महापरिनिर्वाण आ धातु-विभाजनकें घना गति सँ जोड़ैत अछि। ‘असञ्जाति मन’क मूल भाव दुःखमूलक अज्ञान सँ मुक्तिक अन्वेषण अछि; किन्तु काव्यक घटनासभकें निर्विवाद ऐतिहासिक समाचार नहि, पुरातन बौद्ध कथापरम्पराक धार्मिक-काव्यात्मक रूपमे परखब जरूरी।

सर्ग १

शुद्धोधन-माया, श्वेत हाथीक स्वप्न, लुम्बिनीक जन्म आ असितक पूर्वानुमान दिव्य संकेतसभसँ बुद्धक असाधारण बालजीवन गढ़ैत अछि। इन्द्रियातीत जन्मक चिह्न आ कथापरम्परागत रूपककें ऐतिहासिक चिकित्सकीय वर्णन नहि मानल जाय; श्वेत हाथीक बिम्ब बोधिसत्वक आगमनक सांस्कृतिक अर्थ रखैत अछि।

सर्ग २

सिद्धार्थक राजमहल-जीवन, मायक मृत्यु, गौतमीक पालन, शिक्षा, यशोधराक विवाह आ राहुलक जन्म संसारक पारिवारिक बन्धन स्थापित करैत अछि। एही सुरक्षित जीवनसँ बाहिर दुःख देखबाक संभावना आगाँक नैतिक संकट तैयार करैत अछि।

सर्ग ३

उद्यानयात्राक क्रममे वृद्धावस्था, रोग आ मृत्युकेँ देखिते सिद्धार्थक दृष्टि बदलैत अछि। परिचित नगर अचानक नश्वर देहक सत्यक सामने अपरिचित बनैत अछि; गीतक प्रवाह सुन्दर उद्यानक रमणीयताक विरोधमे मानवीय सीमाबोध जगबैत अछि।

सर्ग ४

उद्यानक आमोद-प्रस्तावकेँ सिद्धार्थक अनित्यता-बोध अस्वीकार करैत अछि। यौवन आ भोगक क्षणिकताक प्रश्न सैद्धान्तिक उपदेश नहि, अनुभूत विसंगति अछि; शुद्धोधनक राजनीतिक चिन्ता पुत्रक प्रश्नकेँ रोकबाक असमर्थता देखबैत अछि।

सर्ग ५

वनगमनक अनुमति, राजकीय दायित्व आ जन्म-मृत्युक भेद खोजबाक संकल्प कथानकक निर्णायक मोड़ अछि। 'घुरब जखन पायब'क प्रतिज्ञा मुक्ति-ज्ञानकेँ मात्र निजी पलायन नहि, भविष्यक सार्वजनिक उत्तरक अपेक्षा रूपमे राखैत अछि।

सर्ग ६

केशकर्तन, रत्नजटित कृपाण आ वस्त्रपरिवर्तन सामाजिक पहिचान-त्यागक ठोस कर्म अछि। कंथकक नोर आ छन्दकक विदाई कथाक मानवीय दुखकेँ जीव-जगतक संवेदना धरि विस्तार करैत अछि।

सर्ग ७

कठोर तपस्याक विविध रूप देखिते सिद्धार्थ बाहरी यातनाक समानार्थी मुक्ति अस्वीकार करैत छथि। स्वर्गक अपेक्षा जन्मदुःखक मूल प्रश्नक खोज भविष्यमे मध्य मार्गक तर्क तैयार करैत अछि।

सर्ग ८

छन्दक—कंथकक वापसी आ राजपरिवारक शोक संन्यासकेँ केवल विजयी आत्ममुक्ति कहि प्रस्तुत नहि करैत। जे व्यक्ति घर छोड़ैत अछि ओकर निर्णयक दुःख सम्बन्धित लोकक जीवनमे छाया बनि रहैत अछि।

सर्ग ९

पुरोहित आ मंत्रीक प्रयासक बावजूद सिद्धार्थक निश्चय नहि बदलैत; अराड़क आश्रमक खोज स्वतंत्र ज्ञान-साधनाक संकेत अछि। राजकीय अधिकार आ अध्यात्मिक प्रश्नक बीच असमान शक्ति एकर मुख्य संघर्ष अछि।

सर्ग १०

गंगा पार करि राजगृहमे भिक्षाटन आ बिम्बसारक भेट राजकुमारकेँ नागरिक समाजक सामने अनाम साधक बनबैत अछि। राजसत्ताक निमन्त्रणक प्रतिपक्षँ मुक्तिक साधनाक प्राथमिकता स्पष्ट होइत अछि।

सर्ग ११

बिम्बसारसँ संवादमे मोह, राजकर्तव्य आ दासवर्गक सुखक प्रश्न जुड़ैत अछि। दुःखक बोधक सामाजिक फल एतय उधारैत अछि: केवल राजवैभव नहि, अधिकारविहीन मनुष्यक जीवनो विवेच्य।

सर्ग १२

अराड़क शिक्षासँ असन्तोष, छह वर्षक तपस्या आ देहक स्वास्थ्यक पुनर्मूल्यांकन बाद बोधिवृक्षक प्रण तपस्याक आलोचनात्मक संशोधन अछि। शारीरिक यातनाक अति मुक्ति-साधनाक एकमात्र उपाय नहि—मध्य मार्गक तैयारी एतय।

सर्ग १३

मारक प्रलोभन आ भयक पराजय मानसिक अस्थिरताक कथात्मक प्रतीक बनैत अछि। युद्धक चमत्कारक बाह्य वर्णनक अपेक्षा ध्यानरत साधकक निश्चय आ इच्छाक नियन्त्रण प्रमुख अर्थ अछि।

सर्ग १४

पूर्वजन्मस्मृति, दुःखक बोध, ज्ञानप्राप्ति आ सारनाथ दिस प्रस्थान निजी साधनाक सार्वजनिक शिक्षामे रूपान्तर अछि। प्रतीकात्मक दिव्य-दुन्दुभिक दृश्य ज्ञानक महोत्सव दैत अछि, यद्यपि घटना-विवरणक ऐतिहासिक सत्यापन अलग।

सर्ग १५

पहिल भेटल भिक्षु आ पाँच पूर्वसंगीक संशयक बीच सिद्धार्थ 'घोर तप आ आसक्ति' दुनू छोड़ेबाक बात कहैत छथि। संशय करनिहार सभक सम्मुख आचरणसँ अर्जित विश्वास शिक्षाक आरम्भक शर्त बनैत अछि।

सर्ग १६

सम्यक दृष्टिसँ सम्यक संकल्प आ अष्टाङ्गिक मार्गक क्रम धर्मचक्रप्रवर्तनकेँ साधनाक संरचना दैत अछि। मृगदावक सार्वजनिक उपदेश व्यक्तिगत निर्वाणक अनुभवकेँ साझा नैतिक जीवनक विधानमे रूपान्तरित करैत अछि।

सर्ग १७

बिम्बसारक धर्मस्वीकार, वेणुवनक दान आ नूतन शिष्यक प्रवेश बौद्ध संघक सामाजिक संस्थानीकरण देखबैत अछि। भिक्षुक धार्मिक समुदाय राजसत्तासँ सम्बन्ध बनबैत अछि, मुदा धर्मक मूल्यकेँ राजदाने एकमात्र आधार नहि बनबैत।

सर्ग १८

सुदत्तक गृहस्थ-जीवन, जेतवन प्राप्ति आ विहार-निर्माण धार्मिक उदारताक आर्थिक आधार दिखबैत अछि। दानक प्रसंगमे धनक उपयोग आत्मशुद्धिक साथ सार्वजनिक शिक्षास्थान बनबैत अछि; जेतवनक सौदाक कथा नैतिक परिवर्तनक प्रतीक।

सर्ग १९

कपिलवस्तुमे बुद्धक वापसी, शुद्धोधनसँ भेट, परिवार आ उपालि सहित अनेक जनक दीक्षा ज्ञानक पारिवारिक आ सामाजिक फल अछि। जन्म, पेशा आ संबंधक पहचान संन्यासी समुदायमे नव रूप पबैत अछि।

सर्ग २०

प्रसेनजितक प्रदेश आ श्रावस्तीक जेतवनमे संवाद, प्रश्नोत्तर आ धार्मिक प्रशिक्षण संघक सार्वजनिक जाल विस्तारित करैत अछि। राजकीय संरक्षणक सहारासँ सेहो शिक्षाक मूल कसौटी व्यक्तिगत श्रद्धाक बोध आ आलोचना।

सर्ग २१

जीवक, श्रोण, कात्यायन आ अजातशत्रु जकाँ भिन्न पात्रक उपदेशग्रहण संघक सामाजिक विविधता रचैत अछि। कथा अनेक नामक तेजी सँ चलैत अछि, तें व्यक्तिक मनोवैज्ञानिक रूपक विस्तार कम, मुदा जनसम्पर्कक फैलाव स्पष्ट।

सर्ग २२

पाटलिपुत्रक निर्माण, वैशालीक राजकीय प्रसंग आ आम्रपालीक भेट धार्मिक जीवनक स्थानिक भूगोल उघारैत अछि। नगर-निर्माण आ भिक्षुजीवनक सहअस्तित्व धर्म-इतिहासक महत्त्वपूर्ण चित्र, मुदा ई संक्षिप्त आख्यान पुरातात्विक प्रमाणक विकल्प नहि।

सर्ग २३

लिच्छवीसभक बुद्धक समीप आगमन, आम्रपालीक प्रसंग आ देहत्यागक सूचनासँ संघक भविष्यक संकट शुरू होइत अछि। बोधि देबाक प्रतिज्ञाक पूर्ति आ नश्वर शरीरक अन्त एकहि अध्यायमे टकरैत अछि।

सर्ग २४

आनन्दक विनती, भूमिक कम्पन आ बुद्धक वैशालीसँ प्रस्थान संगीसभक विरहक गहिर बोध बनबैत अछि। चमत्कारक बाहरी रूपक पाछाँ अनिवार्य वियोगक मानवीय अनुभूति पढ़ब अधिक फलदायी।

सर्ग २५

भोगवती नगर आ शालगाछक बीच शयन, विनयकेँ भविष्यक मार्गदर्शक मानबाक निर्देश बुद्धक उत्तराधिकारकेँ व्यक्तिगत राजसत्ता नहि, संघक नियमक प्रश्न बनबैत अछि। करुणापूर्ण अन्तिम उपदेशक सामाजिक प्रयोजन मुख्य।

सर्ग २६

सुभद्रक अन्तिम दीक्षा, अष्टाङ्ग मार्गक शिक्षा आ ध्यानक चार अवस्था महापरिनिर्वाणक पूर्व मानसिक एकाग्रता प्रस्तुत करैत अछि। अन्तिम क्षणधरि शिक्षा दैत रहबाक दृश्य ज्ञानक निरन्तर दानक अर्थ राखैत अछि।

सर्ग २७

कुशीनगरमे मल्लसभ द्वारा देहयात्रा, काश्यपक आगमन, चिताक प्रसंग आ अस्थिकलशक प्रतिष्ठा दुःख सँ सामूहिक स्मृतिरचना धरि गतिक कथा अछि। संस्कारक पौराणिक चमत्कार आ संस्थागत श्रद्धाकेँ ऐतिहासिक साक्ष्यसँ भिन्न राखब जरूरी।

सर्ग २८

अस्थिक आठ भाग, नौम-दसम कलश, स्तूपसभ आ प्रथम परिषदक स्मरण विभाजित समुदायमे साझा शिक्षाक उत्तराधिकारक प्रश्न अछि। ‘हम ई छलौं सुनने’क स्वर श्रुति-आधारित परम्पराक दावी उपस्थित करैत अछि; पुनर्विन्यास, स्मृति आ पाठ-संहिता बीचक अन्तर परखब आवश्यक। अन्तक ‘हे बुद्ध’ आवर्तन घटनाक क्रमकें श्रद्धांजलि बनबैत अछि।

****समेकित परीक्षण:**** अट्टाइस सर्गक तेजी सँ चलैत कथा बौद्ध धर्मक एक विस्तृत शास्त्रीय परम्पराकें गीत-प्रबन्धमे बाँचय योग्य बनबैत अछि। मुदा पाण्डुलिपिक पाठ-इतिहासक टिप्पणी, दैवी चमत्कार, कालक्रम आ संघ-इतिहासक स्वतंत्र प्रमाणीकरण उपलब्ध नहि भेला पर एकरा ऐतिहासिक तथ्यरिपोर्ट नहि मानल जाए। बुद्धक दुःख-निरोध, मध्य मार्ग, करुणा आ सामाजिक शिक्षाक मुख्य सूत्र प्रबन्धक व्याख्यात्मक मूल्य बनैत अछि।

अनुलग्नक ३ : “Second Person Singular”क अंग्रेजी आमुखक मैथिली अनुवाद — आलोचनात्मक अध्ययन

मूल ग्रन्थक लिखित सम्पादकीय टिप्पणी स्पष्ट करैत अछि जे मैथिली पद्यसंग्रह ‘मध्यमपुरुष एकवचन’क अंग्रेजी रूप ‘Second Person Singular’क आमुख उदय नारायण सिंह ‘नचिकेता’ द्वारा लिखल गेल छल, आ ओहि अंग्रेजी आमुखक मैथिली अनुवाद गजेन्द्र ठाकुर कएलनि। एतय आमुखक मूल लेखकीय श्रेय उदय नारायण सिंहक आ अनुवादक श्रेय गजेन्द्र ठाकुरक अलग राखब अनिवार्य अछि। संग्रहक टिप्पणी अंग्रेजी संस्करणमे रिजियो योहानन राजक सहकार्य आ कलाकार संजय भट्टाचार्यक रेखाचित्रसभक पाठान्तरक प्रश्न सेहो दर्ज करैत अछि।

आमुखक पहिल भागमे व्याकरण, पुरुष, लिङ्ग, वचन, अनुवाद आ बहुभाषिक लेखकक पहिचान प्रमुख अछि। ‘कौन बाजैत अछि?’ सन प्रश्न भाषिक सर्वनामकें मात्र शास्त्रीय पद नहि, सामाजिक भूमिकाक संकट बनबैत अछि। व्याकरणक अनुशासन आ सर्जकक स्वतंत्रता बीचक तनाव पाठक महत्त्वपूर्ण विचार अछि। एकरे संग उत्तरआधुनिक विखण्डनक सामान्य सिद्धान्तक सीमापर प्रश्न उठैत अछि: स्थान, प्रसंग आ इतिहास कें मेटि केवल संकेतक खेलमे अर्थ धऽ लेनाइ पूर्ण व्याख्या नहि।

दोसर भागमे लेखक, अनुवादक आ भाषाविदक तीन पेशागत भूमिकाक भिन्न आत्मस्थिति पर विचार अछि। लेखक व्यक्तित्व छिपय सकैत छथि, अनुवादक व्याख्यात्मक हस्तक्षेपसँ केन्द्रीय होइत छथि आ भाषाविद भाषासभक सामाजिक-रचनात्मक भेद देखैत छथि। मूल लेखकक उद्देश्यकें अनुवादमे पूर्ण समरूप राखनाइ कठिन—आमुख ई व्यावहारिक समस्या स्वीकार करैत अछि। अनुवाद कें ‘हिंसापूर्ण शल्यक्रिया’क अवधारणासँ जोड़ल गेल अछि; एकरा व्याख्यात्मक रूपक समझबाक चाही, प्रत्येक अनुवादकें वास्तविक हिंसा प्रमाणित करबाक दावा नहि।

पाठमे अंग्रेजी आमुख, मैथिली अनुवाद आ दृश्य-अनुवादक मध्य अन्तरक चर्चा विशेष महत्त्वपूर्ण अछि। समान कलाकार रहितहुँ चित्रक चयन, क्रम आ किछु सामग्रीक अनुपस्थिति पाठान्तरक बहु-माध्यमीय स्वरूप दिखबैत अछि। मुदा मूल अंग्रेजी आमुखक समानान्तर पूरा पाठ एहि संलग्न स्रोतमे उपलब्ध नहि; अतः प्रत्येक वाक्यक द्विभाषिक निष्ठाक सूक्ष्म जाँच एहि अध्ययनमे

सम्पन्न घोषित नहि कएल गेल अछि। ई समीक्षा मैथिली रूपक प्रत्यक्ष पाठ, अनुवादक टिप्पणी आ उपलब्ध श्रेयक आधारपर अछि।

समेकित साहित्यिक मूल्याङ्कन — स्वप्नमे मिज्झर होइत : मूल पद्य आ अनुवाद-संरचना

‘अनचिन्हार आखर’क बिसरल स्मृति आ स्वप्न-जागरणक मिज्झर अनुभवसँ आरम्भ भेल संग्रह अन्तमे ‘अक्षरक पार जे उजास’क नैतिक न्यायप्रश्न पर समाप्त होइत अछि। आरम्भक ‘मृत्यु गीत (लोकगीत)’ जीवनक नश्वरता, हंस-पिंजरा आ कायाक रूपकक लोकसंवेदना दैत अछि। मूल लेखकक मौलिक पद्य आ लोकगीतक परम्परागत पाठकँ एकहि लेखकीय श्रेणीमे रखनाइ स्रोतगत भूल होयत। काव्यक यात्रा व्यक्तिगत स्वप्नसँ सामाजिक व्यवस्था, भाषा-सत्ता आ दर्शनक प्रमाण धरि विस्तारित अछि।

खण्ड १-२मे कल्पना, मृत्यु, मिथिला-प्रसंग आ अतीतक अस्थिर स्मृतिक विशेष रूप अछि। खण्ड ३-४मे घर, श्रम, भाषा, समानता, साझा अधिकार आ नागरिक नैतिकताक लघु बिम्बसभ उपस्थित अछि। खण्ड ५-८मे पद्य गद्यात्मक दार्शनिक विमर्शक समीप अबैत अछि; शास्त्रीय भारतीय दर्शनसँ संग विश्लेषणवादी, घटनाविज्ञानी, अस्तित्ववादी, समाजशास्त्रीय आ धर्मदार्शनिक मतसभक बहुधा क्रमबद्ध काव्यबद्ध प्रस्तुति होइत अछि। एहि विविधताक अर्थ मतसभ एक दोसरा संग सहमत अछि, ई नहि। आत्माक स्थायित्व-अस्थायित्व, जगतक वास्तविकता-माया, कारणक अनिवार्यता-संशय आ नैतिक नियम-परिणामक विरोध संग्रहक मूल्यवान बौद्धिक असहमति अछि।

शिल्पक पक्षसँ ‘उजास’, ‘आकाश’, ‘दीप’, ‘दुआर’, ‘गाँठि’, ‘धारा’ आ ‘सेतु’ बिम्ब बारम्बार लौटैत अछि। पहिल संग्रह-भागमे ई पुनरागमन भावक घनत्व बनबैत, मुदा बहुत दीर्घ विचारात्मक पद्यमे कखनो विषयगत पुनरुक्ति आ शास्त्रीय अवधारणाक सूची गीतलय कम करैत अछि। आन ठाम प्रसंगविशिष्ट हस्तिनापुर, कटिहार, करघा, रोटी, देहरी, अदालत वा सामाजिक भेदक चित्र विचारकँ मूर्त बनबैत अछि। काव्यक उपलब्धि केवल दार्शनिक मतक संख्या नहि, तकर परीक्षणक लेल लोकभाषाक संसाधनक निरन्तर निर्माण अछि।

अनुलग्नकसभ मूल पद्यसँ अलग ग्रन्थीय इतिहास रखैत अछि। ‘त्वज्जाहज्ज’ महाभारतक अति-संक्षिप्त मैथिली पुनर्विन्यास, ‘असज्जाति मन’ बुद्धचरितपर आधारित बहुपाठीय रूपान्तरण, आ ‘Second Person Singular’क आमुख एक स्वतन्त्र लेखकक गद्यक मैथिली अनुवाद अछि। तकर आलोचना मूल पद्यक रचयिता-श्रेय सँ अलग राखल गेल अछि। अन्तिम साहित्यिक

निष्कर्ष ई जे एहि ग्रन्थमे कविताक सीमा कखनो तर्कात्मक गद्य लग पहुँचैत अछि, मुदा लोकभाषामे दार्शनिक विरोध, सामाजिक न्याय आ मानवीय अनुभवक सङ्गति खोजबाक व्यापक प्रयोग उत्तराधिकारी समीक्षा-पद्धतिक महत्वपूर्ण आधार दैत अछि।

आधार-सूचना : एहि आलोचनाक प्राथमिक स्रोत ऊपर निर्दिष्ट मूल २०२६ संशोधित Word पाण्डुलिपि अछि। मूल महाभारत, बुद्धचरित, विदेशी दार्शनिक पुस्तक वा अंग्रेजी आमुखक अलग प्रामाणिक मुद्रित संस्करण प्रत्यक्ष मिलानक आधार नहि बनल; तें प्रमाणित पुस्तकाधारक नामपर कल्पित संस्करण, प्रकाशक वा पृष्ठसंख्या नहि जोड़ल गेल अछि।

ग्रन्थाधार

ठाकुर, गजेन्द्र। स्वप्न मे मिज्झर होइत (पद्य संग्रह)। संशोधित संस्करण, २०२६। ISBN 978-93-340-3976-4। मूल पद्य आ अनुलग्नकसमेत सम्पूर्ण पुस्तकक समीक्षा।

गजेन्द्र ठाकुर समग्रक सम्पादकीय

खण्ड २५ — स्वप्नमे मिज्झर होइत

स्वप्न आ जागरणक मिज्झर अनुभवसँ आरम्भ भेल ई साहित्यिक अध्ययन मैथिली पद्यक अनेक रचनात्मक आ दार्शनिक दिशाक परीक्षण करैत अछि।

मृत्यु गीतक लोकसंवेदना, घर-आँगनक स्मृति, श्रमिकक गरिमा, भाषिक स्वराज, प्रमाणमीमांसा, इतिहास आ न्याय—सभक आलोचना मूल पाठक निकट रहि कएल गेल अछि।

मूल संग्रहक ३८३ रचना आ तीन अनुलग्नकक अध्ययनमे लेखकीय श्रेय, पाठ-साक्ष्य, काव्यशिल्प, पुनरावृत्ति आ विरोधी दार्शनिक मतक स्वतन्त्रता सुरक्षित अछि।

विदेह — प्रथम मैथिली पाक्षिक ई-पत्रिका



विदेह मुख्य वेबसाइट



विदेह गिटहब संग्रह